अन्तर्राष्ट्रीय विपणन
International Marketing

बी. कॉम - III
B. Com - III
Paper - Optional (ii)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक-124 001

Copyright © 2004, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय-सूची

अध्याय	1.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन - परिचय** (International Marketing – Introduction)	5
अध्याय	2.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन - वातावरण** (International Marketing – Environment)	24
अध्याय	3.	**विपणन अनुसंधान एवं विदेशी बाजारों का चयन** (Marketing Research and Selection of Foreign Markets)	34
अध्याय	4.	**निर्यात बाजार अनुसंधान की तकनीकें एवं विधियाँ** (Techniques and Methods of Export Market Research)	56
अध्याय	5.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में - वस्तु नियोजन एवं विकास** (International Marketing – Product Planning and Development)	73
अध्याय	6.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में - मूल्य निर्धारण एवं भुगतान की विधियाँ** (International Marketing – Price Determination and Methods of Payment)	89
अध्याय	7.	**निर्यात विपणन एवं संवर्द्धन** (Export Marketing and Promotion)	114
अध्याय	8.	**व्यक्तिगत विक्रय एवं निर्यात सेविवर्गीय प्रबन्ध** (Personal Selling and Export Personnel Management)	150
अध्याय	9.	**निर्यात विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन** (Export Advertisement and Sales Promotion)	166
अध्याय	10.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के वितरण-माध्यम** (Channels of Distribution of International Marketing)	178
अध्याय	11.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन - प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यापार** (International Marketing – Direct and Indirect Trading)	192
अध्याय	12.	**अन्तर्राष्ट्रीय विपणन - नियोजन, संगठन एवं नियंत्रण** (International Marketing – Planning Organisation and Control)	213
अध्याय	13.	**निर्यात आयात - कार्यविधि एवं प्रलेख** (Export Import- Procedure and Documents)	245
अध्याय	14.	**भारत की विदेश व्यापार नीति** (India's Foreign Trade Policy)	276
अध्याय	15.	**विदेशी व्यापार : मात्रा, संरचना, दिशा** (Foreign Trade : Volume, Composition, Direction)	289

INTERNATIONAL MARKETING
B. Com. III

M. Marks : 100
Time : 3 Hrs.

Note: Ten Questions shall be set in the question paper covering the whole syllabus. The candidates will be required to attempt any five questions.

International Marketing : Nature, Definition, and Scope of International marketing, Domestic Marketing vs. International Marketing, International Marketing Environment Economic Cultural, Political & Legal Environment.

Identifying and Selecting Foreign Markets: Foreign Market entry mode decisions.

Product Planning for International Market : Product designing, standardization vs. adoption; Branding, and packaging; Labeling and quality issues; After sales services.

International Pricing : Factors influencing international price; Pricing process and methods, International price quotation and payment terms.

Promotion of Product/services Abroad : Methods of international promotion; direct mail and sales literature; advertising; personal selling; trade fairs and exhibitions.

International Distribution: Distribution channels and logistics decisions; selection and appointment of foreign sales agents.

Planning, organising and controlling of International Marketing; Exim policy-an overview Trends in India's foreign trade.

अध्याय-1
अन्तर्राष्ट्रीय विपणन - परिचय
(International Marketing – Introduction)

सूचना तकनीकी (Information Technology), संचार तंत्र (Communication Network) तथा परिवहन (Transpaortation) के साधनों में अभूतपूर्व एवं क्रान्तिकारी परिवर्तनों के कारण आज पूरी दुनियाँ सिमट कर एक वैश्विक गांव (Global Village) बनकर रह गई है। सन् 1991 में भारत सरकार द्वारा अपनायीं गयी आर्थिक उदारीकरण की नीति तथा वर्ष 1994 में "व्यापार एवं प्रशुल्क विषयक सामान्य समझौते" [GATT – General Agreement on Tariff and Trade) के अन्तर्गत "विश्व व्यापार संगठन (W.T.O. – World Trade Organisation) की स्थापना एक ऐतिहासिक घटना के रूप में जानी जाती है। उपरोक्त सभी कारणों से आज अन्तर्राष्ट्रीय विपणन वाणिज्य के सभी विद्याार्थियों के अध्ययन के लिए एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय बन गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन दो शब्दों का योग है - **अन्तर्राष्ट्रीय + विपणन**

अन्तर्राष्ट्रीय का अर्थ है विभिन्न देशों के बीच। तथा विपणन का अर्थ उन सभी क्रियाओं से जिनके द्वारा उत्पादक या व्यापारी अपनी वस्तुओं व सेवाओं को उपभोक्ताओं एवं प्रयोगकर्त्ताओं तक पहुँचाने का प्रयास करता है। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का अर्थ है दो या दो से अधिक देशों के बीच विपणन प्रक्रिया का होना। भारत और अमेरिका के बीच होने वाला विपणन अन्तर्राष्ट्रीय विपणन माना जाएगा।

यदि विपणन एक देश के विभिन्न स्थानों या क्षेत्रों तक सीमित रहे तो इसे राष्ट्रीय विपणन (National Marketing), अन्तर-क्षेत्रीय विपणन (Inter-regional Marketing), घरेलू विपणन (Domestic Marketing) कहा जाता है। पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, गुजरात के बीच होने वाला विपणन आन्तरिक विपणन की श्रेणी में आता है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्न हैं।

(1) **हेस एवं कटेओरा** (Hess and Cateora) के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन ही, "उन सभी व्यावसायिक क्रियाओं का निष्पादन है जिससे एक से अधिक देशों के उपभोक्ताओं या प्रयोक्ताओं की ओर वस्तुएँ एवँ सेवाएँ प्रवाहित की जाती है।"[1]

(2) **टेर्पस्ट्रा वर्न** के अनुसार (Terpstra Vern)– यह "राष्ट्रीय सीमाओं के बाहर किया जाने वाला विपणन है।"[2]

(3) **बेकमैन एवं डेविडसन** के अनुसार (Beckman and Davidson):– "अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से आशय उन समस्त क्रियाओं के निष्पादन से है जो एक से अधिक राष्ट्रो में उनके बाजारो की इच्छाओं तथा आवश्यकताओं का निर्धारण करने, उत्पाद उपलब्धता की योजना बनाने, उत्पादो का प्रभावी स्वामित्व हस्तान्तरण करने, उनका भौतिक वितरण करने, तथा अन्य आवश्यक विपणन क्रिया-कलापों के सुविधाजनक बनाने से सम्बन्ध रखती है।"[3]

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से आशय एक फर्म या उत्पादक द्वारा की जाने वाली उन क्रियाओं से है, जो दूसरे देश या देशों के उपभोक्ताओं एवं प्रयोक्ताओं की इच्छा को सन्तुष्ट करने वाले उत्पादों एवं सेवाओं के विक्रय से सम्बन्ध रखती है।

1. Hess and Cateora, "International Marketing is the performance of business activities that direct the flow of goods and services to consumers or user in more than one nation."

– International Marketing, Irwin 1966 - p. 4.

2. Terpstra Vern; "Marketing carried on across national boundaries."

– International Marketing, 1972 - p. 4.

3. Beckman and Davidson ; Marketing 7 Ed. 1962 - p. 7.

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की प्रक ति

(Nature of International Marketing)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की प्रक ति कुछ सीमा तक घरेलू विपणन से मेल खाती है। जबकि कुछ मामलों में यह मौलिक रूप से भिन्नता लिए हुए है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की प्रक ति को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत समझा जा सकता है।

(1) प्रतियोगी प्रक ति

(Competitive Nature):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की सबसे प्रमुख प्रक ति उसकी अत्यधिक जटिल प्रतियोगिता कही जा सकती है। इसके अन्तर्गत उत्पादकों एवं व्यापारियों को कठिनतम प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में तीन स्तरीय प्रतियोगिता का मुकाबला करना होता है। प्रथम अपने ही देश के निर्यातकों के साथ दूसरे अन्य देशों के निर्यातकों से तथा तीसरे आयातक देश के उत्पादकों से। यह त्रिकोणी प्रतियोगिता अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में प्रतियोगिता को बहुत जटिल बना देती है। जिसका मुकाबला बिरले निर्यातक ही कर पाते है। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की सबसे बड़ी विशेषता एवं प्रक ति अत्यन्त जटिल प्रतियोगिता मानी जाती है।

(2) संरक्षणवादी प्रक ति

(Protectionist Nature):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की अगली प्रक ति उसका संरक्षणवादी स्वभाव माना जाता है। इसके तहत प्रत्येक देश जहाँ तक सम्भव होता है अपने निर्यातों को बढावा देता है और आयातों को कम से कम करने का प्रयास करता है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सरकार अपने देश के निर्यातकों को तरह-2 के प्रोत्साहन देती है और साथ ही आयातों पर कड़े प्रतिबन्ध लगाती है जिससे आयातों को सीमित किया जा सके।

(3) जोखिम की प्रक ति

(Nature of Risk):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन अनेक प्रकार के जोखिमों से भरा हुआ होता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के अन्तर्गत आदेश पाने और उसके निष्पादन के बीच काफी समय अन्तराल होता है। इस दौरान होने वाले परिवर्तन अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को अत्यधिक जोखिम पूर्ण बना देते हैं। इस बीच आयातक और निर्यातक देशों में होने वाला कोई भी परिवर्तन, चाहे वो राजनैतिक हो, आर्थिक हो, सामाजिक हो या कानूनी हो सभी स्थितियों में इसका प्रभाव निश्चित रूप से अन्तर्राष्ट्रीय विपणन पर पड़ता है। वर्ष 2003 में अमेरिका द्वारा इराक पर युद्ध कर देने के परिणामस्वरूप भारत के तमाम निर्यातकों को भारी हानि उठानी पड़ी। कुछ आयातकों को तो अपने माल और उसकी कीमत दोनो से ही हाथ धोना पड़ा। विदेशों में फैशन तथा रूचियों में होने वाला परिवर्तन भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को अत्यन्त जोखिम पूर्ण बना देता है।

(4) राजनैतिक प्रक ति

(Political Nature):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में दो देशों के बीच के राजनैतिक सम्बन्ध अपना विशेष प्रभाव रखते हैं। प्रायः विकसित देश उन्हीं देशों को अपने यहाँ निर्यात करने की छूट देते हैं, जो राजनैतिक एवं सामरिक द ष्टि से उनके लिए उपयोगी होते हैं। जिसके कारण किसी देश को अवांछित लाभ मिलता है तो किसी देश को अनावश्यक रूप से दण्ड।

उदाहरण के लिए अमेरिका कई अवसरों पर भारत के मुकाबले पाकिस्तान को वरीयता देता रहा है। क्योंकि वह जानता है कि पाकिस्तान उसके राजनैतिक एवं सामरिक हितों की तुष्टि अधिक भलीभांति कर सकता है।

(5) साख अभिमुखी प्रक ति

(Credit Oriented Nature):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की एक प्रक ति यह है कि वह साख अभिमुखी है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में विकसित देशों का बहुत बड़ा

हिस्सा होता है। विकासशील देश जिनके पास क्रय शक्ति कम होती है वह उन्हीं देशों से आयात करना पसन्द करते हैं जो न्यूनतम ब्याज की दर पर लम्बी अवधि के लिए उधार माल एवं सेवाएं देने को तैयार होते हैं। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन साख सुविधाओं की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है जिसके आधार पर विकसित देश विकासशील देशों को अपने चंगुल में रखने का प्रयास करते हैं।

(6) प्रभुतापूर्ण प्रक ति
(Nature of Sovereignty):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की एक प्रमुख विशेषता यह है कि विश्व के कुल अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का ¾ भाग विकसित देशों के अधिकार क्षेत्रों में आता है जिनकी सख्या आठ है जबकि अन्य तमाम देश विकसित देशों की मेहरबानी पर आश्रित रहते है। विकसित देशों के पास तकनीकी एवं प्रोद्योगिक श्रेष्ठता के कारण उनके उत्पाद एवं सेवायें अत्यन्त उच्चकोटी की होती हैं। जिसके फलस्वरूप विकासशील देश उनसे प्रतियोगिता नहीं कर पाते। इस प्रकार कुछ गिने हुए विकसित देशों की प्रभुता बाजार पर स्थापित हो जाती है।

(7) लाभ प्रक ति
(Profit Nature):-

घरेलू विपणन की तुलना में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में लगे उत्पादक और व्यापारी अत्यधिक लाभ कमा पाते हैं। विकसित देशों में होने वाले निर्यात से निर्यातकों को भारी मुनाफा कमाने का अवसर प्राप्त हो जाता है। वास्तव में घरेलू विपणन के मुकाबले अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में लाभ की दर कहीं अधिक होती है।

(8) एकीकरण प्रक ति
(Consolidating Nature):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन एकीकरण की नीति को प्रोत्साहित करता है। कई निर्यातक देश अपने यहाँ विभिन्न देशों से उनके द्वारा उत्पादित माल को अपने यहाँ मंगाकर तथा उसे जोड़कर एक बड़ी वस्तु का निर्माण करने में सफल हो जाते है। फिर उसके निर्यात से अत्यधिक लाभ कमा लेते हैं। उदाहरण के लिए अमेरिका बोइंग हवाई जहाज बनाता है और उसका निर्यात करता है। जबकि वो इन हवाई जहाजों के विभिन्न भाग विश्व के 29 देशों से मंगवाता है और उन्हें जोड़कर हवाई जहाज निर्माता देश बन जाता है। इस प्रक्रिया में असली लाभ एकीकरण करने वाली संस्था को मिलता है। जबकि उसके विभिन्न भागो के निर्माता देशों को थोड़ा ही लाभ प्राप्त होता है। वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में एकीकरण की प्रक ति बहुत ज्यादा कामयाब हो रही है। अब इसका लाभ विकासशील देश भी उठा रहे हैं। भारत में कई संस्थाएं एकीकरण के आधार पर अपना निर्माण कार्य कर रही हैं।

(9) विदेशी मुद्रा भण्डार की प्रक ति
(Nature of Foreign Currency Stock):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में जो देश अग्रणिय हैं वह निर्यातों तथा विदेशी निवेश के आधार पर अत्यधिक विदेशी मुद्रा का भण्डार कर पाने में सक्षम हुए हैं। इस सन्दर्भ में भारत वर्ष ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है। इस समय भारत की विदेशी मुद्रा भण्डार अपने सभी पुराने रिकॉर्ड तोड़ चुका है। वर्तमान में भारत सरकार के पास 118 अरब डॉलर का विदेशी मुद्रा भण्डार है।

(10) अनुसंधान एवं विकास की प्रक ति
(Research and Development Nature):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का विस्तार एवं विकास इस बात पर निर्भर करता है कि निर्माता अपने उत्पाद एवं सेवाओं के सम्बन्ध में कितना ज्यादा विकास कार्य एवं अनुसंधान कार्य करता है। विकसित देशों में निर्माता अपने द्वारा अर्जित लाभ का एक बड़ा भाग अनुसन्धान एवं विकास कार्यो पर खर्च करते हैं जिससे उनके उत्पाद और सेवायें विश्व स्तर पर प्रतियोगिता का मुकाबला कर सकें। वास्तव में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की सफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करती है कि देश में अनुसन्धान एवं विकास कार्यो में निर्माता कितनी रुचि ले रहे हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का क्षेत्र
(Scope of International Marketing)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का क्षेत्र अत्यन्त ही व्यापक है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के प्रोत्साहन के लिए की जा सकने वाली सभी क्रियाएँ इसके क्षेत्र में सम्मिलित की जा सकती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में निर्यातकों के द्वारा की जाने वाली विभिन्न कोशिशे तथा उनके द्वारा अपनाई जाने वाली विभिन्न चालें अन्तर्राष्ट्रीय विपणन क्षेत्र तय करती हैं। मुख्य रूप से अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के क्षेत्र में निम्नलिखित घटकों को शमिल किया जा सकता है -

1. संयुक्त साहस एवं सहयोग (Joint Venture and Collaboration):–

वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के क्षेत्र में संयुक्त साहस एवं सहयोग का प्रभावी उपयोग किया जा रहा है। अपने उत्पाद एवं सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए विभिन्न निर्माता बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ संयुक्त साहस एवं सहयोग के आधार पर कार्य कर रहे हैं। भारत में इसके प्रमुख उदाहरण - **मारुति-सुजुकी, हीरो-होण्डा, डी.सी.एम.-टोयटा** इत्यादि हैं। इस प्रकार एक देशी कम्पनी विदेशी कम्पनियों के साथ सहयोग करके तथा उनकी तकनीकों का लाभ उठाकर अपने उत्पादन क्षमता तथा उत्पाद की गुणवता में व द्धि कर पाने में सक्षम हुए है। इससे उपलब्ध विपणन अवसरो का अनुकूलतम विदोहन किया जा सकता है। इस व्यवस्था का लाभ निर्माता को घरेलू विपणन तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन दोनों में ही समान रूप से हो रहा है।

2. विदेशों में शाखाओं की स्थापना (Establishment of Branches in Foreign):–

इसके अन्तर्गत निर्माता अपनी शाखाएँ विदेशों में खोल सकता है। यह शाखा बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप उत्पादों का संयोजन एवं पैकिग कर सकती है। कभी-2 पूरा उत्पाद ही शाखा द्वारा तैयार किया जाता है। इसके लिए भारी पूंजी की व्यवस्था करनी होती है। विकसीत देश बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के माध्यम से इन कार्यो को बड़े अच्छे प्रकार से अन्जाम दे रहें हैं। इस सन्दर्भ में अमेरिका सबसे आगे है, जिसकी कम्पनियों ने पूरी दुनियाँ में एक साम्राज्य स्थापित किया हुआ है।

3. परामर्श सेवाएँ (Consultancy Services):–

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के क्षेत्र में परामर्श सेवाएं भी आती हैं। विकसित देश विकासशील देशों को अपने यहाँ आधारभूत एवं भारी उद्योगो की स्थापना के लिए परामर्श सेवाओं का निर्यात करती है। दिल्ली में चलने वाली मैट्रो रेल सेवा के लिए यूरोपियन कम्पनी की परामर्श सेवाएँ ली गई है। इसके लिए निर्यातक कम्पनी अपने परामर्शदाता भेजती हैं जो निर्माण स्थल पर मार्ग दर्शन का कार्य करते हैं।

4. तकनीकी एवं प्रबन्धकीय जानकारी (Technical and Managerial Know-how):–

वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के क्षेत्र में तकनीकी एवं प्रबन्धकीय जानकारी देने का कार्य भी शामिल किया जाता है। विकसित देश अपने तकनीकी विशेषज्ञो एवं प्रबन्धकों की सेवाएँ विकासशील देश के निर्माताओं को उपलब्ध कराते हैं। कई बार यह सेवाएँ विकासशील देश अपने कर्मचारी एवं अधिकारियों को विकसित देशों में भेजकर प्रशिक्षण के रूप में दिलवाते है। कई बार निर्यातक देश भी अपने तकनीकी विशेषज्ञों एवं प्रबन्धकों को इसके आयातक देशों में भेज कर वहाँ के व्यक्तियों को तकनीकी एवं प्रबन्धकीय जानकारी उपलब्ध करवाते हैं।

5. अनुज्ञा-पत्र व्यवस्था (Licensing Arrangement):–

इस प्रकार की व्यवस्था भी निर्यात-विपणन के क्षेत्र में आती है। यह एक अनूठी प्रकार की व्यवस्था है। इसमें निर्यातक कम्पनी अन्य देश की फर्म को अनुज्ञा-पत्र में वर्णित शर्तो के आधार पर विक्रय करने का अधिकार देती है। इसमें विदेशी फर्म को निर्यातक कम्पनी के नाम, ख्याति व प्रतिष्ठा का लाभ मिल जाता है। निर्यातक कम्पनी विदेशी कम्पनी से विक्रय की कुल राशि का निशिचित प्रतिशत प्रतिफल के रूप में प्राप्त करती है। भारत वर्ष में अमेरिका की कोक तथा पेप्सी कम्पनी इस आधार अपने उत्पादों को भारत के बाजार में उतार रही है। विकसित देशों के द्वारा विकासशील देशों में इस आधार पर अपने व्यापार को फैलाने का तरीका काफी समय से सफलता पूर्वक चलाया जा रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का महत्व
(Importance of International Marketing)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत आधार प्रदान करता है तथा देश के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। वर्तमान में विकसित देशों के विकास के पीछे उनके निर्यातों का बहुत बड़ा योगदान है। विकासशील देशों के लिए भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का एक विशेष महत्व है। विकासशील देशों को अपने विकास के लिए आधारभूत उद्योगों की स्थापना करनी होती है। पूंजीगत माल का आयात करना होता है तथा देश में औद्योगिक विकास के लिए आधारभूत सुविध ाओं का विस्तार करना होता है। उच्च तकनीकी एवं प्रबन्धकीय जानकारी का विकसित देशों से आयात करना होता है। इन कारणों से देश का भुगतान सन्तुलन बिगड़ जाता है। हमारा देश भी इसी दौर से गुजर रहा है। यदि उसे विकसित देशों की कतार में आना है तो उसे अपने निर्यातों पर अधिक जोर देना होगा तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को अपने पक्ष में करना होगा।

औद्योगिक क्रान्ति के समय विश्व व्यापार 26% भाग पर भारत का अधिकार था तथा स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय विश्व के कुल व्यापार में भारत का भाग 3 प्रतिशत के आस पास था। यह क्रमश्घटता हुआ मात्र 0.5% रह गया है। वर्ष 2002-07 के लिए घोषित नयी आयात-निर्यात नीति में विदेशी व्यापार में 1% भाग प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय हमारे पास लगभग 20 करोड़ रूपये के विदेशी मुद्रा के भण्डार थे, तो वर्तमान में हमारे देश पर लगभग 8,75,000 करोड रुपये विदेशी ऋण है। वास्तविकता यह है, कि हमें विदेशी ऋणों के ब्याज का भुगतान करने के लिए भी ऋण लेना होता है। आज भी हम खनिज, तेल, खाद्य तेल, उर्वरकों, मशीनों एवं उपकरणों, सीमेन्ट आदि अनेक वस्तुओं का आयात भारी मात्रा में कर रहे हैं। लेकिन निर्यातों में आशातीत व द्धि नहीं हो रही है। अनेक परम्परागत वस्तुएँ जिनके निर्यात पर हमारा प्रभुत्व था, वह भी हमसे छिन रहा है। जूट के निर्यात को धक्का बॉग्लादेश ने लगाया है। श्रीलंका एवं चीन आज हमसे चाय का निर्यात - बाजार छीन रहे हैं। इन सभी कारणों से, जहाँ तक हमारे भुगतान सन्तुलन का प्रश्न है, उसकी स्थिति अत्यन्त ही विकट है। हम शनैःश्नैः ऋणग्रस्ता के गहरे भँवर मे फसते जा रहे हैं।

इस विषम स्थिति से छुटकारा केवल निर्यातों को बढाकर के ही प्राप्त किया जा सकता है। यह सही है, कि विकासशील देशों को अपने विकास की प्रारम्भिक अवस्था में विदेशी सहायता पर कुछ मामलों में निर्भर रहना होगा, पर फिर भी वे कुछ क्षेत्रों में अपने उत्पादन को बढ़ाकर निर्यात विपणन की ओर अग्रसर हो सकते हैं। निर्यात विपणन का जितना महत्व एक देश की अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में है, उतना ही महत्व व्यक्तिगत फर्मो के लिए भी है। इसे निम्नलिखित बिन्दुओं में समझा जा सकता है।

(a) राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का महत्व :- (Importance of International Marketing in National Economy)

राष्ट्रीय अर्थव्यस्था में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का महत्व काफी व्यापक है जिसका अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है :

(i) तीव्र आर्थिक विकास :- (Rapid Economic Growth):-

किसी भी देश का तीव्र आर्थिक विकास इस बात पर निर्भर करता है कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के मार्ग में वह कितना आगे है। आर्थिक विकास की ऊँची दरों का सीधा सम्बन्ध निर्यातों की ऊँची दरों से है। संदेश स्पष्ट है कि जो देश तीव्र गति से अपना आर्थिक विकास करना चाहता है उसे अपने निर्यातों को अधिक से अधिक बढाना चाहिए साथ ही आयातों पर अंकुश लगाना चाहिए। निर्यातों में व द्धि से बहुमूल्य विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है जिसका उपयोग देश की औद्योगिक और आर्थिक विकास में किया जा सकता है। हमारे पड़ोसी देश चीन ने अपनी इन्ही नीतियों से अपने देश का चहुमूखी आर्थिक विकास किया है।

वर्तमान में दुनिया के अधिकांश विकसित एवं विकासशील देश आर्थिक मंदी के शिकर हैं और उनकी आर्थिक विकास दर या तो ठहर गयी है या फिर नीचे की ओर रुख किये हुए हैं। वहाँ चीन ने अपने आर्थिक विकास की दर को 10% तक बनाये रखा है और वह अब दुनिया की एक बहुत बड़ी आर्थिक सत्ता के रूप में उभर कर हमारे सामने आ रहा है। भारत को भी चीन की प्रगति से बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है तभी हम अपना चहुमूखी आर्थिक विकास कर सकेंगे। अतः यह बात पूर्ण से स्पष्ट है कि देश के आर्थिक विकास में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन समान्य रूप से तथा निर्यात विपणन विशेष रूप

से महत्वपूर्ण है।

(ii) रोजगार के अवसरों में व द्धिः (Increase in Employment opportunities):-

विदेशी बाजारों में व्यापार को बढाने के लिए जहाँ एक ओर निर्यात अभिमुखी इकाइयाँ (Export- oriented units) की विभिन्न क्षेत्रों में स्थापना होती है यहीं दूसरी ओर विद्यमान फर्मे अपने उत्पाद के स्तर का बढाती हैं। इससे रोजगार के नये अवसरों का स जन होता है। विकासशील देशों में बेरोजगारी व अर्द्धबेरोजगारी की समस्या बड़ी विकट रूप में है। इसे कुछ सीमा तक निर्यात विपणन से भी हल किया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के नये-नये क्षेत्रों का पता लगाकर रोजगार के अवसरों को बढाया जा सकता है। उदाहरण के लिए भारतीय हैण्डलूम व सांगानेरी एवं बगरु प्रिन्ट के कपड़े विदेशी शैली पर तैयार कर भारतीय निर्यातकों ने अरबों रूपये के निर्यात किये हैं। इससे रोजगार के अनेक अवसरो में व द्धि हुई है।

(iii) जीवन स्तर में व द्धिः (Increase in Living Standard):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन देशवासियों के जीवन स्तर को उन्नत करने में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से जो बहुमूल्य विदेशी मुद्रा अर्जित की जाए उसका उपयोग ऐसी वस्तुओं के आयात में किया जा सकता है, जो देश की जनता को अच्छा जीवन स्तर प्रदान करें। इसके साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से जहाँ व्यक्तिगत फर्मो को लाभ होता है, वहीं अनेक रोजगार के अवसरों का स जन होने से देशवासियों की आय में व द्धि होती है। आय में व द्धि होने से उनकी क्रय शक्ति पूर्वपेक्षा अधिक हो जाती है। इससे वे अपने विद्यमान उपभोग स्तर में गुणात्मक परिवर्तन करनें मे सक्षम हो जाते हैं। फलतः देशवासियों के जीवन स्तर में व द्धि होती है।

(iv) प्राक तिक संसाधनो का लाभदायक उपयोगः (Profitable Use of Natural Resources):-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को बढाकर एक देश अपने यहाँ विद्यमान "प्राक तिक संसाधनों का लाभदायक उपयोग कर सकता है। निर्यातों से विदेशी मुद्रा का अर्जन करके अपने देश में अनेक प्रकार के उद्योग स्थपित किये जा सकते हैं, इससे अनेक प्रकार के खनिजों तथा वनों से प्राप्त सम्पदाओं का कुशलता से उपयोग निर्यात विपणन में किया जा सकता है।

(v) आयातों का भुगतान : (Payments of Imports):-

देश के विकास हेतु विकासशील देशों की सरकारें औद्योगिक वातावरण का निर्माण करती है। इस के लिए बड़ी मात्रा में पूंजीगत उपकरणों, कच्चे माल, आवश्यक तकनीकी जानकारी का आयात करना आवश्यक होता है। विकासशील देशों के आयात में तेल व पेट्रोलियम उत्पादों के आयात का भी महत्वपूर्ण भाग होता है। ऊर्जा के साधन के रूप में तेल व पेट्रोलियम उत्पादों की काफी आवश्यकता होती है।

इस स्थिति से निपटने का एक मात्र विकल्प यही है, कि देश में अधिकाधिक निर्यात अभिमुखी उद्योग स्थापित किये जायें। ये उद्योग अपने उत्पादन को अधिकाधिक बढाकर तथा विश्व बाजारों में अपने निर्यात को बढाकर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा देश की सरकार को उपहार में दे सकते है जिससे बढे हुए आयातों का भुगतान करने में सरकार को सहायता मिलती है।

(vi) देशी उत्पादकों में प्रतियोगिता का लाभ :- (Benefit of Competition among Domestic Producers):-

सरकार द्वारा निर्यातों पर अनेक प्रकार की प्रोत्साहन योजनाओं की घोषणा की जाती है। देशी उत्पादक इनका लाभ उठाकर अपना अधिकाधिक ध्यान निर्यात विपणन पर देना प्रारम्भ करते हैं। विदेशी बाजारों में पहले से ही व्रीव प्रतिस्पर्द्धा होती है। उसका सामना करते हुए निर्यातक फर्म को अपने देश की फर्मो से भी प्रतियोगिता करनी पड़ती है। इस कारण वह फर्म अच्छी किस्म की वस्तुओं का कम लागत पर उत्पादन करने पर विशेष ध्यान देती है। इससे अच्छी किस्म के माल व वस्तुएँ विदेशी क्रेताओं तक पहुँचती हैं जो विदेशी क्रेताओं के मन-मस्तिष्क में देश की उज्जवल छवि का निर्माण करती है।

(vii) राष्ट्रीय आय में निर्यातों की भूमिका :- (Role of Exports in National Income):-

देश की राष्ट्रीय आय में भी निर्यातों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सुव्यवस्थित निर्यात विपणन से राष्ट्रीय आय को अच्छे स्तर तक बढाया जा सकता है। हंगरी की राष्ट्रीय आय में निर्यातों का योगदान 43% है। अन्य देशों की राष्ट्रीय आय में निर्यातों का योगदान निम्नलिखित है - नीदरलैण्ड 42%, जापान 11%, कनाडा 21%, बेल्जियम 42%, प. जर्मनी 19%, फ्रांस 13%, इंगलैण्ड 17%। इससे राष्ट्रीय आय में निर्यातों की भूमिका स्पष्ट है।

B. व्यक्तिगत फर्म के द ष्टिकोण से महत्व :-
(Importance from the Point of View of Individual Firm)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से न केवल देश की अर्थव्यवस्था लाभान्वित होती है बल्कि देश में विद्यमान व नयी स्थापित होने वाली फर्मो को भी अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। व्यक्तिगत फर्म के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को महत्व का निम्नलिखित शीषर्को में वर्णित किया जा सकता है :-

(i) प्रबन्धकीय चातुर्य के विकास में सहायता :- (Help in the Development of Managerial Talent) :-

देशी विपणन जितन सरल है उसकी तुलना में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन अत्यन्त चुनौतीपूर्ण है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में एक फर्म को दो स्तरों पर कड़ी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। अपने देश के निर्यातको व उत्पादकों से व विभिन्न देशों के निर्यातकों व उत्पादकों से उसे प्रतियोगिता करनी पड़ती है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्धक व कर्मचारी को नित्य नयी चुनौतियों, समस्याओं व परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। अपने अनुभव से प्राप्त लाभ का प्रयोग वे अपनी भविष्य की योजनाओं में करते हैं। इससे फर्म के प्रबन्धकीय चातुर्य के विकास के लिए बहुत अनुकूलता स जित होती हे। विदेशी फर्मे विक्रय को बढ़ाने के लिए क्या-क्या उपाय काम में ला रही हैं। उनके विक्रय की अपील किस बिन्दू पर केन्द्रित है इसकी जानकारी प्राप्त कर वे अपने विपणन कार्यक्रम में भी प्रभावी परिवर्तन करते हैं।

(ii) विद्यमान क्षमता का पूर्ण उपयोग व विस्तार:- (Utilization of Full Existing Capacity and Expansion) :-

फर्मे नये-नये निर्यात बजारों में प्रवेश करने के लिए व्यापक बाजार अनुसन्धान का सहारा ले सकती हैं। इससे नये-नये क्षेत्रों का पता लगाया जा सकता है, जहाँ प्रवेश के अवसर उपलब्ध हैं। इन बाजारों की आवश्यकता के अनुरूप उत्पादों को विकसित कर फर्म अपनी विद्यमान उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग करने में सफल हो सकती है व आवश्यकता पड़ने पर इसमें विस्तार भी कर सकती हैं। विद्यमान क्षमता के पूर्ण उपयोग से फर्म अपने लाभ के अवसरों को भी बढा लेती हैं, क्योंकि एक निश्चित उत्पाद क्षमता तक स्थायी लागतें समान होती हैं। इसे कारण उत्पादन बढ़ाने पर प्रति ईकाई लागत में कमी हो जाती है। यह स्थायी लागतों का बढ़ी हुई ईकाईयों पर विभाजन से होता है।

(iii) उपक्रम का विकास :- (Development of Undertaking) :-

नियोजित अर्थव्यवस्था वाले देशों की सरकारें अपने आयातों में कमी लाने के लिए कई प्रकार के प्रतिबन्ध लगाती हैं। उपक्रम यदि विदेशी मुद्रा का अर्जन निर्यातों से करता है, तो उसके कुछ भाग को वह आवश्यक मशीनों आदि के आयात पर व्यय करता है। इस कारण फर्मे अपने निर्यात विक्रय को अधिकाधिक बढ़ाकर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकती हैं। इसके एक भाग का प्रयोग ये उपक्रम आवश्यक मशीनों, उपकरणों, कच्चा माल तथा तकनीकी जानकारी के आयात में कर अपने उपक्रम का आधारभूत विस्तार करने में सक्षम हो सकते हैं।

(iv) लाभदायक विक्रय परिणाम :- (Profitable Sales-volume) :-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के द्वारा एक फर्म अपने लाभदायक विक्रय परिणाम में व द्धि कर सकती है। देशी विक्रय के लिए भिन्न मूल्यों वाले उत्पादों व विदेशी बाजारों में विक्रय करने के लिए भिन्न मूल्यों व किस्मों की वस्तुओं का निर्माण किया जा सकता है। ऐसे विदेशी बाजार, जो कीमत के प्रति संवेदनशील नहीं हैं, उनके लिए प थक उत्पादों का निर्माण कर, प्रतियोगियों के उत्पादों से पर्याप्त विभिन्नीकरण करके फर्म अपने विक्रय परिणाम को बड़ी सीमा तक लाभप्रद बना सकती है।

(v) देशी बाजारों में प्रतियोगिता :- (Competition in Domestic Market) :-

प्रत्येक देश में विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन हेतु एक ओर विद्यमान फर्म अपने उत्पादन का स्तर बढा रही है, तो दूसरी ओर नवीन फर्मे प्रवेश करती जा रही हैं। इस कारण देशी बाजारों में प्रतियोगिता सघन होती जा रही है। यद्यपि विदेशी बाजारों में भी पहले से ही गलाकाट प्रतियोगिता विद्यमान है, फिर भी फर्म देशी प्रतियोगिता से बचाव करने के लिए विदेशी विपणन या निर्यात विपणन को प्रभावी रूप से अपना सकती है। निर्यात बाजारों में प्रतियोगिता के रूप व स्तर का स्पष्ट अन्तर है। वहाँ कीमत प्रतियोगिता नहीं होकर किस्म व प्रभावों की प्रतियोगिता है। इसके लिए एक उदाहरण ही पर्याप्त होगा कि इन्जीनियरिंग उत्पादों के अन्तर्राष्ट्रीय विपणन बाजारों में व्यापक प्रतियोगिता होते हुए भी भारतीय निर्यातक फर्मो ने अच्छी मात्रा में लाभदायक विक्रय किया है।

(vi) उत्पाद अप्रचलनता :- (Product Obsolescence) :-

प्रत्येक उत्पाद का अपना जीवन चक्र (Life Cycle) होता है। उत्पाद अपनी प्रारम्भिक अवस्था को पार कर, विकास की अवस्था की ओर अग्रसर होता है। विकास से सन्तुष्टि की ओर व सन्तुष्टि से अप्रचलन या गिरावट की आर अग्रसर होता है। अनेक उत्पाद जो देशी बाजारों में अप्रचलित हो जाते हैं। उनके बिक्री के लिए विदेशी बाजारों में अवसर विद्यमान रहते हैं। अनेक ऐसे उत्पाद हैं जो विकसित देशों में अप्रचलन की अवस्था तक पहुँच चुके हैं, पर विकासशील देशों में उन्हें आसानी से बेचा जा सकता है। व्यवहार में हम देखते भी हैं कि अनेक विकसित देशों की सेना में जिन हथियारों को उपयोग से निकाल दिया जाता है, उन हथियारों को विकासशील देश खुशी-खुशी ले लेते हैं। विकसित देशों में लालटेन का बाजार कभी का अप्रचलित हो चुका है, पर आज भी भारत में व अन्य विकासशील देशों में इसके अच्छे बाजार उपलब्ध हैं। इससे स्पष्ट है, कि जो उत्पाद देशी बाजारों में अप्रचलित हो चुके हों उनका निर्यात ऐसे देशों में करके फर्म लाभ कमा सकती है, जहाँ अभी भी इसके विक्रय के अवसर विद्यमान हैं।

(vii) प्रेरणाओं का लाभ :- (Benefits of Incentives) :-

व्यक्तिगत फर्मो के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का महत्व प्रेरणाओं के द ष्ट्रिकोण से भी है। प्रत्येक देश की सरकार अपने निर्यातों को बढ़ाने के लिए अनेक प्रकार की प्रेरणाओं व प्रोत्साहन योजनाओं की घोषणा करती है। निर्यात किये जाने वाले अनेक उत्पादों पर सरकार करों मं रियायत व नकद सहायता देती है, इससे उत्पादों के विक्रय मूल्य में कमी आती है। इसका लाभ उठाकर फर्म विश्व बाजारों में विद्यमान कड़ी प्रतियोगिता का प्रभावी रूप से सामन कर सकती है।

(viii) बढ़ती हुई क्रय-शक्ति :- (Increasing Buying Power) :-

इस शताब्दी में अनेक देशी विदेशी आधिपत्यों से मुक्त होकर आजाद हुए हैं। इन देशों में स्वयं की सरकारें स्थापित हुई हैं। कल्याणकारी राज्य की भूमिका का निर्वाह करते हुए विभिन्न प्रशासन व्यवस्थाओं ने अपने देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत आधार प्रदान किया है, इससे उत्पादन में व द्धि हुई है और प्रति व्यक्ति आय में भी व द्धि हुई है।

व्यक्तिगत फर्मो इस बढ़ी हुइ आय से उत्पन्न क्रय शक्ति में व द्धि का पूरा लाभ उठा सकती हैं। जिन विभिन्न वस्तुओं की मांग में व द्धि हुई है उसका उत्पादन करके अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के द्वारा व्यक्तिगत फर्मे इस स्थिति का पूर्ण विदोहन कर सकती हैं।

C. अन्य द ष्टियों से महत्व :- (Importance from other View points) :-

देश की अर्थव्यवस्था व व्यक्तिगत फर्मो के लिए तो अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का महत्व है ही, पर अन्य कई द ष्टिकोणों से भी इसका महत्व है, जो इस प्रकार हैं -

(i) अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग :- (International Collaboration) :-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की भावना भी जन्म लेती है। विकसित देशों द्वारा विभिन्न वस्तुओं के आयात के लिए विभिन्न देशों के अभ्यंश तय कर दिये जाते हैं। जैसे अमेरिका व पश्चिमी देशों ने सूती कपड़ों के आयात के लिए विभिन्न देशों के लिए अभ्यंश तय कर दिया है। भारत का भी अपना अभ्यंश तय है। इस तय किये गये अभ्यंश की सीमा तक भारतीय निर्यातक इन देशों को सूती वस्त्रों का निर्यात कर सकते है। इस प्रकार की व्यवस्थाओं से अन्तर्राष्ट्रीय विपणन अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग में व द्धि करता है।

(ii) राजनैतिक शान्ति में सहायता :- (Help in Political Peace) :-

अनेक देश ऐसे अनेक राष्ट्रों को विभिन्न वस्तुओं व सेवाओं का निर्यात करते हैं, जिनका राजनैतिक विचारधारा के धरातल पर निकट का भी सम्बन्ध नहीं है। रुस व अमेरिका की राजनैतिक विचारधारा सर्वथा विपरीत है, फिर भी रूस, अमेरिका से अनाज का आयात करता है। भारत अनेक साम्यवादी देशों जैसे रुस, चेकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड, रुमानिया आदि को निर्यात करता है, इससे कुछ सीमा तक राजनैतिक शान्ति में सहायता मिलती है।

(iii) सांस्क तिक सम्बन्धों में निकटता :- (Closer Cultural Relations) :-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से विभिन्न देशों के मध्य व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। विभिन्न देशों के सरकारी व गैर सरकारी प्रतिनिधि मण्डल एक-दूसरे देशों में आवागमन करते हैं। इससे दूसरे देश के निवासियों की आदतों, रीति-रिवाजों व

परम्पराओं का ज्ञान होता है। निर्यातक फर्मे निर्यात विपणन के लिए अपने विक्रय केन्द्र विदेशों में खोलती है, निर्यातक फर्म के कर्मचारियों को इससे उनके निकट आने का अवसर मिल जाता है। इससे विभिन्न देशों के सांस्क तिक सम्बन्धों में निकटता आती है।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से देश की अर्थव्यवस्था को तो अनेक प्रकार के लाभ मिलते ही हैं, साथ ही व्यक्तिगत फर्मो को भी अनेकानेक लाभों की प्राप्ति होती है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से विश्व-बंधुत्व व एकता में भी एक सीमा तक सहायता मिलती है।

अन्तर्राष्ट्रीय बाजार आमुखीकरण :-
(International Market Orientation) :-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में वही फर्मे सफल हो सकती हैं, जो अपनी विपणन नीतियों एवं क्रियाओं को अपने लक्ष्य बाजारों के अनुरूप बनायें। लक्ष्य बाजारों से आशय उन देशों से है, जहाँ कम्पनी अपने उत्पाद एवं सेवाएँ निर्यात करना चाहती है। इसके लिए अपने विपणन मिश्रण अर्थात उत्पाद, मूल्य, वितरण एवं संवर्द्धन को लक्ष्य बाजार के ग्राहकों के अनूरूप बनाना ही बाजार आमुखीकरण है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को प्रभावी बनाने के लिए बाजार आमुखीकरण नितान्त आवश्यक है। इसका विस्तार से अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों में किया जा सकता है -

(1) अर्थ
(Meaning)

व्यावसायिक प्रबन्ध के क्षेत्र के उस भाग को जिसका सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय विपणन क्रियाओं से है अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध कहते है। इसके अन्तर्गत निर्यात विपणन में आने वाली समस्याओं का समाधान प्रबन्ध के द ष्टिकोण से किया जाता है। इसका आशय एक फर्म की उन विपणन क्रियाओं के निर्देशन व नियंत्रण से भी लिया जाता है, जिसके लिए फर्म का आयात एवं निर्यात प्रबन्धक उत्तरदायी होता है। इससे यह स्पष्ट है, कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध के अन्तर्गत उन क्रियाओं का निष्पादन, निर्देशन व नियंत्रण किया जाता है जिनका सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से होता है।

(2) आवश्यकता
(Need)

विपणन की प्रक्रिया दो प्रकार के पहलुओं से युक्त होती है, एक पहलु जहाँ तकनीकी है, वहीं दूसरा सामाजिक है। विपणन का तकनीकी पहलू यह स्पष्ट करता है, कि विपणन के भौतिक तत्वों से सम्बन्धित सिद्धान्त, रीति-रिवाज, नीतियाँ तथा नियमों से सभी देशों में समान रूप से प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार विपणन का तकनीकी पहलू विपणन के सिद्धान्तों व नियमों को सार्वभौमिक स्वरूप देता है।

लेकिन इसका सामाजिक पहलू यह स्पष्ट करता है कि प्रत्येक देश के सामाजिक व सांस्क तिक वातावरण में भिन्नता होती है। संस्क ति, भाषा, आर्थिक विकास, व्यावसायिक व कानूनी प्रावधानों में भी भिन्नता होती है। यह पहलू इस बात पर बल देता है कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के लिए प थक व्यूहरचना की आवश्यकता होती है, जिनसे इन भिन्नताओं का ध्यान रखा जा सके।

इस कारण प थक अन्तर्राष्ट्रीय विपणन व्यूहरचना की आवश्यकता होती है। इससे एक फर्म विदेशी वातावरणों की विविधता के कारण उत्पन्न होने वाले जोखिम को न्यूनतम कर सकती है। प्रत्येक देश के वातावरण व अन्य आवश्यकताओं के अनुरूप उत्पादों का उत्पादन कर फर्म अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की जटिलता व अनिश्चितता को कम कर सकती हैं।

भारतीय उत्पादक अब तक विक्रेता बाजारों की स्थिति का लाभ उठाते रहे हैं। स्थिति में अब परिवर्तन होता जा रहा है। उन्हें अब विश्व बाजारों में प्रतियोगिता के लिए तैयार रहना चाहिएं। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध का प्रभावी रूप से उपयोग कर आज जापान ने अमेरिकी बाजारों में अपने उत्पादन की श्रेष्ठता सिद्ध कर दी है। आज अमेरिकी सड़कों पर बड़ी संख्या में जापानी कारें दौड़ रही हैं। अन्य कई उत्पादों में भी जापानी फर्मे विश्व बाजारों में प्रसिद्ध हैं। आम का रस "फ्रूटी" का आज अमेरिका एवं यूरोपीय देशों में अच्छा निर्यात हो रहा है। फ्रूटी आम का प्राक तिक रस है। इसकी प्राक तिकता की बात को

ही भली प्रकार विज्ञापित किया गया है। इससे बाध्य होकर पेप्सी कोला सात प्रकार के प्राक तिक रस बाजार में प्रस्तुत करने जा रही है। इससे यह स्पष्ट है, कि निर्यात विपणन में फर्म का आकार महत्वहीन है। महत्वपूर्ण बात उसकी एवं अपने उत्पादों की श्रेष्ठता को ग्राहकों के समक्ष प्रभावी रूप से प्रस्तुत करने से है। यह बात निर्यात बाजारों की विशेषताओं का अध्ययन, उत्तम किस्म प्रमापो, आकर्षक पैकिंग, निरन्तर बाजार अनुसन्धान, प्रभावोत्पादक विज्ञापन कार्यक्रम व मित्तव्ययी वितरण व्यवस्था करके ही किया जा सकता है।

भारतीय फर्मे भी विश्व बाजारों में अच्छे भाग को तभी प्राप्त कर पायेंगी जब वे अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध पर ध्यान देंगी, जिसमें विश्व बाजारों की सांस्क तिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का बारीकी से अध्ययन हो।

(3) विपणन-मिश्रण व्यूहरचना
(Marketing-Mix Strategy)

विक्रेता बाजारों के क्रेता बाजारों में परिवर्तन होने से प्रतियोगिता कठोर हो चुकी है। वर्तमान सन्दर्भ में विक्रय इतना सहज नहीं रहा जितना विक्रेता बाजारों की स्थिति में था। उपभोक्ता सार्वभौमिक स्थिति में आ गया है। उत्पाद की बिक्री को लाभप्रद बनाने में अनेक प्रकार के तत्वों का सहयोग होता है। उत्पाद की डिजाइन, किस्म, पैकेज, लेबल, मूल्य, विक्रय-संवर्धन, वितरण आदि अनेक प्रकार के घटक उत्पाद की विक्रयशीलता को अनुकूल या प्रतिकूल बनाते हैं। विपणन-मिश्रण के विचार को अपना कर संस्था ऐसे विवेक-संगत निर्णय करने में सफल हो सकती है जो उसके विक्रय को लाभप्रद बना सके। विपणन-मिश्रण के विचारों को निम्नलिखित परिभाषाओं से स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है -

(1) **डॉ. आर. एस. डावर** के अनुसार, "उत्पादकों द्वारा बाजारों में सफलता प्राप्त करने हेतु अपनायी जाने वाली नीतियाँ विपणन-मिश्रण की रचना करतीं है।"[1]

(2) **विलियम जे. स्टेनटन** के अनुसार, "विपणन-मिश्रण ऐसा पद है जिसका किसी कम्पनी की विपणन प्रणाली के आधारभूत भाग की रचना करने वाले चार आदानों-उत्पाद, वितरण-प्रणाली, मूल्य-संरचना और संवर्धनात्मक कार्यो के संयोजन का वर्णन करने के लिए किया जाता है।"[2]

(3) **फिलिप कोटलर** के अनुसारए "एक फर्म का कार्य अपने विपणन चलों के लिए सर्वोत्तम विन्यास का पता लगाना है। ये विन्यास ही इसके विपणन-मिश्रण की रचना करते है।"[3]

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि विपणन-मिश्रण में ऐसे विपणन चलों के विन्यासों का चुनाव करना है, जो उसे अधिकाधिक लाभ प्रदान कर सकें व उसके विपणन कार्यक्रम को प्रभावी बना सकें। ये विपणन चल ही कम्पनी या फर्म की विपणन प्रणाली का आधारभूत भाग होते हैं। इस प्रकार विपणन-मिश्रण विपणन व्यूह-रचना का एक भाग है जिसमें संस्था बाजार लक्ष्यों को परिभाषित करके उसके अनुरूप ऐसे विपणन चलों का चयन करती है जिससे बाजार के लक्ष्यों को ग्राहक-सन्तुष्टि के द्वारा प्राप्त किया जा सके। उत्पादक या विक्रेता का सम्पूर्ण विपणन कौशल इसी बात पर निर्भर करेगा कि वह विभिन्न चलों का किस प्रकार मिश्रण व संयोजन करता है।

(i) विपणन-मिश्रण के तत्व
(Ingredients or Elements of Marketing Mix)

अब प्रश्न यह होता है, कि आखिर वे कौन से चल हैं जो मिलकर विपणन-मिश्रण की रचना करते है। विद्वानों में इस बारे में एक सर्व-सम्मत राय नहीं है। **लेजर एवं केली** ने विपणन-मिश्रण के तत्वों का वर्गीकरण तीन श्रेणियों में किया है : (1)

---

1. "The Policies adopted by manufacturers to attain success in the market constitute the Marketing Mix."
— R. S. Davar : Modern Marketing Management, p. 14

2. "Marketing-Mix is the term used to describe the combination of the four inputs which constitute the core of the compan's marketing team – the product, the distribution system, the price structure and the promotional activities."
—W. J. Stanton : Fundamentalss of Marketing, p. 29.

3. "The firm's task is to find the best setting for its marketing decision variables. The setting constitute its Marketing-Mix.
—Philip Kotlar : Marketing Management, p. 43.

उत्पाद एवं सेवा मिश्रण, (2) वितरण मिश्रण, तथा (4) संचार मिश्रण।[1] **लिपसन एवं डार्लिंग** ने विपणन मिश्रण में चार तत्वों को सम्मिलित किया है - (1) उत्पाद, (2) विक्रय शर्ते, (3) वितरण तथा (4) संचार।[2] उत्पाद में उन्होंने भौतिक उत्पाद, ब्रांड, पैकेज व संचार सेवाएँ सम्मिलित की हैं, विक्रय शर्तो में साख शर्तो, मूल कीमत तथा परिवहन शर्ते शामिल की हैं। उत्पाद में विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय संवर्धन एवं जन सम्पर्क को शामिल किया है। वितरण में उन्होंने संग्रहण सुविधाएँ तथा वितरण वाहिकाएँ सम्मिलित की हैं।

मेक्कार्थी ने विपणन-मिश्रण में चार तत्वों को शामिल किया है जो क्रमशः उत्पाद (Product), स्थान (Place), संवर्धन (Promotion), व कीमत (Price), हैं।[3] मेक्कार्थी के द्वारा वर्णित उपरोक्त 'चार पी' (Four P's) विपणन-मिश्रण के तत्वों का स्पष्ट रूप से वर्णन करते हैं।

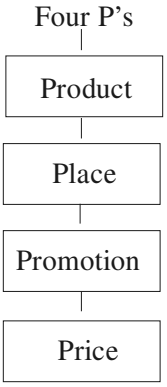

इनमें प्रत्येक का वर्णन इस प्रकार है -

(a) **उत्पाद** (Product) — उत्पाद के अन्तर्गत डिजाइन, शैली, किस्म, पैकेज, लेबल, ब्राण्ड नाम, प्रमापीकरण व श्रेणीयन एवं वस्तु की गारन्टी व सेवाएँ सम्मिलित की जाती हैं।

(b) **स्थान** (Place) — इसमें उत्पादित वस्तु व सेवाओं को उपभोक्ता तक पहुँचाने हेतु वितरण की वाहिकाओं के चयन पर ध्यान दिया जाता है। इसमें परिवहन, भण्डारण, इन्वेन्टरी स्तर एवं स्थानीयकरण आदि तत्वों को शामिल किया जाता है।

(c) **संवर्धन** (Promotion) — संवर्धन में उन सभी क्रियाओं को शामिल किया गया है, जिसे उत्पादक अपने उत्पादों के विक्रय हेतु प्रयोग करता है। इसमें विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय, प्रचार व विक्रय संवर्धन को शामिल किया गया है।

(d) **कीमत** (Price) — इसमें वस्तुओं के कीमत निर्धारण को शामिल किया जाता है। इसके साथ की विक्रय मूल्य पर किस दर से किस सीमा पर छूट व बट्टा दिया जाऐगा इसका वर्णन भी होता है। भुगतान की शर्ते क्या होंगी ? इसे भी शामिल किया जाता है। प्रतियोगिता के तत्व का भी कीमतें निर्धारित करते समय पूरा ध्यान रखा जाता है।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता ह, कि विपणन-मिश्रण में विभिन्न विद्वानों ने अनेक प्रकार के तत्वों को शामिल किया है। इन सब के आधार पर यह कहा जा सकता है, कि विपणन-मिश्रण में वस्तु या उत्पाद नियोजन, उत्पाद विकास, बाजार, अनुसन्धान, विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय, प्रचार, संवर्धन, मूल्य निर्धारण, उत्पाद का भौतिक वितरण, वाहिकाओं का चयन आदि तत्वों को सम्मिलित किया जाता है।

(ii) अन्तर्राष्ट्रीय विपणन एवं विपणन-मिश्रण का विचार (International Marketing and Concept of Marketing Mix) —

विपणन-मिश्रण का विचार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। विश्व बाजारों में काफी कड़ी प्रतियोगिता

---

1. **William Laze4r and E. J. Kellay :** Managerial Marketing, p . 413.
2. **H. A. Lipson and J. R. Darling :** Introduction to Marketing – An Administrative Approach, p. 586.
3. **McCarthy :** Basic Marketing – A Managerial Approach, p. 44.

विद्यमान है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्धक विपणन-मिश्रण में शामिल विभिन्न तत्वों का इस प्रकार उपयोग कर सकता है, जो विदेशी बाजारों की आवश्यकता के अनुरूप हो। विपणन-मिश्रण में शामिल विभिन्न तत्वों का उसे अनुकूलतम मिश्रण करना चाहिए।

निर्यात बाजारों में एक निर्यातक फर्म तभी सफल हो सकेगी जब उसके उत्पाद वांछित किस्म प्रतिमानों के अनुरूप हों। उत्पाद का रंग, डिजाइन व शैली, पैकेज, लेबल, ब्रांड नाम इस प्रकार का होना चाहिए जो विदेशी क्रेताओं को बरबस अपनी ओर आकर्षित करे। उत्पाद गारन्टी व विक्रयोपरान्त सेवाओं को भी उचित स्थान दिया जाना चाहिए।

विपणन-मिश्रण का विचार यह वर्णित करता है कि उत्पाद नियोजन व विकास के पश्चात उत्पादक को इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि उत्पादित वस्तुएँ व सेवाएँ किस प्रकार उपभोक्ताओं तक प्रवाहित की जाएँगी। विपणन प्रबन्धक को यह ध्यान रखना चाहिए कि वितरण लागत किसी भी प्रकार से उत्पाद की उपयोगिता में व द्धि नहीं करती। वितरण की ऐसी वाहिकाओं को तिलांजलि देनी चाहिए। यातायात व परिवहन के ऐसे माध्यमों को अपनाया जाना चाहिए जो द्रुतगामी हों। उपभोक्ता केन्द्रों पर सहजता से व शीघ्र वितरण हेतु वहाँ संग्रह व भण्डारण की भी व्यवस्था की जानी चाहिए।

आज के युग में प्रभावी माँग का स जन (Creation of effective demand) करने में विज्ञापन व व्यक्तिगत विक्रय आदि की अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ इनका महत्त्व भी बढ़ता जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में संवर्धन मिश्रण के तीनों तत्वों का अनुकूलतम सन्तुलन से उपयोग करना चाहिए। जहाँ उत्पादक अपने उत्पाद का विभिन्नीकरण कर सकता हो, उत्पाद में छुपे हुए अभिप्रेरक (Hidden buying motives) हों, विस्त त बाजार हों, काफी बड़ी संख्या में ग्राहकों तक पहुँच करनी हो, तब विज्ञापन का अधिक उपयोग करना चाहिए और जहाँ उत्पाद की प्रति इकाई लागत अधिक हो, उत्पाद में प्रदर्शन मूल्य (Demonstration value) हों, ग्राहक-आपत्तियों का प्रत्यक्ष निवारण करना आवश्यक हो, वहाँ व्यक्तिगत विक्रय अपनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त अनके विक्रय संवर्द्धन के साधन, जैसे मेले, प्रदर्शनियाँ, कूपन, कीमतों में कमी, प्रीमियम, विक्रय प्रतियोगिताओं की सहायता से भी विक्रय बढ़ाया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में इसका व्यापक रूप से महत्त्व है। निर्यात बाजारों में विक्रय हेतु संवर्धन-मिश्रण के तीनों तत्वों का उचित तालमेल बैठाकर उपयोग करना चाहिए।

विपणन-मिश्रण का विस्तार यह बताता है कि वस्तुओं की कीमतों का निर्धारण किसी भी फर्म की सफलता का महत्त्वपूर्ण निर्णय होता है। कीमतों का निर्धारण फर्म स्वतन्त्र रूप से नहीं कर सकतीं। इसका निर्धारण बाजार में विद्यमान प्रतियोगिता व ग्राहकों की क्रय-शक्ति दोनों को ध्यान में रखकर करना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कीमत निर्धारण इस बात पर निर्भर करता है कि निर्यात बाजार विकसित देशों के हैं, या विकासशील देशों के। दोनों प्रकार के बाजारों में कीमत निर्धारण में आधारभूत अन्तर होता है। विकसित देशों के बाजारों में कीमत प्रतियोगिता नहीं के बराबर होती हैं। वहाँ कीमतें अधिक रखी जा सकती हैं। विकासशील देशों के क्रेता अपनी सीमित क्रय-शक्ति के कारण कीमतों के प्रति संवेदनशील होते हैं, अतः वहाँ कम कीमतें ही विक्रय बढ़ा सकती हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्धक समय-समय पर बाजारों में आवश्यक विपणन अनुसंधन करवा कर विभिन्न तत्वों के बारें में होने वाले परिवर्तनों का पहले पता लगा सकता है। उसके आधार पर उचित समायोजन करके फर्म निर्यात बाजारों में अपने लाभदायक विक्रय परिमाण में व द्धि कर सकती है। नये-नये बाजारों में प्रवेश करने के साथ ही फर्म विद्यमान बाजारों पर अपनी पकड़ को मजबूत बनाये रख सकती है।

उपर्युक्त विवरण से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि, विपणन-मिश्रण की विचारधारा का अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में व्यापक महत्त्व है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्धक को चार "पी" का उचित समन्वय स्थापित करना चाहिए जिससे वह लाभप्रद विपणन के अवसरों को जुटा सके।

(iii) विपणन-मिश्रण में परिवर्तन (Changes in the Marketing-Mix) —

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में सफलता के लिए यही आवश्यक नहीं है, कि एक बार बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त विपणन-मिश्रण बना लिया जाएँ वरन् यह भी आवश्यक है कि इसमें परिस्थितियों में परिवर्तन के अनुसार यथोचित परिवर्तन भी किये जाएँ। इन परिवर्तनों की आवश्यकता अनेक कारणों से हो सकती है। प्रतियोगिता के स्तर, उपभोक्ताओं की रुचियों, आदतों, क्रय-व्यवहारों, फैशन, क्रय-शक्ति, शिक्षा, सामाजिक व सांस्क तिक स्तर, नये उत्पादों के बाजार में प्रस्तुतीकरण, जीवन-स्तर, सरकारी कानूनों में परिवर्तन आदि अनेक ऐसे कारण हैं जो एक निर्यातक फर्म को समय-समय पर बाध्य करते

हैं कि वह अपने विपणन-मिश्रण में परिवर्तन करे। विद्यमान बिक्री-स्तर के अलाभप्रद बनने पर निर्यातक अपने वर्तमान विपणन-मिश्रण पर विचार करने को प्रेरित हो सकता है।

उपरोक्त कारणों के प्रभाव से जब भी निर्यातक का अपने विपणन-मिश्रण में परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव हो तो उसे पहले इस सम्बन्ध में बाजार अनुसंधान करके इस बात को सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि किस प्रकार के परिवर्तन किस सीमा तक अपेक्षित हैं। ऐसे परिवर्तन पहले कुछ चयनित बाजारों तक करना ठीक रहता है। यदि इन चयनित बाजारों में अनुकूल परिणाम निकले तों इस प्रकार से परिवतर्तित विपणन-मिश्रण का विस्तार अन्य निर्यात बाजारों तक किया जाना चाहिए। इससे यह स्पष्ट हैं कि विपणन-मिश्रण में परिवर्तन अत्यन्त ही विवेकसम्मत निर्णय से होना चाहिए नहीं तो फर्म विद्यमान बाजारों मे भी अपने भाग से हाथ धो बैठेगी।

(iv) उपभोक्ता अभिमुखी व्यूहरचना (Consumer Orientation Strategy) —

एक उत्पादक या निर्माता जितनी भी वस्तुओं व सेवाओं का उत्पादन करता है, उसका अन्तिम लक्ष्य ग्राहकों तक उनका विक्रय करना होता है। गोदाम की शोभा बढ़ाने के लिए वह वस्तुओं का उत्पादन नहीं करता है। विक्रेता-बाजारों के क्रेता-बाजारों में परिवर्तन, गलाकाट प्रतियोगिता की स्थिति, शिक्षा के प्रसार, उन्नत जीवन-स्तर, उपभोग संरचनाओं में परिवर्तन आदि घटकों के प्रभाव से वर्तमान समय में विक्रय करना चुनौतीपूर्ण कार्य हो गया है। उपभोक्ता की स्थिति सार्वभौमिक हो गयी है। वह बाजार का एकछत्र राजा या सम्राट होता है। सभी कम्पनियों की विपणन क्रियाओं का ताना-बाना इस प्रकार बुना जाता है, जिससे उपभोक्ता-रूपी सम्राट की सही प्रकार से सेवा की जा सके।

आज यह जमाना कालातीत हो चुका है जब एक उत्पादक यह सोचता था, कि यदि उसका उत्पाद उत्तम है तो वह स्वयं ही ग्राहकों को आकर्षित करेगा। आज जो उत्पादक चाहता है वह नहीं, अपितु जो ग्राहक चाहता है वही उत्पादित करेगा। उपभोक्ता अभिमुखी का विचार इस बात की व्याख्या करता है कि एक कम्पनी का सर्वप्रथम व्यापक बाजार अनुसंधान करके यह पता लगाना चाहिए, कि ग्राहक उत्पाद से क्या अपेक्षाएँ रखते हैं, उसी के अनुरूप उत्पादों का निर्माण कम्पनी को करना चाहिए। जिन-जिन विपणन फर्मो ने इस विचार को व्यवहार में अपनाया है, उन्होंने बाजार के अच्छे भाग पर अधिकार किया है। जापान की "कोडक" कम्पनी ने इसी विचार को अपनाकर फिल्मी रीलें, कैमरों आदि के अच्छे बाजार अमरीका में बनायें हैं। जापान की सीको कम्पनी ने घड़ी में काबा को प्रदर्शित करने वाली सूई साथ में लगाकर खाड़ी देशों में अपनी घड़ियों का बहुत अच्छा निर्यात किया है। भारत में सूती वस्त्रों के निर्यातकों ने भी पश्चिमी शैली के आधार पर कपड़े बनाकर विश्व बाजारों में अपना अधिकार जमाया है, पर आज चीन वस्त्र उद्योग के क्षेत्र में भारत के समक्ष जबरदस्त चुनौती बन कर खड़ा है।

संक्षेप में यह विचार इस बात का वर्णन करता है, कि वर्तमान समय में सफलता प्राप्त करने के लिए कम्पनी के संगठन चार्ट में उपभोक्ता का स्थान सर्वोच्च होना चाहिए। उपभोक्ता जैसे उत्पाद व सेवाएँ चाहता है, उन्हें ही प्रदान कर संस्था लाभ अर्जित कर सकती है, अन्यथा उसे निराशा ही हाथ लगेगी।

उपभोक्ता अभिमुखी का क्रियान्वयन

(Implementation of Consumer Orientation)

उपभोक्ता अभिमुखी विचार का महत्त्व तो उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है, पर मूल प्रश्न यह है कि एक कम्पनी जो इस विचार के आधार पर अपनी विपणन क्रियाओं का निष्पादन करना चाहती है, वह इसका क्रियान्वयन किस प्रकार करे। अमरीकी विद्वान **फिलिप कोटलर**[1] ने इसके क्रियान्वयन की पाँच अवस्थाओं का वर्णन किया है जो इस प्रकार हैं -

---

1. **Philip Kotlar** : Marketing Management, p. 18.

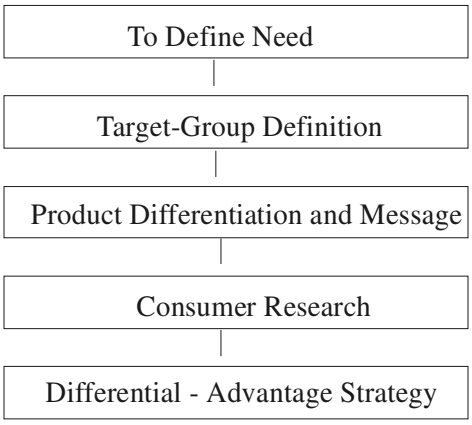

(i) आवश्यकता को परिभाषित करना (To define need) —

उत्पादक या निर्माता को सर्वप्रथम तो यह निर्णय करना होगा कि वह किस प्रकार की आवश्यकता को पूरा करना चाहता है। वह जिन वस्तुओं या सेवाओं का उत्पादन या निर्माण कर रहा है, उसे या उसके किसी भाग को ही उपभोक्ताओं को प्रदान कर सकता है। ऐसा करते समय कम्पनी को अपने द्वारा प्रदान किये जाने वाले उत्पादों को एक उपभोक्ता की द ष्टि से देखने का प्रयास करना चाहिए। एक दवाइयों का विक्रय करने वाली फर्म न केवल दवाइयाँ बेचती है, बल्कि वह स्वास्थ्य भी बेचती है। ऊनी कपड़ों के निर्माता के लिए ऊनी कपड़े मात्र ऊनी कपड़े ही हैं, पर उपभोक्ता के लिए वे सर्दी की सुखद गर्माहट है। श्र ंगार के सामानों का उत्पादन उत्पादक के लिए केवल श्र ंगार के प्रसाधनों का निर्माण ही है, पर किसी युवती के लिए यह सौन्दर्य है, क्योंकि वह तो इसे उसी द ष्टि से देखती है। अतः उत्पादक को सर्वप्रथम ग्राहकों की द ष्टि से उत्पाद को देखने का प्रयास करना चाहिए कि वे उत्पाद से क्या चाहते हैं।

(ii) लक्ष्य-समूहों की परिभाषा (Target-group definition) —

प्रत्येक निर्माता न तो सभी उत्पाद बना सकता है, न सभी बाजारों में अपने उत्पादों का विक्रय कर सकता है। अपने सीमित साधनों के कारण कम्पनी को अपनी भावी विपणन क्रियाओं की सीमा निर्धारित करनी होती है। इसके लिए उत्पादक को बाजार विभक्तिकरण करके ऐसे बाजारों का चयन करना होगा जहाँ तक पहुँच उसके लिए लाभप्रद व संसाधनों की सीमा में हो।

एक संगठन अनेक प्रकार के समूहों को उत्पाद व सेवाएँ प्रदान करता है, लेकिन सभी समूहों से वह समान श्रम व ध्यान से व्यवहार नहीं करता। अनके समूह में से भी जो समूह अधिक लाभदायक विक्रय परिणाम दे सके, उसे प्राथमिकता दी जानी चाहिए। एक हवाई यातायात कम्पनी केवल छुट्टियों में भ्रमण करने वाले यात्रियों की अपेक्षा व्यावसायिक ग्राहकों पर अधिक ध्यान दे सकती है; क्योंकि एक तो व्यावसायिक ग्राहक स्थायी रूप से भ्रमण करते ही रहते हैं, दूसरी ओर छुट्टियों में भ्रमण करने वाले यात्री अधिक मूल्य न देकर भी विमान की अत्यन्त सुविधायुक्त श्रेणी चाहते हैं। इससे वह कम्पनी अधिक लाभ कमाने हेतु व्यावसायिक ग्राहकों पर अधिक ध्यान देना उपयोगी समझ सकती है। इससे स्पष्ट है कि क्रियान्वयन के दूसरे चरण में उत्पादक को बाजार में से किसी एक लक्ष्य समूह का चयन करना चाहिए जो अपेक्षाक त अधिक लाभप्रद हो।

(iii) उत्पाद विभिन्नीकरण व सन्देश (Product differnentiation and message) —

इसके पश्चात् विभिन्न लक्ष्य समूहों के ग्राहकों की इच्छाओं, प्रव त्तियों व व्यवहार का पता लगाने, मूल्यांकन करने व निर्वचन करने हेतु पुनः आधारभूत बाजार अनुसंधान किया जाना चाहिए। इसके अन्तर्गत कम्पनी को विभिन्न आधारों पर बाजार का विभिक्तिकरण कर लेना चाहिए। इसका उद्देश्य यह होता है कि एक ही बाजार के विभिन्न ग्राहकों को उत्पादों का विक्रय किया जा सके। इसके लिए भिन्न-भिन्न किस्मों, रंगों, डिजाइनों व मूल्यों वाले उत्पादों का निर्माण आवश्यक होता है। व्यवहार में हम देखते भी हैं कि एक ही कम्पनी अलग-अलग मूल्यों व किस्मों वाले उत्पादों का निर्माण करती है जिससे विभिन्न आय-वर्गों के ग्राहकों को उत्पादों का विक्रय किया जा सके। अमरीकी फोर्ड मोटर कम्पनी ने विभिन्न मूल्यों वाली, अनेक किस्म, डिजाइन, उपयोग वाली मोटर गाड़ियों का निर्माण कर विभेदात्मक वस्तु नीति को सफलता से अपनाया है।

विभेदात्मक उत्पादों के निर्माण के साथ ही यह भी आवश्यक है कि ग्राहकों तक यह सन्देश पहुँचाया जाये कि अमुक उत्पाद किस प्रकार से उनकी प्रभावी रूप से व कुशलता से सेवा करता है। विज्ञापन सन्देशों में इस बात को प्रधानता दी जानी चाहिए कि-यह उत्पाद तो केवल आप ही के लिए बनाया गया है, क्योंकि यह इस प्रकार से आपकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

(iv) ग्राहक अनुसंधान (Consumer reserach) —

विभिन्न ग्राहक वर्गो की आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने वाले उत्पादों का विभेदात्मक रूप से उत्पादन व विक्रय ही पर्याप्त नहीं है बल्कि कम्पनी को सतत् रूप से ग्राहक अनुसंधान सम्पन्न करते रहना चाहिए। वर्तमान समय में उपभोक्ताओं की रुचियों, आदतों, क्रय-व्यवहारों, प्राथमिकताओं आदि में शीघ्रता से परिवर्तन हो रहे हैं। इसने सम्पूर्ण विपणन प्रणाली को काफी गतिशील बना दिया है।

बाजार अनुसंधान से प्राप्त परिणामों के मूल्यांकन के आधार पर कम्पनी अपने उत्पादों में आवश्यक परिवर्तन करके ने केवल सम्भावित हानियों से अपनी रक्षा कर सकती है, बल्कि अच्छे बाजार अंश पर अपना अधिकार कर सकती है। इससे कम्पनी ग्राहक सन्तुष्टि को बनाये रख सकती है।

(v) विभेदात्मक-लाभ व्यूहरचना (Differential-advantage strategy) — ग्राहक अभिमुखी विचार के क्रियान्वयन का यह अन्तिम चरण है। ग्राहक जिस उत्पादक के उत्पाद को प्रयोग में ला रहा है, वह उस उत्पाद की विशेषताओं की तुलना बाजार में विद्यमान अन्य प्रतियोगियों के उत्पादों से करता है। इस कारण कम्पनी को अपने साधनों, प्रतिष्ठा व अवसरों के द्वारा अपने उत्पाद में किसी विभेदात्मक लाभ को स जित करने का प्रयास करना चाहिए। विभेदात्मक लाभ से आशय एक उत्पादक द्वारा प्रदान किये जा रहे ऐसे लाभों से है, जो उसके प्रतियोगियों के उत्पाद में नहीं है। इससे ग्राहक को एक अतिरिक्त सन्तुष्टि का आनन्द होता है। ऐसा करना कम्पनी के दीर्घकालीन विपणन के हितों की द ष्टि से अत्यन्त अनूकूल रहता है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि ग्राहक अभिमुखी विचार को अपना कर निर्यातक अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में प्रतियोगिता की जटिल स्थिति में भी लाभ कमा सकता है। जापानी 'कोडक' कम्पनी तथा अमरीका की 'फोर्ड मोटर कम्पनी' की सफलता के पीछे बड़ा कारण यही है कि उनके विपणन कार्यक्रमों की सम्पूर्ण दिशा व प्रवाह ही ग्राहक अभिमुखी है। आज किसी भी फर्म को जीवित रहना है अथवा अपना विकास व प्रगति करनी है तो उसे ग्राहक-अभिमुखी होना ही पड़ेगा, यही समय की माँग है।

घरेलू विपणन बनाम अन्तर्राष्ट्रीय विपणन
(Domestic Marketing vs. International Marketing)

विपणन की विभिन्न क्रियाएँ जब एक देश विशेष तक सीमित रहती है, तब इसे घरेलू विपणन कहा जाता है। इसके विपरीत जब विपणन की क्रियाएँ दो या दो से अधिक देशों के बीच होती हैं, तो इसे अन्तर्राष्ट्रीय विपणन कहते हैं। यद्यपि घरेलू विपणन तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कई समानताएँ हैं। फिर भी इनमें काफी मौलिक अन्तर है।

घरेलू विपणन तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अन्तर
Difference between Domestic Marketing and International Marketing)

क्रम. संख्या	अन्तर का आधार	घरेलू विपणन	अन्तर्राष्ट्रीय विपणन
1.	अर्थ (Meaning)	विपणन जब एक देश की सीमाओं तक सीमित रहता है, तो इसे घरेलू विपणन कहा जाता है।	जब कि विपणन क्रियाएँ दो या दो से अधिक देशों तक विस्तृत हो जाती हैं, तो यह अन्तर्राष्ट्रीय विपणन कहलाता हैं।
2.	अनुमति एवं लाईसेन्स (Permission & Licence)	घरेलू विपणन के लिए प्रायः किसी विशेष अनुमति या लाईसेन्स की आवश्यकता नहीं होती।	जब अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के लिए भारत सरकार तथा रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से विशेष अनुमति एवं लाईसेन्स की आवश्यकता होती है।
3.	मुद्रा (Currency)	घरेलू विपणन के लिए देशी मुद्रा अर्थात् रुपये की ही आवश्यकता होती है।	जबकि इसके लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होती है।
4.	नीतियाँ (Policies)	घरेलू विपणन के सन्दर्भ में कोई विशेष सरकारी नीतियाँ नहीं होती हैं।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के सम्बन्ध में केन्द्र सरकार समय-समय पर Export-Import Policy का निर्धारण करती है।
5.	प्रक्रिया (Process)	घरेलू विपणन की प्रक्रिया सामान्य तौर पर सरल व कम समय लेने वाली होती है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की प्रक्रिया जटिल, अधिक समय लेने वाली तथा औपचारिकताओं से भरपूर होती है।
6.	गुणवता (Standard)	घरेलू विपणन वस्तुओं एवं सेवाओं की किस्म स्थानीय एवं राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुरूप होती है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में वस्तुओं एवं सेवाओं की गुणवता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित की जाती है।
7.	प्रतियोगिता (Competition)	इसमें प्रतियोगिता राष्ट्रीय स्तर की होती है। तथा इसमें किस्म की तुलना में कीमत पर अधिक प्रतियोगिता होती हैं।	जबकि इसमें प्रतियोगिता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होती हैं। तथा मूल प्रतियोगिता गुणवता की होती है ना कि कीमत पर।
8.	क्षेत्र (Area)	घरेलू विपणन का क्षेत्र एक देश की सीमाओं तक सीमित रहता है।	जबकि इसमें विपणन का क्षेत्र काफी व्यापक होता है, तथा वह अनेक देशों तक विस्तृत होता है।
9.	अनुसंधान एवं विकास (Research and Development)	इसमें अनुसंधान एवं विकास कार्यो पर इतना ज्यादा जोर नहीं दिया जाता हैं।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अनुसंधान तथा विकास कार्यो पर अत्यधिक जोर दिया जाता है।
10.	जोखिम (Risk)	इसमें जोखिम तुलनात्मक रूप से कम होता है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में जोखिम की मात्रा सर्वाधिक होती है।
11.	लाभ (Profit)	इसमें लाभ की मात्रा कम रहती है।	जबकि इसमें लाभ की मात्रा काफी अधिक रहती है।
12.	पैकिंग (Packing)	इसमें पैकिंग की किस्म तथा लागत दोनों कम रहती है।	जबकि इसमें पैकिंग की किस्म विशेष तथा लागत भी अधिक रहती है।
13.	परिवहन (Transportation)	इसमें परिवहन की व्यवस्था सरल एवं सस्ती होती है।	जबकि इसमें परिवहन की व्यवस्था जटिल एवं महंगी होती है।

14.	विनिमय दर (Exchange Rate)	इसमें विनिमय दर की कोई समस्या नहीं होती है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन विनिमय दर का विशेष महत्व होता है।
15.	मात्रा (Quantity)	घरेलू विपणन में विक्रय की मात्रा प्रायः कम रहती हैं।	जबकि इसमें विक्रय की मात्रा अधिकतर अधिक होती है।
16.	जटिलताएँ Complication)	इसमें विपणन प्रक्रिया सरल और आसान होती है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में ज्यादा जटिलताएँ होती हैं।
17.	E-Commerce तथा E-Banking	घरेलू विपणन इनका विशेष महत्त्व एवं प्रयोग नहीं होता है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में इनका विशेष प्रयोग एवं महत्त्व होता है।
18.	राजनैतिक जोखिम (Political Risk)	इसमे राजनैतिक जोखिम लगभग ना के बराबर होता है।	जबकि इसमें राजनैतिक जोखिम सबसे अधिक होता है।
19.	राशि पतन (Dumping)	घरेलू विपणन में राशि पतन का कोई महत्त्व नहीं होता।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन विकसित देशों के द्वारा इस प्रकार की क्रियाओं का अक्सर प्रयोग किया जाता है।
20.	संगठन (Organisation)	घरेलू विपणन में केवल स्थानीय और राष्ट्रीय संगठनो की भूमिका होती है।	जबकि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की अहम भूमिका होती है। जैसे WTO, GATT, IMF, ITC, UNCTAD.
21.	कानून (Law)	घरेलू विपणन में विवाद की अवस्था में अपने देश के कानून लागू होते हैं।	जबकि इसमें दूसरे देशों के कानून लागू होते हैं, जिनके साथ हम व्यापार कर रहे हैं।

भारत में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध एवं इसकी समस्याएं
(International Marketing Management in Indian and Its Problems) :–

आधुनिक व्यावसायिक प्रबन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध का एक अत्यन्त महत्वपर्ण स्थान है। यही कारण है, कि आज हमारी सभी प्रमुख प्रबन्ध संस्थान अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध के लिए कार्यक्रम लेकर आ रहे हैं। 1991 में भारत सरकार के द्वारा उदारीकरण की नीति अपनाने, 1994 में GATT पर हस्ताक्षर करने तथा W.T.O. की सदस्यता स्वीकार करने के बाद से अन्तर्राष्ट्रीय विपणन और उसके प्रबन्ध की आवश्यकता और महत्व अपने आप कई गुना बढ गया है।
भारत में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध की विचारधारा को अपनाने में कुछ समस्याएं हैं, जिनके निराकरण करने तथा उचित वातावरण बनाने की अत्यधिक आवश्यकता हैं। ये समस्याएँ निम्नलिखित हैं :-

(1) विपणन कर्मचारियों की अभाव :-
(Lack of Marketing Personal)

वर्तमान में हमारे देश में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध के क्षेत्र में कुशल एवं अनुभवी प्रबन्धकों सलाहकारों तथा कर्मचारियों का नितान्त अभाव है। जिसकी पूर्ति निकट भविष्य में होने की संभावना कम ही नजर आती है। इस सम्बन्ध में सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थानों को विशेष एवं ईमानदार प्रयास करने की आवश्यकता है।

(2) अनुसंधान सुविधाओं का अभावः-
(Lack of Research Facilities)

भारत में विभिन्न प्रकार की विपणन अनुसंधान करने वाली सुविधाओं का अभाव है। यहाँ पर ऐसी संस्थाओं की मात्रा बहुत ही कम है, जो विपणन अनुसंधान में सहयोग या अनुकूल राय प्रदान कर सकें। ऐसी सस्थाएँ तो बहुत ही कम हैं, जो निर्माता

के लिए स्वयं अनुसंधान कर अपनी अनुसन्धान सम्बन्धी संस्तुति दे सकें। यदि कोई निर्माता अनुसन्धान कार्यकर्त्ता स्वयं भर्ती करना चाहता है तो ऐसे कार्यकर्त्ताओं की भारत में कमी है।

3. सूचनाओं का अभाव :-
(Lack of Information)

निर्यातकों को सही सूचना समय पर उपलब्ध न होना भी अपने आप में एक बहुत बड़ी समस्या है। विदेशों में यह कार्य सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाएं बड़ी बखूबी से चला रही हैं। इस सम्बन्ध में निजी सलाहकारो का सहयोग प्राप्त करके उस समस्या का समाधान किया जा सकता है।

4. कानूनी अड़चने :-
(Legal Obstacles)

निर्यातकों तथा आयात कर्त्ताओं दोनों को ही अपने कार्य में भारी कानूनी अड़चनों का सामना करना पड़ता है। सरकार के द्वारा प्रक्रिया का सरलीकरण करने के बाद भी अभी यह काफी जटिल एवं समय नष्ट करने वाली है। इस सम्बन्ध में भी अभी काफी सुधार करने की आवश्यकता है।

5. गुणवत्ता की कमी :-
(Lack of Standard)

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कीमत की प्रतियोगिता कम तथा गुणवत्ता की प्रतियोगिता अधिक होती है। अन्तर्राष्ट्रीय मानक राष्ट्रीय मानकों से ज्यादा ऊपर होते हैं। भारत के उत्पादकों प्रायः अन्तर्राष्ट्रीय मानकों पर खरे नहीं उतर पाते हैं। हमारे निर्यातकर्त्ताओं को इस कारण काफी हानि उठानी पड़ती है। धीरे-धीरे इस सम्बन्ध में कुछ प्रगति अवश्य ही हो रही है, लेकिन उसकी गति बहुत मन्द है। हमें चीन, जापान, कोरिया तथा ताईवान जैसे देशों से इस सम्बन्ध में कड़ी चुनौति मिल रही है।

6. सरकारी प्रेरणाओं की कमीः-
(Lack of Government Incentives)

निर्यातों को प्रोत्साहन देने तथा आयात प्रतिस्थापन के लिए सरकार के द्वारा जो सहयोग तथा प्रेरणायें दी जानी चाहिए वह वास्तव में मौजूद नहीं हैं। या यह कहा जाये कि वह काफी अपर्याप्त हैं। इस सन्दर्भ में भारत सरकार को अभी बहुत कुछ करना बाकी है तभी हम अपने भुगतान संतुलन को अपने पक्ष में कर सकेंगे।

7. राजनैतिक परिवर्तन :-
(Political Changes)

राजनैतिक परिवर्तन भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के लिए कई प्रकार की मुसीबतें खड़ी कर देते हैं। सत्ता परिवर्तन के बाद यदि सरकारी नीतियों में बदलाव आता है तो उससे विदेशी पूंजी बाजार तथा उद्योगों पर दूरगामी प्रभाव पड़ते हैं। 2004 में भारत में केन्द्र सरकार में हुई सत्ता परिवर्तन के कारण कुछ ऐसी ही अनिश्चितता उत्पन्न हुई। उम्मीद की जाती है, कि सरकार इस चुनौति का अपने दम से कोई उचित हल निकालेगी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि सन्देश वाहन, परिवहन तथा बैंक सुविधाओं के होने वाले विस्तार से आने वाले समय में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन एवं प्रबन्ध दोनों का भविष्य अत्यन्त उज्जवल है। आज भारत एक विकासशील देशों की कतार में खड़ा है। वह दिन अब बहुत दूर नहीं है, जब कि हमारा देश विकसित देशों की श्रेणी में शामिल हो जाएगा। भारत के महामहिम राष्ट्रपति Sh. A.P.J. Abdul Kalam ने कई अवसरों पर यह विश्वास व्यक्त किया है कि भारत 2020 तक एक पूर्ण विकसित राष्ट्र बनकर दुनिया के सामने खड़ा होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में सफलता पाने के लिए बहुत सोची समझी रणनीति अपनानी होती है। क्योंकि यह कार्य बहुत जटिल एवं अत्यन्त प्रतियोगिता पूर्ण होता है। वास्तव में इसमें सफलता उन्हीं निर्यात प्रबन्धकों को प्राप्त होती है, जो इस कार्य को एक चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं तथा प्रारम्भ से ही व्यवस्थित तरीके से पहल करते हैं। निम्न चार्ट के द्वारा इस संदर्भ में उठाये जाने वाले विभिन्न कदमों को आसानी से समझा जा सकता है।

सबसे पहला कदम यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए एक द ढ़ संकल्प एवं इच्छा शक्ति होनी चाहिए तथा संस्था का

लक्ष्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बनाना होना चाहिए। इसके बाद संस्था की कमजोरियों तथा शक्तियों की पहचान करनी चाहिए। उनका विस्त त एवं व्यापक विश्लेषण करना चाहिए। इस सम्बन्ध में सभी आन्तरिक एवम् बाह्य घटकों का गहन अध्ययन किया जाना चाहिए। इसके बाद यह निर्णय किया जाना चाहिए कि आपका बाजार लक्ष्य क्या है ? किस बाजार खण्ड में आप जाना चाहते हैं ? किस तरह और कब बाजार में प्रवेश करेंगे तथा आपकी बाजार रणनीति क्या होगी ? इसके बाद आपको अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए एक मजबूत संगठन की आवश्यकता होगी तथा अपने साधनों की सहायता से निर्यात के अपने लक्ष्य प्राप्त करने होंगे। समय समय पर अपने लक्ष्यों का अवलोकन, इनमें परिवर्तन तथा भविष्य के लिए नये लक्ष्यों का निर्धारण करते रहना चाहिए तभी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में संस्था सफल हो सकती है।

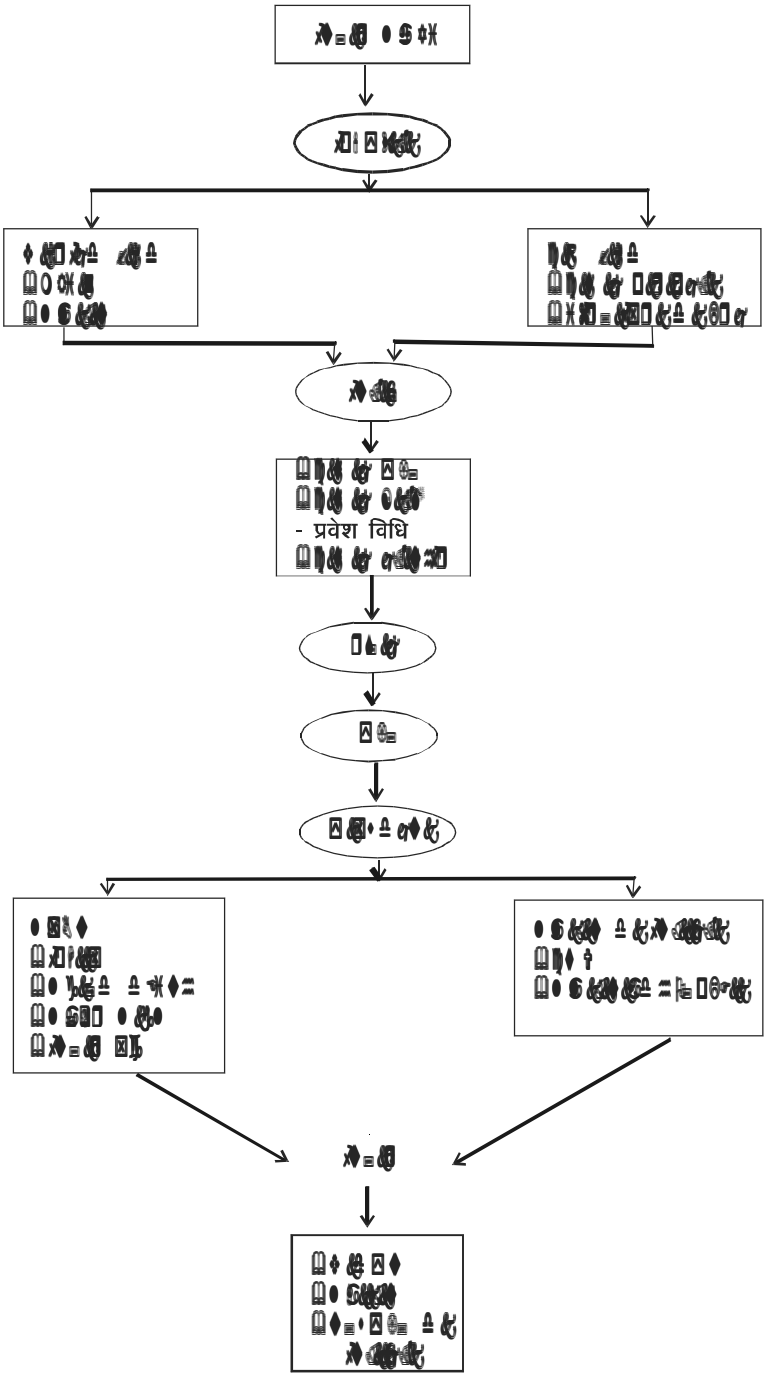

अध्याय-2

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन- वातावरण

(International Marketing Environment)

विपणन वातावरण का अर्थ उन परिस्थितियों, घटकों तथा शक्तियों से है, जो प्रत्येक विपणन फर्म को प्रभावित करते हैं। प्रत्येक संस्था का अपना आन्तरिक वातावरण एवं बाह्य वातावरण होता है। घरेलू विपणन में वातावरण की भूमिका इतनी जटिल एवं चुनौतीपूर्ण नहीं है। जितनी की वह अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में होती है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में बाजार अलग-अलग देशों में होने के कारण अधिक विषम तथा भिन्न हो जाते हैं। हर देश और उसके नागरिक की अलग सोच, कार्य पद्धति तथा क्रय शक्ति होती है। उस कारण अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अत्यन्त पेचीदा तथा जटिल हो जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में वही संस्था सफल हो सकती है, जो अपने बाह्य वातावरण को न केवल समझे, वरन् उसी के अनुरूप अपनी विपणन नीतियाँ एवं व्यूह रचनाएँ बनाये। परिवहन तथा विदेशी विनिमय नियमन का जितना प्रभाव एवं दबाव अन्तर्राष्ट्रीय विपणन पर होता है। उतना घरेलू विपणन पर नहीं होता है। विदेशों में रहने वाले उपभोक्ताओं की आवश्यकतायें, सोच, साधन तथा उनके सामाजिक, नैतिक एवं व्यक्तिगत मूल्य भी एक दम अलग होते हैं। उनकी तुलना हम अपने घरेलू उपभोक्ताओं के साथ नहीं कर सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कुछ घटक ऐसे होते हैं, जिन पर निर्यात प्रबन्धक का नियन्त्रण होता है जब कि कुछ घटक ऐसे होते हैं जो उसके नियन्त्रण से बिलकुल बाहर होते हैं। संस्था के प्रबन्ध, उत्पाद, विपणन मिश्रण पर निर्यात प्रबन्धक अपना नियन्त्रण कुछ सीमा तक रख सकता है। जबकि बाह्य वातावरण उसके नियन्त्रण से एकदम बाहर होता है। मैडेन (Meidan) ने अपने एक लेख में ऐसे 13 घटको की पहचान की जिन पर अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के दौरान नियन्त्रण सम्भव नहीं हैं। जिनका सम्बन्ध मानवीय **शरीर रचना (Anthropodlogy), आर्थिक (Economic), प्रतियोगिता (Competition), जोखिम (Risk)**, तथा **दूरी (Distance)** से है।

1. सामाजिक घटक :-
   - राष्ट्रीय कानून व्यवस्था
   - राजनैतिक स्थिति
   - वित्तीय व्यवस्था
   - बाजार संसाधन
   - संस्क ति
   - भाषा
   - जलवायु
2. आर्थिक घटक :-
   - व्यापारिक नीतियाँ एवं नियन्त्रण
   - मौद्रिक प्रतिबन्ध
   - विकास की अवस्था,
   - आन्तरिक माँग
   - क्रय शक्ति

3. प्रतियोगिता :-
   - अपने देश के निर्यातकों
   - अन्य देशों के निर्यातकों
   - आयतक देश के निर्माताओं
4. आपूर्ति :-
   - परिवहन के साधन
   - परिवहन की लागत
5. जोखिम :-
   - राजनैतिक जोखिम
   - व्यापारिक जोखिम
   - दैव्य क त
   - शत्रु क त

वर्तमान में वही संस्था विपणन कार्य में सफल हो सकती है जो अपने ग्राहकों को अधिक निकट से समझती है तथा उन्हें अधिकाधिक सन्तुष्टि प्रदान करने के लिये सतत् प्रयत्न करती हो। यह तभी सम्भव है, जब विपणन संस्था अपने वातावरण से भलीभांति परिचित हो तथा अपने ग्राहकों को अच्छी तरह समझती हो। Hindustan Lever Ltd, एक आक्रामक एवं बहुत सफल विदेशी कम्पनी है। इस कम्पनी ने ब्यूटी क्रीम बनाने से पहले बाजार का व्यापक अनुसंधान किया। अधिकांश व्यक्तियों ने गोरेपन को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। कम्पनी ने वातावरण के इस घटक को समझा तथा उसे क्रियान्वित किया। उत्पाद का नाम रखा गया - "फेयर एण्ड लवली"

Fair & Lovely

Worlds No. 1 Fairness Cream

कम्पनी का दावा है कि सिर्फ 15 दिन तक प्रयोग करने के बाद ही प्रयोगकर्त्ता का रंग एक दम गोरा हो जायेगा। इस विज्ञापन का प्रभाव लोगों के सिर चढ़ कर बोल रहा है। ऐशियन बाजार में इस उत्पाद को भारी सफलता प्राप्त हुई है। क्योंकि लोगों का मानना है कि गोरे रंग का कोई जवाब नही।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के वातावरण का निम्नांकित चार्ट के द्वारा अच्छी प्रकार समझा जा सकता है :-

उपरोक्त चार्ट में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन वातावरण के विभिन्न घटकों की पहचान करने का प्रयास किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन वातावरण को मूल रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम आन्तरिक वातावरण एंव द्वितीय बाह्य वातावरण। इनका विस्त त विवरण निम्न प्रकार है -

आन्तरिक वातावरण

(Internal Environment)

प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय विपणन फर्म का अपना आन्तरिक वातावरण होता है। आन्तरिक वातावरण के अन्तर्गत जिन घटकों का समावेश होता हैं, उन पर फर्म का नियन्त्रण होता है। यदि फर्म का नेत त्व एवं प्रबन्धक चाहे तो आन्तरिक वातावरण के

घटकों पर प्रभावी नियमन एवं नियन्त्रण स्थापित कर सकते हैं। इस प्रकार आन्तरिक वातावरण, प्रबन्ध योग्य एवं नियन्त्रण योग्य होता हैं। आन्तरिक वातावरण में समाहित विभिन्न घटको का विस्तार से वर्णन इस प्रकार है -

(1) अनुसन्धान एवं विकास : -

विकसित देशों में कार्यरत कम्पनियाँ अनुसन्धान एवं विकास को कितना महत्व देती हैं, इसे इस तथ्य से समझा जा सकता हैं कि इन देशों के सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) का लगभग 3% अनुसंधान एवं विकास पर खर्च किया जाता है।

ग्राहकों की इच्छाओं के अनुरूप नये उत्पादों के विकास एवं विद्यमान उत्पादों में सतत् सुधार तभी सम्भव है, जब अनुसन्धान एवं विकास पर पूरा ध्यान दिया जाये। सफल अन्तर्राष्ट्रीय विपणन फर्मे नियोजित तरीके से न केवल अनुसन्धान एवं विकास के लिए स्टेट ऑफ दी आर्ट श्रेणी का अनुसन्धान का आधारभूत ढाँचा विकसित करती है, वरन् उच्च श्रेणी के प्रतिभासम्पन्न

वैज्ञानिकों एवं अनुसन्धान कर्त्ताओं से इसे युक्त करती है।कम्पनी का उच्च प्रबन्ध स्वयं इसकी मॉनीटरिंग करता है।

चाहे फोर्ड मोटर्स द्वारा कार का अविष्कार हो, इन्टेल द्वारा माइक्रोप्रोसेर चिप का, डयू पोन्ट के द्वारा नाइलोन, सोनी के द्वारा वॉकमैन, बैल के द्वारा हेलीकोप्टर, आई.बी.एम. द्वारा कम्पयूटर हो या ज़ेराक्स द्वारा फोटो कॉपियर मशीन हो - इन सभी अविष्कारों के पीछे इन कम्पनियों के द्वारा अनुसन्धान एवं विकास पर पूरा ध्यान दिया जाना महत्वपूर्ण कारण है।

माइक्रोसॉफट का इस सम्बन्ध में उदाहरण अनुकरणीय है। इस कम्पनी ने विन्डोज-2000 के विकास पर लगभग 660 मिलियन डॉलर खर्च किये। उसी का परिणाम है, कि आज इसका कोई विकल्प नहीं है।

भारतीय कम्पनियाँ भी इसे समझ रही हैं। रेनबेक्सी, रेड्डी लेबोरेटरीज, टेल्को, टी.सी.एस. इन्फोरिस आादि की सफलता के पीछे, इनके द्वारा अनुसन्धान एवं विकास पर पूरा ध्यान देना है।

(2) मानवीय संसाधनः - (Human Resources):-

किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन फर्म की सफलता में उसके मानवीय संसाधनो की महत्वपूर्ण भूमिका है। मानवीय संसाधन जितना कुशल एवं अभिप्रेरित होगा, उतनी ही संस्था की कार्यकुशलता एवं ग्राहक सन्तुष्टि बढ़ेगी, उत्पादन लागत कम आयेगी। एक कम्पनी की उच्च प्रबन्ध किस प्रकार की सेविवर्गीय नीतियों का निर्माण करता है। संस्था में किस प्रकार की कार्य संस्क ति (Work Culture) है। प्रबन्धकों का कर्मचारियों के साथ व्यवहार कैसा है, इन सभी बातो का प्रभाव मानवीय संसाधनों पर पड़ता हैं। **हैनरी फोर्ड** का यह कथन अत्यन्त उपयुक्त हैं कि मेरा भले ही काफी कुछ नष्ट हो जाये, लेकिन यदि मेरे मानवीय संसाधन मेरे पास हैं, तो मै सब कुछ वापस खड़ा कर दूँगा।

मैरियट, जो कि अमेरिका की प्रतिष्ठित होटल श्र ंखला है, उसकी सफलता का कारण कम्पनी के प्रबन्धकों द्वारा कर्मचारियों को सर्वोच्च प्राथमिकता देना है। इस कम्पनी के संगठन चार्ट में सर्वोच्च स्थान पर "कर्मचारी" हैं। कम्पनी के प्रबन्धकों का मानना है, कि सबसे पहले हमारे कर्मचारी सन्तुष्टि से भरे होने चाहिए। अगर कर्मचारी सन्तुष्ट है, तो वे होटल में आने वाल ग्राहकों को भी सन्तुष्ट रखेंगे।

यहाँ पर "टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" (TISCO) का उल्लेख करना भी उपयुक्त होगा। इस कम्पनी में अपनी स्थापना से लेकर आज तक कोई हड़ताल नहीं हुई है कुछ ही वर्षो में कम्पनी अपनी स्थापना के 100 वर्ष पूरे करने जा रही है। इसक पूरा श्रेय टाटा समूह की अच्छी सेविवर्गीय नीतियों को जाता है। इसी कारण टिस्को के मानवीय संसाधन गुणवत्ता की द ष्टि से अद्वितीय हैं।

(3) नेत त्वः - (Leadership):-

यहाँ नेत त्व से आशय उस प्रबन्धक से है, जो कम्पनी का सर्वेसर्वा है। हर जाने वाले नेत त्व पर यह जिम्मेदारी होती है, कि वह भावी नेत त्व भी तैयार करे, जो उससे भी ज्यादा अच्छा हो। सफल अन्तर्राष्ट्रीय विपणन फर्मो का यदि अध्ययन किया जाये, तो पता लगेगा कि इनकी सफलता में इनके मुख्य कार्यकारी अधिकारी के "विजन" का महत्वपूर्ण योगदान है। कहा गया है, कि "**जैसी द ष्टि वैसी स ष्टि**"। सफल नेत त्व के लिए केवल द ष्टि आवश्यक नहीं है, वरन् उसे मूर्त रूप देने के लिये यथोचित क्षमता भी चाहिए। अब जरा माइक्रोसॉफ्ट के **बिल गैट्स** की द ष्टि देखिए - "Personal Computer on every table". इस द ष्टि का असर कम्पनी के कर्मचारियों पर कितना जबरदस्त पड़ता है, उन्हे लगता है कि अभी तो कुछ कदम ही चले हैं, मंजिल तो अभी दूर है। अनेक विकासशील देश ऐसे हैं, जहाँ प्रति हजार पर मुश्किल से 10 से 30 व्यक्तियों के पास ही पी.सी. है।

(4) वित्तीय संसाधनः - (Financial Resources):-

वित्तीय संसाधनों का कुशल नियोजन एवं प्रबन्ध करने पर ही कम्पनी की लाभदायकता निर्भर करती है कम्पनी की सफलता में सस्ती लागत पर पूंजीगत संसाधन प्राप्त करने का जितना महत्व है, उतना ही उनमें सुविचारित विनियोग का है।

इस सम्बन्ध मे "रिलायन्स इन्डस्ट्रीज" का उदाहरण महत्वपूर्ण है। इस कम्पनी की अभूतपूर्व सफलता में नेत त्व के अलावा वित्तीय

संसाधनों के कुशलतम उपयोग का उल्लेखनीय योगदान है। यह कम्पनी अपनी स्थापना से लेकर आज तक कभी वित्तीय संकट मे नही आयी। इस कम्पनी ने जरुरत पड़ी तो सस्ती दरों पर अन्तर्राष्ट्रीय बाजार से ऋण लिया पर डालर के मुकाबले रूपया कमजोर होने की सम्भावना लगी, तो विदेशी ऋण चुका दिये। इस कम्पनी ने चाहे ऑयल रिफाइनरी में प्रवेश किया, चाहे हाल ही में टेलीकम्यूनीकेशन में, हर जगह सफलता के झण्ड़े गाड़े हैं।

रिलायन्य इण्डस्ट्रीज के द्वारा जामनगर में स्थापित की गयी ऑयल रिफाइनरी में लगभग 20,000 करोड़ रूपये का विनियोजन हुआ है। यह रिफाईनरी ऐशिया की सबसे बड़ी "ग्रास रुट" ऑयल रिफाईनरी है।

इसके कुशल वित्तीय प्रबन्धन के कारण रिलायन्स के पास हमेशा 6000 करोड़ रुपयों से 7000 करोड़ रुपयों का नकद आधिक्य है। इससे यह स्पष्ट है, कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन फर्मो की सफलता के लिए अपने वित्तीय संसाधनों के कुशल प्रबन्धन पर पूरा ध्यान देना चाहिए।

(5) कम्पनी की छविः -
(Image of Company):-

विपणन मे कहा जाता है, कि "Name is Game". नाम एवं छवि ग्राहक के दिमाग में एक बार जम जाये, तो उसका जादू सर चढ़कर बोलता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन मे ऐसी दर्जनों कम्पनियाँ हैं, जिनके उत्पादो की छवि ग्राहकों के दिलो-दिमाग मे अविस्मरणीय सी है। कम्पनी की यह छवि रातों-रात नहीं बनती। इसके लिए इन कम्पनियों ने वर्षो तक अपने उत्पाद की 'ब्राण्ड साधना' की है। अपने उत्पादों की उत्क ष्टता को न केवल बनाये रखा है, वरन् उसका सतत् विकास भी किया है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में यदि एक बार कम्पनी ने अपने ग्राहकों की ब्राण्ड निष्ठा प्राप्त कर ली, तो लम्बे समय तक एक ही ग्राहक से उसे बार-बार व्यवसाय मिलता है। कम्पनी की छवि उसके उत्पादों से, उसके कर्मचारियों के व्यवहार से एवं ग्राहकों की शिकायतों के प्रभावी निवारण से बनती है।

यहाँ "इण्टेल" का उदाहरण उपयुक्त है, हर कम्पयूटर के विज्ञापन पर "Intel Inside" मोटे अक्षरों में लिखा हुआ मिलेगा। कम्पयूटर का ब्राण्ड-नाम इन्टेल के आगे फीका लगता है। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में लगी फर्मो को चाहिए कि अपनी छवि का सुनियोजित तरीके से निर्माण करें एवं उत्तरोत्तर उसे प्रभावी बनायें।

(6) क्षमता का उपयोग : -
(Capacity Utilisation):-

प्रत्येक कम्पनी की, जो उत्पादन के कार्यो में लगी है, उसमें संयत्र की स्थापित क्षमता होती है स्थापित क्षमता से आशय उस संयन्त्र द्वारा किये जा सकने वाले अधिकतम उत्पादन से है। यदि कम्पनी का प्रबन्ध कुशलता से किया जा रहा है, तो वे अपने संयन्त्र की उत्पादन क्षमता का अधिकाधिक उपयोग करते हैं।

भारत में विद्युत उत्पादन मे लगी कम्पनियाँ अपनी स्थापित क्षमता का केवल एक-तिहाई ही उपयोग कर रही है। तो विकसित देशों - G - 7 के देशों में बिजली कम्पनियाँ स्थापित क्षमता के 80 से 90 प्रतिशत तक उपयोग करती हैं।

भारत मे "टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" अपनी स्थापित क्षमता के 105 से लेकर 112.1 तक उपयोग करती हैं, तो "स्टील अथोरिटी ऑफ इण्डिया लि." (SAIL) के चारों इस्पात कारखाने अपनी क्षमता के 55 से 60 प्रतिशत तक ही उपयोग करते हैं।

एक कम्पनी अपनी स्थापित क्षमता का जितना अधिकाधिक उपयोग करेगी, उतना ही "स्थिर लागतो" (Fixed Cost) का विभाजन ज्यादा से ज्यादा इकाइयों पर होगा। इसके फलस्वरुप प्रति इकाई उत्पादन लागत मे कमी होती जाएगी इसका प्रभाव यह होगा, कि कम्पनी के उत्पाद अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में मूल्य की द ष्टि से अच्छी प्रतियोगिता करने में सक्षम होगें।

इसी का परिणाम यह है, कि अन्तर्राष्ट्रीय स्टील उत्पादों मे विपणन में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के उत्पाद स्टील ऑथोरिटी आफ इण्डिया से मूल्य की द ष्टि से ज्यादा प्रतियोगी है।

(7) विपणन मिश्रणः -
(Marketing Mix):-

प्रसिद्ध विपणन विद्वान **मैक्कार्थी** ने विपणन मिश्रण में "चार पी" (Four Ps) बताये थे। ये चार पी क्रमशः प्रोडक्ट, प्राइस, प्लेस

एंव प्रमोशन है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में वही फर्म सफल हो सकती है, जो अपने विपणन मिश्रण को अनुकूलतम बनाती है। वही फर्म बाजार में सफल हो सकती है जो अपने उत्पाद अच्छे बनाये, कीमतें सही निर्धारित करे, सही विपणन की वाहिका चुनें एवं प्रभावी संवर्द्धन मिश्रण का निर्माण करे।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है, कि मैक्कार्थी के द्वारा प्रतिपादित "चार पी" वर्तमान परिस्थितियों में अपनी प्रांसगिकतता खो चुके हैं, क्योंकि उसके बाद विपणन वातावरण में अमूल परिवर्तन हो चुके हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में रॉबर्ट द्वारा प्रतिपादित "चार सी" (Four C's) ज्यादा उपयुक्त है इसे निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है :-

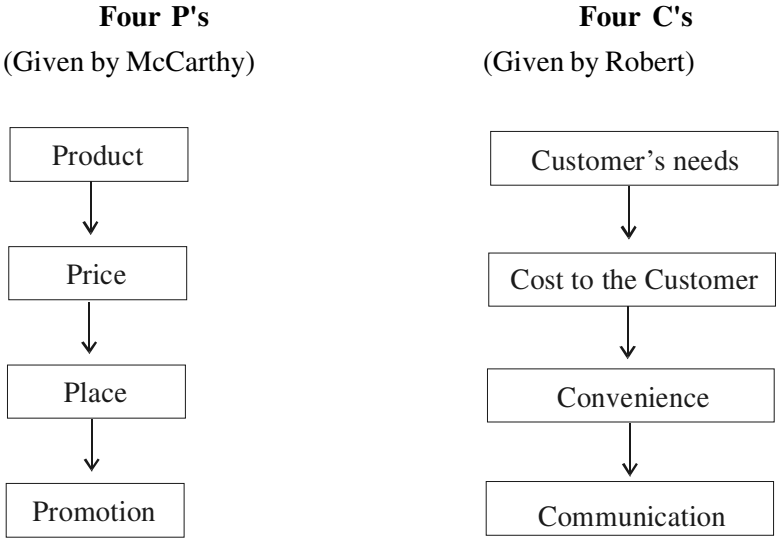

यदि ध्यान से विशलेषण किया जाये तो यह स्पष्ट है, कि मेकार्थी के "चार पी" बाजार अभिमुखी (Market oriented) हैं, जबकि राबर्ट के चार सी , "ग्राहक अभिमुखी" (Customer oriented) हैं। वास्तव में उत्पाद, उत्पाद नहीं है - यह ग्राहक की आवश्यकता है। मूल्य, मूल्य नहीं है - यह ग्राहक की लागत है। प्लेस, प्लेस नहीं है - यह ग्राहक की क्रय शक्ति को सुविधाजनक बनाना है प्रमोशन, प्रमोशन नहीं है वरन् ग्राहक से सन्देश वाहन है, चाहे वह विज्ञापन से हो, चाहे व्यक्तिगत विक्रय से अथवा विक्रय संवर्द्धन से।

"चार पी" से "चार सी" में परिवर्तन, एक विपणन फर्म की पूरी सोच एवं मानसिकता में परिवर्तन है। वर्तमान में भूमण्डलीकरण के प्रभाव से अत्यन्त चुनौतीपूर्ण हो गया है। इसमें सफलता वे ही कम्पनियाँ प्राप्त कर पायेंगी, जो हर चीज अन्तर्राष्टीय विपणन को ग्राहकों के द ष्टिकोण से देखेंगी। इस बदलाव के बाद स्वेटर, स्वेटर नही होगा - "सर्दी की गर्माहट होगा। किताब, किताब नही होगी "ज्ञान का स्रोत होगी।

इस प्रकार उपरोक्त सभी घटको पर कम्पनी प्रबन्ध चाहे, तो प्रभावी नियमन एवं नियंत्रण कर सकती है।

II. बाह्य वातावरण
(External Environment)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कार्यरत प्रत्येक कम्पनी को एक बाह्या वातावरण में कार्य करना होता है बाह्या वातावरण के अनेक घटक विपणन फर्म के क्रियाकलापो पर अपना प्रभाव डालते हैं। किसी विपणन फर्म के लिए कुछ घटकों का प्रभाव अधिक होता है। तो कुछ घटकों का तुलनात्मक रूप से कम। बाह्या वातावरण के घटक विपणन में कार्य करने वाली सभी फर्मो को प्रभावित करते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में बाह्या वातावरण में घटकों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि फर्म का इन पर कोई नियन्त्रण नहीं होता है। विपणन फर्म की कुशलता इसी में निहित है, कि वह अपने बाह्या वातावरण को भली प्रकार समझे एवं उसी के अनुरूप विपणन नीतियाँ बनाये। इसके साथ ही बाह्या विपणन वातावरण में जिन घटको का फर्म पर प्रतिकूल प्रभाव पडने की सम्भावना

है उसके प्रभाव का कम से कम करने का प्रयास करे। बाह्मा वातावरण के घटकों का वर्णन इस प्रकार है -

(1) जन सांख्यिकी
(Demography) :–

जन सांख्यिकी का आशय किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र के लिए, एक अवधि विशेष के लिए, जनसंख्या के वितरण की विभिन्न विशेषताओं के सांख्यिकीय अध्ययन है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कार्यरत कम्पनियों के लिए जनसांख्यिकी का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं जनसांख्यिकी के अन्तर्गत जनसंख्या वितरण की विभिन्न विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है। इन विशेषताओं में क्रमशः जनसंख्या के क्षेत्र के आधार पर विभाजन, लिंग के आधार पर विभाजन, जनसंख्या के विकास की दर, विभिन्न आयुवर्गो में जनसंख्या का विभाजन, विभिन्न आयुवर्गो में म त्यू दर आदि सम्मिलित हैं।

जनसांख्यिकी का अध्ययन यह व्यक्त करता है, कि कई यूरोपीय देशों में जनसंख्या व द्धि दर शून्य एवं कई देशो में नकारात्मक आ गयी है। वर्तमान मे भारत की आबादी 1 अरब से अधिक है, जनसांख्यिकी का अध्ययन बताता है, कि वर्ष 2020 में यह 1.6 अरब तक पहुँच जाएगी इसके आधार पर यह स्पष्ट है कि जहाँ कई यूरोपीय एवं विकसित देशों में अनेक उत्पादों की विपणन सम्भावनाएं समाप्त हो रही है, तो दूसरी और उन उत्पादों को लम्बे समय तक भारत में भविष्य उज्जवल है। सौन्दर्य प्रसाधन बनाने वाली अन्तर्राष्ट्रीय फर्म को अपने भावी बाजारों में लिंग के आधार पर जनसंख्या का विभाजन जानना आवश्यक हैं।

लॉयड्स एवं प्रेडेन्सियल जैसी बीमा कम्पनियाँ एवं अन्य कम्पनियाँ जो जीवन बीमा व्यवसाय कर रही हैं, अगर वे क्षेत्र विशेष से विभिन्न आयु वर्गो में म त्यु दर का पता नहीं लगाये, तो प्रीमियम का निर्धारण ही नही कर सकती हैं।

(2) भौगोलिक
(Geographical) :–

प्रत्येक देश का अपना भूगोल होता है। भूगोल पर देश का कोई नियन्त्रण नहीं होता, वरन् यह प्रक ति की देन है, भौगोलिक आधार पर विश्व को अनेक भागों में विभाजित किया जा सकता है। एक विशेष भौगोलिक क्षेत्र में आने वाले देशों के खान-पान, पहनावें एवं रहन-सहन सभी प्रकार का प्रभाव आता है। एक ही देश के अन्दर भौगोलिक परिस्थितियाँ भिन्न हो सकती हैं भारत का उदाहरण इस सम्बन्ध में उल्लेखनिय है। यहां शियाचिन जैसा ठण्डा क्षेत्र है। तो थार प्रदेश का रेगिस्तान भी है। हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड जैसा पर्वतीय इलाका है, तो कई प्रदेश मैदानी क्षेत्र में आते है। विशाल समुद्री तट भी भारत के पास हैं। इसी कारण भारत के लोगो के खान-पान, रहन-सहन, भवन निर्माण सभी में व्यापक विविधता देखने को मिलती है।

रेडीमेड गारमेन्ट्स के निर्माण में लगी अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनी का जो भारत में विपणन करना चाहती है, उसे विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के लिए प थक-प थक कपड़े तैयार करने होगें, तभी वह सफल होगी।

(3) आर्थिक
(Economic) :–

बाह्य घटकों में सम्मिलित आर्थिक घटकों का अन्तर्राष्ट्रीय विपणन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वैश्विक प्रभाव आर्थिक परिस्थितियों एवं व्यापार चक्र की स्थिति का सीधा प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय विपणन पर होता है। यदि विश्व अर्थव्यवस्था में मन्दी का दौर चल रहा है, तो ऐसे समय में कम्पनियाँ अपनी नई परियोजनाओ को स्थगित कर देती है अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के आकार एवं उसके स्वरूप, विभिन्न देशों के मध्य व्यापार, विदेशी मुद्राओं की विनिमय दर, सभी अपना प्रभाव डालती हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में कार्यरत कम्पनी, दूसरे देशों में अपनी व्यापारिक गतिविधियों को प्रारम्भ करने से पूर्व उन देशों में अपनी अर्थव्यवस्था की प्रक ति, सफल राष्ट्रीय उत्पाद एवं उसका विभाजन बाजार का आकार, जनसंख्या की व द्धि दर, प्रति व्यक्ति आय, देश पर विदेशी ऋण, क्रेडिट रेटिंग, भुगतान सन्तुलन की स्थिति, विदेशी निवेश के नियम एवं वातावरण, आय का वितरण, आधारभूत ढाँचा, सन्देशवाहन के साधन, ऊर्जा की उपलब्धता, श्रम की उपलब्धता एवं लागत, मुद्रा प्रसार, ब्याज दरों आदि सभी का सावधानी पूर्वक अध्ययन करती हैं। उपरोक्त घटकों के मोटे तौर पर अनुकूल होने पर ही उस देश के साथ विपणन के लिए योजना बनाई जाती है आर्थिक उदारीकरण के पश्चात् अनेक विदेशी कम्पनियाँ भारत में अपने उत्पादन संयन्त्र स्थापित कर रहीं हैं। इसके पीछे मूल कारण, यहाँ पर उपलब्ध सस्ते श्रम से उत्पादन कर, देशी उत्पादकों, के विभेदात्मक लाभ को समाप्त कर, उन्हे उन्हीं के घर चुनौती देना है।

आय के वितरण का अध्ययन किया जाये, तो यह प्रतीत होता है, कि जितनी अमेरिका की कुल आबादी है, उसके लगभग "मध्यम आय-वर्ग" की भारतीय आबादी हैं। यह "विशाल मध्यम आय वर्ग" प्रत्येक विदेशी कम्पनी को आकर्षित कर रहा है। इस वर्ग को मोटर-कारों, दुपहिया वाहन, रंगीन टी.वी., ए.सी, वाशिंग मशीन, सी.डी., पर्सनल कम्पयूटर, मोबाइल फोन, स्टाईलिंस कपड़ों, महँगे सौन्दर्य प्रसाधन आदि अनगिनत एवं सेवाएँ बेची जा सकती हैं।

एक नई श्रेणी "Super Haves" की ओर उभर रही है यह भारतीय आबादी का लगभग 1 प्रतिशत है, उसके पास बेशुमार दौलत है इन्हे समस्या खर्च करने की है। अपनी श्रेणी में श्रेष्ठतम उत्पादों का बाजार इन्ही ग्राहकों के लिए है। इसी का प्रभाव है, कि महँगी मर्सडीज कार भी अब ज्यादा मात्र में बिक रही है।

(4) राजनैतिक
(Political) :–

राजनैतिक घटकों का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर अपना विशिष्ट प्रभाव पड़ता है। किसी देश का राजनैतिक तन्त्र किस प्रकार का है, इसका सीधा प्रभाव विदेशी व्यापार पर पड़ता है। हमारा पडौसी चीन हमसे कई गुणा ज्यादा विदेशी निवेश आकर्षित कर रहा है। विदेशी कम्पनियाँ भारत की तुलना मे चीन को महत्व देती है। कारण साम्यवादी राजनैतिक तन्त्र। भारत में लोकतन्त्र स्वतंत्र प्रेस एवं न्यायपालिका हैं। इसी कारण राजनैतिक फैसलो का विरोध चीन में नही हो सकता, परन्तु भारत में जन-प्रतिनीधि, प्रेस एवं न्यायपालिका सभी की अपनी भूमिका हैं। एनरॉन कम्पनी का जितना विरोध भारत मे हुआ वह चीन में संभव नही था।

राजनैतिक व्यवस्था का देश में उद्योग एवं व्यापार जगत् से कैसे सम्बन्ध हैं, इसका उन देशों के विदेशी व्यापार पर सीधा प्रभाव है। विकसित देशों में राष्ट्रपतियों अथवा प्रधानमन्त्रियों की विदेश यात्राओं में प्रतिनीधि मण्डल मे शामिल लोगो में से 2/3, का सम्बन्ध उस देश में उद्योग एवं व्यापार से होता है। प्रतिनिधिमण्डल में शामिल कम्पनियों का सावधानी पूर्वक चयन किया जाता है, केवल उन्ही कम्पनियों के अधिकारी शामिल किये जाते हैं, जिनके उत्पादों एवं सेवाओं की बाजार सम्भावनाएँ प्रवासी देश में प्रबल हों। विकसित देशों की सम द्धि की आधार ही विश्व व्यापार में उनका प्रभूत्व हैं। विकसित देशों का राजनैतिक नैत त्व अपने देश के व्यापारिक हितो का पूरा ध्यान रखता है। भारत की वायुसेना को "एडवान्स जैट ट्रैनर" खरीदने हैं ब्रिटेन के प्रधानमंत्री टॉनी ब्लेयर ने अपनी भारत-यात्रा के दौरान इनकी ब्रिटिश कम्पनी से ही खरीद का भारतीय प्रधानमंत्री से पुरजोर आग्रह किया। यह सौदा लगभग 2 बिलियन पौण्ड का है। प्रश्न यह है, कि क्या भारत का प्रधानमंत्री किसी भारतीय कम्पनी के लिए ऐसी हिमाकत कर सकता है ? उत्तर नहीं में ही आयेगा, संसद में घोर हंगामा प्रतिपक्ष खड़ा कर दे।

इसका कितना प्रभाव दीर्घकाल में पड़ता है, जरा देखे। दिनांक 3-9-03 को सुरक्षा से सम्बन्धित केबीनेट कमेटी ने 8000 करोड रुपये के सी-हाक नामक "एडवान्स जैट ट्रैनर" के सौदे की मंजूरी दे दी हैं। ब्रिटिश एयरोस्पेस कम्पनी भारत का 66 एडवान्स जेट ट्रैनर प्रदान करेगी यह अकेला उदाहरण आंखे खोलने के लिए पर्याप्त हैं। कि विकसित देशों का राजनैतिक नेत त्व अपने देश के व्यावसायिक हितो का कितना ध्यान रखता है।

विदेशी व्यापार में राजनैतिक निकटता का भी बहुत प्रभाव पड़ता है। राजनैतिक व्यवस्थाएँ अलग-अलग होते हुए भी, लम्बे समय तक भारत एवं सोवियत रुस के मध्य काफी व्यापार रहा है। इसके विपरीत बिल्कुल पडौस मे होने पर भी पाकिस्तान से विदेशी व्यापार नगण्य है इसके साथ ही विदेशी व्यापार में कार्यरत कम्पनी जिस देश से व्यापार करना हो, वहाँ राजनैतिक स्थिरता का भी पूरा मूल्यांकन करती है ऐसे देश जो राजनैतिक रूप से स्थिर नही हैं, उन्हें वरीयता नही दी जाती है। राजनैतिक अस्थिरता के दौर में कम्पनियाँ "**इन्तजार करो एवं देखो**" की नीति पर चलती हैं। विदेशी व्यापार में वे ही कम्पनियाँ सफल हो पाती है, जो राजनैतिक जोखिम का सावधानी पूर्वक मूल्यांकन करके, उनका उचित प्रबन्ध करती हैं।

(3) कानूनी घटक
(Legal Factors) :–

कानूनी वातावरण का अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अपना प थक महत्व है। विकासशील देशों में चीन सर्वाधिक विदेशी निवेश को आकर्षित कर रहा है। इसका मुख्य कारण चीन की सरकार द्वारा दो प्रकार के श्रम कानून लागू करना है। चीन के विशेष भौगोलिक क्षेत्रों में विशेष जोन विदेशी कम्पनियों के लिए निर्धारित किये हैं। इन क्षेत्रों में स्थापित विदेशी कम्पनियों के लिए श्रम कानून विकसित देशों की तरह है, जो हायर एण्ड फायर अधारित है। दूसरी ओर शेष चीन के लिए वही पूराने कानून हैं। इस प्रकार का दोहरा मापदण्ड भारत अपने लोकतन्त्र व न्यायपालिका के कारण नहीं अपना सकता हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में कार्यरत कम्पनी, जिन देशों में अपनी व्यापारिक गतिविधियों को विस्तार देना चाहती है, वहाँ प्रचलित कानूनो का बारीकी से अध्ययन करती है। उदाहरण के लिए मध्य-पूर्व के अनेक देशों में शरीयत लागू हैं। शरीयत कानून के अन्तर्गत नारी शरीर के प्रदर्शन के सम्बन्ध में कड़े कानूनी प्रावधान हैं इस कारण अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञापन कम्पनी को, जो कि इन देशों में विज्ञापन करने जा रहीं है, उसे इन प्रावधानो की पूरी जानकारी आवश्यक है।

वाहनो के उत्सर्जन के सम्बन्ध विकसित देशों के एवं विकासशील देशों के प्रावधानों में बहुत अन्तर है। एक भारतीय वाहन निर्माण कम्पनी जिन उत्सर्जन मापदण्डो के वाहन धड़ल्ले से भारत मे बेच रही है, उन्हे यूरोपीय देशों व अमेरिका को नही बेच सकती हैं।

(6) प्रौद्योगिकी
(Technology) :–

प्रौधोगिकी का उत्पादन की गुणवत्ता एवं उसके कार्य निष्पादन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। विकसित देश नई प्रौधोगिकी के विकास पर पूरा ध्यान देते हैं तेल की कीमतों में 70 के दशक में उछाल आने पर जापानी वाहन निर्माता कम्पनियाँ - सुजुकी, माजदा एवं निशान ने ज्यादा माइलेज देने वाली कारों के लिए नई प्रौधोगिकी विकसित करने पर पूरा ध्यान दिया। इसमे उन्हे सफलता भी मिली। भारत में मारुति की सफलता की कहानी में सुजुकी का प्रौधोगिकी का महत्वपूर्ण योगदान है। नयी प्रौद्योगिकी नये बाजार स जित करती है, तो विद्यमान बाजारों को समाप्त भी कराती है।

(7) प्रतियोगिता
(Competition) :–

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन करने वाली कम्पनियों के लिए प्रतियोगिता का स्वरूप देशी विपणन की तुलना मे बिल्कुल भिन्न होता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में फर्म को न केवल अपने देश की कम्पनियों से, वरन अन्य देशों की कम्पनियों से भी कड़ी प्रतियोगिता करनी होती है। उदाहरण के लिए कोका-कोला को न केवल अपने देश की पेप्सी से प्रतियोगिता करनी होती है, वरन् उस देश एवं अन्य देशों के ब्राण्डों से भी प्रतियोगिता करनी होती है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की गलाकाट प्रतियोगिता मे वे ही कम्पनियाँ टीक पाती हैं, जिनके उत्पाद अपने प्रतियोगियों के उत्पाद से बेहतर हों। ग्राहकों को प्रतियोगिता के कारण, चयन के अवसर बहुत प्राप्त हो जाते हैं, ऐसे मे वे वही उत्पाद खरीदते हैं जो तुलनात्मक रूप से श्रेष्ठ हो। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में प्रतियोगिता का सामना प्रभावी रूप से करने के लिए कम्पनियों का प्रबन्ध बहुत सजग रहता है।

(8) सामाजिक-सांस्क तिक
(Socio-Cultural) :–

प्रत्येक देश की सामाजिक मान्यताएँ एवं सांस्क तिक धरोहर भिन्न भिन्न होती है। समाजिक मूल्य एवं मान्यताओं में परिवर्तन समय के अनुसार होते रहते हैं इसके विपरीत सांस्क तिक मूल्यों एवं मान्यताओं में परिवर्तन बहुत लम्बे समय मे आते हैं।

भारतीय आबादी का बड़ा हिस्सा शाकाहारी है। मेक्डोनल्ड रेस्टोरेन्ट श्रंखला, जो विश्व की श्रेणी मे सबसे बड़ी श्रंखला है, उसने इस बात को अच्छी तरह समझा। कम्पनी ने जब दिल्ली मे रेस्टोरेन्ट खोला तो शाकाहारियों एवं मांसाहारियों के लिए प थक-प थक व्यवस्था की।

भारतीय जनता धर्मप्रायण जनता है, इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कार्यरत कम्पनियाँ इस बात का भारतीयों के सन्दर्भ मे ध यान रखती हैं, कि देवी-देवताओं को अपमानजनक चित्रण विज्ञापनों में नहीं हो। अभी पिछले वर्ष ही एक प्रसिद्ध विदेशी कम्पनी ने अपने "शैम्पू" की बिक्री बढाने के लिए जो विज्ञापन दिया, उसमे "हनुमान जी" को सीना चीरते हुए दिखाया गया एवं उनके सीने मे से शैम्पू के पाउच गिर रहे थे। मुम्बई उच्च न्यायालय में इसके खिलाफ मुकदमा दायर हो गया। न्यायालय ने इसे सांस्क तिक एवं धार्मिक भावनाओ के विरूद्ध माना एवं ऐसे विज्ञापन पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कार्यरत फर्मो को चाहिए कि वे पहले अपनी व्यावसायिक गतिविधियों का विस्तार उन देशों में करे जो उनके सामाजिक एवं सांस्क तिक द ष्टि से निकट हो। भिन्न परिवेश वाले देशों का पहले बारीकी से अध्ययन करें एवं उसके आधार पर उत्पाद में एवं विज्ञापन मे वांछित परिवर्तन करें, तभी फर्म सफलता की कामना कर सकती हैं।

(9) ग्राहक व्यवहार

(Consumer Behaviour) :–

ग्राहक व्यवहार परिवर्तनशील है। ग्राहक की जानकारी, शिक्षा, आय एवं स्तर में परिवर्तन का सीधा प्रभाव ग्राहक व्यवहार पर पड़ता है। अमेरिका एवं अनेक यूरोपिय देशों में प्राक तिक रूप से उत्पादित वस्तुएँ ग्राहक ज्यादा पसंद कर रहे हैं। ऐसे उत्पाद पैदा किये जा रह हैं जिनक उत्पादन मे रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों का प्रयोग नहीं हो।

अध्याय-3
विपणन अनुसंधान एवं विदेशी बाजारों का चयन
(Marketing Research and Selection of Foreign Markets)

उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के इस दौर में परम्परागत विक्रेता बाजार अब क्रेता बाजार में बदल गया है। बदली हुई परिस्थितियों में विक्रेता के लिए अपनी वस्तु और सेवाओं का विक्रय इतना आसान नहीं रह गया है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में बाजार इतना व्यापक एवं विस्त त हो गया है, जिसके कारण क्रेताओं से प्रत्यक्ष एवं व्यक्तिगत सम्पर्क कर पाना सम्भव नहीं हो पाता है। केवल मध्यस्थों एवं वितरकों के माध्यम से ही अप्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित हो पाता है। उत्पादक द्वारा उत्पादित किये जाने वाल उत्पादों की व्यावसायिक सफलता के लिए यह आवश्यक हो गया है कि उत्पादक एवं उपभोक्ता के मध्य इन परिवर्तनों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई दूरी को किस प्रकार कम किया जाये।

बाजार में सफलता पाने के लिये यह आवश्यक है कि निर्माता निर्माण कार्य से पूर्व वर्तमान एवं भावी ग्राहकों की रूचियों, प्रव तियों, आदतों, क्रय-शक्ति आदि के बारे में समुचित सूचनाएँ प्राप्त करे। विदेशी व्यापार में निर्माता को घरेलू ग्राहक एवं विदेशी ग्राहकों की आवश्यकता के अनुसार अलग-अलग किस्म, डिजाइन, मूल्यों एवं गुणवत्ता वाले उत्पाद तैयार करने चाहिए। इस सम्बन्ध में चीन की नीति अत्यन्त कारगर एवं उपयुक्त है। वह विकसित, विकासशील तथा गरीब देशों को ध्यान में रखकर अलग-अलग गुणवत्ता, किस्म एवं कीमत वाले उत्पाद विभिन्न बाजारों में एक साथ उतारता है। यही कारण है, कि आज चीन के द्वारा निर्मित माल पूरी दुनिया के बाजार मे छाया हुआ है। आज चीन अमेरिका जैसे विकसित देश की उपभोक्ता माल की कुल जरूरत का 26% अपने यहाँ से निर्यात करता है। चीन सभी देशों के हिसाब से अलग अलग किस्म, कीमत व गुणवत्ता वाला माल बाजार में उतार रहा है। परिणाम स्वरूप आज विदेशी व्यापार के मामले में वह दुनिया का न. 1 निर्यातक देश बन गया है। देश की आर्थिक स्थिति, वातावरण एवं मान्यताओं के कारण माँग संरचनाएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। इसके लिए उपरोक्त विषयों से सम्बन्धित सूचनाओं, तथ्यों एवं आँकड़ों का संग्रहण, विश्लेषण एवं निर्वचन आवश्यक होता है, जिससे एक ओर तो व्यवसायी अपने कार्य निष्पादन को ग्राहक सन्तुष्टि के समकक्ष बना सके, तो दूसरी ओर सामग्री श्रम एवं धन के अपव्यय को रोक कर सम्पूर्ण विपणन-क्रियाकलापों एवं योजनाओं को लक्ष्य अभिमुखी बना सके। इस प्रकार विपणन अनुसंधान उत्पादक एवं ग्राहक की दूरी को कम करने में सक्षम हो पाता है।

भारतीय निर्माताओं को इस सम्बन्ध में चीन, जापान, कोरिया, तथा ताईवान जैसे देशों से बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है। कम्पनियों को अपने शुद्ध लाभ का कम से कम 5% अनुसन्धान एवं विकास कार्यो पर खर्च करना चाहिये। भारतीय निर्यातकों की असफलता का सबसे बड़ा कारण उनके द्वारा अनुसंधान एवं विकास कार्यो पर कम ध्यान दिया जाना है। सरकार के द्वारा भी इस सम्बन्ध में कोई विशेष नीति या प्रोत्साहन की योजनायें तैयार नहीं की गयी हैं, जिनकी आज अत्यन्त आवश्यकता है।

परिभाषा एवं अर्थ :-
(Definition and Meaning)

विपणन अनुसंधान के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों एवं संगठनों ने अनेक परिभाषाएँ दी हैं, जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण परिभाषायें निम्न प्रकार हैं :-

1. **अमेरिकन मार्केटिंग एसोसिएशन** के अनुसार —"विपणन अनुसंधान का आशय वस्तुओं एवं सेवाओं की विपणन सम्बन्धित समस्याओं के बारे में आँकडों के व्यवस्थित संकलन, अभिलेखन, विश्लेषण एवं निर्वचन से है।"[1]

2. **फिलिप कोटलर** के अनुसार —"वस्तुओं एवं सेवाओं के विपणन में निर्णय एवं नियन्त्रण सम्बन्धी पद्धति के सुधार हेतु किया जाने वाला व्यवस्थित समस्या विश्लेषण मॉडल एवं तथ्य अन्वेषण को विपणन अनुसन्धान कहा जाता है।"[2]

3. **स्टिल एवं कण्डिफ** के अनुसार —"विपणन निर्णयन लाभप्रद सूचना प्राप्त करने के लिए विपणन समस्याओं के बारे में किया जाने वाला आँकडों का व्यवस्थित एकत्रीकरण, अभिलेखन एवं विश्लेषण ही विपणन अनुसन्धान कहलाता है।"[3]

4. **जे. बी. गाइल्स** के अनुसार —"विपणन अनुसन्धान का तात्पर्य वर्तमान या भावी बाजारों, विपणन रीति-नीतियों एवं युक्तियों, बाजारों, विपणन विधियों एवं वर्तमान या भावी उत्पादों अथवा सेवाओं की अन्तर्क्रियाओं का उद्देश्यपूर्ण एवं व्यवस्थित संकलन, अभिलेखन, विश्लेषण, निर्वचन एवं प्रतिवेदन से है।"[4]

5. **क्लार्क एवं क्लार्क** के अनुसार —"विपणन अनुसन्धान का अभिप्राय वस्तुओं की डिजाइन, बाजार एवं ऐसी क्रियाओं जैसे वस्तुओं का भौतिक वितरण, संग्रहण, विज्ञापन एवं विक्रय प्रबन्ध के सजग और उद्देश्यपूर्ण अध्ययन से है।"[5]

उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से यह प्रकट होता है, कि जहाँ अमेरिकन मार्केटिंग एसोसिएशन की परिभाषा आँकड़ो पर अत्यधिक जोर देती है, वहीं **स्टिल** एवं **कण्डिफ** की परिभाषा के आँकड़ों पर आधारित सूचनाओं का उपयोग विपणन निर्णय में किस प्रकार किया जावे, इसका वर्णन करती है। क्लार्क एवं क्लार्क की परिभाषा भी कुछ सीमा तक व्यापक है।

सार रूप में विपणन अनुसंधान का आशय वर्तमान एवं भावी विपणन समस्याओं का पता लगाने के लिए तथा विक्रय प्रबन्ध में सजगता लाने के लिए व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक विधि से आँकड़ों तथा तथ्यों का एकत्रीकरण, अभिलेखन, विश्लेषण एवं निर्वचन से है। विपणन अनुसंधान की भूमिका एक सलाहकारी भूमिका होती है, जो प्रबन्धकों को विपणन कार्यक्रमों की ग्राहक सन्तुष्टियों के साथ संगतता को परखने का अवसर प्रदान करती है। इससे सम्पूर्ण विपणन कार्यक्रम को ग्राहक-अभिमुखी बनाया जाता है।

---

1. **American Marketing Association** : "The systematic gathering recording and analysing of data about problems relating to the marketing of goods and services" — **Marketing Definitions** (Chicago : American Markerting Association, 1960), p 16.
2. **Philip Kotlar** : "Marketing research is the systematic problem analysis, model building and fact finding for the purpose of improved decision making and control in the marketing of goods & services "– **Marketing Management**, Second Edition, 1967.
3. **Still and Cundiff** : "Marketing research is the systematic gathering, recording and analysis of data about marketing problems towards the end of providing information useful in marketing decision making."
— **Basic Marketing**, page 308.
4. **J. B. Giles** : "The objective and systematic collection, recording, analysis, interpretation and reporting of information about existing or potential markets, marketing strategies and tactics and the interaction between markets, marketing methods and current or potential products or services.
— **Marketing**, page 18.
5. **Clark and Clark** : "Marketing research is the careful and objective study of product design, markets and such transfer activities as physical distribution and warehousing advertising and sales management.

विपणन अनुसंधान के लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and objectives of marketing research)

विपणन अनुसन्धान का कार्यक्रम फर्म के अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करता है। रोलैन्ड कोलिस, डी.एम. फिलिप्स आदि विद्वानों ने भी विपणन अनुसंधान के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला है। विपणन अनुसंधान के उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं में वर्गीक त किया जा सकता है -

1. विशिष्ट उत्पादों के लिए सम्भावित बाजारों को परिभाषित करना।
2. वर्तमान एवं सम्भावित ग्राहकों की रूचियों, आदतों, क्रय व्यवहारों एवं क्रय-शक्ति की जानकारी देना।
3. प्रतिस्पर्धी की शक्ति एवं नीतियों का मूल्यांकन करना।
4. सामान्य आर्थिक दशाओं एवं प्रव त्तियों की ओर संकेत करना।
5. कम्पनी के सम्भावित बाजार अंश को ज्ञात करना।
6. बाजार के भौगोलिक वितरण का अध्ययन करना।
7. विद्यमान बाजारों में उपभोग बढ़ाने के तरीके खोजना।
8. नवीन उत्पाद स्वीक ति का पता लगाना।
9. उत्पाद की डिजाइन, रंग आदि पर अनुसन्धान करना।
10. वितरण लागत के औचित्य का पता लगाना व उसे न्यूनतम बनाने का प्रयास करना।
11. वर्तमान विपणन समस्याओं को हल करने के लिए विकल्प खोजना एवं भावी विपणन समस्याओं का अनुमान लगाना।
12. नवीन व्यावसायिक प्रव त्तियों का पता लगाना।
13. निर्माता एवं उपभोक्ता के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क की कमी को पूरा करना।
14. कीमत नीति निर्धारित करने में सहयोग देना।
15. सम्पूर्ण विपणन कार्यक्रम की प्रभावशीलता का मापन करना।

विपणन अनुसंधान का क्षेत्र
(Scope of Marketing Research)

विपणन अनुसंधान के क्षेत्र की अनेक विद्वानों ने अपने-अपने से व्याख्या की है।

प्रो. एम. जे. बेकर (Prof. M.J. Baker) ने विपणन अनुसंधान के क्षेत्र में निम्नलिखित को सम्मिलित किया है :-

— बाजार अनुसंधान
— विक्रय अनुसंधान
— उत्पाद अनुसंधान
— विज्ञापन अनुसंधान
— व्यावसायिक अनुसंधान
— निर्यात विपणन अनुसंधान
— अभिप्रेरण अनुसंधान

फिलिप कोटलर (Philip Kotlar) ने अपनी पुस्तक "Marketing Management" में इसके क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया है।

(1) बाजार विशेषताओं का निर्धारण।

(2) बाजार सम्भावना।

(3) बाजार अंश विश्लेषण।

(4) विक्रय विश्लेषण

(5) प्रतिस्पर्धी उत्पाद अध्ययन।

(6) नव उत्पाद स्वीक ति और सम्भाव्यता।

(7) अल्पकालीन पूर्वानुमान।

(8) दीर्घकालीन पूर्वानुमान।

(9) व्यावसायिक प्रव त्तियों का अध्ययन।

प्रो. बेकर तथा प्रो. फिलिप कोटलर के विचारो से स्पष्ट है कि विपणन अनुसंधान का क्षेत्र काफी विस्त त है। इसमें उत्पाद विशेषताओं की ग्राहक अपेक्षाओं से साम्यता, बाजार की विशेषताओं को निर्धारित करने से लेकर प्रतिस्पर्धी विपणन कार्यक्रम का अध्ययन भी शामिल है। विपणन अनुसंधान के क्षेत्र का अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों में भली प्रकार किया जा सकता है :-

1. उत्पाद अनुसंधान

(Prodcut Research) :–

इसके अन्तर्गत विभिन्न उत्पादों की बाजार स्थिति, उसकी मांग में परिवर्तन की प्रव ति, पुराने उत्पादों के नये प्रयोगों से विद्यमान उपभोक्ता स्तर को बढ़ाने को सम्मिलित किया जाता है। नवीन उत्पादों के सम्बन्ध में उपभोक्ताओं की इच्छाओं, आदतों, व्यवहारों का अध्ययन करना, व उत्पाद की उन विशेषताओं का पता लगाना होता है जो उपभोक्ताओं को अधिकतम सन्तुष्टि प्रदान करे।

2. बाजार अनुसंधान

(Market Research) :–

बाजार अनुसंधान का उद्देश्य उत्पादित किये जाने वाले उत्पादों की भावी बिक्री का आकलन करना होता है। इसमें व्यापार की विभिन्न विशेषताओं जिनमें ग्राहकों के आयु वर्गो के आधार पर, आय के आधार पर, शहरी एवं ग्रामीण आधार पर, जनसंख्या का विभाजन करके, उनकी रूचियों, आदतों एवं व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। बाजार के सम्पूर्ण ढ़ाँचे को प्रभावित करने वाले सभी घटकों के प्रभाव का आकलन किया जाता है।

3. संवर्द्धन अनुसंधान

(Promotion Research) :–

संवर्द्धन अनुसंधान करके यह पता लगाया जाता है, कि बाजार व उत्पाद की विशेषताओं की द ष्टि में रखते हुये, संवर्द्धन की कौन सी विधि अधिक उपयोगी एवं प्रभावी होगी। विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रमों का किस प्रकार उचित समायोजन करके विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रम लागू किया जा सकता है।

4. वितरण अनुसंधान

(Distribution Research) :–

इसके अन्तर्गत निर्माता इस बात का अनुसंधान करता है, कि किस प्रकार की वितरण वाहिका उसके लिए मितव्ययों एवं विपणन कार्यक्रम को प्रभावकारी ढंग से क्रियान्वित करने में योगदान दे सकती है।

5. प्रतिस्पर्धी उत्पाद अध्ययन

(Competitive Product Study) :–

इसके अन्तर्गत प्रतियोगियों द्वारा निर्मित किये जा रहे उत्पादों की विशेषताओं, विद्यमान बाजार स्थिति के परिप्रेक्ष्य में उनके

उत्पादों की कमियों एवं भावी विक्रय सम्भावनाओं का आकलन कर, फर्म अधिक बाजार भाग पर अधिकार स्थापित कर सकती है।

6. व्यावसायिक प्रव तियों का अध्ययन
(Business Nature Study) :–

व्यावसायिक प्रव तियों में बाजार में विद्यमान फर्मो द्वारा व्यवहार की जा रही प्रव तियों को शामिल किया जाता है। इसमें असत्य विज्ञाान, उत्पादों की क त्रिम कमी उत्पन्न करके मूल्य बढ़ाना, वितरण या पूर्ति को नियमित या नियंत्रित करने का प्रयास करना आदि का अध्ययन किया जाता है। प्रतिस्पर्धी द्वारा प्रयोग की जा रही गलत प्रव तियों का विज्ञापन व प्रचार करके और स्वयं द्वारा प्रयोग की जा रही स्वस्थ प्रव तियों को प्रकाश में लाकर स्वयं के लिए अनुकूल जनधारणा का निर्माण किया जा सकता है।

7. निर्यात अनुसन्धान
(Export Research) :–

देशी बाजारों में विद्यमान माँग को पूरा करने के पश्चात् शेष या अतिरिक्त माल के विदेशी बाजारों की आवश्यकतानुसार उत्पाद में उचित संशोधन करके खपाया जा सकता है। इसके लिए निर्यात बाजारों की भौगोलिक स्थिति, उपभोक्ताओं की आय, आदतों, व्यवहारों, प्रव त्तियों, निर्यातक देश की सरकार द्वारा निर्यात संवर्द्धन के उपायों का लागत संरचना में परिवर्तन व आयातक देश की सरकार द्वारा आयातों पर लगाये गये शुल्क व नीतियों का अध्ययन करते हुए, निर्यात बाजारों का अनुसन्धान किया जा सकता है।

8. व्यावसायिक अर्थशास्त्र का अनुसन्धान
(Business Economics Study) :–

इसके अन्तर्गत प्रचलित व्यावसायिक प्रव तियों का अध्ययन, उचित कीमत नीति, उसका लाभों पर प्रभाव, उत्पाद मिश्रण के अन्तर्गत किस प्रकार की उत्पाद पंक्तियाँ उसके लिए उचित रहेंगी, का पता लगाया जा सकता है।

9. अन्य अनुसन्धान
(Other Research) :–

इसके अन्तर्गत ग्राहक चेतना का अध्ययन, संस्था की विक्रय नीतियों पर प्रभाव डालने वाले अन्य विक्रय तत्वों का प्रभाव - जिसके अन्तर्गत विद्यमान आर्थिक स्थिति, मुद्रा की मांग एवं पूर्ति की स्थिति, केन्द्रीय व राज्य सरकारों द्वारा घोषित किये गये नियमों आदि को किया जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि विपणन अनुसन्धान का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है।

विपणन अनुसन्धान की प्रक्रिया
(Process of Marketing Research)

सभी विपणन समस्याओं के समाधान के लिए एक ही विपणन अनुसन्धान की प्रक्रिया को नहीं अपनाया जा सकता है। यह विपणन समस्या के प्रकार पर निर्भर करेगा। किसी छोटी सी विपणन समस्या के समाधान हेतु सम्पूर्ण प्रक्रिया को अपनाना, न केवल समय की बरबादी व अव्यावहारिक होगा, वरन् अनुसन्धान की लागतों का अनावश्यक रूप से बढ़ाने वाला होगा।

विपणन अनुसन्धान में इसके लिए अपनायी जाने वाली प्रक्रिया ही सबसे महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके द्वारा ही विपणन अनुसन्धान को व्यावहारिक रूप दिया जाता है। प्राप्त होने वाले परिणामों की प्रामाणिकता एवं विश्वसनीयता इसी प्रक्रिया पर निर्भर है। वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित रूप से किये जाने वाले विपणन अनुसन्धान में निम्नलिखित प्रक्रिया को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

(1) समस्या निर्धारण :-

विपणन अनुसन्धान की प्रक्रिया में सर्वप्रथम कदम यह निर्धारित करना है, कि सम्पूर्ण समस्या क्या है ? यदि विपणन समस्या

को ही भली प्रकार नहीं समझा गया तो किसी भी प्रकार से उपयोगी परिणाम अनुसन्धान से प्राप्त नही हो सकेगें। सर्वप्रथम प्रबन्धको को चाहिए कि अनुसन्धानकर्त्ता को पूरी समस्या समझा दी जाए, उसका पूर्व इतिहास एवं प ष्ठभूमि तथा वर्तमान स्थिति से पूरी तरह अवगत करा दे। जैसे उद्योग की बिक्री व द्धि के साथ किसी विशिष्ट फर्म की बिक्री भी बढ़ रही है। लेकिन लाभ कम होते जा रहे हैं, तो इसक लिए कई कारण जिम्मेवार हो सकते हैं। जैसे प्रति इकाई बिक्री व्यय बढ़ना, वितरण लागतों में व द्धि होना आदि, ऐसी स्थिति में अनुसन्धानकर्त्ता को इसकी पूरी जानकारी दी जानीं चाहिए जिससे अनुसन्धानकर्त्ता सही परिप्रेक्ष्य में स्थिति को समझ सके। इसके पश्चात ही वह सही समस्या का निर्धारण कर सकेगा।

(2) स्थिति विश्लेषण अथवा बाह्य वातावरण के प्रभाव का अध्ययन:-

विपणन समस्या का पूरा ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् अनुसन्धानकर्त्ता फर्म और उसकें व्यावसायिक वातावरण के बारे में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता है। अनुसन्धानकर्त्ता फर्म के वर्तमान उत्पाद, संवर्द्धन नीति, सम्पूर्ण उद्योग की स्थिति, उत्पाद का बाजार, प्रतिस्पर्धी उत्पादों का विश्लेषण करता है। वह कम्पनी के कार्य पालकों से बातचीत करता है एवं फर्म के अभिलेखों, प्रकाशित व त्तांत का विश्लेषण करता है। इससे अनुसन्धानकर्त्ता को समस्या पहचानने एवं उसके हल हेतु संभावित विकल्पों को खोजने में मदद मिलती है, स्थिति विश्लेषण के अन्तर्गत वह समस्या के कारणों से सम्बन्धित परिकल्पनाएँ विकसित करता है।

(3) अनौपचारिक विश्लेषण :-

यह छोटे पैमान पर किया जाने वाला व्यवस्थित अध्ययन होता है। इसका उद्देश्य वर्तमान विषय के सम्बन्ध में फर्म ने जो पूर्व अनुसन्धान किये हैं, उसकी जानकारी प्राप्त करना होता है। इसके अन्तर्गत फर्म के प्रभावित पक्षों जिनमें मध्यस्थ, ग्राहकों, प्रतिस्पधि र्यों, विज्ञापन एजेन्सी व विशेषज्ञों आदि से बातचीत की जाती है। इसमें किसी भी प्रकार की प्रश्नावली तैयार नही की जाती, वरन् सामान्य प्रश्न सम्बन्धित पक्षकारों से पूछे जाते हैं। यह जाँच लघु होते हुए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके आधार पर ही यह निर्धारित किया जाता है, कि वास्तविक समस्या क्या है, समस्या है या नहीं, एवं अनुसन्धान के लिए इसकी कितनी उपयुक्तता है ?

(4) औपचारिक अनुसन्धान योजना का निर्माण :-

अनौपचारिक विश्लेषण से सही समस्या के निर्धारण एवं उसके अनुसन्धान की उपयुक्तता पर आश्वस्त होने के पश्चात् अनुसन्धान के लिए औपचारिक योजना का निर्माण किया जाता है। इसमें निम्न बातें मुख्य रूप से होती हैं।

(i) अनुसन्धान के उद्देश्य व क्षेत्र का निर्धारण :-

अनौपचारिक अनुसन्धान से सही समस्या की पहचान एवं निर्धारण के पश्चात् जिन परिकल्पनाओं को अनुसन्धानकर्त्ता ने विकसित किया है, उसकी सत्यता की परख औपचारिक अनुसन्धान से की जाती है। इसके लिए आवश्यक है कि सबसे पहले अनुसन्ध ाान के उद्देश्यों का निर्धारण कर लिया जाए। अनुसन्धान किसी एक उद्देश्य के लिए या एक से अधिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी हो सकता है। इसी प्रकार अनुसन्धान का क्षेत्र क्या होगा, इसका निर्धारण भी भली प्रकार से किया जाना चाहिए। उद्देश्यों एवं क्षेत्र की सगंतता अनुसन्धान के लिए उपलब्ध समय, धन एवं श्रम से होनी चाहिए।

(ii) आवश्यक सूचना का निर्धारण :-

अनुसन्धान के उद्देश्यों एवं क्षेत्र के निर्धारण के पश्चात् यह निर्धारित किया जाना चाहिए। कि अनुसन्धान के उद्देश्यों के अनुरूप किस प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता होगी। सूचनाओं के अन्तर्गत तथ्यों को सम्मिलित किया जाता हैं, जिन्हे अवलोकन या पुछताछ के बाद आँकड़ो में भी व्यस्त किया जा सकता है समस्या से सम्बन्धित पक्षकारों की सम्मतियाँ एवं अभिमत भी सूचनाओं का हिस्सा होती हैं। यह निर्धारित करना चाहिए कि किस प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त की जावेंगी।

(iii) सूचना स्त्रोतों या साधनों का निर्धारण :-

यह तय करने के पश्चात् कि अनुसन्धान के लिए किस-किस प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त की जाएँगी, यह तय करना चाहिए कि ये सूचनाएँ किन स्त्रोतों से प्राप्त की जाएँगी। विपणन अनुसन्धान की द ष्टि से सूचनाएँ प्राप्त करने के स्त्रोतों का वर्गीकरण मुख्य रूप से दो भागों में बाटाँ गया हैं।

(a) प्राथमिक स्त्रोत :-

ये आँकड़े अनुसन्धानकर्त्ता औपचारिक अनुसन्धान योजना के अन्तर्गत स्वयं ही विभिन्न साधनों से प्राप्त से प्राप्त करता है। प्रायः किसी विषय के बारे में द्वितीयक आँकड़े उपलब्ध नहीं होनें पर इन्हें एकत्रित किया जाता है। इस प्रकार के आँकडों के लिए काफी समय, शक्ति व धन व्यय होता है। ये आँकड़े अधिक विश्वसनीय होते हैं क्योंकि अनुसन्धानकर्त्ता विशिष्ट प्रकार से इन्हें एकत्रित करता है। ये आँकड़े वितरकों, उपभोक्ताओं एवं अन्य सम्बन्धित पक्षकारों से प्राप्त किये जाते हैं।

(b) गौण या द्वितीयात्मक आँकड़े :-

द्वितीयात्मक आँकड़ों के अन्तर्गत ऐसे आँकड़ों को शामिल किया जाता है जो पहले से ही कहीं प्रकाशित या अन्य किसी प्रकार से उपलब्ध हैं। अनुसंधानकर्त्ता को इसके लिए प थक से समय नहीं लगाना पड़ता। इसके स्त्रोत फर्म के लेख एवं अभिलेख, सरकारी एवं अर्द्धसरकारी प्रकाशनों में उपलब्ध आँकड़ों, विश्वविद्यालयों के रिसर्च ब्यरो द्वारा प्रकाशित आँकड़े, पेशेवर एवं व्यवसायिक संस्थाओं के प्रकाशन, व्यापारिक पत्रिकाओं व दैनिक समाचार-पत्र, विपणन अनुसन्धान सेवाओं द्वारा एकत्रित व प्रकाशित आँकड़े हैं।

(iv) सूचनाओं का एकत्रीकरण :-

सूचनाओं के एकत्रीकरण की समस्या वास्तव में द्वितीय आँकड़ों के बारे में नहीं होकर प्राथमिक आँकड़े के बारे में होती है। द्वितीयक आँकड़े पहले से ही किसी उद्देश्य के लिए एकत्रित व प्रकाशित या अप्रकाशित होते हैं। अनुसन्धानकर्त्ता उसमें से आवश्यक आँकड़े उचित स्त्रोत से प्राप्त कर लेता है। समस्या प्राथमिक आँकड़ों के एकत्रीकरण की आती है। प्राथमिक आँकड़े निम्नलिखित आँकड़े से एकत्रित किये जा सकते हैं -

(a) अवलोकन विधि :-

इसमें अनुसन्धानकर्त्ता न तो प्रश्न पूछता है, और न ही सम्बन्धित व्यक्ति से साक्षात्कार करता है। बस अपने सक्षम जो भी होते हुए देखता है, उसका अवलोकन कर, उसे अभिलिखित कर देता है। इसका उपयोग विक्रय तकनीकों की प्रभावशीलता के मापन, ग्राहक गतिविधियों, ग्राहक संवेदनशीलताओं के मापन में किया जा सकता है, इसमें अवलोकन कर्त्ता स्वयं विक्रय केन्द्रों पर जाकर देखता है। इस विधि से प्राप्त सूचनाएँ शुद्ध, विश्वसनीय एवं पक्षपात रहित होती हैं। लेकिन यह विधि समय-साध्य, व्यय-साध य होने के साथ सभी प्रकार की सूचनाएँ प्रदान नहीं कर सकतीं।

(b) सर्वेक्षण विधि :-

यह सर्वेक्षण की सामान्य व प्रभावी विधि है। इसमें प्रश्नावली का निर्माण किया जाता है। इसमें प्रश्नों की रचना इस प्रकार की जाती है, जिससे विपणन समस्या के सही रूप से निर्धारण व हल करने में मदद मिल सके। उत्पाद लक्षणों, विज्ञापन प्रति एवं माध्यम, ग्राहकों की परिवेदनाओं, विचारों, सुझावों ब्राण्ड-निष्ठा आदि कई विषयों के बारे में इससें जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

प्रश्नावलियों का निर्माण करते समय अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता होती हैं। प्रश्नों की संख्या उचित होनी चाहिए, प्रश्न प्रत्यक्ष रूप से पूछने की बजाय अप्रत्यक्ष रूप से पूछे जाने चाहिए व ऐसे प्रश्नों से बचना चाहिए जो उपभोक्ताओं के व्यक्तिगत जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त करने से सम्बन्ध रखते हों। किसी भी मान्यता, भावनाओं एवं व्यक्तित्व को ठेस पहुँचाने वाले प्रश्नों को भी स्थान नहीं दिया जाना चाहिए।

उत्तरदाताओं से सम्पर्क व्यक्तिगत रूप से, डाक द्वारा या टेलीफोन द्वारा किया जा सकता है। यदि व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क किया जाता है, तो पहल सामान्य प्रश्न पुछे जाने चाहिए व उसके बाद जटिल प्रश्न। डाक द्वारा भेजी जाने वाली प्रश्नावलियों के प ष्ठों की संख्या दों या तीन से अधिक नहीं होनी चाहिए, नहीं तो प्रश्नावलियाँ उत्तरदाता की रद्दी की टोकरी की शोभा मात्र बनकर रह जायेंगी। टेलीफोन द्वारा उत्तरदाता से सम्पर्क करने पर केवल मुख्य-मुख्य प्रश्न पूछे जाने चाहिए।

(c) प्रयोगात्मक विधि :-

इस विधि में कारण एवं प्रभाव के बीच सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। विभिन्न कारकों का विभिन्न बातों पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसका मूल्यांकन इस विधि के अन्तर्गत किया जाता है। फिलिप कोटलर के अनुसार विक्रयकर्त्ताओं को प्रशिक्षण की उपयुक्त विधि का पता लगाने, उत्पाद प्रदर्शित करने की सर्वोत्तम विक्रय व्यवस्था, विक्रयकर्त्ताओं की पारिश्रामिक योजना पैकेज डिजाईन की प्रभावशीलता का मापन, विज्ञापन की सर्वाधिक प्रभावशाली प्रतिलिपि का चयन आदि में प्रयोगात्मक सहायक सिद्ध होती है।

इससे पहले छोटे पैमाने पर प्रयोग किये जाते हैं, व सफलता मिलने पर इनके आकार में व द्धि की जाती है। इसके लिए यह आवश्यक है कि सेम्पल का आकार पर्याप्त हो एवं वह समूह का प्रतिनिधित्व करता हुआ हो। जैसे बिक्री से व द्धि करने के लिए उत्पादन में व द्धि करके, लागतों में कमी करके, कीमतों को नीचा करके की जा सकती है या वस्तु की किस्म में गुणात्मक सुधार उपयुक्त रहेगा, इसका मूल्यांकन प्रयोगात्मक विधि से छोटे पैमान पर किया जा सकता है।

(v) सूचनाओं का विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण :-

औपचारिक अनुसन्धान प्रतिवेदन को तैयार करने की कड़ी में सूचनाओं के एकत्रीकरण के पश्चात उनका विश्लेषण किया जाता है। प्राप्त की गयी सूचनाओं का कितना भाग अनुसन्धान के उद्देश्यों के अनुरूप व महत्वपूर्ण है, कितना भाग कम महत्वपूर्ण है, इसका पता लगाया जाता है। विश्लेषण के पश्चात् उपलब्ध सूचनाओं का निर्वचन किया जाता है एवं निष्कर्ष निकालन का प्रयास किया जाता है।

इसके पश्चात प्राप्त समस्त सामग्री की सांख्यिकीय विधियों, औसत आदि का उपयोग किया जाता है। Electronic Data Processing Equipment का उपयोग भी प्रस्तुतीकरण के लिए किया जा सकता है। निर्वचन में किये गये अनुसंधान के बारे में निष्कर्ष निकाले जाते हैं, एवं उसकी तुलना अनौपचारिक अनुसंधान के समय बनायी गयी परिकल्पनाओं से की जाती है।

(vi) प्रतिवेदन तैयार करना :-

इसके पश्चात अनुसंधानकर्त्ता सम्पूर्ण अनुसंधान का प्रतिवेदन तैयार करता है। इसमें अनुसंधान के उद्देश्यों एवं क्षेत्रों को बताया जाता है। अनुसंधान के लिए सूचनाओं के किन-किन स्त्रोतों का उपयोग किया गया है, प्राप्त सूचनाओं के आधार पर किया गया विश्लेषण एवं निष्कर्ष क्या है, एवं जिस विपणन समस्या के बारे में अनुसंधान किया गया उसके हल के लिए क्या-क्या विकल्प उचित हो सकते हैं, प्राथमिकता के आधार पर उनका क्रम क्या है ? इसका अन्तिम भाग सलाहकारी भूमिका लिए हुए होता है।

बाजार अनुसन्धान
(Market Research)

विपणन अनुसन्धान एक व्यापक शब्द है, जिसमें वस्तु या सेवा के सम्भावित विपणन से सम्बन्धी सभी पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। जबकि बाजार अनुसंधान में सम्भावित लक्ष्य बाजार के ग्राहकों का व्यापक अध्ययन किया जाता है। बाजार अनुसंधान में भावी ग्राहकों की आय, उनके क्रय निर्णयों को प्रभावित करने वाले घटक, किस्म व कीमत संवेदनशीलता, सामाजिक मान्यतायें, धार्मिक विश्वास, उपभोग का स्तर, बाजार की भौगोलिक स्थिति का अध्ययन किया जाता है। इसके अन्तर्गत विद्यमान उत्पादों की तुलनात्मक स्थिति का अध्ययन व यह पता लगाना कि इसके सन्दर्भ में फर्म का उत्पाद कहाँ ठहरता है। नये उत्पादों के बारे में ग्राहकों के विचार, बिक्री का पूर्वानुमान, बाजार खंडकरण, बाजार के ढाँचे व स्वरूप को प्रभावित करने वाली प्रव त्तियाँ जिसमें आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक प्रव त्तियाँ शामिल हैं, सभी का अध्ययन बाजार अनुसंधान में किया जाता है। विद्यमान बाजार फर्म के द्वारा विपणन किये जाने वाले उत्पादों की द ष्टि से क्रेता बाजार है, विक्रेता बाजार है या संक्रमण की अवस्था से गुजर रहा है, इसका भी व्यापक अध्ययन बाजार अनुसन्धान में किया जाता है। जहाँ फर्म का विदेशी बाजार व्यापाक हो उनमें विभिन्न बाजारों की सापेक्षिक लाभदायकता का पता भी इससे लगाया जाता है।

बाजार अनुसंधान की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं -

1. **एलबरन** के अनुसार — "माल तथा उसके मूल्य की बाजार के लिए उपयुक्तता आँकने तथा कौन से अन्य बाजार उपलब्ध हो सकते हैं, यह जानने कि क्रियायें बाजार अनुसन्धान शीर्षक के अन्तर्गत आती हैं।"[1]

2. **डॉ. ब्लैन्केनशिप** के अनुसार — "बाजार अनुसन्धान एक ऐसी सहायक सेवा है जो प्रबन्धकों को यह अवसर प्रदान करती है कि वे इस स्पष्ट जानकारी के साथ कि क्या बेचा जा सकता है, वस्तुओं का निर्माण करें तथा इस स्पष्ट जानकारी के साथ

---

1. "The Process of assessing the suitability of the goods and their pric to the market and that of learning what further markets are available comes under the heading of market research"
— **Elbourne** : Fundamentals of Industrial Adminstration, Vol. I. p. 53.

अपव्यय को न्यूनतम करने के लिए विक्रय के विभिन्न उपकरणों को किस प्रकार संयोजित किया जा सकता है, विक्रय करे।"[1]

3. **श्री लेगडन** के अनुसार — "बाजार अनुसन्धान के उद्देश्य की एक उच्च कोटी की परिभाषा है, व्यावसायिक निर्णयों के चारों ओर के अनिश्चितता के क्षेत्रों को कम करना।"[2]

इस प्रकार बाजार अनुसन्धान एक व्यावहारिक क्रिया है, जिसका उद्देश्य उत्पादकों को उनके उत्पादों तथा लक्ष्य बाजारों के बारे में विभिन्न तथ्यात्मक जानकारी प्रदान करना है, जिससे बाजार की विद्यमान व भावी स्थितियों के अनुरूप प्रभावी विपणन-नीतियाँ बनायी जा सकें।

विपणन अनुसन्धान एवं बाजार अनुसंधान में अन्तर
(Difference between Marketing Research and Market Research)

सामान्य व्यवहार में कई लोग विपणन अनुसन्धान एवं बाजार अनुसन्धान को एक ही अर्थ में समझने की भूल करते हैं। वास्तव में इन दोनों शब्दों में काफी अन्तर है। इन दोनों शब्दों के अन्तर को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है -

इस प्रकार उपरोक्त वर्णन से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि विपणन अनुसन्धान एवं बाजार अनुसन्धान पर्यायवाची शब्द नहीं होकर भिन्न-भिन्न शब्द हैं। जहाँ बाजार अनुसन्धान में अनुसन्धान का क्षेत्र ग्राहकों व बाजार तक ही सीमित रहता है, वहीं विपणन

क्र. स.	अन्तर का आधार	विपणन अनुसन्धान	बाजार अनुसन्धान
1.	क्षेत्र (Scope)	विपणन अनुसन्धान एक व्यापक शब्द है, जिसमें विपणन से शब्द सम्बन्धित सभी कार्यो की जाँच एवं अनुसन्धान किया जाता है।	बाजार अनुसन्धान एक संकुचित शब्द है। यह स्वयं विपणन अनुसन्धान का भाग होता है।
2.	विषय-वस्तु (Subject Matter)	विपणन अनुसन्धान में विपणन की वर्तमान एवं भावी दोनों प्रकार की समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। इसमे न केवल बाजार एवं ग्राहकों का वरन्, उत्पाद, प्रतिस्पर्धात्मक स्थितियों, विज्ञापन प्रभावशीलता लागत, वे प्रभाव जो व्यापार के नियन्त्रण में हैं, या अनियन्त्रणीय हैं, अभिप्रेरणा अनुसन्धान, विक्रय नीतियों एवं विधियों के सम्बन्ध में आदि-आदि सभी इसकी विषयवस्तु के अन्तर्गत आते हैं।	बाजार अनुसन्धान में वर्तमान एवं भावी ग्राहकों, नये बाजारों का पता लगाना, बाजार का विभिन्न आधारों पर खण्डकरण करना, उनकी तुलनात्मक लाभदेयता का पता लगाना, वस्तु की संभावित माँग का पूर्वानुमान, ग्राहकों की प्रव त्ति एवं बाजार विशेषताओं का पता लगाना आदि सभी इसकी विषय-सामग्री के अन्तर्गत आते हैं।
3.	उद्देश्य (object)	विपणन अनुसन्धान का उद्देश्य विपणन समस्याओं का पता लगाकर ऐसी नीतियाँ व कार्यक्रम तैयार करना है, जो फर्म के दीर्घकालीन व्यापारिक हितों की पूर्ति कर सकें व सम्पूर्ण विपणन कार्यक्रम को प्रभावशीलता से लागू कर सकें।	बाजार अनुसन्धान का उद्देश्य वर्तमान व भावी ग्राहकों का अध्ययन करना, किसी बाजार के ढाँचे पर प्रभाव डालने वाले वातावरणीय घटकों के प्रभाव का अध्ययन इसमें शामिल है, इस प्रकार इसका उद्देश्य बाजारों को अपने अनुकूल बनाना होता है।

2. "Market Research is an ancillary service thatallows management to manufacture with a better idea of what can be sold, and how much can be sold, and to market with a better idea of how to combine the various tools of selling to minimise waste."

— **Dr. Albert D. Blankenship** : How to Conduct Consumers Opinion Research.

3. "A classic definition of the purpose of market research is : To reduce the areas of uncertainty surrounding business decisions."

– R.L. Lagden : The Principles and Practice of Management, edited by F. E. L., p. 129.

4.	जटिलता (Complicacy)	सम्पूर्ण विपणन कार्यक्रम अनुसन्धान का विषय होने के कारण इसके उपकरण व तकनीकें बाजार अनुसन्धान की अपेक्षा जटिल होती हैं।	विपणन अनुसन्धान की तुलना में बाजार अनुसन्धान में जटिलता की मात्रा अपेक्षाक त कम होती है।
5.	अनुसन्धान का केन्द्र बिन्दू (Centre Point of Research)	विपणन अनुसन्धान का कार्य वर्तमान व भावी विपणन समस्याओं की पहचान करना एवं उन समस्याओं को हल करने के लिए उचित विधियों की खोज करना है। अतः विपणन समस्याएँ ही इसमें अनुसन्धानकर्त्ता के लिए अनुसन्धान का केन्द्र बिन्दू हैं।	बाजार अनुसन्धान में अनुसन्धानकर्त्ता की द ष्टि उपभोक्ता व्यवहार पर केन्द्रित होती है। उपभोक्ता किसी विशेष वस्तु को क्यों खरीदता है, क्रय के पीछे के प्रयोजन व प्रेरणाएँ क्या हैं ? किसी उत्पाद विशेष की नापसन्दगी के कारण क्या हैं ? इस प्रकार उपभोक्ता व्यवहार ही इसमें अनुसन्धान का एकमात्र केन्द्र-बिन्दु होता है।
6.	लागत (Cost)	विपणन अनुसन्धान का कलेवर व विषय सामग्री काफी व्यापक है। इसमें वैज्ञानिक व व्यवस्थित प्रक्रिया का अनुपालन अनुसन्धान के दौरान किया जाता है। कई इलेक्ट्रॉनिक यन्त्रों, कम्प्यूटरों का उपयोग भी बड़ी कम्पनियाँ इसमें करती है। इन सबसे इसकी लागत काफी बैठती है।	बाजार अनुसन्धान में विपणन अनुसन्धान के समान लम्बी, व्यावसायिक प्रक्रिया का उपयोग नहीं होता। सामान्य अनुसन्धान उपकरणों के उपयोग से इसे आसानी से सम्पन्न किया जा सकता है। इसलिए इसकी लागत विपणन अनुसन्धान की तुलना में कम पड़ती है।
7.	प्रक ति (Nature)	विपणन अनुसन्धान गुणात्मक व संख्यात्मक दोनों की प्रक ति का होता है।	जबकि बाजार अनुसन्धान सामान्यतया वर्णात्मक होते हैं। कभी-कभी अपवादस्वरूप ही गुणात्मक व संख्यात्मक होते हैं।
8.	समय तत्व (Time element)	विपणन अनुसन्धान में लम्बी व्यवस्थित प्रक्रिया को अपनाने के कारण सूचनाओं के एकत्रीकरण, विश्लेषण व निर्वचन के पश्चात् प्रतिवेदन तैयार करने में लम्बा समय लगता है।	बाजार अनुसन्धान में अपेक्षाक त कम समय लगता है। लम्बी जटिल व तकनीकी प्रक्रिया का सामान्तया अनुपालन इसमें नहीं होता।
9.	उपयोगिता (Utility)	विपणन प्रबन्धकों के लिए विपणन अनुसन्धान तुलनात्मक रूप से अधिक उपयोगी व प्रबन्धकीय निर्णयों का आधार होता है। सम्पूर्ण विपणन कार्यक्रम की रचना इसके द्वारा प्राप्त परिणामों के आधार पर की जाती है।	बाजार अनुसन्धान की उपयोगिता भी अपने स्थान पर महत्वपूर्ण है ही, लेकिन प्रबन्धकों के लिए संगठन की सर्वांगीण नीतियों के निर्धारण में इसकी उपयोगिता सीमित है।

अनुसन्धान का क्षेत्र अत्यन्त ही व्यापक है जिसमें उत्पाद वितरण, संवर्द्धन, व्यावसायिक प्रव त्तियों, ग्राहक स्वीक ति, उपभोग संरचनाओं में होने वाले परिवर्तन, व्यापार पर प्रभाव डालने वाले अन्य तत्वों का अध्ययन, प्रतिस्पर्धी उत्पादों का तुलनात्मक रूप में अध्ययन, आदि सभी को सम्मिलित किया गया है। बाजार अनुसन्धान विपणन अनुसन्धान का ही एक भाग मात्र है, जो अपने आप को बाजार व ग्राहकों के अध्ययन तक ही सीमित रखता है, जबकि विपणन अनुसंधान में वर्तमान व भावी विपणन समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।

विपणन सूचना प्रणाली
(Marketing Information System)

विपणन समस्याओं के समाधान एवं प्रबन्धकीय निर्णयों में सहायता देने के लिए विपणन सूचना प्रणाली महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। यह प्रणाली प्रायः बड़ी कम्पनियों के द्वारा जिनके पास पर्याप्त वित्तीय साधन हों एवं जो उसके लिए दक्ष कर्मचारियों को नियुक्त कर सकते हों उन्हीं के लिए इसका उपयोग है। इस प्रणाली की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार है -

(i) विपणन सूचना प्रणाली में प्रबन्धकों द्वारा निर्धारित विपणन सूचनाओं का नियमित तौर पर एकत्रीकरण किया जाता है, भले ही उन सभी सूचनाओं का उपयोग न हो। इस प्रकार नियमित तौर पर वर्गीक त सूचनाएँ इसमें एकत्रित की जाती हैं।

(ii) वर्गीक त विपणन सूचनाओं के अलावा किसी विपणन समस्या के समाधान अथवा विपणन व्यूहरचना बनाने के लिए अन्य वांछित सूचनाएँ भी आवश्यकतानुसार इसमें एकत्रित की जाती हैं।

(iii) यह प्रणाली प्रायः कम्पयूटरीक त व्यवस्था पर आधारित होती है, जिसमें सूचनाओं के विश्लेषण, निर्वचन एवं निष्कर्ष, निकालने की तीव्रता में काफी व द्धि हो जाती है।

(iv) इस प्रणाली में संगठन की आन्तरिक एवं बाह्य सूचनाओं दोनों का ही संग्रहण किया जाता है।

(v) इस प्रणाली को स्थापित करने में काफी लागत आती है, इसलिए छोटी विपणन फर्मो के लिए इसका उपयोग नहीं है। छोटी फर्मो के लिये विपणन अनुसंधान करना ज्यादा उचित है। बहुर्राष्ट्रीय कम्पनियों के लिए यह प्रणाली एक प्रकार से वरदान है।

(vi) इस प्रणाली के द्वारा भविष्य में उत्पन्न होने वाली किसी विपणन समस्या का आकलन पहले से ही किया जा सकता है एवं समस्या पैदा होने पर इसका तुरन्त हल भी निकाला जा सकता है। जबकि विपणन अनुसंधान में भावी विपणन समस्या का पहले आकलन नहीं किया जा सकता।

(vii) व्यावसायिक संगठनों ने विपणन सूचना प्रणाली का विकास मूलत : "सेना सूचना प्रणाली" (Military Information System) के आधार पर किया है जिसके अन्तर्गत एक देश की सेना दूसरे देशों की सेनाओं के सम्बन्ध में विभिन्न सामरिक सूचनाओं का निरन्तर एकत्रीकरण करके उनका उपयोग करती है वे स्वयं में सुधार करके दुश्मनों पर हावी रह सकें। जिससे इस सन्दर्भ में प्रतियोगिता का बेहतर तरीके से सामना करने के लिए विपणन सूचना प्रणाली का एक विशेष महत्व है।

(viii) इस प्रकार यह स्पष्ट है कि विपणन सूचना प्रणाली अपने आप में एक व्यापक शब्द है जिसके अन्तर्गत विपणन अनुसन्धान भी सम्मिलित है :-

निर्यात बाजार अनुसन्धान
(Export Market Research)

आशय
(Meaning) :–

निर्यात बाजार अनुसन्धान निर्यातक फर्म के विदेशी बाजारों की वर्तमान व भावी विक्रय सम्भावनाओं का व्यापक रूप से पता लगाता है। निर्यातक फर्म जिन लक्ष्य बाजारों का चयन करना चाहती है, उसकी सही तस्वीर तभी उभर कर सामने आती है जब फर्म उस बाजार से सम्बन्द्ध विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करे। इस सन्दर्भ में निर्यात बाजार अनुसन्धान के अन्तर्गत फर्म के लक्ष्य बाजारों के ग्राहकों के क्रय निर्णयों को प्रभावित करने वाले तत्वों का पता लगाया जाता है। आर्थिक आधार पर वर्ग

व उपवर्ग बनाकर यह जानने का प्रयास किया जाता है कि विभिन्न आय वर्ग के आधार पर उस उत्पाद विशेष की कितनी किस्में प्रस्तुत करनी होंगी जिससे फर्म उस बाजार की सम्पूर्ण विपणन सम्भावनाओं में से अधिकतम का दोहन कर सके। विदेशी ग्राहकों की सामाजिक मान्यताएँ, धार्मिक विश्वास व व्यक्तिगत मान्यताओं का इस सन्दर्भ में पता लगाया जाता है, कि इसका कितना अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव फर्म के निर्यात पर पड़ेगा। निर्यात बाजारों के भौगोलिक संरचना व उसका माल के परिवहन व वितरण पर पड़ने वाले प्रभाव, ग्राहकों की आदतों, प्रव त्तियों, जीवन, शैली कीमत व किस्म के प्रति संवेदनशीलता इन सभी का पता लगाया जाता है। निर्यात बाजार में पहले से उपलब्ध विभिन्न उत्पादकों की उत्पादों के सन्दर्भ में फर्म का उत्पाद किस स्तर का है ? प्रतियोगिता का स्वरूप व स्तर कैसा है ? उत्पादन की विधियों व तकनीकों में होने वाले परिवर्तनों के साथ फर्म के उत्पाद में विक्रय करने की योजना बना रही है, वहाँ वह उत्पाद अपने जीवन चक्र की किस अवस्था में है ? बाजार की अल्पकालीन, मध्यमकालीन व दीर्घकालीन लाभदायकता की क्या सम्भावनाएँ हैं? विदेशी बाजारों में वहाँ की सरकारों द्वारा बनाये गये विधानों का अध्ययन व उसके अनुसार उपाय बताना। भविष्य में बाजार का विस्तार किस स्तर तक होने की सम्भावना है ? सम्भावित निर्यात बाजारों के लिए प्रभावी व मितव्ययी वितरण की वाहिकाएँ कौन-सी होंगी ? उत्पाद के निर्यात बाजारों में प्रस्तुत करने के लिए किस प्रकार संवर्द्धन मिश्रण उपयोगी रहेगा ? इन सभी विषयों के सन्दर्भ में व्यापक जानकारी प्राप्त करना ही निर्यात बाजार अनुसन्धान कहलाता है।

उद्देश्य

(obects):-

निर्यात बाजार अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य निर्यात विपणन मिश्रण के सम्बन्ध में वांछित जानकारी प्राप्त करना है। इसके अन्तर्गत उत्पाद, स्थान, कीमत व संवर्द्धन के बारे में जानकारी प्राप्त करना होता है। इसका मुख्य उद्देश्य यही पता लगाना होता है कि दीर्घकालीन निर्यात विपणन लाभदायक आधार पर किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है। **हैरोल्ड व्हाइटहैड** के 'अनुसार' "बाजार अनुसन्धान के उद्देश्य त्रिमुखी हैं - एक निर्दिष्ट उत्पादन के लिए सम्भावित बाजार को परिभाषित करना, सामान्य बाजार की दशाओं व प्रव तियों के बारे में सूचना देना, प्रतियोगी शक्तियों व नीतियों का मूल्यांकन करना तथा उत्पाद एवं बाजार के अनुसार उपयुक्त वितरण के माध्यमों के बारें मे सूचना देना"।

निर्यात बाजार अनुसन्धान एक बहुआयामी अध्ययन है। इसके उद्देश्यों का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है -

यह पता लगाना कि कौन-से उत्पाद विदेशी उपभोक्ताओं की विद्यमान व भावी आवश्यकताओं, इच्छाओं व क्रय प्रयोजनों को पूरा कर सकेंगे। नये उत्पाद को स्वीकार करने की सम्भावनाओं का पता लगाना भी इसका उद्देश्य है। क्या विद्यमान उत्पादों को फर्म निर्यात बाजार के योग्य बना सकेगी ?

(2) निर्यात बाजाारों के लिए विक्रय का पूर्वानुमान करना। यह पता लगाना कि किस प्रकार के उत्पादों की विभिन्न समय पर किस मात्रा में मांग होगी।

(3) उपभोक्ताओं की क्रय प्रव तियों का अध्ययन करना, जिससे यह पता लगाया जा सके कि वर्तमान व भावी माँग के स्वरूप पर इसका कितना प्रभाव होगा।

(4) निर्यात बाजार में पहले से विक्रय की जा रही वस्तुएँ किस प्रकार की हैं ? उनसे प्रतिस्पर्द्धा की स्थिति में फर्म के उत्पाद की स्थिति क्या होगी ?

(5) यह निर्धारित करना कि लक्ष्य निर्यात बाजारों में होने वाली उस वस्तु विशेष की बिक्री में फर्म का भाग क्या होगा व भविष्य में उसका रूख कैसा होगा ? अर्थात विद्यमान व भावी बाजार अंश का पूर्वानुमान लगाना।

(6) प्रतिस्पर्द्धियों के ब्राण्ड, उन्हें वैधानिक संरक्षण एवं पेटेण्ट किस प्रकार के हैं ?

(7) लक्ष्य निर्यात बाजारों में प्रतियोगिता किस स्तर व स्वरूप की होगी, इसका पता लगाना।

(8) स्थानीय उत्पादकों की वस्तुओं से प्रतियोगिता का सामना क्या फर्म का उत्पाद व विपणन नीतियाँ कर सकेंगी।

(9) उत्पाद के लिए ग्राहक की वहन करने की क्षमता व उसकी क्रय-शक्ति का अध्ययन जिससे उपयुक्त कीमत नीतियाँ बनायी जा सकें।

(10) बाजार की भौगोलिक संरचना का पता लगाना।

(11) बाजार की भौगोलिक संरचना के सन्दर्भ में वस्तु के भौतिक वितरण के लिए कौन -सी नीतियाँ उपयुक्त होंगी ?

(12) उत्पाद के वितरण हेतु विभिन्न माध्यमों की उपयुक्तता व प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।

(13) सम्बन्धित निर्यात बाजार में वितरण सम्बन्धी आधुनिक प्रव तियों का अध्ययन करना।

(14) निर्यात बाजार में उपलब्ध वितरण माध्यमों की लागत का अध्ययन करना, जिससे वितरण लागत को न्यूनतम कर अधिक लाभ कमाया जा सके।

(15) विक्रय के पूर्व एंव पश्चात् की विक्रय सेवाओं के बारे में ग्राहकों की क्या अपेक्षाएँ हैं?

(16) कुल बाजार में विभिन्नता का तत्व व स्तर कैसा हैं? बाजार सजातीय या विजातीय है। इसका पता लगाना।

(17) निर्यातक देश की सरकार की निर्यात नीतियों व आयातक देश की सरकार की आयात नीतियों का कितना अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

निर्यात व्यापार के लिए बाजार अनुसन्धान का महत्व

(Importance of Market Research for Export Business)

बाजार अनुसन्धन आवश्यक है। अतः चाहे वह घरेलू बाजार हो अथवा वह विदेशी बाजार, विपणन तथा बाजार (Marketing and Market) अनुसन्धान महत्वपूर्ण है। इस सन्दर्भ में विश्व विपणन की चुनौती को स्वीकारने एवं पूरा करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विपणन अनुसन्धन की तकनीक को सही अर्थो में समझना और अपनाना एक अनिवार्यता है। इस तकनीक के जरिये विदेशी बाजारों उनकी आवश्यताओं व इच्छाओं तथा उन्हें पूरी करने की विधियों का पूर्णतम, पर्याप्त व सही जानकारी उपलब्ध की जा सकती है। यह जानकारी विदेशी राष्ट्रों की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, तकनीकी तथा वैधानिक परिस्थितियों एंव वितरण व्यवस्थाओं में विद्यमान मौलिक अन्तरों को समझने की सहायता करती है। अतः यह अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का प्रारम्भिक बिन्दु है तथा सभी क्रमिक क्रियाओं का आधार है, जिसके अभाव में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन नियोजन तथा उसकी प्रभावपूर्ण क्रियान्विति सम्भव नहीं है।

निर्यात विपणन में बाजार अनुसन्धान के महत्व को इससे प्राप्त होने वाले लाभों के सन्दर्भ में स्पष्ट किया जा सकता है। ये निम्नलिखित हैं-

(1) इस तकनीक की प्रयुक्ति व्यावसायिक फर्मो के भ्रौदिक साधनों एंव समय में काफी बचत करती है और उनके लिए विदेशी बाजारों के द्धार खोजती है। जहाँ वे अपने उत्पादों की बिक्री को सम्भव बनाकर घरेलू खपत की कमी को विदेशी खपत के जरिये पूरा कर सकती हैं।

(2) निर्यात बाजार अनुसन्धान विपणन करने वाली फर्मो को अनेक जोखिम व अनिश्चिताओं से बचाता है अर्थात् यह अनिश्चिताओं का बीमा है।

(3) इसके द्वारा विदेशी विपणन कार्यक्रमों एंव नीतियों का प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन सम्भव है।

(4) अनुसन्धान द्वारा बाजार का अध्ययन करके उसकी स्थिति और संभावनाओं का पता लगाया जा सकता है।

(5) यह नये उत्पादों और उनके नये उपयोगों से संस्था के लाभों के नये स्त्रोतों को विकसित करता है।

(6) इस बात की जानकारी प्राप्त की जा सकती है, कि ग्राहक अन्य उत्पादों की तुलना में किसी उत्पाद को क्यों क्रय करते हैं।

(7) उपभोक्ता के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। जैसे उपभोक्ता कौन हैं? कहां रहते हैं? उनकी क्रय आदतें क्या हैं? वे उत्पाद को कब और क्यों खरीदते है? उनकी प्राथमिकताएँ क्या हैं? आदि।

(8) निर्यात बाजार अनुसंधान साधनों के अपव्यय को कम करता हैं।

(9) निर्यात बाजार अनुसंधान विक्रय संवर्द्धन के लिए प्रयोग मे लाया जा सकता है। विज्ञापन की कुशलता का निर्धारण किया जा सकता है। उपयुक्त पैकेंजिग का डिजाइन तैयार किया जा सकता है और उसका परीक्षण किया जा सकता है।

(10) इसके द्वारा घरेलू एंव विदेशी बाजारों की समानताओं तथा असमानताओं की जानकारी मिलती है।

(11) वांछित नये उत्पादों की खोज करने, उनके प्रयोग को बढ़ावा देने और उनमें आवश्यकतानुसार सुधार में सुविधा होती है। साथ उसकी सर्वोत्तम किस्मों, किमतों एवं आकारों का निर्धारण किया जा सकता है। इसी प्रकार उत्पाद किस्म एंव कीमत से सम्बद्ध उपभोक्ता प्रतिक्रियाओं को मालूम किया जा सकता है।

(12) विपणन नीतियों एंव विपणित उत्पाद पर विदेशी प्रथाओं, परम्पराओं, धार्मिक तथा सांस्क तिक विभिन्नताओं के कारण होने वाले असर को जाना जा सकता है।

(13) वितरण श्र ंखलाओं तथा मध्यस्थों की आदतों के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(14) सरकारी नियमों, प्रतिबन्धों, शुल्कों, करों, संचार व्यवस्थाओं आदि की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(15) सर्वोत्तम ट्रेड मार्का का संकलन, परीक्षण और चुनाव किया जा सकता है।

(16) निर्यात संगठन की कुशलता में व द्धि।

(17) प्रत्येक प्रतिस्पर्धी की शक्ति और कमजोरियों का ज्ञान प्राप्त करके उचित नीतियों और व्यवहार का निर्धारण किया जा सकता है।

विदेशी बाजारों का निर्धारण एवं चयन
(Identification and Selection of Foreign Markets)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन हेतु विदेशी बाजारों के निर्धारण एवं चयन को निम्नलिखित शीर्षकों के द्वारा भली प्रकार समझा जा सकता है।

1. अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों के अवसरों का विश्लेषण
(Analysis of Opportunities of International Market)

निर्यात बाजार अनुसंधान के द्वारा विदेशी बाजार के सम्बन्ध में दो प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त करना आवश्यक हैं। प्रथम, इसमें वे सभी सामान्य सूचनाएँ, जो कि प्रत्येक प्रकार के निर्यातक के लिए आवश्यक होती हैं चाहे उसकी वस्तु अथवा सेवा किसी भी प्रकार की क्यों न हो, इसे हम तकनीकी भाषा में 'सामान्य बाजार विश्लेषण' के नाम से पुकार सकते हैं। द्वितीय इसमें वे सभी सूचनाएँ होती हैं जो संस्था की वस्तुओं के सम्बन्ध में होती हैं। इसे इस 'विशिष्ट बाजार विश्लेषण' के नाम से पुकारते हैं। इस प्रकार सम्भाव्य विश्व बाजारों का विश्लेषण घरेलू बाजारों के विश्लेषण की भांति होता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय विपणन अनुसन्ध ान का एक अंग होता है।

A. सामान्य बाजार विश्लेषण
(General Market Analysis)

सामान्य बाजार विश्लेषण का उद्देश्य निर्यात बाजार के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचनाओं को प्राप्त करना होता हैं। इसमें विदेशी ग्राहकों की आय, रूचियों, जनसंख्या का वर्गीकरण आदि अनेक विषयों के बारे में सूचनाएँ प्राप्त करके, उनका विश्लेषण किया जाता है। सामान्य बाजार विश्लेषण के अन्तर्गत निम्नलिखित सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं -

1. जनसंख्या
(Population)

संभावित निर्यात बाजार की जनसंख्या कितनी हैं ? कितनी जनसंख्या ग्रामीण व कितनी शहरी है। शहरों की संख्या, उनकी स्थिति, आकार विकास करने वाली जनसंख्या कितनी है ? उनकी आदतें, रीति-रिवाज, व्यवहार एवं परम्पराएँ क्या हैं ? उस जनसंख्या के जीवन मूल क्या हैं ? धर्म सामाजिक व सांस्क तिक वातावरण का उस जनसंख्या पर कितना प्रभाव हैं ? किसी विदेशी राष्ट्र के प्रति उनके पूर्वाग्रहों की स्थिति, उसमें निर्यातक देश का क्रम आदि बातों के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है।

2. शिक्षा
(Education)

शिक्षा का विस्तार किस सीमा तक है ? जन सामान्य का शैक्षणिक स्तर क्या है ? शिक्षा के कारण उनके क्रय व्यवहारों पर क्या परिवर्तन हो रहें हैं, व किस और परिवर्तनों की भविष्य में सम्भावना है। शिक्षा परोक्ष रूप से व्यक्ति को विवेक-सम्मत बनाती है, व पढे-लिखे ग्राहक वर्ग को सन्तुष्ट करके ही विक्रय किया जा सकता है।

3. जीवन स्तर
(Standard of Living)

विदेशी ग्राहकों का जीवन स्तर किस प्रकार का है ? मकान किस प्रकार के हैं, उनकी संख्या कितनी है ? रेडियो, टेलीविजन, रेफ्रीजरेटर, एयर कण्डीशनर, क्लब, मोटरगाड़ियाँ, सिनेमा हॉल, होटल, वस्त्रों का प्रयोग किस सीमा तक हैं ? इनके बारे में सूचनाएँ प्राप्त करके जीवन स्तर का निर्धारण किया जा सकता है।

4. सन्देश वाहन के साधन
(Communication Media)

व्यावसायिक सन्देशवाहन के साधन किस प्रकार, स्तर व संख्या में उपलब्ध हैं ? डाक-तार सेवाएँ टेलीफोन, टेलेक्स व टेलीप्रिन्टर, वायरलैस आदि की सुविधाएँ कितनी उपलब्ध हैं, इसके बारे में भी पूरी सूचनाएँ प्राप्त की जानी चाहिए ?

5. व्यापारिक परम्पराएँ एवं व्यवहार
(Business Traditions and Customs)

निर्यात बाजार की परम्पराएँ एवं व्यवहार किस प्रकार के हैं, उनकी किस सीमा तक समानता भारतीय व्यापारिक परम्पराओं एवं व्यवहारों से है। किस समय किसी अमुक वस्तु का अधिक विक्रय या क्रय होता है। विक्रय की कौन-कौन सी विधियाँ वहाँ पर प्रचलित हैं ? व्यापारिक व्यवहारों में नैतिक मापदण्डों की स्थिति क्या हैं ? वितरण की सामान्य वाहिकाएँ किस प्रकार की हैं ? किसी विशिष्ट उत्पाद के लिए क्या कोई विशेष वितरण की वाहिका विद्यमान है। मेलों व प्रदर्शनियों की किस प्रकार की स्थिति व उनके प्रति जागरूकता निर्यात बाजार के ग्राहकों में कितनी हैं।

6. बन्दरगाह सुविधाएँ
(Port Facilities)

जिस देश को वस्तुओं का संभावित निर्यात किये जाने की निर्यातक सोचता है, उस देश में बन्दरगाह किस प्रकार के उपलब्ध हैं। उनमें कितनी भार क्षमता वाले जहाज रूक सकते हैं ? माल को उतारने, चढ़ाने आदि के लिए स्वचलित यन्त्रों की उपलब्धता किस प्रकार हैं ? क्या वह बन्दरगाह मुक्त व्यापार क्षेत्र (Free Trade Zone) के अन्तर्गत आता है ? जहाज मरम्मत की सुविधाएँ किस स्तर की उपलब्ध हैं, उन सभी के बारे में सूचनाएँ एकत्रित की जानी चाहिए।

7. प्रतिस्पर्धा
(Competition)

स्थानीय इकाइयों व अन्य देशों के उद्योगों द्वारा उत्पादित व निर्यात किए गए माल से हमारें उत्पाद को किस सीमा तक प्रतिस्पर्धा करनी होगी। प्रतियोगिता सामान्य, मध्यम, तीव्र या गलाकाट किस प्रकार की हैं? क्या किसी विशिष्ट देशों को प्रशुल्क नियमों के बारें में कोई विशेष रियायतें दी गयी हैं ? हमारें उत्पाद व निर्यातक फर्म किस प्रकार से इसका मुकाबला कर सकेंगी, इसका मूल्यांकन करने के लिए सूचनाएँ प्राप्त की जानी चाहिए ।

8. राजनैतिक तन्त्र
(Political Setup)

किस प्रकार की राजनैतिक विचारधारा का प्रभुत्व उस देश पर है ? राजनैतिक स्थायित्व की क्या स्थिति है ? विदेशी विनियोगों के बारे में सरकारी रूख व नीतियाँ क्या हैं? भारत के साथ उस देश की किसी प्रकार की व्यापारिक सन्धि है, या नहीं। यदि सन्धि है, तो उस पर भारतीय निर्यातों का उस देश के साथ कितना प्रभाव पड़ने की संभावना हैं। आयात व निर्यात के बारे में क्रियाविधि किस सीमा तक जटिलता लिए हुए है।

9. यातायात के साधन
(Transport Facility)

बन्दरगाहों पर माल उतारने के पश्चात उसे उस देश के उपभोग केन्द्रों या प्रयोग केन्द्रों तक पहुँचाने के लिए, बन्दरगाहों से उन स्थानों तक यातायात के किस प्रकार के साधन उपलब्ध हैं ? सड़क, रेल, वायु, आन्तरिक जल परिवहन सुविधाएँ किस मात्रा व स्तर की उपलब्ध हैं ? इन साधनों की क्या लागत पड़ेगी, इन लागतों को जोड़ने के पश्चात क्या निर्यात की जाने वाली वस्तु को वहाँ प्रचलित बाजार मूल्यों पर बेचा जा सकेगा ?

10. भौगोलिक स्थिति
(Geographical Situation)

जिस देश को निर्यात किए जाने का विचार है, उसकी भौगोलिक स्थिति क्या है ? उसकी सीमाएँ किन-किन देशों से मिलती हैं? उसकी समुद्री सीमा कितनी हैं, उस देश में नदियों, पहाड़ों, मैदानों की स्थिति कैसी है ? उस भौगोलिक स्थिति का माल के परिवहन पर क्या प्रभाव पड़ने की संभावना है ?

11. मुद्रा एवं करारोपण
(Money and Taxation)

निर्यात के बदले जो मुद्रा उस देश से प्राप्त होगी उसकी विनिमय दर क्या है ? विनिमय दरों में स्थायित्व किस सीमा तक है ? उस देश के द्वारा लगाये गये विभिन्न कर किस प्रकार के हैं ? प्रशुल्क नीतियों के अन्तर्गत लगाये गए कर किस प्रकार के हैं, व वस्तु के मूल्य में किस सीमा तक व द्धि करने वाले हैं।

12. आय
(Income)

संभावित निर्यात बाजार के ग्राहकों की आय की संरचना किस प्रकार की है, प्रति व्यक्ति आय कितनी है ? बचत करने की आदत देशवासियों में कितनी है ? बीमा के प्रति जागरूकता कितनी है ? अपनी आय को वे सामान्यतया किन-किन मदों में कितना व्यय करते हैं ? विभिन्न समूहों में आय में किस प्रकार के परिवर्तन हो रहे हैं, व उनका कितना प्रभाव उनके क्रय व्यवहारों पर पड़ रहा है ?

उपरोक्त विषयों के बारे में निर्यातक को बाजार अनुसन्धान के द्वारा उचित रूप से सूचनाएँ प्राप्त कर उनका विश्लेषण कर निर्यात की अनुकूलता या प्रतिकूलता को निर्धारित करने का प्रयास करना चाहिए।

B. विशिष्ट बाजार विश्लेषण
(Specific Market Analysis)

सामान्य बाजार विश्लेषण के द्वारा निर्यातक सम्भावित निर्यात की अनुकूलता या प्रतिकूलता का पता लगा सकता हैं। निर्यातक को सामान्य बाजार विश्लेषण के साथ ही विशिष्ट बाजार विश्लेषण की भी करना चाहिए। ई. ई. प्रेट के अनुसार विशिष्ट बाजार विश्लेषण में निम्नलिखित बिन्दूओं को ध्यान में रखना चाहिए -

(1) परिमाणात्मक बाजार विश्लेषण

(2) उपभोक्ता विश्लेषण

(3) बाजार प्रव तियों का विश्लेषण

(4) प्रव ति एवं राय अनुसन्धान

(5) ब्राण्ड स्थिति का निर्धारण

(6) उत्पाद एवं पैकेज विश्लेषण

(7) विक्रय संगठन एवं विक्रय क्रियाकलाप अनुसंधान

(8) थोक एवं फुटकर व्यापार अनुसंधान

(9) कीमत विश्लेषण एवं निर्धारण

(10) वितरण लागत अनुसन्धान

(11) विक्रय अभिलेखों का विश्लेषण

(12) विज्ञापन प्रति अनुसन्धान

(13) विज्ञापन माध्यम अनुसन्धान

(14) परीक्षण बाजारों में प्रायोगिक अभियान

(15) विपणन एवं बाजारों को प्रभावित करने वाले आर्थिक घटकों का अनुसन्धान।

इस प्रकार उपरोक्त प्रकार से सामान्य बाजार विश्लेषण एवं विशिष्ट बाजार विश्लेषण के द्वारा बाजार अनुसन्धान करके निर्यातक निर्यात बाजारों का चयन कर सकता है, जो उसे न केवल अच्छी विपणन सम्भावनाएँ प्रदान कर सके, वरन उचित लाभ व विनियोगों पर अनुकूलतम आय भी प्रदान कर सके। साथ ही निर्यातक को उपलब्ध की गई सूचनाओं को नवीनतम तथा पूर्णतम बनाए रखने का प्रयास भी करना चाहिए।

निर्यात क्षेत्र में प्रवेश करने से पूर्व लिये जाने वाले आधारभूत निर्णय
(Basic Decisions Prior to Entering the Export Field)

निर्यात के क्षेत्र में प्रवेश करने से पूर्व निर्यातक को निम्नलिखित आधारभूत निर्णय लेने चाहिए :-

(1) वैधानिक प्रावधानों का अध्ययन

सर्वप्रथम निर्यात का विचार रखने वाली व्यावसायिक फर्म को वैधानिक प्रावधानों पर विचार करना चाहिए। जिस वस्तु या उत्पाद का वह निर्यात करने का मानस या विचार रखती है उसके निर्यात की अनुमति केन्द्रीय सरकार ने दे रखी है या नहीं एवं जिस देश को उस वस्तु का ऐसा सम्भावित निर्यात करने का विचार हो, उस वस्तु के आयात पर देश की सम्बन्धित सरकार के वैधानिक प्रावधान क्या हैं ? यदि उस देश की सरकार द्वारा उस वस्तु के आयात पर ही प्रतिबन्ध है तो हमारी निर्यात विपणन योजना आगे बढ़ाने का कोई महत्व नहीं हैं।

(2) निर्यात बाजार पर प्रभाव डालने वाले तत्वों का विश्लेषण

वैधानिक रूप से किसी भी प्रकार की अड़चन नहीं होने पर निर्यात प्रबन्धक को उन सभी घटकों एवं उनके प्रभाव पर विचार करना चाहिए जिनका प्रभाव निर्यात विपणन पर पड़ने की सम्भावना है। विदेशी बाजारों में विक्रय के असीमित अवसर उपलब्ध नहीं होते हैं। अन्य देशों के उत्पादों से प्रतिस्पर्धा तो करनी ही होती है, इसके साथ ही कई देशों की सरकारों की नीतियाँ इस प्रकार की होती है, जिससे आयात हतोत्साहित होकर, उस वस्तु का निर्माण देश में ही होने लगे। वैधानिक प्रावधान, मुद्रा व भाषा की समस्या, राजनैतिक विचारधारा, राजनैतिक अनिश्चितता आदि देशी बाजारों की तुलना में अधिक होती है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि कब किस देश में युद्ध छिड़ जाए व कब कोई सरकार किसी देश से व्यापारिक एवं राजनैतिक सम्बन्ध तोड़ ले, उसका पूर्वानुमान ठीक-ठीक नहीं लगाया जा सकता। निर्यात बाजारों में उपभोक्ताओं की आदतों, क्रय प्रेरणाओं आदि में अपेक्षाक त तीव्र परिवर्तन होते हैं। इन सभी घटकों का समुचित आकलन करना अत्यन्त आवश्यक है।

(3) निर्यात बाजारों में प्रवेश का निर्णय

उपरोक्त घटकों एवं उनके सापेक्षिक प्रभावों का मूल्यांकन करके ही निर्यात के क्षेत्र में प्रवेश का मानस व्यावसायिक फर्म को बनाना चाहिए। यह निर्णय अत्यन्त सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। अपरिपक्व निर्णय से एक ओर तो व्यावसायिक फर्म को अपने संसाधनों की हानि उठानी पड़ सकती है, तो दूसरी ओर निर्यात बाजारों में उसकी छवि व प्रतिष्ठा को दीर्घकालीन हानि भी इससे होती हैं। प्रवेश का निर्णय करने से पूर्व अपनी वित्तीय क्षमता का पूरा आकलन कर लिया जाना चाहिए।

(4) निर्यात बाजारों का चुनाव

निर्यात बाजारों के चुनाव का निर्णय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रत्येक निर्यातकर्त्ता द्वारा अपनी क्षमता, योग्यता व दीर्घकालीन हितों

की पूर्ति को ध्यान में रखकर ही विश्व बाजारों, विवेकपूर्ण तरीके से इनका चयन किया जाना चाहिए। इसके लिए निर्यात प्रबन्धक को समस्त विश्व बाजारों को एक विराट बाजार के रूप से देखना चाहिए। देशी बाजारों में उसकी सफलता के पीछे कौन-कौन से तत्व निहित हैं, निर्यात बाजार में ये तत्व किस सीमा तक, किस प्रकार से उपलब्ध हैं, इसके लिए उसे नीति निर्देशक सिद्धान्तों को तय कर लेना चाहिए।

प्रत्येक फर्म को, जो निर्यात का विचार रखती है, उसे लाभ एवं जोखिम के अलावा भी अन्य ऐसे कई तत्व हैं, जो निर्यात व्यापार का आकर्षण उत्पन्न करते हैं, पर पूरी तरह विचार कर लेना चाहिए। यदि लाभ के अलावा किसी अन्य तत्व जैसे फर्म की प्रतिष्ठा व छवि विदेशी बाजारों में बनाना यह भी एक गैर-लाभ तत्व है, तो ऐसी स्थिति में लाभ को किस सीमा तक तिलांजलि दी जा सकती है, जिससे निर्यात विपणन के लिए किए जा रहे प्रयासों, लागत व निहित जोखिम को न्यायोचित सिद्ध किया जा सके। निर्यात बाजारों में प्रतियोगिता किस प्रकार एवं किस स्तर की विद्यमान हैं, उसका सामना करने में फर्म सक्षम होगी या नहीं।

निर्यात बाजार का चुनाव हमेशा ही लाभों की अधिकता से ही प्रभावित नहीं होता। एक अमरीकन कम्पनी ने अपने यहाँ निर्मित किये जा रहे कम्प्यूटरों के निर्यात विपणन के लिए सर्वप्रथम इंगलैण्ड को चुना। इसका मूल कारण यह था कि कानूनी, भाषा व मान्यताओं की द ष्टि से इंगलैण्ड के साथ काफी समानता थी, हालांकि लाभ यहाँ अपेक्षाक त कम था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हमेशा केवल विशुद्ध आर्थिक तत्व ही निर्यात बाजारों के चुनाव में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह नहीं करते।

इसका आशय किसी प्रकार से आर्थिक तत्वों की अवहेलना, बिल्कूल भी नहीं है। फिलिप कोटलर ने निर्यात बाजारों में किये जाने वाले विनियोगों पर प्रतिफल को एक उत्तम आधार, निर्यात बाजारों के चयन में, माना है। इस बारे में फिलिप कोटलर ने कैपीटल बजटिंग की विधि का प्रयोग करने का सुझाव दिया हैं।

जिसका वर्णन इस प्रकार है -

प्रथम :-

निर्यात बाजार की विद्यमान बिक्री सम्भावना का अनुमान लगाया जाना चाहिए। किस प्रकार के उत्पादों की कुल बिक्री कितनी विद्यमान माँग उन बाजारों की है, जिनमें प्रवेश का इरादा कम्पनी रखती है।

द्वितीय :-

अगले चरण में भावी बिक्री की सम्भावना का पूर्वानुमान लगाया जाना चाहिए। उत्पाद या उत्पादों की अल्पकालिक या दीर्घकालिक माँग कितनी होगी। उसमें परिवर्तन का क्रम क्या होगा। इसका आकलन किया जाना चाहिए। कम्पनी के दीर्घकालीन हितों के संरक्षण के लिए विद्यमान माँग के आकलन से अधिक महत्वपूर्ण कार्य भावी माँग का विवेकपूर्ण पूर्वानुमान लगना है।

त तीय :-

विद्यमान व भावी माँग का उत्पाद व उत्पादों के लिए आकलन करके अगला महत्वपूर्ण कार्य फर्म को यह निर्धारित करना चाहिए कि विद्यमान निर्यात बाजार की कुल मांग में से किस मांग की पूर्ति करने में सक्षम है। फर्म के पूंजीगत साधन उत्पादन को किस सीमा तक बढा सकते हैं, जिससे आन्तरिक बाजारों में वस्तु की पूर्ति के पश्चात वह निर्यात बाजारों को भी माल भेज सकेगी इसके साथ फर्म के भावी साधनों का पूर्वानुमान इस आशय से लगाया जाना चाहिए कि वह कितना बाजार भाग भविष्य में अपने अधिकार में ले सकेगी।

चतुर्थ :-

इस चरण में फर्म की लागतों व सम्भावित लाभ का पूर्वानुमान सम्मिलित है। विद्यमान व भावी उत्पादन की लागत निर्यात विपणन के लिए क्या आएगी व इससे कितना सम्भावित लाभ फर्म कमा सकेगी यदि यह देशी बाजारों से बहुत कम है, तो विदेशी बाजार आकर्षण का केन्द्र नहीं हो सकते, जब तक कि कोई गैर-आर्थिक तत्व बहुत ही महत्वपूर्ण नहीं हो। कोई भी फर्म अल्प समय के लिए तो लाभ की उपेक्षा कर सकती है, लेकिन दीर्घकाल में इसकी उपेक्षा सम्भव नहीं हैं।

पंचम :-

इस अन्तिम चरण में विनियोग व उसके प्रतिफल पर विनियोग किया जाना चाहिए। इसमें निर्यात बाजारों में वस्तुओं की पूर्ति

करने के लिए कितना अनुमानित विनियोग करना व उस विनियोग पर किस दर से कितना प्रत्याय प्राप्त करने की सम्भावना है। यदि ऐसा अनुमानित प्रतिफल कम्पनी द्वारा अर्जित की जा रही सामान्य प्रत्याय दर से भी कम है तो कोई लाभ नहीं। ऐसी स्थिति में तो देशी बाजारों में विपणन करना ही अधिक उपयोगी हो सकता है। निर्यात बाजार की अपनह विशेषताएँ, जोखिम व अनिश्चितताएँ होती हैं, इन्है वहन करने का उचित प्रतिफल भी अनुमानित प्रत्याय में शामिल किया जाना चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है, कि निर्यात बाजारों का चयन करते समय फिलिप कोटलर द्वारा प्रतिपादित केपीटल बजटिंग विधि अत्यन्त ही उपयोगी है। इसके अतिरिक्त निर्यात बाजारों का चुनाव कम्पनी के मुख्य उद्देश्यों के अनुरूप किया जाना चाहिए। लाभ का कोई भी एक मापदण्ड सभी फर्मो के लिए नहीं अपनाया जा सकता। इसके बारे में प्रत्येक फर्म की अपनी रीति-नीति होती है। स्वीकार योग्य लाभ का भिन्न-भिन्न स्तर, प्रत्येक फमे के लिए उनकी परिस्थितियों के अनुरूप होता है। इन अनुमानों में निर्यात बाजारों में निहित जोखिमों, होने वाले मौद्रिक परिवर्तनो, राजनीतिक परिवर्तनों पर भी उचित प्रकार से ध्यान दिया जाना चाहिए तभी फर्म निर्यात बाजार में प्रवेश कर विवेकपूर्ण निर्णय कर सकेगी।

(5) निर्यात बाजारों के लिए वस्तु नियोजन :-

प्रत्येक निर्यात बाजार की अपनी विशेष परिस्थितियाँ एवं वातावरण होता है। अतः निर्यात नीति के अन्तर्गत किया जाने वाला वस्तु नियोजन इस प्रकार का होना चाहिए जो निर्यात बाजार की अपेक्षाओं को पूरा कर सके। उत्पाद का रंग, डिजाईन, पैकेज, किस्म, वस्तु-मिश्रण आदि सभी निर्यात बाजार के अनुरूप ही होने चाहिए।

वारेन जे. कीगन के अनुसार इसके लिए पाँच वैकल्पिक अवस्थाओं का उपयोग किया जा सकता हैं। फर्म इनमें से उपयुक्त विकल्प का चुनाव कर सकती है। ये विकल्प इस प्रकार से हैं -

(i) विद्यमान उत्पाद का सीधा उपयोग :-

इसका आशय यह है कि जिस प्रकार की वस्तु फर्म अपने आन्तरिक बाजारों में बेच रही है, उसी वस्तु को निर्यात बाजारों में बेचना। उत्पाद के पैकेज, डिजाइन, रंग, किस्म, विज्ञापन के सन्देश आदि में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जाता है। मोटर कारों, वायुयानों, पेय पदार्थो आदि के विपणन हेतु यदि आन्तरिक बाजार हो तो निर्यात बाजार में किसी प्रकार की सामान्यतया परिवर्तन विद्यमान उत्पादों में नहीं किया जाता है। यहाँ हमारा परिवर्तन से आशय विशेष परिवर्तनों से है, न कि सामान्य परिवर्तनों से।

(ii) विपणन सन्देशों में परिवर्तन :-

प्रत्येक निर्यात बाजार की अपनी विशिष्टताएँ होती हैं। उसमें निवास करने वाले उपभोक्ताओं व प्रयोक्ताओं का क्रय व्यवहार अनेक प्रकार की प्रेरणाओं से संचालित होता है। मनोवैज्ञानिक अध्ययन व अभिप्रेरण अनुसन्धान करके उनके प्रकट व छिपे हुए क्रय प्रयोजनों का पता लगाया जा सकत है। उनके अनुरूप विपणन सन्देशों में परिवर्तन कर दिया जाना चाहिए। इस विकल्प में वस्तु वही रहती हैं, जिसका विपणन फर्म अपने आन्तरिक बाजारों में कर रही है, अन्तर केवल विपणन के सन्देश में होता है।

(iii) वस्तु में परिवर्तन :-

इस विकल्प के अन्तर्गत फर्म आन्तरिक बाजारों हेतु जिस वस्तु का विक्रय कर रही है, उसमें समुचित परिवर्तन निर्यात बाजार की आवश्यकता के अनुसार कर दिये जाते है। रासायनिक खाद, रेडियो, टेलीविजन, तैयार कपड़े आदि ऐसी कुछ वस्तुओं के उदाहरण हैं, जिनमें निर्यात बाजार की आवश्यकतानुसार परिवर्तन करना वाछित होता है। इसमें वस्तु में किये जाने वाले विशेष परिवर्तनों को सम्मिलित किया जाता है।

(iv) वस्तु व विपणन सन्देश दोनो में परिवर्तन :-

कई बार ऐसा आवश्यक हो सकता है। इसमें दोहरा परिवर्तन किया जाता है न केवल वस्तु में ही परिवर्तन किया जाता है वरन् उसके विपणन के लिए आन्तरिक बाजारों में प्रयुक्त विपणन सन्देशों को भी बदल दिया जाता हैं। कार्यालय के कार्य में आने वाली मशीनों आदि का निर्यात बाजारों में विपणन के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है।

(v) नवीन वस्तु का निर्माण :-

इस विकल्प के अन्तर्गत निर्यात बाजारों के लिए बिल्कुल नयी वस्तु का निर्माण किया जाता है। फर्म के द्वारा अपने आन्तरिक

बाजारों में बेची जा रही वस्तुओं से इनका सम्बन्ध नहीं होता। विकसित देशों में व्यावसायिक फर्मो की प्रव ति नित नूतन वस्तुओं को प्रचलित करने की होती है, इसके फलस्वरूप प्रत्येक उत्पाद का जीवन चक्र विकासशील देशों की तुलना में छोटा होता है। ज्योंही उत्पाद अपने जीवन-चक्र में परिपक्वता की अवस्था में पहुँचता है, उसके बाद वे फर्मे उसके अधिक विपणन की ओर प्रव त नहीं होकर नये उत्पाद की ओर ध्यान लगाना श्रेयस्कर मानती है। ऐसी स्थिति में विकासशील देश ऐसी वस्तुओं के निर्यात में आसानी से सफलता अर्जित कर सकते है। यहा यह स्पष्ट है कि ऐसी माँग अल्पकालिक होगी, लेकिन ऐसे अल्पकालिक बाजार अवसरों का भी अच्छी प्रकार से विदोहन एक अल्पकालिक विपणन नीति के अन्तर्गत किया जा सकता है। भारतीय सन्दर्भ में यहाँ की व्यावसायिक फर्मो के द्वारा अनेक विकसित देशों को इनका निर्यात एक अच्छा उदाहरण है।

इसके अतिरिक्त भी व्यावसायिक फर्मे समुचित बाजार अनुसन्धान करके इसका पता लगा सकती हैं, कि किन अन्य उत्पादों की प थक रूप से विपणन निर्यात बाजारों में किया जा सकता है। लेकिन ऐसा करने से पूर्व व्यावसायिक क्षमता का भली प्रकार मूल्यांकन करना आवश्यक है, तभी वह ऐसे अवसरों का उपयोग कर सकेगी।

(6) व्यापार की विधि का चयन :-

निर्यात बाजारों में विपणन की द ष्टि से निर्यातक फर्म को व्यापार की उपयुक्त विधि के बारे में भी निर्णय लेना होता है। इस विधि का फर्म के सम्पूर्ण संगठन एवं व्यवस्था पर दीर्घकालिक परिणाम उत्पन्न होते हैं। विक्रय की प्रमुख विधियों का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है :

(i) प्रत्यक्ष निर्यातः-

प्रत्यक्ष निर्यात से आशय निर्यातकर्ता फर्म द्वारा स्वयं ही निर्यात बाजारों में वस्तु का विपणन करना है। इसके लिए निर्यातकर्ता कई वैकल्पिक व्यवस्थाओं में से किसी का चुनाव कर सकता है। वह प्रथम तो निर्यात बाजारों में विपणन के लिए देश में ही एक प थक निर्यात विभाग की स्थापना कर सकता है। द्वितीय निर्यात विपणन के लिए अपने विक्रय कर्ता भेज सकता है। जो फर्म के लिए आदेश ले, व फर्म उनकी पूर्ति कर दे। त तीय निर्यात के लिए अलग से एक सहायक कम्पनी का गठन कर दिया जावे। चतुर्थ निर्यात बाजारों में प थक् से विक्रय विभाग खोल दिया जाए। प्रत्येक विकल्प के अपने गुण-दोष हैं, फर्म अपनी क्षमता के अनुरूप इसका चयन कर सकती है।

प्रत्यक्ष निर्यात ऐसी कम्पनियों के लिए उपयुक्त रहता है। जो बड़े पैमाने पर माल विदेशों को बेचती हों, जिनके माल की काफी माँग हो, जिनके उत्पाद विदेशी बाजारों में अपनी छवि का निर्माण कर ब्राण्ड निष्ठाँए बना चुके हों, जिनका विक्रय संगठन इतना सशक्त हो जो इस कार्य को भली प्रकार, प्रभावी तरीके से सम्भाल सके। उन्हीं के लिए इसकी अधिक उपयोगिता है।

(ii) **अप्रत्यक्ष निर्यातः**- इससे फर्म स्वय विदेशी बाजारों में विपणन कार्य नहीं करती। विक्रय कार्य के लिए स्वंय के विक्रय संगठन की बजाय मध्यस्थों की सेवाओं का उपयोग इसके लिए किया जाता है। इस प्रकार की सेवाएँ दो प्रकार के मध्यस्थों से प्राप्त की जा सकती हैं-

प्रथम प्रकार के मध्यस्थ निर्माता का माल खरीद कर अपने नाम से विपणन कार्य करते हैं। लाभ-हानि सम्बन्धी सभी जोखिमों भी वहन करते हैं।

दूसरे प्रकार के मध्यस्थ निर्माता की ओर से विपणन के सौदे निर्यात बाजारों के लिए करते हैं। इसमे लाभ-हानि, जोखिम आदि सभी निर्माता की ही होती हैं। उन्हें तो केवल आदेशों पर एक पूर्व निश्चित दर से कमीशन प्राप्त होता है।

(7) संवर्द्धन नीतियों सम्बन्धी निर्णयः-

संवर्द्धन की नीतियों से आशय फर्म के द्धारा अपनायी जाने वाली विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय एंव संवर्द्धन के तरीकों से है। फर्म को इनका उचित प्रकार से मिश्रण करना चाहिए। यह मिश्रण इस प्रकार हो जो लाभदायक विक्रय परिणाम के बढ़ाने में अपना योगदान दे सके। ऐसे उत्पाद जिनके प्रति इकाई मूल्य ऊँचे हों, जिनके ग्राहकों की संख्या सीमित हो, उनके लिए व्यक्तिगत विक्रय का तरीका प्रभावी व कम लागत वाला हो सकता है। यदि बेची जाने वाली इकाईयाँ संख्या असीमित हो, उनके क्रेताओं की संख्या अधिक हो व क्रेता विस्त त भौगोलिक क्षेत्र पर छाये हुए हो, उत्पाद में छुपी हुई क्रय-प्रेरणाएँ हों तो ऐसी स्थिति मे विज्ञापन का प्रयोग प्रभावी व लागत को सीमित रखने वाला हो सकता है। इसके अलावा भी अनेक प्रकार के उपायो को व्यावसायिक फर्मे अपनाती हैं। जिसमें कूपन, मूल्यों में कमी, वस्तु के साथ कोई अन्य वस्तु मुफ्त उपहार में, प्रतियोगिताएँ, प्रर्दशन, मेले तथा प्रदर्शनियों का उपयोग, निःशुल्क प्रशिक्षण, उपभोक्ता सेवाएँ, धन वापसी प्रस्ताव आदि शामिल

है का उपयोग फर्म अपने विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रम में कर सकती है।

व्यक्तिगत विक्रय में उपयुक्त विक्रयकर्ताओं को चयन में उचित विज्ञापन के माध्यम का चुनाव किया जाना चाहिए। संवर्द्धन कार्यक्रम में ऐसे उपायों को अपनाया जाना चाहिए, जो शीघ्र परिणाम दे सकें, नहीं तो अन्य फर्मे भी उसे अपना लेंगी तीनों में से किसी भी एक पर अधिक ध्यान नही देकर सभी पर उचित रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए।

(8) **कीमत निर्धारण:-** विदेशी बाजारों को विपणन किये जाने वाली वस्तुओं के मूल्यों का निर्धारण बड़ा जटिल प्रश्न है। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की कीमत आन्तरिक बाजारों मे कम रखी जाए, अधिक विचार करना होगा।

हांलाकि इसे निर्धारित करने एंव तय करने में फर्म अपने आप में स्वतन्त्र नहीं होती। विदेशी बाजारों में व्यापरक प्रतियोगिता, वहाँ के वातावरण व आर्थिक परिस्थितियों के दबाव, प्रचलित अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य के आधार पर ही मूल्य तय होंगे।

भारतीय वस्तुओं के निर्यात के बारे में सभी प्रकार की स्थितियाँ हैं चीनी आदि वस्तुओं के निर्यात में इनका मूल्य आन्तरिक बाजारों मे प्रचलित मूल्यो से काफी कम रखता जाता है। इन्जीनिंयरिग वस्तुएँ समान मूल्य पर ही सामानतया

विक्रय की जाती हैं लेकिन फैशन उत्पादों, कलात्मक वस्तुओं, दस्तकारी का सामान आदि में आन्तरिक मूल्यों व निर्यात बाजारों के मूल्यों में काफी अन्तर होता है। इन वस्तुओं के निर्यात बाजारों के मूल्य आन्तरिक बाजारों की तुलना में काफी ऊँचे होते हैं।

मूल्य निर्धारित करना फर्म के मूल उद्देश्यों से भी शासित होगा। यदि फर्म का उद्देश्य बिक्री की मात्रा को बढ़ाकर उत्पादन की बचतें प्राप्त करना हो तो ऐसी स्थिति में कम कीमतें रखना ही अधिक उपयोगी होगा।

(9) उधार नीतियों का निधार्रण :-

सामानतया निर्यात विपणन उधार पर ही होता है। उधार नीतियों का निर्धारण कम्पनी की वित्तीय क्षमता पर निर्भर करेगा। यदि फर्म की वित्तीय स्थिति व क्षमता बहुत अच्छी नहीं है, तो उसे कड़ी उधार नीतियाँ अपनानी चाहिए, जिसमें शीघ्र भुगतान की शर्ते व व्यवस्थाएँ की जानी चाहिए।

उदार उधार नीतियाँ तभी उपयुक्त होंगी जब फर्म की वित्तीय स्थिति अधिक सुद ढ हो। वित्तीय संसाधनों की व्यापकता पर ही इस प्रकार की नीति उपयुक्त रहती है। भारत जैसे देश के लिए देशों में अपने माल के विक्रय के लिए उदार उधार नीतियाँ ही अधिक प्रभावी हो सकती हैं। इन नीतियों का अपनाने से विक्रय के कार्य में परोक्ष रूप से काफी मदद मिलती है। लेकिन इसका आशय कभी भी विक्रय राशि की वापसी को खतरे में डालना नहीं है।

(10) वितररण वाहिका सम्बन्धी निर्णय :-

वितरण वाहिकाओं से हमारा आशय निर्यात एवं उत्पादक द्वारा अपना माल मध्यस्थों या अन्तिम उपभोक्ताओं या प्रयोक्ताओं तक पहुँचाने वाली वाहिकाओं से है जिनसे माल का प्रवाह उत्पादक से उपभोक्ता की ओर होता है। उपभोक्ता व औद्योगिक माल के लिए प थक-प थक प्रकार की वितरण की वाहिका को अपनाना आवश्यक होगा। भिन्न-भिन्न वितरण वाहिका की लागत, वितरण वाहिका द्वारा प्रस्तुत सहयोग आदि के बारे में पूर्व विचार करके ही, उचित वितरण की वाहिका का चयन किया जाना चाहिए।

उपरोक्त वर्णित विभिन्न प्रकार के निर्णयों से फर्म विदेशी बाजारों के लिए एक विवेकपूर्ण निर्यात नीति का विकास कर सकती है। इस प्रकार से विकसित की गयी निर्यात नीति का उचित प्रकार मूल्यांकन इसे लागू करने से पूर्व कर लिया जाना चाहिए। मूल्यांकन करते समय यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए, कि निर्यात नीति की विभिन्न अंगों में उचित समन्वय हो, तालमेल हो व निर्यात नीति देश के राष्ट्रीय लक्ष्यों व फर्म के मुख्य उद्देश्यों के अनुरूप हो। यह फर्म को व्यापक व दीर्घकालीन व्यापारिक हितों की पूर्ति करने वाली होनी चाहिए। लागू करते समय निर्यात बाजारों में विद्यमान वातावरण का भी पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए।

एक बार निर्यात नीति को लागू करने के पश्चात् समय-समय पर इसका मूल्यांकन इस आधार पर किया जाना चाहिए कि राष्ट्रीय लक्ष्यों व फर्म के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति में इसने क्या योगदान दिया हैं।

कोई भी व्यावसायिक फर्म उपरोक्त प्रकार से एक सार्थक, उपयोगी व रचनात्मक निर्यात नीति की विकास कर सकती है। व्यावसायिक फर्म चाहे वह सरकारी हो या अर्द्ध सरकारी, दोनों के लिए समान रूप से यह नीति उपयोगी है।

भारतीय सन्दर्भ में बाजार अनुसन्धान का विशेष महत्व एवं निर्यात बाजारों का चयन (Special Significance of Market Research to Indian Reference and Choosing Export Markets)

कुल निर्यातों से जो विदेशी मुद्रा हमें प्राप्त होती है उसका बड़ा भाग पेट्रोलियम पदार्थों, खाद्य तेलों, उर्वरकों, पूंजीगत समान एवं मशीनों के आयात में चला जाता है। इसी कारण हमारा विदेशी व्यापार सन्तुलन हमेशा प्रतिकूल रहता है। इस असन्तुलन को दूर करने के लिए दो प्रकार के उपायों की आवश्यकता है - प्रथम तो अनावश्यक आयातों पर कड़े प्रतिबन्ध लगाने की तो दूसरी ओर विभिन्न वस्तुओं के निर्यात व विदेशी बाजारों की ओर पर्याप्त ध्यान दिये जाने की।

विदेशी बाजारों का अनुसन्धान करके विदेशी ग्राहकों की रूचियों, आदतों, व्यावहारों, क्रय प्रेरणाओं आदि का अध्ययन किया जा सकता है। हो सकता है कि किसी एक ही उत्पाद का कुछ संशोधनों के साथ कई देशों में बाजार उपलब्ध हो। बाजारों की विविधताओं के साथ उत्पाद भिन्नता को भी हमें अपनाना होगा। एक वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित बाजार अनुसन्धान कार्यक्रम की रचना करके एवं उसे प्रभावी रूप से क्रियान्वित करके विदशी बाजारों की विपणन सम्भाव्यताओं का वैज्ञानिक आकलन किया जा सकता है। सरकारी स्तर पर अनके संस्थाएँ इस प्रकार का अनुसन्धान कार्य कर रही हैं, फिर भी सभी कुछ सरकार के भरोसे छोड़ देना ठीक नहीं होगा। निजी संस्थाओं को भी इसके लिए आगे आना चाहिए। अपने व्यक्तिगत स्तर पर या दो-चार को मिलकर इसे चलाना चाहिए।

रेडीमेड़ वस्त्रों जूट व उसके बने सामानों, इंजीनियरिंग वस्तुएँ, गलीचा, हस्तकला की विभिन्न वस्तुएँ, विभिन्न प्रकार के रत्नों, मध्यम स्तर की औद्योगिक मशीनरी आदि कुछ ऐसी वस्तुएँ हैं, जिनके औपचारिक तरीके से बाजार अनुसन्धान करके निर्यात बाजार को पकड़ में लिया गया है।

इस ओर अभी काफी कुछ किया जाना शेष है। इसमें व्यावसायिक फर्मो का दोहरा लाभ है एक तो उनकी विपणन सम्भावनाएँ बढ़ जाएँगी दूसरी ओर उत्पादन बढ़ने से प्रति इकाई लागत घटने से लाभ के अवसर बढ़ेंगें। उनकी उत्पाद पंक्तियों में विविधताओं में व द्धि होगी।

ऐसा करके वे देश की भी काफी सेवा कर सकते हैं तथा निर्यात बाजारों के विदोहन से अमूल्य विदेशी मुद्रा कमाकर देश की अर्थ-व्यवस्था को सुद ढ़ आधार प्रदान किया जा सकता है।

अध्याय-4

निर्यात बाजार अनुसंधान की तकनीकें एवं विधियाँ

Techniques and Methods of Export Market Research

जिस प्रकार एक निर्माता अपने घरेलू बाजार में अपना माल उतारने से पहले जो अनुसंधान कार्य करता है, वैसे ही वह विदेशी व्यापार में प्रवेश करने से पूर्व बाजार अनुसंधान करता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के क्षेत्र में अनुसंधान की जो विधियाँ या तकनीकें अपनायी जाती हैं, उन्हें मुख्यतः चार वर्गो में बांटा जा सकता है :-

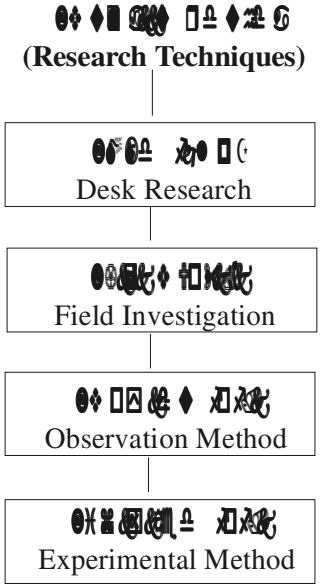

निर्यातक फर्म का अनुसंधानकर्त्ता विदेशी बाजार की परिस्थितियों तथा अपने साधनों के अनुरूप ऊपर बताई गयी किसी एक विधि या एक से अधिक विधि का प्रयोग कर सकता है। यह विधियाँ गुणात्मक एवं परिमाणात्मक (Qualitative and Quantitative), दोनों ही प्रकार के बाजार अनुसंधान में सहयोगी होती हैं, फिर भी गुणात्मक बाजार अनुसंधान में इनका योगदान अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है।

परिमाणात्मक बाजार अनुसंधान के लिये उन विधियों के साथ सांख्यिकी एवं गणितीय तकनीकों का उपयोग भी किया जा सकता है।

1. डैस्क रिसर्च
(Desk Research)

जब प्रकाशित तथा लिखित सूचनाओं की सहायता से बाजार अनुसंधान की प्रक्रिया अपनायी जाती है तो उसे डैस्क रिसर्च (Desk Research) अनुसंधान तकनीक कहा जाता है। अनुसंधान की इस प्रक्रिया के अन्तर्गत पहले विभिन्न प्रकाशनों से सूचनाओं को प्राप्त किया जाता है जो पहले से ही प्रकाशित हैं। इनमें जर्नल, डायरेक्टरीज, कार्यालय सांख्यिकी, व्यवसाय के आन्तरिक अभिलेख एवं समंक सम्मिलित हैं।

आजकल इस प्रकार की सूचनायें Internet पर विभिन्न Website पर भी आसानी से उपलब्ध होती हैं। सूचनायें प्राप्त करने का यह साधन आज काफी लोकप्रिय होता जा रहा है, क्योंकि यह सरल, सस्ता तथा अधिक विश्वसनीय माना जाता है।

निर्यात सूचनाओं के स्त्रोत
(Sources of Export Information)

निर्यात सूचनाओं के स्त्रोतों में वह सभी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय, सरकारी तथा गैर सरकारी एवं अर्द्ध सरकारी संस्थायें एवं संगठन शामिल हैं, जो निरन्तर रूप से अपने सदस्यों, उत्पादकों या निर्यातकत्ताओं के लाभ के लिये सूचनायें एवं आंकड़े प्रकाशित कराते रहते हैं। कई बार यह समाचार पत्र, पेपर, पत्रिकाएं तथा अन्य साहित्य भी प्रकाशित कराते रहते हैं। सूचना तकनीकी के इस दौर में अब यह कार्य Internet पर Webstite के द्वारा भी सम्भव हो गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में निर्यातकों के द ष्टिकोण से निर्यात सूचनाओं के निम्नलिखित स्त्रोत महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

(A) देश के भीतर के निर्यात सूचनाओं के स्त्रोत
(Sources of Export Information within the Country)

(B) देश के बाहर निर्यात सूचनाओं के स्त्रोत
(Sources of Export Information Outside the Country)

(A) देश के भीतर के निर्यात सूचनाओं के स्त्रोत
(Sources of Export Information within the Country)

1. भारत सरकार का वाणिज्य मंत्रालय - विदेशी व्यापार के नियन्त्रण तथा विकास की जिम्मदारी वाणिज्य मन्त्रालय की है। विदेशी व्यापार से सम्बन्धित सभी कार्य करने का दायित्व इस मंत्रालय के वाणिज्य विभाग (Department of Commerce) का है। इस विभाग के निम्न डिवीजन विदेशी व्यापार से सम्बन्धित कार्य करते हैं -

(a) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार नीति डिवीजन (International Trade Policy Division)

(b) विदेशी व्यापार क्षेत्रीय डिवीजन (Foreign Trade Territorial Division)

(c) निर्यात उत्पादन डिवीजन (Export Production Division)

  (i) निर्यात वस्तु डिवीजन (Export Products Division)

  (ii) निर्यात उद्योग डिवीजन (Export Industries Division)

  (iii) निर्यात सेवाएँ डिवीजन (Export Services Division)

(d) वाणिज्य मंत्रालय से संलग्न कार्यालय

  (i) आयात-निर्यात महानियंत्रक कार्यालय

  (ii) वाणिज्य एवं सांख्यिकी निदेशालय - यह निदेशालय विदेशी व्यापार सूचनाओं के एकत्रीकरण एवं प्रकाशन का कार्य करता है। Indian Trade Journal, Monthly Statistics of Foreign Trade of India, Customs and Excise Revenue Statistics of Coastal Trade, The Directory of Exporters on Indian Products

and Manufacturers आदि इसके महत्त्वपूर्ण प्रकाशन हैं।

(iii) काण्डला स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्र विकास कमिश्नर,

(iv) शान्ताक्रुज विद्युत विधायन क्षेत्र विकास कमिश्नर।

2. वस्तु मण्डल (Commodiy Boards) - कॉफी, चाय, रबड़, इलायची, तम्बाकू और सिल्क के उत्पादन, विकास और निर्यात से सम्बन्धित हैं।

जो भी नयी वस्तु जिसमें निर्यात क्षमता की सम्भावना हो सकती है उसके विकास और निर्माताओं की सहायता के लिये इस प्रकार के मण्डलों का गठन केन्द्र सरकार के द्वारा किया जाता हैं।

3. निर्यात जाँच परिषद् (Export Test Council) - यह विभिन्न निर्यात योग्य वस्तुओं के लदान-पूर्व अनिवार्य निरीक्षण और किस्म नियन्त्रण के उपाय लागू करने और उनका पालन कराने का काम करती है। इसके लिए परिषद् के पाँच निर्यात निरीक्षण कार्यालय प्राधिकरण हैं जो कलकाता, चेन्नई, कोचीन, मुम्बई तथा दिल्ली में स्थित हैं जिनके 43 कार्यालय व उप-कार्यालय हैं।

4. भारतीय निर्यात संगठन संघ (The Federation of Indian Export Organisation) - यह निर्यात संवर्द्धन परिषदों, वस्तु मण्डलों, चैम्बर्स ऑफ कॉमर्स तथा अन्य विशिष्ट निकायों की निर्यात प्रोत्साहन सम्बन्धी गतिविधियों में समन्वय करता है और उन्हें बढ़ाता है।

5. भारतीय व्यापार मेला अधिकरण (Trade Fair Authority of India) - यह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेलों में भाग लेकर तथा विदेशों में पूर्णतः भारतीय प्रदर्शनियाँ आयोजित करके भारतीय वस्तुओं का प्रचार करता है। इसका मुख्य दफ्तर प्रगति मैदान दिल्ली में स्थित है।

6. व्यापार विकास प्राधिकरण (Trade Development Authority) - इसकी स्थापना का उद्देश्य मुख्यतः मध्यम व छोटे पैमाने के निर्यातकर्त्ताओं को संगठित व प्रोत्साहित करना है जिससे वे अपनी क्षमता बढ़ा सकें। प्राधिकरण का प्रमुख कार्य विदेशी बाजारों के बारे में सूचना संग्रहण, अनुसंधान, निर्यात सेवाओं में सुधार करके निर्यात में व द्धि करना है।

7. भारतीय विदेशी व्यापार संस्थान (Indian Institute of Foreign Trade) - संस्थान की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य निर्यात व द्धि हेतु प्रशिक्षण एवं अनुसंधान की व्यवस्था करना है। यह बाजार सर्वेक्षण एवं अनुसंधान सम्बन्धी कार्य, विदेशी व्यापार सम्बन्धी सूचनाएँ एकत्रित करता है तथा विज्ञापन एवं प्रचार की व्यवस्था करता है।

8. निर्यात संवर्द्धन परिषदें (Export Promotion Councils) - जिनकी संख्या 16 है तथा जो 16 विभिन्न वस्तुओं/वस्तु समूहों के लिए हैं-

1. मूल रसायन, दवाइयाँ और साबुन निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई-1
2. काजू निर्यात संवर्द्धन परिषद्, एर्नाकुलम।
3. रासायनिक व सम्बन्धित उत्पादन निर्यात संवर्द्धन परिषद्, कोलकाता - 1
4. सूती वस्त्र निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई - 1
5. अभियांत्रिकी निर्यात संवर्द्धन परिषद्, कोलकाता - 1
6. तैयार चमड़ा व चमड़े की वस्तुएँ बनाने वाले निर्यात संवर्द्धन परिषद्, कानपुर - 1
7. हीरे तथा जवाहरात निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई
8. समुद्री उत्पाद निर्यात संवर्द्धन परिषद्, एर्नाकुलम
9. प्लास्टिक और लिर्नोलियम निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई
10. तैयार आहार निर्यात संवर्द्धन परिषद्, नई दिल्ली - 1
11. अभ्रक निर्यात संवर्द्धन परिषद्, कोलकाता - 1
12. सिल्क व रेयन निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई - 1
13. मसाले (Spices) निर्यात संवर्द्धन परिषद्, कोचीन - 16

14. खेल सामग्री निर्यात संवर्द्धन परिषद्, नई दिल्ली - 1
15. तम्बाकू निर्यात संवर्द्धन परिषद्, चेन्नई
16. ऊन एवं ऊन से निर्मित निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई - 20

9. राजकीय उपक्रम (Public Sector Undertaking) - इनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं -

1. भारतीय राज्य व्यापार निगम।
2. खनिज तथा धातु व्यापार निगम।
3. भारतीय काजू निगम।
4. हस्तशिल्प और हथकरघा निर्यात निगम।
5. भारतीय परियोजना और उपकरण निगम।
6. राज्य रासायनिक तथा औषधि निगम।
7. केन्द्रीय कुटीर उद्योग निर्यात निगम।
8. निर्यात साख तथा गारण्टी निगम।
9. भारतीय चलचित्र निर्यात संवर्द्धन निगम।
10. अभ्रख व्यापार निगम।
11. राष्ट्रीय टेक्सटाइल निगम।
12. कपास निगम।
13. चाय व्यापार निगम।
14. भारतीय चीनी उद्योग निर्यात निगम लि.।
15. भारतीय पटसन निगम।
16. राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम।

10. केन्द्रीय व्यापार सलाहकार परिषद् (Central Trade Advisory Council) - इसकी स्थापना विशेषकर छोटे व मँझले उद्यमियों को प्रोत्साहन देकर निर्यात क्षमता का विस्तार करने हेतु की गयी है।

11. भारतीय पैकेजिंग संस्थान।

12. समुद्री उत्पादन निर्यात विकास अधिकरण।

13. भारतीय रिजर्व बैंक।

14. आयात-निर्यात बैंक 1982।

15. शोध-संस्थान (Research Institute) - भारत में सरकार एवं अन्य संस्थाओं द्वारा कुछ अध्ययन व अनुसंधान संस्थाएँ स्थापित की गई हैं जिनके द्वारा विभिन्न आर्थिक व सामाजिक विषयों पर अध्ययन किये जाते हैं तथा आवश्यक सूचनाएँ एकत्रित की जाती हैं। इन संस्थाओं के नाम हैं -

1. राष्ट्रीय आर्थिक व्यवहार अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली।
2. राष्ट्रीय अनुसंधान विकास निगम, नई दिल्ली।
3. इन्स्टीट्यूट ऑफ इकोनॉमिक शोध, नई दिल्ली।
4. इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ मास कम्यूनिकेशन, नई दिल्ली।
5. इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ पब्लिक ओपीनियन।
6. सरदार पटेल इन्स्टीट्यूट ऑफ इकोनॉमिक एण्ड सोशल रिसर्च, अहमदाबाद।

16. निजी व्यापार तथा उद्योग के संघ (Associations of Private, Trade and Industry) —

1. विभिन्न राज्यों के स्थानीय वाणिज्य परिषद्
2. फेडरेशन ऑफ इण्डियन चेम्बर ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्री, नई दिल्ली
3. नेशनल चेम्बर ऑफ कॉमर्स, कोलकता
4. इण्डियन मर्चेण्ट्स चेम्बर, मुम्बई
5. भारतीय इंजीनियरिंग संघ
6. इण्डियन जूट मिल्स ऐसोसिएशन
7. इण्डियन शुगर मिल्स ऐसोसिएशन
8. इण्डियन कॉटन मिल्स ऐसोसिएशन
9. ऐसेशिएटेड सीमेण्ट कम्पनीज़
10. मूँगफली एक्सट्रेक्शन निर्यात विकास ऐसोसिएशन इत्यादि।

17. विज्ञापन संस्थाएँ तथा परामर्शदायी संस्थाएँ (Advertising Agency and Consulting Firms) — इनमें से अधिकतर संस्थाएँ विज्ञापन एजेन्सी का कार्य करती हैं तथा विपणन समस्याओं पर अनुसंधान कार्य करती हैं। अतः अन्तर्राष्ट्रीय विपणन से सम्बन्धित सूचनाएँ भी यहाँ से प्राप्त की जा सकती हैं -

1. अन्तर्राष्ट्रीय विपणन एवं विज्ञापन निगम
2. हिन्दूस्तान-थॉम्पसन्स एसोसिएट्स का भारतीय बाजार अनुसंधान ब्यूरो
3. इकोनॉमिक टाइम्स का रिसर्च ब्यूरो, मुम्बई
4. बाजार अनुसंधान एवं तथ्य विश्लेषण सलाहकार
5. बाजार विज्ञापन एवं विज्ञापन सेवाएँ
6. बाजार विज्ञापन एवं रेडियो सेवाएँ
7. विपणन विज्ञापन सहयोगी (प्रा.) लिमिटेड
8. विपणन एवं औद्योगिक विकास ऐसोसिएशन
9. विज्ञापन एवं विपणन ऐसोसिएट्स
10. राष्ट्रीय विज्ञापन सेवाएँ (प्रा.) लि.
11. जेन्सन एडवरटाइजिंग
12. नेशनल एडवरटाइजिंग सर्विसेज प्रा. लिमिटेड

18. विदेशी राष्ट्रों के भारत में दूतावास (Embassies of Foreign Country Governments in India)

19. जर्नल, पत्रिकाएँ, रिपोर्ट जो देश में उपर्युक्त संगठनों द्वारा प्रकाशित करवाये जाते हैं।

20. विश्वविद्यालय एवं पुस्तकालय (University and Library) — विश्वविद्यालय तथा पुस्तकालय में हर प्रकार की पुस्तकें प्राप्त हो जाती हैं जिनमें आवश्यक तथ्य एवं सूचनायें उपलब्ध होती हैं। पुस्तकों के अतिरिक्त अनुसंधाान प्रतिवेदन भी मिल जाते है। इसके अतिरिक्त विश्वविद्यालय में शोध कार्य भी होते रहते हैं।

21. साईबर कैफे (Cyber Cafe) — सूचना तकनीकी (Information Technology) तथा संचार तंत्र (Communication Network) में क्रान्तिकारी परिवर्तनों के कारण आज छोटे-छोटे नगरों एवं गांवों में भी Cyber Cafe खुल गये है जहाँ Internet के माध्यम से आप दुनिया के किसी भी स्थान से कोई भी सूचना एवं जानकारी तुरन्त और बहुत कम कीमत पर प्राप्त कर सकते हैं।

(B) देश के बाहर निर्यात सूचनाओं के स्त्रोत
(Sources of Export Information outside the Country)

भारत के बाहर कार्यरत अनेक प्रकार की संस्थाओं व संगठनों से भी निर्यात सम्बन्धी जानकारियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। ये संस्थाएँ बाजार अनुसंधान साधारणतया करती ही रहती है, व इनसे अनुसंधान प्रतिवेदन प्राप्त कियो जा सकते है। ये संगठन इस प्रकार हैं -

1. विश्व संस्थाएँ जैसे -
   - (i) संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन अंकटाड (UNCTAD)
   - (ii) व्यापार एवं प्रशुल्क विषयक सामान्य समझौता (GATT)
   - (iii) अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF)
   - (iv) संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO)
   - (v) इन्टरनेशनल ट्रेड सेन्टर (ITC)
2. उक्त संगठनों द्वारा प्रकाशित सामग्री तथा अन्य संदर्भ प्रकाशन, जैसे -
   - (i) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार निर्देशिका
   - (ii) ईयर बुक (वार्षिकी)
   - (iii) इन्टरनेशनल ट्रेड फोरम
   - (iv) International Trade (Annual) by GATT
   - (v) Direction of Trade by I.M.F.
   - (vi) World Trade (Annual) by U.N.
3. अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक चेम्बर - फ्रान्स तथा विदेशी वाणिज्यिक चेम्बर
4. विदेशी राष्ट्रों में भारतीय दूतावास
5. विदेशी राष्ट्रों में निजी संस्थाएँ तथा एजेन्ट।
6. भारत में निर्यात बाजार अनुसंधान करने वाला सबसे बड़ा संगठन भारतीय विदेश व्यापार संस्थान है, जिसने समय-समय पर विभिन्न बाजार सर्वे किये हैं, जैसे -
   - (i) संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, बेल्जियम तथा स्पेन में जूट के माल का बाजार सर्वे।
   - (ii) ब्राजील के साथ व्यापार विस्तार तथा आर्थिक सहयोग,
   - (iii) मैक्सिको के साथ व्यापार विस्तार तथा आर्थिक सहयोग,
   - (iv) भारत तथा चेकोस्लोवाकिया में व्यापार विस्तार तथा आर्थिक सहयोग,
   - (v) भारत तथा हंगरी में व्यापार विस्तार तथा आर्थिक सहयोग
   - (vi) इण्डोनेशिया, फिलीपाइन्स, मलेशिया, सिंगापुर तथा थाइलैण्ड में चुने हुए इंजिनियरिंग माल का बाजार सर्वे।
   - (vii) कोरिया जनतंत्र में निर्यात सम्भावनाएँ तथा विनियोग अवसर।

इस सर्वे के सम्बन्ध में सभी सूचनाएँ संस्थान के तिमार्ही जर्नल "Foreign Trade Review" तथा अन्य आर्थिक एवं वाणिज्यिक पेपरों में तथा जर्नलों में उपलब्ध हैं।

7. इन्टरनेशनल ट्रेड सेन्टर (Internationl Trade Centre) - विश्व स्तर पर सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था इन्टरनेशनल ट्रेड सेन्टर, अंकटाड, गैट-जेनेवा है जो विभिन्न वस्तुओं के बारे में किये गये बाजार अनुसंधानों के प्रतिवेदनों को विकासशील देशों को बिना शुल्क दिये हुए उपलब्ध कराता है। "इन्टरनेशनल ट्रेड फोरम" नामक पत्रिका का प्रकाशन भी इसके द्वारा किया जाता है, जिसमें

विभिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में अनेक देशों में किये गये बाजार अनुसंधान से प्राप्त सूचनाओं का प्रकाशन किया जाता है। इनके द्वारा किये गये कुछ महत्त्वपूर्ण सर्वे इस प्रकार हैं -

1. प्राचीन गलीचों के लिए बाजार, 1969.
2. औद्योगिक कॉफी के लिए इक्कीस यूरोपीय बाजार, 1969.
3. उत्तरी अमेरिकी, पश्चिमी यूरोप तथा जापान में मसालों के बाजार, 1970.
4. नॉर्वे, बेल्जियम, फ्रांस, इटली में डीजल इन्जिन के लिए बाजार, 1972.
5. साइकिल तथा उसके पुर्जो के लिए बाजार, 1975.
6. कोका वस्तुएँ-विश्व के प्रमुख बाजारों के सम्बन्ध में तथ्य तथा आँकड़े, 1975.
7. विकासशील तेल निर्यातक देश-अन्य विकासशील राष्ट्रों के लिए नये बाजार अवसर, 1976.
8. फ्रांस तथा इंगलैण्ड में खिलौने तथा खेल 1976, 1977.
9. फ्रांस में जवाहरात, 1979.

इन सब के अतिरिक्त अनेक प्रकार के व्यापार सद्भावना मण्डल भी अनके देशों की यात्राएँ इस अभिप्राय से करते हैं कि विभिन्न वस्तुओं की विदेशों में विपणन सम्भावनाओं का पता लगाया जा सके। इसी प्रकार अन्य देशों से यहाँ आने वाले व्यापार सद्भावना मण्डलों से भी इस प्रकार की जानकारियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। निर्यात का विचार रखने वाली फर्में अपने बाजार अनुसंधान में उपरोक्त स्त्रोतों से उपलब्ध करायी गयी सूचनाओं का प्रभावी उपयोग कर सकती है। इस हेतु शोधकर्त्ता को चाहिए कि वह सभी सूचनाओं को उपयुक्त शीर्षकों के अन्तर्गत फाइल कर ले। इस प्रकार जैसे-जैसे सूचनाओं की प्राप्ति होती है, उसी क्रम में उनकी फाइलिंग कर दी जाती है और इससे एक मास्टर फाइल तैयार हो जाती है। मास्टर फाइल के अन्तर्गत सभी सूचनाओं के सन्दर्भ अंकित रहते हैं।

डैस्क रिसर्च के लाभ

(Advantages of Desk Research)

1. सूचनाएँ विश्वसनीय होती हैं, क्योंकि ये संगठित संस्थाओं के द्वारा एकत्रित की जाती हैं।
2. यह पद्धति बहुत कम खर्चीली है।
3. बिना अधिक प्रयास के सूचना उपलब्ध हो जाती है।
4. यदि अनुसंधान का क्षेत्र छोटा है तो यह तकनीक उपयुक्त है।
5. इससे सूचनाओं का आधार प्राप्त किया जा सकता है, जैस एक विशेष वस्तु के लिए आयात की सूचना, उत्पादन सूचना, व्यापार की दिशा एवं मात्रा आदि।
6. सूचनाओं की प्राप्ति के बाद मुख्य बिन्दु की जानकारी मिल जाती है।
7. समय तथा लागत की बचत होती है।
8. यह कम्पनी को क्षेत्र अन्वेषण (Field Investigation) की समस्या से मुक्त कर देती है।

डैस्क रिसर्च के दोष

(Disadvantages of Desk Research)

1. कई बार संमक कई विश्वसनीय होते हैं।
2. इनका प्रयोग तब तक विश्वसनीय नहीं होता जब तक कि क्षेत्र अन्वेषण द्वारा इनका परीक्षण नहीं किया जाता है।
3. अनुसंधानकर्ता प्रकाशित सूचनाओं को उसी रूप में स्वीकार नहीं कर सकता है जिस रूप में उसे उपलब्ध होती हैं। अन्य शब्दों में, उसे इनको स्वीकार करने से पूर्व छानबीन करनी आवश्यक होती है।

अध्याय-5
अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में - वस्तु नियोजन एवं विकास
(International Marketing – Product Planning and Development)

उपभोक्ता वही वस्तुयें या सेवाएँ क्रय करता है, जो उसकी आवश्यकताओं और इच्छाओं के अनुरूप हो, ना कि जो निर्माता के द्वारा प्रस्तुत की जाती है। जो वस्तु भारत में स्वीकार की जा रही है वह विदेशी बाजार में भी स्वीकार की जायेगी यह आवश्यक नहीं है। जो वस्तु जर्मन के उपभोक्ताओं को पसन्द हो वह अमरीका के लोगों को भी पसन्द आयेगी, यह आवश्यक नहीं है। घरेलू बाजार की तुलना में अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में वस्तु नियोजन एवं विकास ज्यादा चुनौतीपूर्ण माना जाता है।

वस्तु नियोजन का अर्थ
(Meaning of Product Planing)

"भविष्य में क्या करना है ? इसको वर्तमान में तय करना नियोजन करना कहलाता है।"[1] इसी तथ्य को इस प्रकार भी कह सकते हैं कि "नियोजन में भविष्य की ओर देखा जाता है, कि हम कहाँ जाना चाहते है? हम क्या करना चाहते हैं ? और ऐसा करने में क्या कठिनाइयाँ सामने आ सकती हैं।"[2] विपणन नियोजन एक प्रकार की क्रिया है जिसमें एक संस्था अपने साधनों को अपने उद्देश्यों और अवसरों को प्राप्त करने के लिए मिलती है। इसमें एक संस्था यह निर्णय लेती है कि भविष्य में अपने साधनों - श्रम, प्रबन्ध, मशीनों व पूंजी आदि का प्रयोग किस प्रकार करेगी।

स्टाण्टन के अनुसार, "वस्तु-नियोजन में वे सब क्रियाएँ आती हैं जो निर्माता और मध्यस्थ को इस योग्य बनाती हैं कि वे यह तय कर सकें कि कम्पनी की वस्तु-पंक्ति (Line of product) में कौन-कौन सी वस्तुएँ होनी चाहिए।"[3]

कार्ल एच. टिटजिन के मत में, "नयी वस्तुओं के सम्बन्ध में खोज, जांच-पड़ताल, विकास एवं उनका वाणिज्यीकरण, वर्तमान पंक्तियों में सुधार तथा सीमान्त या अलाभकारी मदों का परित्याग करने से सम्बन्धित क्रियाओं को चिह्नित करना एवं उनका परीक्षण करना वस्तु-नियोजन कहलाता है।"[4]

जॉनसन के शब्दों में, "वस्तु-नियोजन वस्तु की उन विशेषताओं को तय करता है जिनसे कि उपभोक्ताओं की असंख्य इच्छाओं

---

1. "Planning is deciding in the present what to do in future." **— Philip Kotlar**
2. "Planning-looking ahead to where we want to go, what we want to do, and what obstacles we are likely to encounter in doing it.
— Lazo & Corbin
3. "Product-planning embraces all activities which enable producers and middlemen to determine what should constitute a company's line of products."
— Stanton : *Fundamentals of Marketing*, p. 179.
4. "Product-planning may be defined as "the act of marking out and supervising the search, screening, development and commercialization of new products ; the modification of existing lines, and the discontinuance of marginal or unprofitable items."
— **Karl H. Tietjin** : Organising the Product-Planning Function, A. M. A. Research Study, 59, American Management Association, Inc., New York, 1963, p. 111.

को सर्वोत्तम ढंग से पूरा किया जा सके, वस्तुओं में विक्रय योग्यता को जोडा जा सके और उन विशेषताओं को तैयार वस्तुओं में शामिल किया जा सके।"[1]

मैसन एवं रथ (Mason and Rath) की राय में, "एक वस्तु के जीवन की जन्म से लेकर उसका कम्पनी की वस्तु-पंक्ति से परित्याग तक के नियोजन, निर्देशन एवं नियन्त्रण की सभी स्थितियां वस्तु-नियोजन कहलाती हैं।"[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह बातें स्पष्ट होती हैं, कि "वस्तु-नियोजन वस्तु प्रबन्ध का वह भाग है जो वस्तु विकास की सम्भावनाओं का निर्धारण करता है और किन वस्तुओं का विपणन एवं उनका परित्याग करना है, इसे निश्चित करता है तथा विपणन की जाने वाली वस्तुओं की विशेषताओं को निश्चित करके उन्हें वस्तुओं में शामिल करता है।

इस प्रकार वस्तु नियोजन में निम्न बातें आती हैं, जिन्हें नियोजन की विशेषताएं भी कहते हैं :-

(1) वस्तु के बारे में खोजबीन :-

नयी वस्तु का उत्पादन करने से पूर्व वस्तु के बारे में खोजबीन की जाती है जिससे कि उपभोक्ताओं की इच्छाओं के अनुरूप उत्पादन किया जा सके। इसके लिए यह पता लगाया जाता है कि उपभोक्ता उन वस्तुओं में क्या विशेषताएं चाहता है ? जैसे वस्तु किस आकार-प्रकार, रंग-रूप, डिजाइन, पैकेजिंग, मूल्य आदि की होनी चाहिए।

(2) व्यावहारिकता का पता लगाना :-

उपभोक्ता सम्बन्धी बातों का पता लगाने के बाद उस वस्तु के उत्पादन की व्यावहारिकता का भी पता लगाया जाता है अर्थात् जिन विशेषताओं को उपभोक्ता चाहता है उन विशेषताओं के साथ उस वस्तु का निर्माण किया जा सकता है अथवा नहीं। इन बातों का पता लगाने वाले प्रयत्न वस्तु-नियोजन की परिभाषा में आते हैं।

(3) वर्तमान वस्तु में परिवर्तन :-

यदि वर्तमान वस्तु में कुछ परिवर्तन की भी आवश्यकता है जिससे कि वह मांग के अनुरूप हो सके तो इस सम्बन्ध में सभी तथ्यों को एकत्रित करना एवं वस्तु में उन सभी तथ्यों के आधार पर परिवर्तन करना भी वस्तु-नियोजन का एक भाग है।

(4) वस्तु परित्याग :-

इसी प्रकार यदि किसी वस्तु का पहले से निर्माण किया जा रहा है और वह बिक रही है लेकिन उस वस्तु की बिक्री क्रमशः घटती जा रही है या उसके सम्बन्ध में प्रतियोगिता बढ़ती जा रही है या उस वस्तु से लाभ कम होते जा रहे हैं तो उस वस्तु के उत्पादन को बन्द करने का निर्णय लेने का कार्य भी वस्तु-नियोजन में आता है।

विपणन में वस्तु नियोजन का महत्व
(Importance of Product-Planning in Marketing)

वस्तु-नियोजन के महत्व को निम्न प्रकार समझा जा सकता है :

(1) विपणन कार्यक्रम में प्रारम्भिक बिन्दु

(Starting Point in Marketing Programme) : –

"एक फर्म के सम्पूर्ण विपणन-कार्यक्रम के लिए वस्तु नियोजन का प्रथम स्थान है।" इसका अर्थ यह है कि यदि किसी संस्था को अपना विपणन-कार्यक्रम बनाना है तो उसको सबसे पहले वस्तु नियोजन अवश्य ही करना चाहिए जिससे कि वस्तु में वे सभी विशेषताएं आ जायें जिनकी अभिलाषा उपभोक्ताओं में है। यदि इस बात पर ध्यान नहीं रखा गया तो यह सम्भव है कि विपणन कार्यक्रम आगे चलकर सफल न हो अर्थात वस्तु का उत्पादन हो जाने पर उसको उपभोक्ताओं द्वारा न खरीदा जाय

---

1. "Product-planning determines the characteristics of product best meeting the consumer's numerous desires, charac teristics that add saleability to products, and incorporates these characteristics into the finished products."
— **Johnson** : *Sales & Marketing Management*, p. 5.

2. "The Planning, direction and control of all stages in the life of a product from the time of its creation to the time of its removal from the company's line of Product is known as product Planning".
— **Mason & Rath** : *Marketing and Distribution*, p. 261.

या जिस मात्रा में बिक्री का अनुमान लगाया था उस मात्रा में बिक्री न हो सके और इस प्रकार वस्तु के सम्बन्ध में सभी प्रयत्न असफल हो जायें।

(2) प्रबन्धकीय योग्यता का परिचायक

(Introduction of Managerial Ability) : –

वस्तु नियोजन प्रबन्धकीय योग्यता का परिचायक होता है। इसलिए यह कहा जाता है कि "वस्तु नियोजन का अभाव संगठन के प्रबन्धकीय दिवालियापन का घोतक है और यह संकेत करता है कि व्यवसाय को अपने भाग्य पर छोड़ दिया गया है।"[1]

इसका अर्थ यह है कि जिस व्यवसाय में वस्तु-नियोजन नहीं किया जाता है उस व्यवसाय के प्रबन्धकों के बारे में कहा जा सकता है कि इनका मानसिक रूप से दिवाला निकल चुका है अर्थात उनमें व्यवसाय के बारे में सोचने की शक्ति नहीं रही है। इसका परिणाम यह होता है कि व्यवसाय को भाग्य के भरोसे चलते रहने के लिए छोड़ दिया जाता है।

(3) सामाजिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति का साधन

(Means of Meeting Social Responsibilities) : –

"वस्तु नियोजन व्यवसाय के सामाजिक उत्तरदायित्व को पूरा करने का भी एक साधन है।"[2] प्रत्येक व्यवसायी का एक सामाजिक उत्तरदायित्व है कि वह समाज को उसकी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप वस्तुओं को प्रदान करे। यह कार्य वस्तु-नियोजन के आधार पर ही सम्भव है। इसमें उपभोक्ता अनुसन्धान कर समाज की विशेषताओं का पता लगा लिया जाता है ओर जिस प्रकार की वस्तु समाज चाहता है उस प्रकार की वस्तु निर्माण कर प्रदान की जाती है।

(4) प्रतिस्पर्द्धी हथियार

(Competitive Weapon) :–

एलेक्जेण्डर क्रास एवं हिल ने वस्तु नियोजन को प्रतिस्पर्द्धी हथियार कहकर पुकारा है और उनका कहना है कि वस्तु नियोजन आधुनिक विपणन की एक प्रमुखता है। वस्तु का मूल्य निर्धारण, ग्राहक सेवाएं, विक्रय एवं विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रम, आदि सभी वस्तु नियोजन व्यवहार पर निर्भर करते हैं। बिना वस्तु नियोजन एवं विकास के सफलता मिलना कठिन है।

(5) विस्त त क्षेत्र

(Wide Scope) :–

वस्तु नियोजन का क्षेत्र काफी व्यापक है। इसमें वस्तु विकास व वस्तु नवाचार, आदि जैसी सभी बातें सम्मिलित की जाती हैं। उदाहरण के लिए, कौन सी वस्तु का निर्माण किया जाय ? वस्तु-रेखा का विस्तार किया जाय या संकुचन ? वस्तु के नवीन उपयोगों की खोज की जाय या नहीं। वस्तु के लिए किन ब्राण्ड, लेबिल व पैकिंग का प्रयोग किया जाय ? आदि

वस्तु - विकास का अर्थ
(Meaning of Product Development)

किसी भी वस्तु के निर्माण करने से पूर्व उसके बारे में विचार - विमर्श किया जाता है तत्पश्चात् नियोजन किया जाता है। नियोजन के बाद वस्तु के बारे में सोचते हैं। "विकास का अर्थ वस्तु के बारे में इस बात का पता लगाना है कि उसका उत्पादन तान्त्रिक एवं वाणिज्यीकरण के आधार पर हो सकता है अथवा नहीं अर्थात निर्माण व्यावहारिक है या नहीं।" वस्तु विकास के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों की परिभाषाएं निम्नलिखित हैं :-

प्रो. स्टाण्टन के अनुसार, "वस्तु के बारे में अनुसंधान इन्जीनियरिंग व डिजाइन से सम्बन्धित तकनीकी क्रियाओं को करना ही वस्तु विकास कहलाता है।"[2]

---

1. "Lack of Product-planning implies managerial bankruptcy in the organization and amount to leaving the enterprise to trust its own luck."
2. "Product development, encompasses the technical activities of product research, engineering and design.
— **Stanton** : *Fundamentals of Marketing*, p. 180.

लिपसन एवं डार्लिंग के मत में, "वस्तु-विकास वह प्रक्रिया है जिसमें सामान्यतः एक वर्ष की दी हुई अवधि के लिए वस्तु रेखा में नवीन वस्तुएं जोड़ी जाती हैं, चालू वस्तुएं हटायी जाती हैं और संशोधित की जाती हैं।"[1]

लेकिन कुछ विद्वान वस्तु परिवर्तन को भी वस्तु-विकास के अन्तर्गत रखते हैं और उनके अनुसार वर्तमान वस्तु की शक्ल, आकार, पैकेजिंग, डिजाइन, गुण आदि में परिवर्तन करना भी वस्तु-विकास कहलाता है। यह परिवर्तन क्रेताओं को सन्तुष्ट करने के लिए किया जाता है। वास्तव में आजकल इस विचारधारा को अधिक मान्यता दी जा रही है।

इस प्रकार वस्तु-विकास का अर्थ वस्तु रेखा में नवीन वस्तुओं को जोड़ने तथा चालू वस्तुओं के डिजाइनों, आकारों, उपयोगों, पैकेजिंग, आदि में सुधार करने या वस्तुओं को वस्तु-रेखा से त्यागने से है।

वस्तु विकास के सिद्धान्त
(Principles of Product Development)

विपणन क्षेत्र के विद्वानों ने वस्तु विकास के तीन सिद्धान्त बताए हैं जो आधुनिक वस्तु विकास के कार्यक्रमों के बुनियादी एवं अभिन्न अंग बन चुके हैं। इन सिद्धान्तों का विस्त त विवरण निम्न प्रकार हैं :

(1) प्रमापीकरण का सिद्धान्त
(Principle of Standardization):–

प्रमाप वह मापदण्ड है जो वास्तविक प्रमाणों की जांच हेतु आधार प्रदान करता है।" अन्य शब्दों में "प्रमापीकरण उन विशिष्ट भौतिक एवं रासायनिक गुणों को स्थापित करने की प्रक्रिया है जो अन्य मदों की तुलना के आधार होते हैं।" वस्तुओं के विकास में प्रमापीकरण से अर्थ उसके आकार, रूप, रंग, मात्रा, किस्म व भौतिक व रासायनिक लक्ष्णों से हैं जो एक वस्तु में होने चाहिए।

भारत में प्रमापीकरण की शूरूआत 1947 में भारतीय मानक ब्यूरो (Bureau of Indian Standards) की स्थापना से हुई है। इस समय इस संस्थान की 2,200 से अधिक समितियां हैं जिनके सदस्यों की संख्या 21 हजार से अधिक है। इस विषय में समितियों का माप कार्य मानक या प्रमाप तय करना है। भारतीय मानक ब्यूरो ने अब तक 16852 मानक या प्रमाप निर्धारित किये है जिनका उपयोग ऐच्छिक है। यहाँ 12286 हजार संस्थाएँ ऐसी हैं जो मानक के उपयोग करने के लिए लाइसेन्स प्राप्त हैं जो 5,000 करोड़ रूपये के मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन प्रतिवर्ष करती हैं।

(2) सरलीकरण का सिद्धान्त
(Principle of Simplification):–

सरलीकरण का सिद्धान्त अनावश्यक वस्तु भिन्नताओं, आकार-प्रकार, किस्म, डिजाइन आदि में कमी करता है। विपणन कार्यक्रमों को सरल बनाता है। भण्डार लागतों व उत्पादन तथा वितरण लागतों में कमी करता है तथा वस्तु अप्रचलन देर से करता है।

(3) विशिष्टीकरण का सिद्धान्त
(Principle of Specialization):–

विशिष्टीकरण का सिद्धान्त वस्तु विकास के क्षेत्र में अनावश्यक वस्तु विविधीकरण को समाप्त करने पर जोर देता है तथा विशिष्ट क्षेत्र में नेत त्व प्रदान करता है जिससे कर्मचारी कुशलता बढ़ती है तथा व्ययों में मितव्ययता होती है। इससे ग्राहकों को भी अधिकतम सन्तुष्टि मिलती है।

उपरोक्त तीनों सिद्धान्त अलग-अलग हैं लेकिन वे एक-दूसरे से जुड़े हए हैं। सरलीकरण के अभाव में न तो प्रमापीकरण हो सकता है और न विशिष्टीकरण। इसी प्रकार प्रमापीकरण के अभाव में न तो सरलीकरण हो सकता है और न प्रमापीकरण। इस प्रकार वस्तुओं के विकास में इन तीनों सिद्धान्तों का ही अनुसरण किया जाना चाहिए।

---

1. Product development involves the adding, dropping and modification of item specification in the product-line for a given period of time, usually one year."

— Lipson & Darling

वस्तु-नियोजन एवं वस्तु-विकास का क्षेत्र
(Scope of Product Planning and Product Development)

वस्तु नियोजन व वस्तु विकास का क्षेत्र व्यापक है। इसमें वस्तु से सम्बन्धित सभी बातें आती हैं, जैसे वस्तु का आकार, प्रकार, डिजाइन, मूल्य, रंग, ब्राण्ड आदि। साथ ही वे सभी बातें भी इसके क्षेत्र के अन्तर्गत आती हैं जिनसे वस्तु के बाजार पर प्रभाव पड़ता है। इसके क्षेत्र में मुख्यत निम्न बातें आती हैं :-

(1) वस्तु निर्णय
(Product Decision) :–

किसी वस्तु का निर्माण करने से पूर्व निर्माता को पहले यह निर्णय करना पड़ता है कि वह किस वस्तु का निर्माण करना चाहता है जिससे कि उसी अनुरूप साधनों को जुटाया जा सके। इस प्रकार वस्तु निर्णय नियोजन की प्रथम सीढ़ी है।

(2) वस्तु के डिजायन व आकार
(Design and Size of the Product) :–

वस्तु नियोजन के क्षेत्र में वस्तु की डिजायन भी आती हैं। यहां डिजायन के अर्थ में उस वस्तु का ढांचा, शक्ल, रंग-रूप, गन्ध आदि से है। आकार का अर्थ वस्तु की आक ति से है। यह आक ति कई प्रकार की हो सकती है जैसे छोटी, बड़ी व मध्यम वस्तु नियोजन के क्षेत्र में यह बातें भी आती हैं।

(3) वस्तु का नाम
(Name of the Product) :–

वस्तु के नियोजन एवं विकास में वस्तु का नाम भी आता है। वस्तु के नाम से अर्थ वस्तु का नाम तय करना है। यह नाम ऐसा होना चाहिए जिसको आसानी से पुकारा जा सके, याद रखा जा सके तथा जो वस्तु की क्वालिटी व निर्माता के नाम को प्रदर्शित करता हो जैसे, फिलिप्स बल्ब, विल्सन पेन, ऐवरेडी बैटरी आदि।

(4) वस्तु का रंग
(Colour of the Product) :–

यदि किसी वस्तु का बाजार निर्माता बाजार है तब तो रंग आदि का ध्यान रखने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इसके विपरीत स्थिति है तो उपभोक्ता की रूचि का भी ध्यान रखना होगा। वास्तव में रंग वस्तु को बेचने में बहुत सहायक होता है। भारत में अधिकांश वस्तुओं के सम्बन्ध में अभी निर्माता बाजार ही है लेकिन कुछ वस्तुओं के सम्बन्ध में परिवर्तन होता दिखाई दे रहा है।

(5) वस्तु का मूल्य
(Price of the Product) :–

वस्तु का मूल्य, वस्तु नियोजन में एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटक है। यदि मूल्य नियोजन में कोई गलती या भूल हो जाती है तो व्यवसायी का सारा प्रयत्न असफल हो सकता है। अतः मूल्य नियोजित करते समय वस्तु की मांग व उसकी चयनशीलता, प्रतियोगिता, उपभोक्ता की देय क्षमता, वस्तु का वर्गीकरण (सुविधा, विशिष्ट व सौदे का माल), वितरण-तरीका, वस्तु के मूल्य पर सरकारी प्रतिबन्ध, आदि का ध्यान रखना चाहिए।

(6) वस्तु का ब्राण्ड, पैकेजिंग व लेबिल
(Brand, Packaging and Label of the Product) :–

वस्तु नियोजन में वस्तु की ब्राण्ड, उसका पैकेजिंग व लेबिल भी तय करना पड़ता है। ब्राण्ड एक प्रकार का चिन्ह है जिसका प्रयोग वस्तु का नाम याद रखने के लिये किया जाता है जिससे की ग्राहक उस वस्तु को आसानी से पहचान कर क्रय कर सके। भारत में इसके बहुत से उदाहरण मिलते हैं, जैसे खजूर ब्राण्ड डालडा वनस्पति घी, तितली छाप जूतों की पॉलिश आदि।

पैकेजिंग वस्तु को लाने-ले-जाने में सुविधा देने, उसको खराब होने से बचाने, मध्यस्थों द्वारा की जाने वाली जालसाजी को रोकने

व वस्तु के विज्ञापन के लिए किया जाता है। भारत में अधिकांश दवाईयां कांच की शीशियों या टीनों या प्लास्टिक के डिब्बों में पैक की हुई मिलती हैं।

वस्तुओं पर एक लेबिल और लगाया जाता है जिससे उसके पैकेजिंग व वस्तु में जालसाजी न की जा सके। यह लेबिल साधारणतया कागज का होता है जिसमें वस्तु के गुण, उसमें मिली हुई वस्तुओं की मात्रा, ब्राण्ड आदि छपा रहता है।

(7) वस्तु के नये प्रयोग
(New Uses of the Product) :–

वस्तु के नये-नये उपयोगों का पता लगाना भी वस्तु नियोजन के क्षेत्र में आता है। नये प्रयोगों का अर्थ है वस्तु किन-किन नए कार्यो में आ सकती है? इस कार्य के लिए अनुसन्धान किया जाता है जो उपभोक्ता व वस्तु दोनों के बारे में हो सकता है।

(8) वस्तु की गारण्टी सेवा
(Guarantee Service of the Product) :–

वस्तु नियोजन का शायद यह अन्तिम कार्य है। उपभोक्ता को गारण्टी दी जाती है कि यदि वस्तु जल्दी खराब हो जायेगी तो बदल दी जायेगी या उसकी मुफ्त मरम्मत कर दी जायेगी। इस प्रकार की गारण्टी भी एक सेवा है जो विक्रय के बाद की जाती है। गारण्टी का उद्देश्य उपभोक्ता को इस बात का विश्वास दिलाना है कि उसको मूल्य का उचित प्रतिफल दिया जा रहा है।

इस प्रकार वस्तु नियोजन एवं विकास वस्तु के बनने व बेचने पर ही समाप्त नहीं हो जाता है बल्कि उपभोक्ता को उचित सन्तोष देने के लिए बाद में भी किया जाता है।

वस्तु नियोजन एवं विकास का उत्तरदायित्व एवं संगठन
(Responsibility & Organization of Product Planning and Product Development)

वस्तु नियोजन एवं विकास का उत्तरदायित्व किसका है ? इसका उत्तर साधारण है कि कार्य संस्था के मालिक का है। लेकिन जब वस्तुओं का निर्माण कम्पनियों के द्वारा किया जाता है तो इस कार्य का उत्तरदायित्व कम्पनी के संचालक-मण्डल का है। बड़ी-बड़ी व्यावसायिक संस्थाएं इस कार्य को एक संचालक को सौंप देती हैं और उस सचांलक को वस्तु नियोजन एवं विकास संचालक कहते हैं कुछ संस्थाएं अलग से संचालक नहीं रखतीं और यह कार्य विपणन संचालक को सौंप देती हैं जबकि कुछ यह कार्य वस्तु-नियोजन समिति के माध्यम से करती हैं। यह समिति अपने कार्य को आसान करने के उद्देश्य से प्रत्येक वस्तु के लिए अलग-अलग वस्तु प्रबन्धक नियुक्त कर देती हैं और इस प्रकार वस्तु नियोजन का कार्य अलग-अलग वस्तु प्रबन्धकों पर पहुंच जाता है। वस्तु नियोजन समिति स्वयं उन सभी कार्यो में समन्वय करती है और संचालक-मण्डल के लिए उत्तरदायी होती है।

वस्तु नियोजन एवं विकास के लिए संगठन विभिन्न संस्थाओं में विभिन्न प्रकार के होते हैं और साथ ही यह संगठन विभिन्न व्यवसायों के लिए विभिन्न प्रकार के होते हैं। लेकिन इन संगठनों में कुछ समानताएं पाई जाती हैं।

साधारणतया जब कोई विचार सामने आता है तो उसकी स्वीक ति व्यवसाय के प्रबन्ध द्वारा की जाती है। यह विचार एक नयी वस्तु के बनाने के सम्बन्ध में या पुरानी वस्तु में परिवर्तन के सम्बन्ध में हो सकता है। विचार की स्वीक ति मिल जाने पर वस्तु नियोजन एवं विकास विभाग द्वारा प्रारम्भिक जांच पड़ताल की जाती है और वस्तु सम्बन्धी विशेषताओं को एकत्रित किया जाता है। यह सभी सूचनाएं इंजीनियरिंग विभाग को एक मॉडल बनाने के लिए भेज दी जाती है। यह विभाग एक मॉडल बनाकर निर्माण विभाग को भेज देता है। अब निर्माण विभाग वस्तु का थोड़ी सी मात्रा में निर्माण करता है और तदुपरान्त विक्रय या विपणन परीक्षण विभाग को परीक्षण हेतु सौंप देता है। यह विभाग एक निश्चित क्षेत्र में वस्तु की बिक्री करता है और इस सम्बन्ध में उपभोक्ता एवं मध्यस्थों आदि सभी की प्रतिक्रियाओं को उल्लिखित करता है और इनके अनुसार आवश्यक फेर-बदल हेतु इंजीनियरिंग विभाग को फिर परिवर्तन के लिए भेज देता है। यह विभाग उसमें परिवर्तन कर निर्माण विभाग को सौंप देता है तो उस वस्तु का वाणिज्यीकरण के आधार पर निर्माण करता है। ग्राहकों को वस्तु के बारे में जानकारी देने व उन्हें खरीदने के लिए लालायित करने के उद्देश्य से विज्ञापन एवं विक्रय-संवर्द्धन विभाग भी कार्यवाही करता है और अन्त में वस्तु उपभोक्ता

के पास पहुंच जाती है। यदि उपभोक्ता द्वारा अब भी वस्तुओं में फेर-बदल की आवश्यकता व्यक्त की जाती है तो फिर विपणन अनुसन्धान कर वही क्रम अपनाया जाता है। एक संस्था में साधारणतया वस्तु नियोजन एवं विकास के लिए निम्न प्रकार का संगठन पाया जाता है :

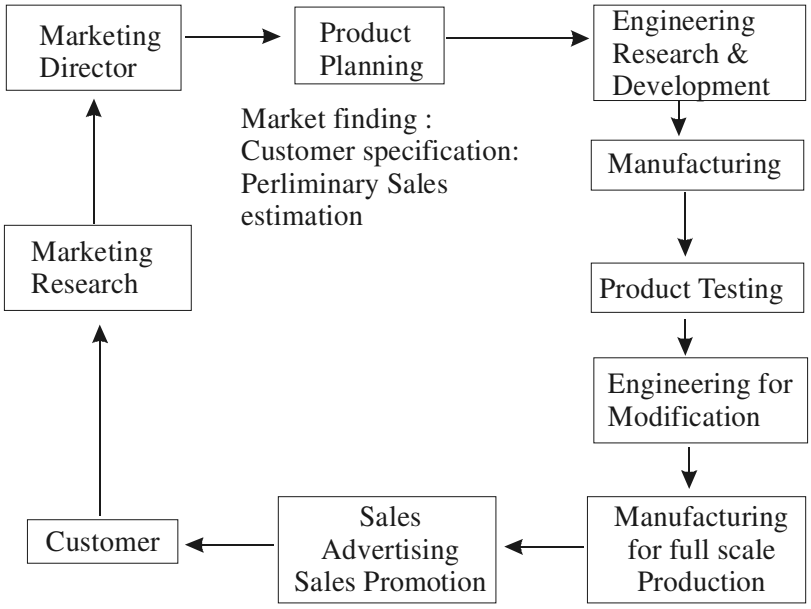

इस संगठन में विपणन प्रबन्धक को उत्तरदायी बनाया गया है लेकिन सदा ही ऐसा नहीं होता है। कुछ संस्थाएं इसके लिए वस्तु प्रबन्धक नियुक्त करती है जबकि कुछ वस्तु-नियोजन समिति।

विपणन प्रबन्ध एवं वस्तु-नियोजन एवं विकास
(Marketing Management and Product Planning and Development)

वस्तु नियोजन एवं विकास के कार्य का उत्तरदायित्व विपणन प्रबन्धक का होना चाहिए जिससे कि वस्तु उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं के अनुरूप बन सके। यदि ऐसा करने में इन्जीनियरिंग तथा उत्पादन विभाग आदि असन्तुष्ट हो जाते हैं तो चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि संस्था उत्पादन-मुखी (Production - oriented) न होकर उपभोक्ता मुखी (Consumer - oriented) ; होनी चाहिए अर्थात वस्तु उपभोक्ता की आशाओं के अनुरूप होनी चाहिए न कि उत्पादन प्रबन्धक या इन्जीनियरिंग विभाग के अनुरूप। यदि कोई वस्तु उत्पादन की द ष्टि से बहुत अच्छी है और उसमें आधुनिक तकनीक का पूर्ण समावेश है तो यह सम्भव है कि वह वस्तु बाजार में उपभोक्ता की स्वीक ति प्राप्त न कर सके। इसके बहुत से कारण हो सकते हैं। जैसे आधुनिकता तकनीक के कारण वस्तु को काम लेने में कठिनाई हो और एक साधारण उपभोक्ता उसको काम में न ला सके। इसी प्रकार यह भी हो सकता है कि उपभोक्ता उस वस्तु के लिए उतना मूल्य देने के लिए तैयार न हो जितना कि संस्थान ने निश्चित किया है। साथ ही उस वस्तु की मरम्मत सामान्य रूप से उपभोक्ताओं के स्थान पर न हो सकती है। क्योंकि मरम्मत के लिए विशेष प्रशिक्षण प्राप्त तकनीकी कारणों से सर्वोत्तम होते हुए भी असफल हो जायेगी। अतः यह कहा जाता है कि "व्यवसाय संचालन सम्बन्धी विपणन प्रबन्धकीय विचारधारा यह अनिवार्य बना देती है कि वस्तु नियोजन के लिए मूल उत्तरदायित्व विपणन विभाग पर ही हो, न कि उत्पादन या इंजीनियरिंग विभागों पर।"

एक विपणन प्रबन्धक को अपने उपभोक्ताओं पर सदा ही निगाह रखनी चाहिए। उसको ऐसा नहीं करना चाहिए कि जब वस्तु नियोजित हो जाए तो उस वस्तु पर से ध्यान हटा लिया जाए। यदि ऐसा किया गया तो कुछ समय के बाद ही वस्तु अप्रचलित हो जायेगी। उसको तो सदा ही यह पता लगाते रहना चाहिए कि उपभोक्ता हमारी वस्तु से क्या आशा करते हैं और इस प्रकार

की सूचनाओं को उत्पादन एवं इन्जीनियरिंग विभागों को समय-समय पर भेजते रहना चाहिए जिससे कि वस्तु में उसी प्रकार के परिवर्तन किये जा सकें और वस्तु आधुनिक बनी रहे तथा संस्था को भी लाभ होते रहें।

घरेलू बाजारों के लिए उत्पाद विकास एवं विदेशी बाजारों के लिए उत्पाद विकास में अन्तर
(Difference between Domestic Product Development and Overseas Product Development)

घरेलू विपणन की तुलना में अन्तर्राष्ट्रीय विपणन अधिक चुनौतीपूर्ण कार्य है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में एक निर्यातक फर्म को तीन स्तरों पर प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है - प्रथम स्तर पर स्वयं के देश के निर्यातकों से, द्वितीय स्तर पर आयातक देश के उत्पादकों से व त तीय स्तर पर उसी वस्तु के विभिन्न देशों के उत्पादकों से। पिछले तीन दशकों से विभिन्न बाजारों का स्वरूप विक्रेता बाजारों से क्रेता बाजारों में परिवर्तित होता जा रहा है। इस कारण निर्यात विपणन सम्बन्धी निर्णय सुविचारित व लक्ष्य बाजारों के अनुरूप होने चाहिए।

यद्यपि देश के लिए उत्पाद नियोजन करते समय भी वहाँ की विभिन्नताओं का समावेश करना होता है, पर निर्यात विपणन में यह कार्य अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाता है। निर्यात विपणन में उत्पाद नियोजन प्रत्येक देश के लिए प थक-प थक किया जाता है, जिससे वह उस देश विशेष की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। इसके लिए बाजार अनुसन्धान से प्राप्त निष्कर्षो का प्रभावी रूप से प्रयोग करना चाहिए। अमेरिका, कनाडा व कई यूरोपीय देशों में उपभोक्तावाद का आन्दोलन प्रभावी व सशक्त हैं।

हमारे देश की तरह वहाँ के उपभोक्ता बिल्कुल असहाय व बेचारे नहीं हैं। सशक्त उपभोक्ता आन्दोलन ने कई उत्पादकों के होश ठिकाने लगा दिये हैं। ब्रिटेन में जेम्स कैलाहन की सरकार ब्रेड की कीमतों में व द्धि होने पर ही हटा दी गयी। इसलिए निर्यात बाजारों के लिए उत्पाद नियोजन एक विशेष अर्थ रखता हैं।

उत्पाद नियोजन से आशय एक निर्यातक की उत्पाद पंक्ति के स्वरूप, लाभदायक विक्रय परिमाण प्रदान करने वाले उत्पाद, उत्पाद का रंग, मात्रा, किस्म, डिजाइन, ब्राण्ड, पैकेजिंग, लेबल व ट्रेडमार्क आदि के सम्बन्ध में निर्णय लेने से है।

II. विदेशी बाजारों के लिए उत्पाद विकास
(Overseas Product Development)

स्टेन्टन के अनुसार, "वस्तु नियोजन में वे सभी क्रियाएँ आती हैं जो निर्माता और मध्यस्थ को इस योग्य बनाती हैं कि वह निर्धारित कर सके कि कम्पनी की उत्पाद-पंक्ति में कौन सी वस्तुएँ होनी चाहिए।"[1]

वस्तु-नियोजन में जहाँ ग्राहक सन्तुष्टि प्रदान करने वाले उत्पादों का चयन किया जाता हैं, वहीं पर इसमें उत्पाद या वस्तु की उन सभी विशेषताओं को तय किया जाता है, जिससे उपभोक्ताओं की असंख्य इच्छाओं को कुशलतापूर्वक व अच्छे प्रकार से पूरा किया जा सके। उत्पाद की इन विशेषताओं में उत्पाद की डिजाइन, आकार, किस्म, रंग, वस्तु का ब्राण्ड, पैकेजिंग, लेबिल आदि को शामिल किया जाता है। इसके लिए विश्व बाजारों का बाजार अनुसन्धानों से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर विश्लेषण करना चाहिए। इसके आधार पर ही विश्व बाजारों के लिए उपयुक्त वस्तु नियोजन करना चाहिए। ऐसा निर्णय करते समय विदेशी बाजारों की आर्थिक विशिष्टताओं, सामाजिक व सांस्क तिक परिवेश व उपभोक्ता रूचियों का व उस देश की सरकार द्वारा इस सम्बन्ध में बनाए गए नियमों व अधिनियमों का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। विश्व बाजारों के लिए वस्तु-नियोजन में निम्नलिखित बातों को शामिल किया जा सकता है -

---

1. "Product Planning embraces all activities which enable Producers and middlemen to determine what should constitute a company's line of product."

— **Stanton W. J.** ; *Fundamentals of Marketing*, p. 179.

(1) डिजाइन

(Design) :–

उत्पाद की बनावट किस प्रकार की है, इसे उत्पाद की डिजाइन में शामिल किया जा सकता है। उत्पाद की डिजाइन उत्पाद के उपयोग में सुविधा प्रदान करती है, उसकी दिखावट में सुधार करती है। डिजाइन उत्पाद से ग्राहक को सन्तुष्टि प्रदान करती है। विश्व बाजारों में उत्पादक को अपनी बिक्री बढ़ाने के लिए विभिन्न निर्यात बाजारों का खण्डकरण करके उनके लिए उपयुक्त डिजाइनों का विकास करना चाहिए।

आयरलैण्ड में '(Kilknney Design Workshop)' नामक संस्था ने आयरलैण्ड के उत्पादकों को विश्व बाजारों में विपणन के लिए नये-नये डिजाइनों का विकास करके दिया। इसी का लाभ उठाकर आयरलैण्ड के उत्पादक यूरोप के कई बाजारों में अपना स्थान बना सके। जापान ने भी इस दिशा में पर्याप्त ध्यान दिया है। विशेषकर जापानी कार निर्माताओं के इस दिशा में प्रयास विशेष उल्लेखनीय हैं। जापान की टोयाटा कार ने अमेरिकी व कई अन्य यूरोपीय बाजारों में अपनी अनोखी डिजाइन से ही स्थान बनाया है। इसके अतिरिक्त जापानियों ने कलात्मक वस्तुओं व पारम्परिक वस्तुओं में भी उपयुक्त डिजाइनों का विकास कर निर्यात बाजारों में अपना स्थान बनाया है।

भारत में भी वस्तु के डिजाइन के विकास, उन्हें आकर्षक व कलात्मक बनाने के लिए अहमदाबाद में "दी नेशनल डिजाइन इन्स्टीट्यूट" की स्थापना की गई है। भारतीय उत्पादकों को, जो निर्यात बढाना चाहते हैं, उन्हें इस संस्था की सेवाओं का लाभ उठाना चाहिए। भारतीय हैण्डलूम उत्पादकों ने विदेशी शैली पर ड्रेसेज बनाकर विश्व बाजारों में अपना अच्छा स्थान बनाया हैं। इस दिशा में अभी भारतीय निर्यातकों को काफी कुछ करना शेष है। औद्योगिक उत्पादनों के डिजाइन में वे अभी काफी पीछे है। उपरोक्त संस्था की सेवाओं के उपयोग के साथ ही अपने स्तर पर भी उपयुक्त डिजाइनों के विकास के प्रयास करने चाहिए।

(1) किस्म

(Quality) :–

किस्म का अर्थ उत्पाद की अन्तर्निहित विशेषताओं से है। इसमें उपभोक्ता रूचियों व तकनीकी पहलुओं का समावेश किया जाता है। इसमें उत्पाद का कड़ापन, मोटापन, लम्बाई व चौड़ाई आदि को भी शामिल किया जाता है। किस्म का पता वस्तु को देखने से लग सकता है, व कई बार उपयोग के बाद पता लगता है।

किस्म निर्धारण :-

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के लिए उत्पाद की किस्म निर्धारण करते समय बाजार अनुसंधान के द्वारा विभिन्न लक्ष्य बाजारों के ग्राहकों की कीमत संवेदनशीलता के स्तरों का पता लगाना चाहिए। सामानतया विकसित देशों के ग्राहक किस्म के प्रति अधिक व अविकसित देशों के कम संवेदनशील होते हैं। किस्म संवेदनशीलता के अनुसार विभिन्न किस्मों का निर्धारण किया जाना चाहिए, जिससे उत्पाद बाजार के सभी ग्राहक वर्गो की इच्छाओं की पूर्ति कर सके। किस्म निर्धारण के पश्चात उसके क्रियान्वयन हेतु प्रभावी किस्म नियन्त्रण व्यवस्था स्थापित करना आवश्यक है जिससे निर्धारित किस्म सम्बन्धी प्रतिमानों को व्यावहारिक स्तर पर क्रियान्वित किया जा सके।

भारतीय निर्यातकों की स्थिति :-

किस्म के द ष्टिकोण से भारतीय निर्यातकों की छवि विश्व स्तर पर बहुत ही शोचनीय है। भारतीय उत्पादक आदेश के समय नमूना कुछ दिखाते हैं, व शिपमेन्ट के समय माल दूसरा भेजने के लिए प्रसिद्ध हैं। रेडीमेड कपड़ों के आयातक देशों के लिए 1982 की घटना को भूल पाना कठिन है। इसके अन्तर्गत भारतीय निर्यातकों द्वारा भेजे गए कपड़ों के जहाज का अमेरिकी बन्दरगाह पहुँचने पर वहाँ के आयातकों ने निरीक्षण किया व खराब क्वालिटी के कारण माल लेने से इन्कार कर दिया। उच्च स्तर पर प्रयास किये जाने पर यह मामला सुलझ सका। जापान, दक्षिण कोरिया, अमेरिका, आदि देशों के उत्पादकों की छवि श्रेष्ठ किस्म के कारण ही है।

अनिवार्य किस्म नियन्त्रण :-

भारतीय निर्यातक अपने स्तर पर किस्म नियन्त्रण की व्यवस्थाओं की अनुपालन करने में असफल हैं। इस आत्म-नियन्त्रण के अभाव के कारण ही अन्ततः केन्द्रीय सरकार को हस्तक्षेप करना पड़ता है। 1983 में केन्द्र सरकार ने अनेक वस्तुएं जिसमें

इलेक्ट्रॉनिक्स एवं इन्जीनियरिंग की वस्तुएँ शामिल हैं, उनके लिए अनिवार्य किस्म नियन्त्रण की व्यवस्था लागू कर दी है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत शिपमेन्ट से पूर्व सरकार द्वारा उन वस्तुओं की जांच की जायेगी, जिससे यह आश्वस्त हुआ जा सके कि वस्तु वांछित प्रतिमानों के अनुरूप हैं।

भारतीय मानक संस्थान :-

भारतीय निर्यातक इस सम्बन्ध में इस संस्था की सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं। इस संस्था ने विभिन्न वस्तुओं के किस्म सम्बन्धी प्रतिमान निर्धारित कर रखे हैं। जो निर्यातक संस्था अपनी वस्तुओं के सम्बन्ध में निर्धारित किस्म प्रतिमानों को पूरा करती हैं, उसे इस संस्था को आवेदन देना चाहिए। भारतीय मानक संस्थान सन्तुष्ट होने पर उस वस्तु के लिए ISI मार्का प्रदान कर देता है। यूरोपीय साझा बाजार के देशों में आई. एस. ओ. 9001 एवं आई.एस. ओ. 9002 प्राप्त करके निर्यातों को प्रभावी रूप से बढ़ाया जा सकता हैं। यह मार्का निर्यात बाजारों के ग्राहकों को किस्म सम्बन्धी विश्वसनीयता प्रदान करने में प्रभावशाली भूमिका का निर्वाह कर सकता है। भारतीय निर्यातकों को यह बात अच्छी प्रकार से समझ लेनी चाहिए कि उनके दीर्घकालीन वाणिज्यिक हित इसी में है कि अपने उत्पादों की किस्म के प्रति अत्यन्त जागरूक हों।

(3) वस्तु का रंग

(Colour of Product):—

मनोवैज्ञानिक सन्तुष्टि प्रदान करने में रंगों का मानवीय जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न देशों में विभिन्न रंगों के प्रति आकर्षण होता हैं। रंग विभिन्न बातों के परिचायक भी होते हैं। भारतीय ग्राहक आसमानी, कॉफी, कोका कोला, गुलाबी, पीले, हरे, बैंगनी आदि तीव्र रंगों को अधिक पसन्द करते हैं। काले रंग को आम भारतीय पसन्द नहीं करते हैं। रंगों की पसन्द के बारे में जो विविधता हमारे देश में विद्यमान है, वह विश्व में कहीं भी नहीं है।

अमेरिकी व यूरोपीय देशों में ग्राहक चटकीले व तड़क-भड़क वाले रंगो की अपेक्षा हल्के व सादगी वाले रंगो को अधिक पसन्द करते हैं। उन्हें लाल, हरा आदि रंग पसन्द नहीं है। यूरोपीय ग्राहक हल्का गुलाबी, हल्का मूँगिया आदि रंग पसन्द करते हैं। इसके विपरीत चीनी लाल रंग को सर्वाधिक पसन्द करते हैं। सफेद रंग को चीनी लोग पसन्द नहीं करते। इससे यह स्पष्ट है कि देश में सफेद रंग घ णास्पद है, वही रंग दूसरे देश के लिए प्रिय व सर्वाधिक ग्रहणशीलता रखता है।

भारतीय उत्पादकों व निर्माताओं को उत्पाद नियोजन करते समय उत्पाद के रंग का चयन एवं निर्धारण करते समय विदेशी ग्राहकों की पसन्दगियों को बहुत ध्यान में रखना चाहिए। उत्पादों के रंग पक्के अर्थात नहीं वाले होने चाहिए। रंग आकर्षक, ग्राहक पसन्दगियों, भौगोलिक अनुकूलता व सामाजिक, सांस्क ति संगतता लिए हुए होना चाहिए, तभी विश्व बाजारों में सफलता मिल सकती है।

(4) उत्पाद का आकार

(Size of Product):–

विश्व बाजारों के लिए उत्पाद नियोजन करते समय उत्पाद के आकार पर भी ध्यान देना आवश्यक है। उत्पाद के आकार से आशय उत्पाद की आक ति व उसकी मात्रा से है। वस्तु का आकार छोटा (economy size), मध्यम (Medium), व बड़ी या फुल साइज (Giant or full size),हो सकता है। विभिन्न ग्राहकों की जिस प्रकार की आवश्यकता हो, उसी के आधार पर उत्पाद के आकार का निर्णय करना चाहिए।

(5) ब्राण्ड नाम

(Brand Name):–

ब्राण्ड नाम काफी व्यापक सन्दर्भ में प्रयोग किया जाने वाला शब्द है। इसके अन्तर्गत किसी भी अक्षर, प्रतीक, शब्द व डिजाइन को शामिल किया जाना है। जिससे निर्यातक का उत्पाद विदेशी ग्राहक पहचान बन सके व उस उत्पाद को प्रतिस्पर्धियों के उत्पादों से प थक किया जा सके।

अमेरिकन मार्केटिंग एसोसिएशन के अनुसार - "ब्राण्ड एक नाम, शब्द, प्रतीक, डिजाइन या उसका संयोजन है जिसका उद्देश्य एक विक्रेता या विक्रेताओं के समूह की वस्तुओं या सेवाओं को पहचानना और उनको प्रतियोगियों की वस्तुओं या सेवाओं से भिन्न बताना है।"

उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि ब्राण्ड काफी व्यापक शब्द है, इसमें उत्पाद की पहचान कराने वाले उसके नाम व किसी भी अक्षर, प्रतीक या शब्द को शामिल किया जा सकता है, जो उत्पाद के बारे में जानकारी दे। इसी के द्वारा उत्पाद को पहचाना जाता है। आज ग्राहकों में ब्राण्ड जागरूकता बढ़ती जा रही है। प्रत्येक उत्पादक अपने दीर्घकालीन विपणन हितों की पूर्ति के लिए ब्राण्ड निष्ठा को उत्पन्न करना आवश्यक मानता है। आज ग्राहकों में ब्राण्ड निष्ठा की जाग ति काफी होती जा रही है, शनैः शनैः उत्पाद ही ब्राण्ड के नाम से जाना जाने लगता है। भारतीय सन्दर्भ में जैसे सर्फ का उदाहरण लें, यह कपड़े धोने का पाउडर है, पर ग्राहक दुकान पर जाते ही सर्फ (केवल ब्राण्ड) माँगता है, और वह उसे दे देता है। आश्चर्यजनक बात तो यह है, कि अन्य कपड़े धोने के पाउडर के लिए भी वह सर्फ के नाम का उपयोग करता हैं।

ब्राण्ड का महत्व
(Brand Importance):–

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में ब्राण्ड का चयन अपना विशेष महत्व रखता हैं। प्रभावी व आक्रामक विज्ञापन व्यूह रचना के अन्तर्गत यदि एक बार अच्छे ब्राण्ड को प्रतिष्ठित (Positiong) कर दिया गया, तो निर्यातक दीर्घकाल तक इससे उत्पन्न ब्राण्ड निष्ठा का दोहन कर सकता है। ब्राण्ड निष्ठा उत्पन्न होने पर निर्यातक अपने विक्रय प्रयासों को इस प्रकार नियोजित कर सकता है जिससे उसे कीमत प्रतियोगिता में न उलझना पड़े। कीमत प्रतियोगिता लाभों में कमी करती है। अच्छे ब्राण्ड वाला उत्पाद ग्राहकों को एक सन्तोष प्रदान करता है। इससे वह उस उत्पाद को प्रयोग करने में गर्व अनुभव करता है। कीमतों की परवाह नहीं करता। ऐसी स्थिति लाना ही गैर कीमत प्रतियोगिता का उद्देश्य है इसकी पूर्ति अच्छे ब्राण्ड से ही की जा सकती है।

इस सम्बन्ध में एक रोचक सर्वेक्षण अमेरिका में किया गया है। वहाँ पचास व्यक्तियों के समूहों को बीयर पीने के लिए बुलाया गया। पहले उन्हें एक ही बीयर अलग-अलग खाली बोतलों में डाल कर दी गयी व उसके बाद वही बीयर अलग-अलग ब्राण्ड वाली बोतलों में दी गयी। बाद में उनसे पूछा गया कि कौन-सी बीयर अच्छी थी ? प्रत्येक व्यक्ति ने अपनी पसन्द की ब्राण्ड वाली बोतल, जो उसने पी थी, उसे सर्वोत्तम बताया। पहली वाली बीयर को बकवास बताया। इससे यह सिद्ध होता है कि उत्पाद की किस्म के सम्बन्ध में ग्राहक को विशेष परख नहीं होती, वरन् विज्ञापन के द्वारा वह जो छवि ग्रहण करता है, वैसा ही उत्पाद के बारे में सोचता व व्यवहार करता है। अमेरिका के जेरोक्स कारपोरेशन द्वारा निर्मित फोटोस्टेट मशीनें को भी 'जेरोक्स मशीन' के नाम से विश्व में जाना जाता है। यही ब्राण्ड का महत्व है।

अच्छे ब्राण्ड की विशेषताएँ
(Essentials of Good Brand) :–

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन हेतु एक अच्छे ब्राण्ड में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए -

(i) ब्राण्ड नाम संक्षिप्त व सरल हो।

(ii) उसे आसानी से याद रखा जा सके।

(iii) उसका उच्चारण ग्राहक सुगमता से कर सके।

(iv) वह सौन्दर्य अनुभूति या प्रसन्नता के भाव जाग त करता हो।

(v) निर्यात बाजारों के किसी भाग विशेष की भावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता हो।

(vi) उत्पाद के किसी महत्वपूर्ण गुण के बारे में संकेत करता हो।

(vii) ब्राण्ड नाम भौगोलिक, धार्मिक, सामाजिक व यौन द ष्टि से प्रतिकूल भावनाएँ उत्पन्न नहीं करता हो।

(viii) ब्राण्ड नाम ऐसा हो जिससे विदशों में उसे कानूनी संरक्षण प्राप्त करने में असुविधा नहीं हो।

(ix) ब्राण्ड नाम चित्राकर्षक हो, जो सहज ही मन को मोह ले।

भारतीय निर्यातक एवं ब्राण्ड नाम
(Indian Exporters and Brand Name):–

विश्व बाजारों में प्रचलित विभिन्न देशों के निर्यातकों के उत्पादों के सन्दर्भ में भारतीय निर्यातकों की स्थिति अत्यन्त कमजोर लगती है। नेशनल पेनासोनिक टी.डी.के, सोनी, टोयाटा, शेफर, इम्पाला, शेवरलेट, जिलेट, डनलप, होण्डा, गुडइयर, फिलिप्स,

कोकाकोला, जेरोक्स, वेस्पा आदि नामों की श्रंखला है, जो जाने पहचाने एवं हमारे हम-दम लगतें है।

आखिर इन ब्राण्ड नामों ने अपनी सम द्धि के शिखर तक पहुंचने के लिए लम्बी यात्रा की है। विदेशों में सुपर बाजार काफी लोकप्रिय है। कमजोर आर्थिक स्थिति के परिवार के क्रय का यही माध्यम होता है। ये सुपर बाजार स्वयं सेवा के आधार पर संचलित होते हैं। इस कारण इनकी परिचालन लागत काफी कम आती है व विक्रय मूल्य कम होते हैं। इन सुपर बाजारों में वस्तुओं का विक्रय लोकप्रिय ब्राण्ड के आधार पर ही होता है इस प्रकार भारतीय निर्यातकों को इस सम्बन्ध में उचित ब्राण्ड नीतियों व व्यूह-रचनाओं का प्रयोग करना चाहिए।

(6) ट्रेड़मार्क
(Trade Mark)

सामान्यतया ब्राण्ड वा ट्रेड़मार्क में अन्तर नहीं किया जाता है। एक ब्राण्ड उस समय ट्रेड़मार्क में परिवर्तित हो जाता है, जबकि अधिनियम की व्यवस्थाओं के अन्तर्गत उसका पंजीयन करा लिया जाता है। ऐसा पंजीयन कराने का उद्देश्य निर्यात बाजारों में विद्यमान व भावी प्रतिस्पर्द्धियों को उस ब्राण्ड नाम से अपनी वस्तुएँ प्रचलित करने से वैधानिक रूप से रोकना है। इस प्रकार ब्राण्ड के किसी संकेत, चिन्ह, भाग, प्रतीक या डिजाइन का या सम्पूर्ण ब्राण्ड का जब अधिनियम की व्यवस्था के अन्तर्गत पंजीयन करा लिया जाता है तो पंजीक त ब्राण्ड ही ट्रेड़मार्क कहलता है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में प्रतियोगिता काफी कड़ी होती है, अतः निर्यातक का व्यापारिक हित इसी में है कि वह अपने ब्राण्ड का पंजीयन करा ले। इसके अभाव में वह अन्य निर्यातकों को उस ब्राण्ड नाम से अपने उत्पाद प्रचलित करने से नहीं रोक सकता।

(7) पैकेजिंग
(Packaging) :–

विश्व बाजारों में उत्पादों के विपणन में पैकेजिंग की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। **आर.एस. डावर** के अनुसार "पैकेजिंग वह कला और विज्ञान है जो तक उत्पाद को किसी कन्टेनर में बन्द करने या कन्टेनर को उत्पाद के पैकिंग के उपयुक्त बनाने हेतु, साम्रगियों विधियों एवं उपकरणों के विकास तथा उपयोग से सम्बन्धित हैं। ताकि वितरण की विभिन्न अवस्थाओं के दौरान उत्पाद पूर्णतः सुरक्षित रहे।"[1]

उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है, कि पैकेज उत्पाद का कन्टेनर या रेपर है, जिसमें उत्पाद को रखा जाता है, जिसका उद्देश्य उत्पाद को सही रूप में ग्राहकों तक पहुँचाना है। इस प्रकार पैकेज उत्पाद को सुरक्षा व संरक्षण प्रदान करता है। परिवहन में सुविधा प्रदान करता है। ग्राहक उत्पाद को शीघ्र पहचान जाते हैं। उत्पादक अपने उत्पाद का प्रतियोगिता से विभेदीकरण करने में भी इसका उपयोग कर सकते हैं। इसके विक्रय में भी बहुत सहायता मिलती है। विभिन्न ग्राहकों की आवश्यकतानुसार अलग-अलग साइजों में उत्पाद को पैक किया जा सकता है।

पैकेजिंग की नयी भूमिका
(New Role of Packaging)

लम्बे समय तक पैकेजिंग का उद्देश्य उत्पादक द्वारा अपनी वस्तुओं को ग्राहक तक सुरक्षित पहुँचाने तक सीमित रहा है। पैकेजिंग की नयी भूमिका के अन्तर्गत अब यह गौण कार्य हो गया है। इस नयी भूमिका के अन्तर्गत पैकेजिंग का कार्य विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति करना है -

(i) इसका उपयोग प्रभावशाली संवर्द्धन उपकरण के रूप में करना। अच्छे पैकेज वाले उत्पाद ग्राहकों का ध्यान सहज में आकर्षित करते हैं। विक्रेता उन्हैं अपनी दुकानों पर उपयुक्त स्थानों पर रखने के लिए उत्सुक रहते हैं।

(ii) अच्छे पैकेज के द्वारा एक निर्यातक दूसरे उत्पादकों के वस्तुओं से पर्याप्त विभिन्नीकरण कर सकता है।

(iii) अद्वितीय व बेमिसाल पैकेज वाले उत्पादों को कई बार ग्राहक अच्छे पैकेज के लोभ में ही लेना पसन्द करता हैं। सौन्दर्य

---

1. "Packaging may be defined as the art and/or science concerned with the development and use of materials, methods and equipments for applying a product to a container or vice versa designed to protect throughout the various stages of distribution."

– **R. S. Daver** : *Modern Marketing Management*, p. 280.

प्रसाधन की वस्तुओं व शराब में इसका प्रभावी उपयोग हो सकता है।

(iv) ग हणियाँ ऐसी वस्तुएँ पसन्द करती है, जिनका पैकेज वस्तु का उपयोग करने के बाद उनके अन्य काम में आ सके।

(v) अच्छे पैकिंग से उत्पाद की विक्रयशीलता में काफी व द्धि की जा सकती है।,

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन एवं पैकेजिंग :-
(International Marketing and Packaging) :–

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में पैकेजिंग की आधुनिक भूमिका को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। अच्छा, आकर्षक व लुभावना दिखने वाला पैंकिग अनायास ग्राहकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। विदेशी ग्राहक अच्छे व आकर्षक पैकिंग वाली वस्तुएँ ही पसन्द करते हैं। पैकेजिंग का निर्णय करते समय विदेशी बाजारों की जलवायु, भौगोलिक सरंचना, परिवहन, माध्यम, इस सम्बन्ध में सरकार द्वारा घोषित नियमों, सभी को ध्यान में रखना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अधिकांश माल समुद्री मार्ग से ही आयातक देशों को भेजा जाता है। परिवहन की दोहरी क्रियाओं से उत्पाद को गुजरना होता है। पहले निर्यातक देश के आन्तरिक साधनों से बन्दरगाह तक फिर आयातक देश के बन्दरगाह से क्रेता के स्थान तक। इस कारण पैकेज का पर्याप्त मजबूत एवं सी.प्रूफ होना आवश्यक है।

भारतीय निर्यातक एवं पैकेजिंग :-
(Indian Exporters annd Packaging)

जहाँ तक भारतीय उत्पादकों के पैकेजिंग का प्रश्न है, उन्हें तो अभी अपनी बिगड़ी हुई छवि को सुधारना व उसके बाद उसे उन्नत करना है। हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड, जो सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनी है, उसे एक ब्रिटेन की फर्म ने Reinforced bars को भेजने का आदेश दिया। ब्रिटेन की फर्म ने अपना दीया गया आदेश कम्पनी द्वारा केवल दूषित पैकेजिंग के कारण रद्द कर दिया।

यह अकेला उदाहरण ही भारतीय उत्पादकों की आँखें खोल देने लिए पर्याप्त होना चाहिए। हमारे देश में पैकेजिंग के स्तर को सुधारने के लिए Indian Packaging Institute की स्थापना की गई है। भारतीय उत्पादकों को चाहिए कि वे विदेशी बाजार में अपने उत्पादों का विक्रय करते समय इस संस्थान द्वारा उपलब्ध कराये गए पैकेजिंग के स्तरों का उपयोग करें। यह संस्था एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन करती है, जिसका नाम 'Packaging India' हैं, इसका उपयोग भी किया जाना चाहिए। ऐसे पैकेज का विकास किया जाना चाहिए जो प्रभावी रूप से Sea Proof हों। सभी बन्दरगाहों पर जहाँ से माल विदेशी बाजारों में भेजा जाता है, वहाँ पर इस बात के परीक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए, कि वस्तुओं का पैकेजिंग निर्धारित स्तरों के अनुरूप है।

भारतीय बन्दरगाहों पर कन्टेनर हेंडलिंग की व्यवस्था लागू होने से इसमें सुधार आयेगा। भारत सरकार को चाहिए कि निर्यात से पूर्व अनिवार्य किस्म नियन्त्रण के समान अनिवार्य पैकेजिंग नियन्त्रण व्यवस्था भी सीमित स्तर पर ही लागू करनी चाहिए।

(8) उत्पाद जीवन-चक्र
(Product Life Cycle) :–

आशय सर्वप्रथम प्रसिद्ध अमेरिकी विद्वान **आर्क पेटन** ने इस बात का अध्ययन करने का प्रयास किया कि क्या मानव जीवन व उत्पाद के जीवन में कहीं साम्यता है। मानव जन्म लेता है, फिर उसका विकास होता है, एक अवस्था पर विकास स्थिर हो जाता है व अन्त में क्रमिक ह्रास के बाद व्यक्ति का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। ठीक इसी प्रकार एक उत्पाद को अनुसन्धान व विकास द्वारा विकसित किया जाता है। बाजार परीक्षण करके उसकी कमियां दूरी की जाती है। इस प्रकार समुन्नत उत्पाद को बाजार में प्रचलित किया जाता है। धीरे-धीरे उसकी बिक्री बढ़ती है, एक अवस्था पर व द्धि समाप्त हो जाती है व बिक्री स्थिर हो जाती है। अन्त में बिक्री गिरनी प्रारम्भ हो जाती है, हानि की अवस्था आने पर संस्था उस उत्पाद को उत्पाद पंक्ति से बाहर निकाल देती है। इस प्रकार उत्पाद का जन्म व म त्यु हो जाती है।

उत्पाद जीवन चक्र की विभिन्न अवस्थाएँ :-
(Various Stages of Product Life Cycle) :–

उत्पाद जीवन चक्र का विचार यह स्पष्ट करता है कि उत्पाद को बाजार में प्रस्तुत करने से लेकर विकास व परिपक्वता से लेकर पतन तक उत्पाद अपनी यात्रा करता है। इसके आधार पर उत्पाद जीवन चक्र को अंग्रकित अवस्थाओं में विभाजित किया जा

सकता है - (i) परिचय अवस्था, (ii) विकास अवस्था, (iii) परिपक्वता अवस्था, (iv) पतन अवस्था

विभिन्न अवस्थाओं की विशेषताएँ :-

(i) बाजार परिचय अवस्था :-
(Market Introductory Stage) :–

इस अवस्था में फर्म निर्यात लक्ष्य बाजारों के ग्राहकों के समक्ष अपनी वस्तु या उत्पाद को प्रस्तुत करती है। इससे पूर्व इस उत्पाद से उस बाजार के ग्राहक अपरिचित होते हैं। इस अवस्था में उत्पाद की बिक्री कम होती है। लाभ या तो शून्य होते हैं, यदि होते भी हैं तो सीमान्त लाभ। कुछ परिस्थितियों में हानि भी हो सकती है।

(ii) विकास अवस्था :-
(Growth Stage) :–

इस अवस्था में लक्ष्य बाजारों के ग्राहक उत्पाद से परिचित हो चुके होते हैं। उत्पाद की बिक्री तेजी से बढ़ती है, लाभ भी तेजी से बढ़ते हैं। प्रतियोगी फर्मो का भी बाजार में प्रवेश हो जाता है। इसके फलस्वरूप एक अवस्था कें पश्चात् फर्मो का भाग बाजार भी कम हो जाता है।

(iii) परिपक्वता अवस्था :-
(Maturity Stage) :–

इस अवस्था में शुरू में बिक्री की व द्धि दर बहुत धीमी हो जाती है। एक बिन्दु पर आकर बिक्री स्थिर हो जाती है। इस समय प्रतियोगिता अपनी चरम सीमा पर होती है। मूल्यों में कमी करने के फलस्वरूप लाभ की मात्रा भी कम हो जाती है।

(iv) पतन अवस्था :-
(Decline Stage):–

प्रतियोगी फर्मो के अनुसन्धान व विकास तकनीकी परिवर्तनों का कारण उन्नत उत्पाद बाजार में प्रचलित होते रहते हैं। स्वभाव मानव मन भी परिवर्तन प्रिय होता है। परिपक्वता अवस्था के बाद उत्पाद की बिक्री में कमी होना प्रारम्भ हो जाता है। बिक्री की तुलना में लाभ तेजी से गिरतें हैं। एक सीमा के बाद उत्पाद लाभ देना बन्द कर हानि देना प्रारम्भ कर देता है। इस अवस्था पर नये रक्त के इन्जेक्शन विधि का प्रयोग कर पतन को स्थगित करने का प्रयास फर्म करती है। जिस प्रकार मौत निश्चित है, यद्यपि अन्त समय पर उन्नत चिकित्सा साधनों से उसे अल्पकाल के लिये स्थगित किया जा सकता है, ऐसी ही स्थिति उत्पाद की होती है। एक अलाभकारी स्थिति को कोई भी निर्यातक फर्म लम्बे समय तक वहन नहीं कर सकती। इसलिए इस अवस्था में उचित समय पर निर्णय लेकर इस उत्पाद को उत्पाद पंक्ति से हटा दिया जाता है।

विभिन्न अवस्थाएँ एवं उपयुक्त विपणन व्यूह रचना
(Appropriate Marketing Strategy at Various Stages)

उत्पाद जीवन चक्र की विभिन्न अवस्थाओं को जान लेना ही पर्याप्त नहीं है, वरन् इस सिद्धान्त का व्यावहारिक उपयोग यह है कि निर्यातक फर्म विभिन्न अवस्थाओं के लिए एक उपयुक्त व्यूह रचना का प्रयोग करे जो इस अवस्था की आवश्यकता को पूरी करती हो। विभिन्न अवस्थाओं में निम्नलिखित व्यूहरचनाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(i) परिचय अवस्था

(Introductory Stage) :–

इस अवस्था की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता अपने उत्पाद से निर्यात बाजार के ग्राहकों का परिचय कराने की होती है। इस अवस्था में निर्यातक फर्म को आक्रामक विज्ञापन नीति अपनानी चाहिए। इसी के अनुरूप अमेरिकी पेप्सी कोला ने वर्ष 1992-93 में अपने उत्पादों के आक्रामक विज्ञापन के लिए 33 करोड़ रुपये व्यय किये। पूरे भारत को उसने हिला कर रख दिया। सभी माध्यमों का उसने उपयोग किया। लक्ष्य निर्यात बाजारों में उपलब्ध विज्ञापन के माध्यमों का अनुकूलतम मिश्रण करके उनका प्रयोग करना चाहिए। विज्ञापनों को बार-बार प्रदर्शित किया जाए। विज्ञापनों का ध्येय वाक्य "मेरे उत्पाद को आजमाइय" (Try

my product) पर होना चाहिए, निर्यातक फर्म को इस अवस्था को छोटा से छोटा करने का प्रयास करना चाहिए। इसकी वजह यह है, कि इस अवस्था में लाभ शून्य या सीमित होते हैं। इस अवस्था में "ऊँचे मूल्य वाली" नीति रखनी चाहिए जिससे संवर्द्धनात्मक लागत भी कुछ सीमा तक वसूल की जा सके।

(ii) **विकास अवस्था**

(Growth Stage) :–

परिचय अवस्था में आक्रामक विज्ञापन के फलस्वरूप उत्पाद की प्राथमिक माँग बाजार में बन चुकी होती है। इसका विदोहन निर्यातक फर्म तभी कर सकती हैं, जब वितरण के माध्यमों का चयन कर उत्पाद को उन तक पहुँचा दिया जाए। अतः सर्वप्रथम ध्यान उत्पाद को विक्रय केन्द्रों तक पहुँचाने पर देना चाहिए। उत्पाद के मूल्यों में कुछ कमी करने का ग्राहकों के मनोविज्ञान पर अच्छा असर होता है। इस अवस्था में लाभ तेजी से बढ़ते हैं, बिक्री भी तेजी से बढ़ती है। विज्ञापन कार्यक्रमों का ध्येय वाक्य "मेरे उत्पाद को खरीदो" (Buy my product) पर होना चाहिए। उत्पाद जीवन चक्र की यही अवस्था निर्यातक फर्म के लिए स्वर्णिम होती है। इस कारण जितना सम्भव हो सके इस अवस्था को लम्बे से लम्बा चलाने का प्रयास करना चाहिए।

(iii) परिपक्वता अवस्था

(Maturity Stage) :–

इस अवस्था में उत्पाद के प्रवेश करने पर कड़ी प्रतियोगिता के कारण उत्पाद के मूल्य कम करने पड़ते हैं। बिक्री स्थिर सी हो जाती है इस अवस्था में बाजार विभक्तिकरण का प्रभावी रूप से प्रयोग करके विभिन्न बाजार खण्डों के लिए उपयुक्त विपणन नीतियाँ अपनानी चाहिए। उत्पादन के अन्य प्रयोगों को खोजा जाना चाहिए व उन्हें पूरा प्रचारित करना चाहिए जिससे बिक्री में होने वाली कमी को सीमित स्तर पर पूरा किया जा सके।

(iv) पतन अवस्था

(Decline Stage) :–

इस अवस्था में लाभ समाप्त हो जाते हैं। अलाभकारी स्थिति निर्यातक फर्म की आर्थिक सक्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले, उससे पूर्व ही उचित समय पर उस उत्पाद को उत्पाद पंक्ति से हटा देना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में उत्पाद जीवन चक्र का प्रबन्ध
(Management of Product Life Cycle in International Marketing)

देशी विपणन में उत्पाद जीवन चक्र का प्रबन्ध करना जितना सरल है, निर्यात विपणन में यह उतना ही चुनौतीपूर्ण है। देशी विपणन में उत्पाद सामानतया एक समय में एक ही अवस्था में होता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में एक ही उत्पाद विभिन्न देशों में विभिन्न अवस्थाओं में हो सकता है। उदाहरण के लिए लालटेन का बाजार। अनेक विकसित देशों में इसका बाजार पतन की अवस्था में पहुँच चुका है, पर अनेक विकासशील देशों मे इसके पर्याप्त बाजार अभी भी उपलब्ध हैं। टेलीविजन का बाजार अनेक विकसित देशों में परिपक्वता की अवस्था में पहुँच चुका है, पर भारत सहित अनेक देशों में यह विकास अवस्था में है। अतः अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में निर्यातक फर्म को अपने विभिन्न लक्ष्य निर्यात बाजारों के लिए प थक-प थक उत्पाद जीवन चक्र को समझना चाहिए। प्रत्येक देश में वह उत्पाद जिस अवस्था में हो, उसी के अनुसार उपयुक्त व्यूहरचना का उपयोग कर, निर्यातक फर्म सफलता प्राप्त कर सकती है।

विक्रय के बाद की सेवाएँ
(After Sale-Services)

घरेलू बाजार की तरह अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भी विक्रय के बाद की सेवाओं को उपभोक्ताओं के द्वारा वरीयता दी जाती है। चिकित्सा-विज्ञान के लिए भारी मशीनों तैयार करने वाले जापानी निर्माता अपने ग्राहकों को विक्रय के बाद की सेवाएँ गारन्टी के साथ देते हैं। यदि उनकी मशीनों में वारन्टी अवधि के दौरान कोई गड़बड़ी हो जाए तो सूचना मिलने के 48 घण्टे के अन्दर वे उसे ठीक करा देते हैं। इसके लिए दुनिया के प्रमुख केन्द्रों पर उनके तकनीकी अधिकारी नियुक्त किए गए हैं, जो अपने कर्त्तव्यों

का सफलता-पूर्वक पालन कर रहे हैं। इसी प्रकार अमरीका की कम्प्यूटर बनाने वाली कम्पनी COMPAQ तथा IBM भी वारन्टी अवधि के दौरान अपनें कम्प्यूटर में खराबी होने पर उस Web-Site के द्वारा ठीक करवाने की सुविधा 365 दिन तथा 24 घण्टे उपलब्ध कराती है।

यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में विक्रय की सेवाएँ देने का कार्य काफी जटिल एवं चुनौती पूर्ण है फिर भी विकसित देशों के निर्माता इस जिम्मेदारी को बड़ी अच्छी तरह पूरा कर रहे हैं। भारतीय निर्माताओं को इस सम्बन्ध में बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है। प्रतियोगिता के इस दौर में विक्रय के बाद की सेवाएं काफी महत्वपूर्ण हो गई हैं। विदेशी बाजारों में ग्राहकों की अधिकतम सन्तुष्टि करने के लिए इस प्रकार की सेवाओं की उचित व्यवस्था करने का मूल दायित्व निर्यात प्रबन्धकों का है।

परिवहन, सूचना एंव संचार तकनीकों के विकास के साथ-साथ विक्रय के बाद की सेवाओं के विस्तार की अत्यधिक संभावनाएँ हैं। भारतीय निर्माताओं को इस सम्बन्ध में अपने आप को तैयार करने की बहुत ज्यादा आवश्यकता है, अन्यथा हम अपने निर्यात लक्ष्यों को प्राप्त करने में समर्थ नहीं हो सकेगे।

अध्याय-6

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में - मूल्य निर्धारण एवं भुगतान की विधियाँ

(International Marketing – Price Determination and Methods of Payments)

मूल्य निर्धारण
(Pricing)

उत्पादक या निर्यातक के लिए विदेशी बाजारों मे बेचे जाने वाले उत्पादों का सही मूल्य निर्धारण करना महत्वपूर्ण कार्य है। सही मूल्य निर्धारण करके जहां वह विदेशी बाजारों में स्थान बना सकता है वही गलत मूल्य निर्धारण से वह बाजारों से बाहर हो सकता है। भिन्न-भिन्न विदेशी बाजारों क लिए एक-सी मूल्य नीति से काम नहीं चल सकता उसे श्रेत्र विशेष के आधार पर भी मूल्य नीतियाँ तय करनी होगी । पहले हम कीमत व उसके निर्धारक तत्वों पर विचार कर लें। कीमत का सामान्य सा आशय वह मूल्य है, जिस पर उत्पादक, निर्माता या व्यापारी अपने माल का विदेशी बाजारों में विक्रय करता है। मूल्य निर्धारण को भली भाँति समझने के लिए हम इसका वर्गीकरण निम्नलिखित ृशीर्षकों में कर सकते हैं-

(1) कीमत को निर्धारित करने वाले तत्व :-
(Elements of Price Determination)

कीमत को निर्धारित तीन प्रकार के तत्व करते हैं- वस्तु की लागत, माँग का स्वरुप व प्रतियोगिता । ये तीन घटक ऐसे हैं, जो किसी वस्तु की कीमत संरचना पर अपना प्रभाव डालते हैं। यधपि अन्य घटक भी ऐसे हैं, जो कीमत निर्धारण में अपना व्यापक प्रभाव डालते हैं। प्रत्येक निर्माता वस्तु की कीमत निर्धारित करते समय सर्वप्रथम ध्यान उसकी लागत पर देता है। लागत में उत्पादक कच्चे माल की लागत, श्रम की लागत स्थायी व परिवर्तनशील व्ययों व उपरिव्ययों को जोड़ता है। इनका योग करके वस्तु की कुल लागत को मालूम करता है।

माँग का स्वरूप किस प्रकार का हैं? यदि माँग पूर्ति से अधिक है, तो उसे कीमत निर्धारण में छूट होती है। विपरीत स्थिति में उसकी यह स्वतन्त्रता समाप्त हो जाती हैं। माँग की लोच किस प्रकार की है, इस पर भी वस्तु की कीमतें निर्भर करेंगी । यदि वस्तु की माँग लोचशील है, तो उत्पादक कीमतों को कम करके अपने विक्रय को बढ़ा सकते हैं। यदि वस्तु की मांग अलोचशील है, तो उत्पादक वस्तु की ऊंची कीमते रखकर भी विक्रय कर सकते है। इसके साथ ही निर्यात विपणन में प्रतियोगिता का एक बड़ा प्रभाव रखने वाला तत्व है । प्रतियागिता का सामना करने के लिए उसे अपनी कीमतों को कम भी रखना पड़ सकता है। इस प्रकार वस्तु की लागत, वस्तु की माँग का स्वरुप,प्रतियोगिता के आधार पर ही वस्तु का मूल्य तय करता है। ऐसा करते समय वह अपने उचित लाभ को भी ध्यान में रखता है।

(2) देशी विपणन व निर्यात विपणन के मूल्य निर्धारण में अन्तर

(Difference in Price Determination of Domestic and Export Marketing)

निर्यात विपणन में मूल्यों का निर्धारण एक अत्यन्त ही कठिन कार्य हैं। ऐसी कठिनाईयाँ देशी विपणन करते समय उत्पादक के सामने नहीं आतीं। देशी बाजारों में वस्तुओं की कीमतों का निर्धारण करते समय उत्पादक उत्पाद की विशेषताओं, वस्तु की माँग का स्वभाव व प्रति,उत्पादन लागत, उपभोक्ताओं का क्रय व्यवहार व क्रेताओं की विशेषताओं, बाजारों व विद्यमान प्रतियोगिता, सरकार की मूल्य सम्बन्धी नीतियों, व्यापारिक परम्पराओं व अन्य ऐसे घटक जो कीमत पर प्रभाव डाल सकते हैं, उन पर विचार करके वस्तुओं के मूल्य तय करता हैं।

देशी विपणन व निर्यात विपणन के मूल्य निर्धारण में अन्तर

अन्तर का आधार		देशी विपणन	निर्यात विपणन
1.	सहजता (Easy)	जितनी तुलनात्मक सहजता एक उत्पादक को देशी विपणन के मूल्य निर्धारण करते समय मिलती हैं ऐसी सहजता निर्यात विपणन के लिए मूल्य निर्धारण में नहीं मिलती। विदेशी विपणन के निर्धारण के समय उसे ऐसे अनेक व्यय भी करने होते हैं, जिनका वह देशी विपणन में मूल्य निर्धारण करते समय विचार ही नहीं करता।	निर्यात बाजारों मे वस्तुएँ बेचने के लिए देशी विपणन लागत के अलावा उसे माल को निर्यात बाजारों में पहुंचाने के लिए जहाजी भाड़ा जिस देश को निर्यात करना हो , उस देश की सरकार को आयात कर व अन्य अनेक प्रकार के व्यय करने पड़ते है। जिस देश को निर्यात किया जा रहा है, वहाँ उसे जमने के लिए भी व्यय करने पड़ते हैं। अतः निर्यात विपणन व देशी विपणन के मूल्य निर्धारण में पहला अन्तर तो व्ययों का हैं।
2.	प्रतियोगिता (Competition)	देशी बाजारों में प्रतियोगिता का स्तर वह नहीं होता जो निर्यात बाजारों में होता है। देशी बाजारों में निर्यातक को केवल अपने सह-उत्पादकों से प्रतियोगिता करनी पड़ती है।	निर्यात विपणन में यह स्थिति पूर्णतया परिवर्तित हो जाती है। निर्यात बाजारों में उसे एक ओर तो अपने देश के निर्यातकों से प्रतियोगिता करनी पड़ती हैं, दूसरी ओर जिस देश को माल का निर्यात उत्पादक करना चाहता है, वहाँ के उत्पादकों व विक्रेताओं से प्रतियोगिता करनी पड़ती है, व इसके साथ ही अन्य देशों के उत्पादकों व निर्यातकों से भी उसे प्रतियोगिता करनी पड़ती है, जो उन बाजारों में माल बेचना चाहतें है। इस प्रकार उसे त्रिस्तरीय कड़ी व भीषण प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है अतः प्रतियोगिता का तत्व देशी व निर्यात विपणन में कीमत निर्धारण को प्रभावित करने वाला दूसरा तत्व है।
3.	कीमत प्रतियोगिता (Price Competition)	घरेलू बाजार में कीमत प्रतियोगिता इतनी ज्यादा नहीं होती और यदि होती भी हैं तो वह केवल घरेलू निर्माताओं के बीच राष्ट्रीय स्तर पर होती है।	जबकि निर्यात बाजार में अत्यधिक कीमत प्रतियोगिता का मुकाबला करना होता है। कड़ी प्रतियोगिता की स्थिति में प्रत्येक

			निर्यातक व उत्पादक प्रतियोगी मूल्यों का निर्धारण करते हैं। विकसित देशों के निर्यातक तो स्थायी लागत को छोड़ कर निर्यात विपणन में केवल कच्चे माल की व परिवर्तनशील लागत वसूल करने पर ध्यान देते हैं। इससे कीमत प्रतियोगिता काफी कड़ी हो जाती है।
4.	बचतों के अन्तर (Difference in Savings)	घरेलू बाजार के लिए मूल्य निर्धारण करते समय अनेक प्रकार की बचतों का लाभ निर्माता को होता है।जैसे-समुंद्री भाड़ा बीमा, निर्यात कर इत्यादि। इसके अतिरिक्त निर्माताओं के सरकार के द्वारा कुछ विशेष रियायतें भी ताकि की आयातों पर प्रभावी रोक लगाई जा सके । इस प्रकार देशी बाजार में अनेक प्रकार की बचतों का लाभ निर्माता को स्वभाविक रुप से होता हैं।	जबकि निर्यातक को निर्यात बाजारों में वस्तुओं का निर्यात करने पर अनेक व्यय करने पड़ते हैं। निर्यातक को अतिरिक्त परिवहन, समुंद्री भाड़ा, बीमा, एवं निर्यात कर देने होते हैं।इस कारण से निर्यातों के माल लागत अपने आप बढ़ जाती है।

इस प्रकार देशी विपणन के लिए मूल्य निर्धारण जहाँ अपेक्षाकृत सरल कार्य हैं, वहीं पर निर्यात विपणन के लिए मूल्यों का निर्धारण उतना ही नाजुक व जटिल कार्य है।

अर्न्तराष्ट्रीय विपणन में कीमत तथा गैर कीमत तत्वों की भूमिका

(Role of Price and Non– Price Factors in International Marketing)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में मूल्य निर्धारण में अनेक प्रकार के कीमत तथा गैर - कीमत तत्व प्रभाव डालते हैं। इसका विश्व विपणन में काफी महत्व है। इन तत्वों के प्रभाव से माँग बढ़ भी सकती है ओर घट भी सकती है। इनका प्रभाव एक निर्यातक के लिए अनुकूल भी हो सकता है, तो दूसरे के लिए प्रतिकूल भी हो सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में इनके पड़ने वाले प्रभाव को निम्नलिखित रुप से वर्णित किया जा सकता हैः

(a) कीमत तत्व की भूमिका

अर्थशास्त्र का सामान्य सा सिद्धान्त है, कि कम मूल्य पर माँग ज्यादा व ऊँचे मूल्यों से माँग में गिरावट हो जाएगी । कीमतें अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अपना व्यापक महत्व नहीं रखती हैं, फिर भी उसकी सीमित उपयोगिता व कहीं-कहीं व्यापक उपयोगिता से नकारा नहीं जा सकता। कीमतों का अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है, कि जिस देश को वस्तुओं या माल का निर्यात किया जा रहा है, वह विकसित देश है, या विकासशील देश है।

यदि विकसित देश को वस्तुओं का निर्यात किया जा रहा है, तो सामान्यतया वहाँ विपणन में कीमतों की महत्वपूर्ण भूमिका नहीं होती। यह स्थिति एक विकासशील देश को निर्यात करने पर परिवर्तित हो जाती है। विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति आय कम होती है। उनकी क्रय शक्ति सीमित होती है, जिसे उन्हें अपनी सभी आवश्यकताओं के लिए व्यय करना होता है। विकासशील देशों के क्रेताओं में कीमत के प्रति संवेदनशीलता अधिक होती है, अतः वहाँ कम कीमत से विक्रय व द्धि का लाभ निर्यातक उठा सकते हैं।

उत्पादक या निर्यातक जिस वस्तु का बाजारों में निर्यात करना चाहते हैं, उस वस्तु की वहाँ कीमत-लोच (Price Elasticity) कैसी है? कीमत लोच का आशय यह है, कि कीमतों में कमी होते ही माँग का काफी बढ़ जाना व थोड़ी सी व द्धि होते ही माँग में महत्वपूर्ण कमी हो जाना । यदि वस्तु में कीमत लोच है, तब भी उत्पादक या निर्यातक निर्यात बाजारों में निर्यात किये जाने वाले उत्पादों की कीमतों में थोड़ी सी कमी करके भी भारी मुनाफा कमा सकते हैं। इसके विपरीत वस्तु में कीमत लोच नहीं होने पर कीमतों को हथियार के रुप में प्रयोग कर नहीं किया जा सकता । वस्तु में कीमत लोच शून्य होने पर भी उत्पादक या निर्यातक असीमित लाभ उठा सकते हैं। इस प्रकार कीमतें भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में सीमित, लेकिन महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं।

(b) गैर कीमत तत्वों का महत्वः-

विश्व विपणन में जहाँ कीमतें अपना स्थान रखती हैं, वहीं पर अनेक प्रकार के गैर कीमत तत्व भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। गैर - कीमत तत्वों से अभिप्राय ऐसे सभी घटकों के विश्व विपणन पर प्रभाव से है, जो कीमत के अलावा है। वास्तव में तो यही घटक विश्व विपणन मं महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इनका वर्गीकरण अग्रलिखित शीर्षकों में किया जा सकता है -

(1) विश्वास का तत्व :-

अर्न्तराष्ट्रीय विपणन में विश्वास का तत्व काफी प्रभावी है। भारतीय पेन निर्माता भले ही शैफर पेन की कीमत से कम कीमत में अच्छा पेन बनाकर विश्व बाजारों में विक्रय हेतु प्रस्तुत करें, फिर भी अमेरिकी शैफर ही ज्यादा बिकेगा। विकासशील देशों के द्वारा उत्पादित उत्पादों की किस्म आदि पर विदेशी ग्राहकों को सहज ही विश्वास नहीं होता । इस कारण भारतीय निर्यातकों को विदेशी उत्पादकों के समकक्ष उत्पाद होते हुए भी कम कीमतों पर बेचना पड़ता है।

(2) उत्पाद विभेदीकरण एवं ब्राण्ड निष्ठा :-

यदि उत्पादक ने अपने उत्पाद में प्रतियोगी के उत्पाद की अपेक्षा कुछ भिन्न चीज इजाद कर ली है, इसका लाभ उठाकर व्यापक विज्ञापन व प्रचार कार्यक्रम चला कर उसने अपने ब्राण्ड विशेष के प्रति उपभोक्ताओं की निष्ठा का स जन कर लिया है, तो ऐसी स्थिति में फिर उपभोक्ता उसी ब्राण्ड की माँग करते हैं, भले ही उसके लिए एक निश्चित सीमा तक कितनी ही कीमत देनी पड़े। कुछ भारतीय फर्मों जैसे H.M.V, kirloskar, Tata, Larson and Tubro, Century आदि निर्यातक ऐसे हैं, जिन्होंनें अपने उत्पादों का विभेदीकरण करके विश्व बाजारों में अपने उत्पादों की ब्राण्ड - निष्ठा को उत्पन्न किया है।

(3) कीमत एवं किस्म सम्बन्ध का पूर्वाग्रहः--

कीमत व किस्म के बारे में जो भी सम्बन्ध है, उसके बारे में उपभोक्ताओं में पूर्वाग्रह है। ऐसा लगता है कि ग्राहक ऊँचे मूल्य वाले उत्पाद की किस्म के बारे में सन्तुष्ट हो जाते है। कीमतें ही कम हैं, तो उत्पादक क्वालिटी कहाँ से देगा? ऐसा उनका सोचना होता है। विशेषकर विकसित देशों में ऊँचे मूल्यों के टैग उत्पादों पर लगाकर बेचना अपेक्षाकत आसान है।

(4) सुपुर्दगी की गति :--

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन काफी गतिशील होता है, विदेशी बाजारों में अवसरों को लाभ उठाने के लिए वहाँ के व्यापारी माल की शीघ्र सुपुर्दगी चाहते हैं। इसके लिए यदि उन्हें माल के मूल्य से 10 प्रतिशत या 15 प्रतिशत अधिक भी देना पड़े तो वे इसके लिए तैयार रहते हैं। यूनियन कारबाइड कम्पनी ने अपने उत्पादों पर विक्रय मूल्य से 15 प्रतिशत की राशि विदेशी ग्राहकों से इसी कारण अधिक प्राप्त की । इस प्रकार माल की शीघ्र सुपुर्दगी भी विश्व विपणन में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

(5) क्रय की आव ति : --

विदेशी ग्राहक किसी वस्तु विशेष का किस मात्र व कितने समयान्तर से क्रय करता है, इस पर भी निर्यात विपणन निर्भर करता हैं । यदि विदेशी ग्राहक बार - बार किसी वस्तु को खरीदता है, जैसा कि सामान्यतया उपभोक्ता वस्तुओं में होता है, तो उसकी कीमत के बारे में विशेष सोचता हैं। जबकि औद्योगिक वस्तु या मूल्यवान वस्तु जो वह कभी - कभी क्रय करता है, उसको क्रय करते समय वह उसकी कीमत की अपेक्षा उसकी मजबूती व अन्य गुणों पर अधिक ध्यान देता है। ऐसी वस्तु क्रय करते समय अच्छी वस्तु के लिए कुछ अधिक देने में भी उसे तकलीफ नहीं होती। इसी कारण उपहार की वस्तुओं व कलात्मक वस्तुओं में व्यक्ति कीमत देखता ही नहीं है। ऐसे मामलें में तो उसे केवल अपनी प्रिय वस्तु चाहिए इन स्थितियों में कीमतों का कुछ भी प्रभाव नहीं होता ।

(6) विक्रय के पूर्व एवं पश्चात की सेवाएं :-

मूल्यवान औद्योगिक उत्पाद व इन्जीनियरिंग उत्पादों का क्रय करते समय प्रयोक्ता विक्रय के पूर्व एवं पश्चात् की सेवाओं को काफी महत्व देता हैं। विक्रय के पूर्व की सेवाओं में प्रयोक्ता को उत्पाद की उपयुक्तता के बारे में राय देना व उसे प्रदर्शन

करके बताना आदि शामिल है। विक्रयोपरान्त सेवाओं में उत्पाद के प्रयोग को प्रयोक्ता को सिखाना, गारन्टी के समय में मुफ्त सेवाएँ प्रदान करना व ऐसी व्यवस्था करने से है, जिससे क्रेता को उसके लिए आवश्यक स्पेयर पार्ट्स समय पर उपलब्ध होते रहें। ऐसे उत्पादों को क्रय करने वाला क्रेता अच्छी सेवाएँ मिलने पर अधिक कीमत को नहीं देखता । यहाँ भी कीमतों से अधिक महत्वपूर्ण ये सेवाएँ हैं।

(7) साख की शर्तें :--

साख या उधार की शर्तें भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। विकसित देश अपने उत्पादन अतिरेक को विदेशी बाजारों में खपाने के लिए ऐसा माल जो काफी मूल्यवान व औद्योगिक या इन्जीनियरिंग माल की श्रेणी में आता है, उसे क्रय करने के लिए विदेशी ग्राहकों को उधार शर्तों पर माल का विक्रय करते हैं। इन मामलों में जिस उत्पादक की ब्याज की दरें, भुगतान की अवधि अधिक व सरल शर्तें होंगी, वह उत्पादक या निर्यातक आसानी से अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में अपने उत्पादों का विपणन कर सकेगा। इन वस्तुओं के क्रेता कुछ अधिक कीमत देने को भी तैयार हो जावेंगे यदि साख की शर्तें अनुकूल हों ।

(8) आक्रामक विपणन :--

आक्रामक विपणन को अपनाकर भी उत्पादक या निर्यातक कीमत प्रतियोगिता को दूर कर सकते हैं। इसके लिए व्यापक विज्ञापन व प्रचार माध्यमों का उपयोग कर वह अपने उत्पादों के लिए अनुकूल जनधारणा का निर्माण कर सकते हैं।

(9) दावों को शीघ्र स्वीकार करने व निपटाने की व्यवस्था :--

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में उपभोक्ता या प्रयोक्ता विदेशी उत्पादक या निर्यातक के निकट सम्पर्क में नहीं आता। ऐसी स्थिति में वह ऐसी व्यवस्था चाहता है, जिससे दावों को तुरन्त स्वीकार कर, उसकी जाँच पड़ताल की जावें। जाँच - पड़ताल होते ही सही पाये जाने पर उनको शीघ्र निपटाने की व्यवस्था हो। ऐसी व्यवस्था होने पर वह कुछ अधिक देने में भी संकोच नहीं करेगा। परिवहन कम्पनियों, कीमती उपभोक्ता माल के सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण है।

(10) उत्पादों का विशाल मात्रा में पूर्ति की क्षमता :--

विदेशी व्यापार व क्रेता एक उत्पाद की पूरी श्रंखला को बहुत बड़ी मात्रा में एक ही उत्पादक या निर्यातक को क्रय करना ठीक व अच्छा समझते हैं। विकासशील देशों में उत्पादक किसी उत्पाद की पूरी श्रंखला का निर्माण नहीं करते, न ही वे बड़ी मात्रा में इनकी पूर्ति कर सकते हैं। विदेशी क्रेता व व्यापारी ऐसी पूर्ति होने पर अधिक देने पर भी तैयार रहते हैं। जबकि भारतीय उत्पादक व अन्य विकासशील देशों के निर्यातक इसका लाभ नहीं उठा पाते ।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है, कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अनेक प्रकार के घटक ऐसे है, जो अपना प्रभाव डालते हैं। कीमत तत्व अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में सीमित रुप से अपना महत्व रखता है । जबकि गैर - कीमत तत्व अपना व्यापक महत्व विश्व विपणन में रखते हैं। गैर - कीमत तत्व भी उत्पादों के प्रकार व प्रगति के आधार पर अलग - अलग प्रभाव रखते हैं। उत्पादक व निर्यातक विदेशी बाजारों में प्रभावी रुप से विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रम चलाकर भी कीमत तत्व के प्रभावों को विदेशी बाजारों में कम कर सकते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि गैर कीमत तत्वो का भी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में अधिक महत्व है।

4. कीमत निर्धारण की विधियाँ
(Methods of Pricing)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में निर्यात बाजारों को निर्यात किए जाने वाले माल का कीमत निर्धारण निम्नलिखित दो विधियों से किया जा सकता है --

(a) सीमान्त लागत मूल्य निर्धारण

(Marginal Cost Pricing)

इस विधि में कीमतें सीमान्त लागत के बराबर रखी जाती है। उत्पादक अपनी उत्पादन लागतों का दो शीर्षकों में वर्गीकरण कर सकता है,प्रथम स्थिर लागतें व द्वितीय परिवर्तनशील लागतें। स्थिर लागतें उत्पादन के एक स्तर तक

समान ही रहती हैं चाहे उस स्तर के बीच में कितनी ही इकाईयों का उत्पादन किया जाए। जबकि परिवर्तनशील लागतें उत्पादन की प्रति इकाई में व द्धि के साथ ही आनुपातिक रुप में बढ़ती जाती हैं । इसमें सामग्री व श्रम की लागत आदि को शामिल किया जा सकता है। परिवर्तनशील लागतों को प्रत्यक्ष लागत भी कहा जा सकता है। इस विधि को यदि उत्पादक अपने निर्यात किये जाने वाले उत्पादों के मूल्य निर्धारण में अपनाता है, तो जो लागत उसकी सीमान्त लागत है, उसे ही वह वसूल करता हैं। जो वस्तु की परिवर्तनशील लागत आती है, वही उसका विक्रय मूल्य वह तय करता हैं।

लाभः-

(Advantages):–

इस विधि को अपनाये जाने के निम्नलिखित लाभ हैं। इसके समर्थन में निम्न तर्क दिये जा सकते हैं-

(1) विदेशी बाजारों में प्रवेश करने व वहाँ पर अपना प्रभाव जमाने के लिए उत्पादक को कीमत को एक हथियार के रुप में प्रयोग करना चाहिए । इसमें उसको लाभ को कुछ सीमा तक छोड़ना पड़ेगा । इसलिए यह विधि उपयुक्त है।

(2) विश्व बाजारों में व्याप्त त्रीव प्रतियोगिता को देखते हुए निर्यातक के पास कोई विकल्प नहीं है।

(3) उत्पादक देंशी विपणन पर पर्याप्त ध्यान देने के बाद ही अपने अतिरिक्त उत्पादनों को जो देशी विपणन में विक्रय के बाद अतिरेक रहता है, उसे निर्यातों के माध्यम से खपाने की कोशिश करता है। इसलिए यह तो एक अतिरिक्त बिक्री है। इसलिए स्थायी लागतों व उपरिव्ययों को वसूल करने का कोई औचित्य नहीं है।

(4) विश्व के अनेक बाजार ऐसे है, जहाँ अभी कीमत संवेदनशील हैं, विशेषकर विकासशील देश। इन देशों के उपभोक्ताओं को कीमतों को कम रखकर आकर्षित किया जा सकता है।

दोष :--

(Disadvantages):–

इस विधि के उपरोक्त लाभ होते हुए भी इसमें कुछ गम्भीर दोष हैं, जो अंग्राक्ति प्रकार से वर्णित किये जा सकते हैं--

(1) एक बार यदि उत्पादक कम कीमतों को रखकर विदेशी बाजारों में कीमतों को बढ़ाया नहीं जा सकता। बढ़ाने में उत्पादक को काफी कठिनाई होगी।

(2) ऐसे उत्पादक जो देशी विपणन के लिए उत्पादन नहीं करते वरन् अपना सारा उत्पादन केवल निर्यात करने के लिए करते हैं, उनके लिए तो यह विधि भस्मासुर के समान है, उनका स्वयं का नाश ही इससे हो जाएगा। उन्हें तो अपनी सभी लागतों का ध्यान रखना होगा।

(3) ऐसे उद्योग जिनकी उत्पादन लागत में उपरिव्ययों की मात्रा अधिक हैं, उन उद्योगों के लिए यह सम्भव नहीं है कि उपरिव्ययों की भारी राशि को गँवारा कर देंगे।

(4) कम कीमतें कभी - कभी विश्व बाजारों की पूरी जानकारी के अभाव में भी रख दी जाती है। इसका कभी - कभी विपिरीत प्रभाव पड़ जाता है।

यद्यपि इस विधि के उपरोक्त दोष हैं, फिर भी इस विधि को जापानी फर्मो ने कुशलता से अपनाया है। यह विधि ऐसी स्थिति में बहुत उपयुक्त है, जहाँ उत्पादकों के लिए देशी बाजार अच्छी मात्रा में उपलब्ध है। देशी बाजार के क्रेता व उपभोक्ता अधिक कीमतों को चुकाने की क्षमता रखते है। उत्पादन की तकनीकों को अपनाने पर कुल लागत व सीमान्त लागत के बीच का अन्तर भी कम किया जा सकता है।

(b) बाजार अभिमुखी निर्यात कीमत निर्धारण :--

(Market Oriented Export Pricing):–

जैसा की इस विधि के नाम से ही स्पष्ट हैं, कि बाजार में वस्तु के प्रचलित मूल्य क्या हैं, उसी के आधार पर इसमें कीमतों का निर्धारण किया जाता हैं। इस विधि में लागतों के आधार पर मूल्यों का निर्धारण नहीं होता । प्रचलित बाजार मूल्य व उसमें सम्भावित विचलन का आंकलन कर यथार्थ मूल्यों के निकट पहुँचा जाता है। इसी मूल्य को आधार

मानकर उत्पादक या निर्यातक वस्तु की लागत का निर्धारण तथा किस्म निर्धारण करते हैं।

लाभ :--

(Advantages):–

इस विधि को अपनाकर निर्यातक या उत्पादक निम्नलिखित लाभ प्राप्त कर सकते हैं--

(1) इसमें उत्पादक या निर्यातक विदेशी बाजारों में व्याप्त कीमत प्रतियोगिता का प्रभावी रुप से सामना कर सकता हैं। प्रतियोगी मूल्य निर्धारण उसकी सहायता करतं हैं।

(2) बाजार में प्रचलित मूल्यों पर थोड़ी सी भी अच्छी किस्म का माल देंकर वह महत्वपूर्ण बाजार अंश पर अपना अधिकार कर सकता है।

(3) भिन्न - भिन्न बाजारों की क्रय क्षमता के आधार पर वह अलग - अलग बाजारों के लिए प थक - प थक मूल्यों का निर्धारण कर निर्यात बाजारों का समुचित विदोहन कर सकता है।

(4) यह विधि काफी व्यावहारिक है, वास्तव में विश्व बाजारों में कीमत निर्धारण में उत्पादक या निर्माता को देशी बाजारों की तरह असीम स्वतन्त्रता नहीं होती। यह विधि इस सीमा को स्वीकार करने के कारण व्यावहारिक अधिक है।

हानियाँ

(Disadvantages):–

इस विधि के जहाँ उपरोक्त लाभ हैं, वहीं इसका सबसे बड़ा दोष कीमत नीतियों में एकरुपता के समाप्त होने से है। विभिन्न बाजारों के लिए अलग - अलग मूल्य निर्धारण से वह एकरूपता समाप्त हो जाती है, इसके साथ ही यह विधि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में गैर कीमत तत्वों के महत्व को उचित स्थान नहीं देती।

उपरोक्त दोनों विधियों की अपनी उपयोगिता व सीमाएँ हैं । दीर्घकाल में निर्यात बाजारों में बने रहने के लिए यह आवश्यक है, कि उत्पादक व निर्यातक अपनी लागतों व उचित लाभ को अवश्य प्राप्त करें। इसके लिए उत्पादक को कीमतों का निर्धारण करते समय कारखाना लागत, उत्पादन की प्रत्यक्ष लागतें, उत्पादन की परोक्ष लागतों, कारखाना उपरिव्ययों व उचित लाभ को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। देशी बाजारों के महत्वपूर्ण भाग पर अधिकार होने पर उत्पादक के लिए सीमान्त लागत कीमत निर्धारण विधि सर्वाधिक उपयुक्त है। पूर्णतया निर्यात पर निर्भर रहने वाले उत्पादक को लागत व लाभ दोनों को ध्यान में रखकर कीमतों का निर्धारण करना चाहिए ।

v. मूल्य उद्धरण

(Price Quotations)

विदेशी व्यापार में विदेशी क्रेता कोई भी क्रय करने से पूर्व उस वस्तु के मूल्य आदि के बारे में निर्यातक से जानकारी प्राप्त करता है। निर्यातक इस पूछताछ का उत्तर देता है। विदेशी क्रेता द्वारा मूल्य ज्ञात करने के लिए दिये गए पत्र का उत्तर निर्यातक मूल्य उद्धरण भेज कर देता है। मूल्य उद्धरण एक प्रकार से प्रफोर्मा इनवॉइस होता है। इसमें निर्यातक वस्तु का विक्रय मूल्य, उन सभी व्ययों का विवरण जो माल भेजने पर लगेंगे व शर्तो व दशाओं का वर्णन करता है। मूल्य मालूम करने के अलावा भी इन मूल्य उद्धरणों का काफी महत्व होता हैं। यदि आयातक मूल्य उद्धरण के आधार पर क्रय करने के निर्णय को लेता है, तो इसी आधार पर उसे आयात लाइसेंस मिलता है, इसी के आधार पर ही उसे विदेशी मुद्रा का आवंटन होता है।

विदेशी क्रेता को माल भेजने में अनेक प्रकार के व्यय निर्यातक को करने पड़ते हैं। इसमें पैकिंग व्यय, जहाज पर लदाई का व्यय जहाजी माल भाड़ा, माल के बीमे का व्यय आदि। ये व्यय काफी होंते हैं। निर्यातक विदेशी क्रेता को मूल्य उद्धरण भेजते समय यह स्पष्ट कर देता है, कि माल के मूंल्य को उद्ध त करते समय उसने किन - किन व्ययों को शामिल कर लिया है। व किन - किन व्ययों को उसने शामिल नहीं किया है। विदेशी क्रेता के लिए इसकी जानकारी क्रय निर्णय करते समय माल की कूल क्रय लागत मालूम करने हेतु आवश्यक है। वस्तु की कीमत में उद्धरण भेजते समय किन व्ययों को शामिल किया हैं, किसे नहीं इसे कुछ विशिष्ट मदों के प्रयोग में बता दिया जाता है, जो इस प्रकार हैं:--

(1) स्थानीय मूल्य :-

(Local Price):–

स्थानीय मूल्य से आशय उत्पादक या निर्यातक की माल की लागत से हैं। इसमें किसी भी प्रकार के अन्य व्यय को शामिल नहीं किया जाता है। यह मूल्य उसके गोदाम में पड़े हुए माल का मूल्य होता है। इसका आशय यह होता है, कि इस मूल्य पर विदेशी क्रेता वस्तु को निर्यातक के गोदाम से क्रय कर सकता हैं। बाकी सभी व्यय उसे ही वहन करने होंगे।

(2) जहाज पर मूल्य

(F.O.B. – Free on Board Price):–

इससे आशय यह है कि माल का उद्धरण देते समय उसमें माल को जहाज पर लादने तक के सभी व्यय शामिल कर लिये गये हैं। इसमें स्थानीय मूल्य के अतिरिक्त माल को पैक करने का व्यय, माल का ठेला भाड़ा, आन्तरिक परिवहन का व्यय, निर्यात कर, डाक व्यय, जहाज में माल की लदाई का व्यय शामिल होता है। उसके बाद के सभी व्यय क्रेता को ही देने होंगे।

(3) जहाज का मूल्य

(F. A. S. Free Alongside Ship – Prices):–

इस प्रकार के मूल्य उद्धरण से यह आशय है कि निर्यातक ने माल के मूल्य को बताने में माल को गोदाम से जहाज तक पहुँचाने के सभी व्ययों को शामिल कर लिया है । इसमें केवल माल को जहाज तक पहुँचाने के व्यय शामिल होते हैं । माल को गोदाम से जहाज तक लाने में किया गया ठेला , भाड़ा व्यय आन्तरिक परिवहन का व्यय सभी शामिल कर लिये जाते हैं। जहाज पर माल को लादने में जो व्यय होगा, उसे इसमें शामिल नहीं किया जाता । इस प्रकार के उद्धरण में माल को जहाज पर लादने व उसके बाद के सभी व्यय विदेशी क्रेता ही वहन करेगा।

(4) लागत एवं भाड़ा समेत मूल्य

(C.F.P. – Cost & Fright Price):–

इस प्रकार क उद्धरण से आशय यह है, कि निर्यातक ने या विक्रेता ने विदेशी क्रेता को वस्तु का मूल्य बताने में माल को उसके बन्दरगाह से क्रेता के बन्दरगाह तक माल को पहुँचाने में लगने वाले भाड़े की राशि को जोड़ दिया गया है। इस प्रकार जहाज पर मूल्य (F.O.B.) में माल के भाड़े की राशि जोड़ देने पर लागत एवं भाड़ा मूल्य प्राप्त हो जायेगा। इसमें बीमा का व्यय शामिल नहीं होता हैं।

(5) भाड़ा, बीमायुक्त मूल्य

(C.I.F. – Cost, Insurance and Freight Price):–

इसका आशय यह है कि निर्यातक ने विदेशी क्रेता को माल का उद्धरण देते समय माल को भेजने का भाड़ा व बीमा का व्यय भी उसके मूल्य में शामिल कर दिया है। इस प्रकार के उद्धरण में निर्यातक या विक्रेता माल की लागत या उसके विक्रय मूल्य में निम्नलिखित व्ययों को जोड़ देता है :- माल को पैकिंग करने का व्यय, निर्माता या उत्पादक के गोदाम से निर्यातक के बन्दरगााह तक माल पहुँचाने में आन्तरिक परिवहन का व्यय, ठेला भाड़ा, निर्यात कर (यदि हो), डाक व्यय, जहाज पर माल की लदाई का व्यय माल को क्रेता क बन्दरगाह तक पहुँचाने में लगने वाला जहाजी भाड़ा व माल के मूल्य पर लगने वाला सामुद्रिक बीमा की राशि को शामिल कर देता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि लागत एवं भाड़ा मूल्य (C & F. Price) में माल पर लगने वाली सामुद्रिक बीमा की राशि जोड़ दी जाये तो C. I. F. की राशि आ जायेगी।

(6) जहाज से निकलता मूल्य

(Ex– ship Price):–

इसका आशय यह है कि निर्यातक या विक्रेता ने मूल्य उद्धरण देते समय माल को अपने यहाँ से आयातक के बन्दरगाह

तक माल पहुँचाने के सभी व्ययों को शामिल कर दिया है। वहाँ माल पहुँचने के बाद सुपुर्दगी लेने का दायित्व क्रेता का होता है। अतः सुपुर्दगी लेने व उसके बाद के सभी व्यय क्रेता ही वहन करेगा।

(7) "प्रतिबन्धित गोदाम में " मूल्य

(In Bond Price):

इसका अभिप्राय यह है, कि निर्यातक ने कीमत उद्धरण देने में माल को क्रेता के अभीष्ट बन्दरगाह पर प्रमाणित गोदाम में जमा कराने तक के सभी व्ययों को शामिल कर लिया है । जहाज से निकलते मूल्य (**Ex – ship Price**) में यदि क्रेता के बन्दरगाह पर माल को जहाज से उतारने व उसे प्रमाणित गोदाम में जमा कराने क व्यय को शामिल कर दिया जावे तो 'प्रतिबन्धित गोदाम में' मूल्य निकल आयेगा। प्रमाणित गोदाम से माल की सुपुर्दगी लेने व उसके बाद के सभी व्ययो को क्रेता को ही वहन करना होगा।

(8) आयात कर चुकता मूल्य

(Duty Paid Price):–

इसका आशय यह है कि निर्यातक या विक्रेता ने मूल्य उद्धरण में क्रेता के देश की सरकार द्वारा वस्तु के आयात पर लगाये जाने वाले आयात कर की राशि को भी शामिल कर लिया है । आयात कर तक सभी व्यय निर्यातक ही वहन करता है। बाद के व्यय क्रेता को वहन करने होंगे।

(9) सर्व - मुक्त मूल्य

(Free Price or Franco):–

इस प्रकार के उद्धरण से आशय है, कि निर्यातक ने निर्यात किए जाने वाले माल को क्रेता के गोदाम तक पहुँचाने के सभी व्ययों को शामिल कर लिया है । इस प्रकार के मूल्य उद्धरण प्रायः निर्यातक निकटवर्ती देशों से व्यापार करते समय उपयोग करते हैं। इसमें सभी व्यय निर्यातक वहन करता है। माल का मूल्य, माल के पैकिंग का व्यय, आन्तरिक परिवहन का व्यय , निर्यात कर, डाक व्यय, जहाज पर माल लदाई का व्यय, जहाजी किराया, सामुद्रिक बीमा, क्रेता के बन्दरगाह पर माल उतारने का व्यय, आयातक देश के बन्दरगाह का डाक व्यय, आयात कर, आयातक के बन्दरगाह से क्रेता के रेलवे स्टेशन तक माल पहुँचाने का व्यय, स्थानीय नगरपालिका या स्थानीय सता को देय करों की राशि सभी को माल के मूल्य में शामिल कर लिया जाता है।

भारतीय सन्दर्भ में उपरोक्त में से जहाज पर मूंल्य (**Free on Board Price**) अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सरकार की ओर से निर्यातकों को निर्यात पर जितने भी लाभ प्रदान किए जाते है, वे सामान्यतया F.O.B. से ही सम्बन्धित होते हैं। इस कारण भारतीय निर्यातक सामान्यतया निर्यात छूटों का लाभ उठाने के लिए विदेशी क्रेताओं को दिये गए मूल्य - उद्धरणों में F. O. B. का ही अधिक उपयोग करत हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में भुगतान की विधियाँ
(Methods of Payments in International Marketing):–

जब भुगतान प्रक्रिया दो राष्ट्रों के मध्य होती है तो इसे अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान कहा जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान में भुगतान एक देश की सरकार, संस्था अथवा व्यक्ति को किया जाता है। देशी व्यापार में दोनों पक्ष एक ही देश के निवासी होते हैं, अतः इसमें किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती । किन्तु विदेशी व्यापार में दोनों पक्ष अलग-अलग देश होने के कारण भुगतान की समस्या और भी जटिल हो जाती है। इसका कारण यह है कि दोनों देशों में अलग - अलग मुद्राएँ प्रचलन में होती हैं तथा विदेशी विनिमय पर सभी देशों की सरकारों द्वारा नियन्त्रण लगाए जाते हैं। इसके अलावा निर्यातकर्ता के लिए आयातक व्यापारी बिल्कुल हो सकता है और ऐसी दशा में भुगतान की रीति का तय करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। इन समस्याओं के कारण विभिन्न प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है। इन भुगतानों की विधियों का अध्ययन निम्न भागों में किया जा सकता है:

1. **खुला खाता** (Open Account)
2. **रोकड भुगतान पर लेखों की सुपुर्दगी**
   (Cash against Documents)
3. **प्रेषण खाता** (Consignment Account)
4. **विनिमय बिल** (Bills of Exchange)
5. **निर्यातकों के पक्ष में प्रलेखीय साखपत्तों का निर्गमन**
   (Issue of Documentary Letter of Credit Or L/C in favour of Expoerters)

1. खुले खाते के अन्तर्गत भुगतान
(Payment against open Account System)

इस विधि का प्रयोग तब किया जाता हैं, जब निर्यातकर्ता और आयातकर्ता के बीच निरन्तर सौदे होते रहते हैं और आयातकर्ता की साख और ख्याति ऊँचे स्तर की होती है या आपस में उनके घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। इस प्रणाली के अन्तर्गत निर्यातकर्ता अपना माल विदशी ग्राहक को उधार पर भेजता रहता हैं और प्रेषण (consignment) सम्बन्धी प्रलेखों को सीधा आयातकर्ता के पास भेज देता हैं । इन प्रलेखों (जहाजी, बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी) के आधार पर आयातकर्ता माल के निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने पर उसकी सुपुर्दगी ले लेता है । आयातकर्ता पूर्व समझौते के अनुसार समय - समय पर बकाया राशि का भुगतान करता रहता है, जैसे मासिक, त्रैमासिक, अर्द्ध - वार्षिक या वार्षिक भुगतान। यह भुगतान निम्नलिखित साधनों से प्राप्त किया जा सकता हैं --

(i) डाक द्वारा मुद्रा भेजना

(By Mail Transfers):–

आयातकर्ता अपने देश की मुद्रा को डाक द्वारा भेज सकता है, जिसे निर्यातकर्ता अपने बैंक में जमा कर देता है और बदले में बैंक उसके खाते में रकम उसके देश की मुद्रा में जमा कर देता है। अथवा वह निर्यातकर्ता के देश की मुद्रा में किसी बैंक या विनिमय दलाल से खरीद कर डाक द्वारा निर्यातकर्ता को भेज सकता है।

(ii) चैक द्वारा

(By Cheque):–

आयातकर्ता अपने देश में किसी बैंक पर लिखे गए चैक को भेज सकता है। ऐसे चैक को निर्यातकर्ता अपने देश में अपने बैंक में जमा करा देता है। यह बैंक भेजने वाले के देश में अपने सह सम्बन्धी (Correspondent) बैंक को उस चैक को संग्रह के लिए भेज देता है तथा इस प्रकार आयातकर्ता के देश में क्रेडिट बेलेन्स प्राप्त कर लेता हैं।

(iii) बैंक ड्राफ्ट द्वारा

(By Bank Draft):–

बैंक ड्राफ्ट एक बैंक से दूसरे बैंक के लिए या उसकी शाखा के लिए लिखा चैक होता है । इसमें यह आदेश होता है कि उसके लाने वाले को या उसमें नाम लिखे व्यक्ति को माँगने पर उसमें लिखित मात्रा में मुद्रा दे दे । अतः आयातकर्ता, निश्चित मूल्य, अपने देश की मुद्रा में, अपने बैंक में जमा कराने पर बैंक ड्राफ्ट ले लेता है और डाक द्वारा निर्यातकर्ता व्यापारी को भेज देता है। निर्यातकर्ता इसे अपना ही बैंक में जमा करा देता है और यह बैंक अपने सह - सम्बन्धी बैंक के द्वारा उक्त ड्राफ्ट का संग्रह करा लेता है। इसी प्रकार निर्यातकर्ता इस ड्राफट की राशि अपने बैंक द्वारा प्राप्त कर लेता हैं। बड़ी रकमों के भुगतान के लिए बैंक ड्राफ्ट सर्वाधिक लाकप्रिय एवं प्रचलित साधन हैं।

(iv) तार हस्तान्तरण द्वारा

(By Cable Transfeas):–

बैंक ड्राफ्ट अधिकतर डाक से भेजा जाता है, जिसके खोने का खतरा बना रहता है, इसके अलावा समय भी बहुत लगता है। अतः इन असुविधाओं को दूर करने के लिए खुला खाता सम्बन्धी भुगतान तार हस्तान्तरण द्वारा किया जा सकता है । इस प्रणाली अन्तर्गत भी आयातकर्ता अपने देश में स्थित बैंक के पास निर्यातकर्ता को भुगतान में दी जाने वाली राशि अपने देश की मुद्रा में जमा करा देता है। बैक बदले में आयातकर्ता को रसीद देता है अब बैंक निर्यातकर्ता के देश में स्थित अपनी शाखा अथवा अन्य किसी बैंक को तार से यह आदेश भेज देता है कि अमुक व्यक्ति को अमुक रकम का भुगतान तत्काल कर दिया जाये। इस प्रकार निर्याकर्ता को शीघ्र ही भुगतान प्राप्त हो जाता है व विनिमय दरों में परिवर्तन की जोखिम से भी बचा जा सकता है।

अतः खुला खाता (Open Market) प्रणाली का प्रयोग केवल तब ही होता है जबकि आयातकर्ता की ख्याति अच्छी होती है या एक नये आयातकर्ता के साथ कुछ समय कार्य करते रहने के पश्चात् जब क्रेता एवं विक्रेता के सम्बन्ध सुद ढ रुप से विकसित हो जाते हैं। व्यावहारिक व्यवहार में सबसे अधिक प्रयोग विदेशी बैंक ड्राफ्ट प्रणाली का और उससे कम प्रयोग तार हस्तान्तरण प्रणाली का होता है। डाक द्वारा विदेशी मुद्रा भेजकर इने - गिने भुगतान ही किये जाते हैं। जो प्रायः छोटी रकमों के होते हैं। चैक द्वारा भुगतान भी नहीं के बराबर होते हैं।

2. रोकड़ भुगतान पर प्रलेखों की सुपुर्दगी

(Cash against Documents)

W.F. Spalding लिखते हैं कि निर्यातकर्ता अपनी रकम के सम्बन्ध में जोखिम लेना पसन्द नहीं करता, यदि आयातकर्ता नया ग्राहक है । अतः जब तक उसके माल की कीमत का भुगतान नहीं किया जाता, वह माल को आयातकर्ता या उसके एजेन्ट को सुपुर्द करना या भेजना पसन्द नहीं करता है। इस प्रणाली के अन्तर्गत निर्यातकर्ता जोखिम को कम करने के लिए अपने देश के बैंक की शाखा को, जो आयातकर्ता के देश मं स्थित है , माल से सम्बन्धी प्रलेख (जहाजी, बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी) सुपुर्द कर देता है। भुगतान प्राप्ति हेतु निर्यातकर्ता अपने देश के बैंक को यह भी निर्देश दे देता है कि जब तक आयातकर्ता माल का भुगतान न कर दे तब तक माल सम्बन्धी प्रपत्र उसे न दिये जाये। अतः इस प्रणाली में आयातकर्ता भुगतान करके ही माल सम्बन्धी प्रलेख प्राप्त कर पाता है और तभी माल की सुपुर्दगी ले सकता है। यदि निर्यातकर्ता अपने ही देश में नकद भुगतान चाहता है तो ऐसी स्थिति में आयातकर्ता अपने देश के बैंक में माल का मूल्य जमा करा कर बैंक को यह आदेश देता है कि वह उस रकम को लेनदार के देश में स्थित अपनी शाखा अथवा अन्य किसी बैंक के पास इस निर्देश के साथ भेजे कि यह निर्यातकर्ता से माल सम्बन्धी सभी प्रलेख लेकर उसे भुगतान कर दे । इस प्रकार बैंक द्वारा भुगतान क्रिया चलती रहती है।

3. प्रेषण खाता

(Consignment Account)

कुछ माल जैसे चाय, ऊन,कॉफी आदि का प्रमापीकरण नही है। इन्हें विदेशों में नीलामी (Auctions) के द्वारा बेचा जाता है। इस प्रकार माल का वास्तविक विक्रय क्रेता के यहाँ (विदेश) पहुँचने पर होता है। इस प्रकार निर्यातक अपना माल विदेश स्थित अपने अभिकर्ता या प्रतिनिधि को भेज देता है और सम्बन्धित बैंक प्रलेख द्वारा भेज दिए जाते हैं । विदेश स्थित प्रतिनिधि से ट्रस्ट रसीद (Trust Receipt) प्राप्त कर बैंक प्रलेख दे देता है । जब माल बिक जाता है तो विदेश स्थित प्रतिनिधि निर्यातक को विक्रय राशि भेज देता है । सामान्यतः यह भुगतान तार द्वारा या डाक द्वारा (**T.T or M.T**) भेज दिया जाता है । विदेश में माल बिकने तथा भुगतान प्राप्त होने पर बैंक हिसाब कर देता हैं।

4. विनिमय बिल

(Bills of Exchange)

यह विदेशी भुगतानों का सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रचलित तरीका है। जब विनिमय बिल के लेखक एवं देनदार भिन्न - भिन्न देशों से सम्बन्धित हों तो ऐसे बिल को विदेशी विनिमय बिल (Foreign Bill of Exchange) के नाम से पुकारते

हैं। विदेशी विनिमय बिल एक लिखित आदेश है जिसमें माल बेचने वाला व्यक्ति (निर्यातकर्ता) माल खरीदनें वाले व्यक्ति (आयातकर्ता) को तुरन्त अथवा एक निश्चित अवधि के पश्चात एक निश्चित रकम के भुगतान की आज्ञा देता है ।

विनिमय बिल के तीन पक्ष होते हैं - प्रथम लेखक, द्वितीय देनदार, त तीय लेनदार। बिल ऋणदाता द्वारा लिखा जाता हैं और ऋणी पर लिखा जाता है। विदेशी विनिमय बिल का लेखक (Drawer) सदैव निर्यातकर्ता होता है, यह बिल लिखता है और उस पर अपने हस्ताक्षर करता है । विदेशी विनिमय बिल का देनदार (Drawee) सदैव आयातकर्ता होता है। साधारणतया बिल का लेखक एवं लेनदार (**Payee**) एक ही व्यक्ति होता है। लेकिन लेखक तथा लेनदार भिन्न व्यक्ति भी हो सकते हैं। अतः विदेशी विनिमय बिल निर्यातकर्ता द्वारा आयातकर्ता के नाम उसे निर्यात किये गये माल के मूल्य का भुगतान प्राप्त करने हेतु लिखा गया बिल होता है। प्रायः बिलों को इनके देनदार (आयातकर्ता) की ओर से संस्थाओं (बैंक व स्वीकृति -ग हों) द्वारा स्वीकार किया जाता है। ऐसे बिलों को विदेशी लेनदार (निर्यातकर्ता) तुरन्त स्वीकार कर लेते हैं, क्योकि व्यक्तियों की अपेक्षा संस्थाओं. की साख अधिक होती है।

जब बिल लिखित में स्वीकृत होकर वापिस आ जाता है तो निश्चित तिथि पर निर्यातकर्ता बिल का भुगतान प्राप्त कर लेता है । यदि निर्यातकर्ता चाहे तो बिल की परिपक्वता तिथि से पहले, किसी बैंक से बिल की कटौती कराकर तुरन्त रकम प्राप्त कर सकता है। ऐसी दशा में इसे (**Discounting of a Bill**) कहते है।

विदेशी विनिमय बिल की महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित हैं --

(i) **बिल का लिखना** :- बिल माल के बेचने वाले (अर्थात निर्यातकर्ता) व्यक्ति द्वारा लिखा जाता है । अवधि के अनुसार विनिमय बिल दो तरह से लिखे जा सकते हैं--

(a) **माँग पर देय** :- माँग पर देय बिल का भुगतान तुरन्त बिल के प्रस्तुत करते ही मिल जाता है। इसे दर्शनी बिल (Sight Bill) कहते है।

(b) **सावधि देय बिल** :- सावधि बिल (Usance Bill) का भुगतान निश्चित तिथि के पश्चात मिलता है,विदेशी व्यापार में प्रायः उधार माल बेचा जाता है, अतः सावधि बिलो का प्रयोग ही अधिक होता है। सावधि बिलों की देय तिथि (Due Date) में कुछ देशों ने बिलों के भुगतान में तीन रियायती दिन (Days of Grace) और जोड़े जाने की व्यवस्था दे रखी हैं। जैसे 22 जुलाई को लिखे गये तीन महीनों के सावधि बिल की देय तिथि 22 अक्टूबर न होकर 25 अक्टूबर होगी।

स्मरण रहे दर्शन बिल में रियायती दिनो का प्रश्न ही नहीं उठता । सावधि अर्थात मुद्धती विनिमय पत्रों पर मूल्यानुसार स्टाम्प लगाना अनिवार्य होता है, किन्तु दर्शनी विनिमय पत्र पर स्टाम्प लगाना अनिवार्य नहीं होता ।

(ii) **बिल की स्वीकृति** :- माल को खरीदने वाला अर्थात आयातकर्ता या उसका बैंक बिल पर स्वीकृति देता है। दर्शनी अथवा माँग पर देय बिल पर स्वीकृती के लिए प्रस्तुत नहीं किये जाते हैं, उन्हें (जहाजी,बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी सहित, सीधे भुगतान के लिये ही प्रस्तुत किए जाते हैं, जबकि सावधि बिलों को देनदार (आयातकर्ता) या उसके बैंक के पास स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना पड़ता है।

(iii) **तीन प्रतियाँ** :- विदेशी विनिमय बिलों की तीन प्रतियाँ बनाई जाती हैं ताकि अगर प्रथम प्रति डाक में खो जाय या समय पर न मिले तो दूसरी व तीसरी प्रतियों का प्रयोग किया जा सकें।

(iv) **विदेशी विनिमय बिलों में दो प्रकार की व्यवस्था है :**

(a) अलेखनीय विनिमय बिल

(Non–Documentary of clean Bill) :–

यह वह बिल होता है जिसके साथ निर्यातक माल सम्बन्धी प्रलेख नत्थी नहीं करता । अर्थात ऐसे बिल के साथ कोई प्रलेख नहीं भेजे जाते हैं । यह एक सादा विनिमय बिल होता है जो निर्यातक द्वारा आयातक पर लिखा जाता है। जो माँग पर देय अथवा सावधि देय हो सकता है। बिल की प्रस्तुति पर आयातकर्ता द्वारा भुगतान कर दिया जाता है। ऐसे बिल तभी बनाये जाते हैं जब ऋणी व ऋणदाता में परस्पर पूर्ण विश्वास हो । व्यवहार में ऐसे बिलों का प्रचलन कम ही हैं।

(b) प्रलेखीय विनिमय बिल :-

जब निर्यातक विनिमय बिल के साथ माल सम्बन्धी प्रलेख जैसी जहाजी बिल्टी, बीजक, बीमा पत्र नत्थी कर, अपने बैंक को यह बिल इस आदेश के साथ देता है कि बिल की स्वीकृति अथवा भुगतान करने पर ही माल सम्बन्धी प्रलेख आयातकर्ता को सुपुर्द किए जाएँ तों ऐसे बिल को प्रलेखीय विनिमय बिल कहा जाता है। इस प्रकार प्रलेखीय बिल दो प्रकार का होता हैं--

(a) स्वीकृति पर प्रलेख बिलः-

(Documents against Acceptance or D/A):–

जब बिल की स्वीकृति (Acceptance) पर ही माल सम्बन्धी प्रलेख आयातकर्ता को सुपुर्द किए जाते हैं तो ऐसे बिल को D/A कहते हैं । यह बिल आयातकर्ता अथवा उसके बैक द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है और निर्यातकर्ता के बैंक को लौटा दिया जाता हैं। स्वीकृति बिल के प्राप्त होते ही निर्यातकर्ता का बैंक सभी जहाजी दस्तावेज ,बिल्टी , बीजक, बीमा पॉलिसी आदि आयातकर्ता या उसके बैंक को सौंप देता है। इस प्रकार का बिल सावधि बिल (Usance or term bill) होता है जिसका भुगतान उसमें लिखित तिथि अथवा जिस पर लिखा गया है उससे प्राप्त स्वीकृति की तिथि के कुछ दिन अथवा कुछ माह पश्चात किया जाता है। बिल की अवधि सामान्यतया एक, दो या तीन माह की होती है।

(c) भुगतान पर लेख बिल

(Documents against Payment or D/P):–

जब आयातकर्ता को माल उधार नहीं दिया जाता है, तब प्रायः भुगतान पर प्रलेख बिल लिखा जाता हैं। D/P की शर्त यह होती हैं कि बीजक में लिखित पूरी रकम का भुगतान करने पर ही जहाजी दस्तावेज,- बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी आयातकर्ता को सौंपे जाए, अन्यथा नहीं। ये बिल माँग पर देय या दर्शनी बिल (Sight Bill) होते हैं।

(v) बिल की कटौती :-

बिल पर आयातकर्ता से स्वीकृति लेने के पश्चात् या तो निर्यातकर्ता बिल को अपने पास रख सकता है और भुगतान तिथि आने पर अपने बैंक के माध्यम से आयातकर्ता से भुगतान प्राप्त कर सकता है या इस बिल को किसी कटौती ग ह (Discount House) को प्रस्तुत करके भुना (Discount) सकता है। कटौती ग ह बिल की राशि में से कुछ कटौती काट कर शेष रकम निर्यातकर्ता को दे देता है। लन्दन मुद्रा बाजार में विश्व की प्रत्येक मुद्रा में लिखे बिलों की कटौती होती है।

(vi) बिल का भुगतान : -

विदेशी विनिमय बिलों का भुगतान भी देशी बिलों की भाँति होता है परन्तु विदेशी विनिमय बिलों का लेन - देन विदेशी विनिमय में व्यवहार करने वाले बैंकों द्वारा ही किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि विदेशी बिलों का भुगतान भी बैंकों के माध्यम से होता है अर्थात विदेशी बिलों में लेन - देन विदेशी विनिमय में कार्य करने वाले बैंक ही करते हैं।

विदेशी व्यापार के पोषण में विनिमय बिलों का महत्व

(Importance of Bills of Exchange in the Financing of Foreign Trade)

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में विनिमय बिल द्वारा भुगतान एक लोकप्रिय विधि है। इससे भुगतान करते समय निर्यातक , आयातक, बैंक एवं सरकार सभी को लाभ पहुँचता है। इसके मुख्य लाभ निम्नलिखित हैं -

1. निर्यातक को लाभ :-

(Advantages to Exporters):–

बिल के द्वारा माल बेचने पर निर्यातक का विक्रय बढ़ जाता है। माल के रवाना होते ही वह आयातक पर बिल लिख देता है

तथा उस बिल की कटौती कराकर वह तुरन्त भुगतान प्राप्त करा लेता हैं । इस प्रकार की जोखिम भी नहीं रहती है क्योंकि निर्यातक के पास इस बात का प्रमाण होता है कि आयातक उसका ऋणी है । न्यायालय में बिल को प्रमाण - पत्र के रुप में प्रस्तुत किया जा सकता हैं।

2. आयातक को लाभ

(Advantages to Importers):–

अल्पकालीन वित के स्त्रोत के रुप में विनिमय बिल आयातक की अत्यधिक सहायता करता हैं। आयातक बिल के माध्यम से उधार माल खरीद सकता है, साथ ही इसके प्रयोग से भुगतान करने के लिए ३-४ माह का समय मिल जाता हैं। इस अवधि में माल बिक जाने से, उसे भुगतान करने में किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता । यदि माल इस अवधि में भी न बिके तो वह अन्य स्त्रोंतों से भुगतान का प्रबन्ध कर सकता है।

3. बैंक को लाभ

(Advantages to Bank):–

बैंक विपत्रों के लेन- देन में मध्यस्थ का कार्य करते हैं। उन्हें बिलों के प्रस्तुतीकरण, स्वीकृति और कटौंती के लिए अपने ग्राहको से कमीशन प्राप्त होता हैं, जो उनका लाभ होता है। बैंक कटौती किये गये बिलों की आवश्यकता पड़न पर केन्द्रीय बैंक से पुर्नकटौती करवा सकते हैं। अतः बैंक को भी लाभ होता है ओर उसके कोष तरल भी रहते हैं।

4. सरकार को लाभ

(Advantages to Government):–

इस विधि से सरकार को भी लाभ होता हैं। इससे निर्यातों में व द्धि होती हैं जिससे सरकार को अपनी भुगतान स्थिति को संतुलित करने में सुविधा रहती हैं। इतना ही नहीं, सरकार इस व्यवस्था के माध्यम से अधिक मात्रा में आयात कर लगाने में समर्थ हो सकती हैं, सरकार को अवधि बिलों पर स्टाम्प कर (Stamp – Duty) से आय भी प्राप्त होती हैं। देश में व्यापार को प्रोत्साहन मिलता हैं जिससे देश में रोजगार व प्रति व्यक्ति आय में व द्धि होती है।

बिल के प्रयोग द्वारा विदेशों को भुगतान का उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण

बिल के माध्यम से भुगतान की प्रक्रिया को एक उदाहरण से समझा जा सकता हैं-

1. आयातक -- भारत ट्रेडिंग , मुम्बई।
2. आयातकर्ता का बैंक - स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, मुम्बई।
3. निर्यातक -- जॉनसन लिमिटेड, लन्दन
4. निर्यातक का बैंक -- चार्टर्ड बैंक, लन्दन।

भुगतान सम्बन्धी विभिन्न क्रियाओ का क्रम निम्नलिखित होगा-

1. आदेश आने पर जॉनसन लिमिटेड, लन्दन- (निर्यातक) आदेशानुसार माल पैक करके जहाजी कम्पनी द्वारा भेज देगा तथा जहाजी बिल्टी, बीमा पॉलिसी बीजक आदि पत्र प्राप्त करेगा।
2. निर्यातक बिल लिख कर प्रपत्रों सहित अपने बैंक, चार्टर्ड बैंक को सुपुर्द कर देगा।
3. चार्टर्ड बैंक विनिमय बिल सलंग्न प्रलेख सहित स्टेट बैंक आफ इण्डिया, मुम्बई को निर्देश देकर वे प्रपत्र व बिल सुपुर्द कर देगा।
4. स्टेट बैंक विनिमय बिल पर आयातक से स्वीकृति कराकर संलग्न प्रपत्र दे देंगें तथा स्वीकृत बिल पुनः चार्टर्ड बैंक को लौटा देगा, जो निर्यातक को वह बिल पहुँचा देगा। यदि निर्यातक को बिल की कटौती करानी है तो चार्टर्ड बैंक कटौती ग ह से कटौती कराकर प्राप्त राशि निर्यातक के खातें में जमा कर देगा।
5. भारत टेड्रिंग कम्पनी (आयातक) प्रपत्र के मिलते ही माल छुड़ाने की कार्यवाही करेगी।
6. भुगतान के कुछ दिन पूर्व बिल पुनः मुम्बई में चार्टर्ड बैंक के माध्यम से स्टेट बैंक के पास भेजा जायेगा। स्टेट

बैंक आयातक के निर्देश पर उसका भुगतान कर राशि आयातक के खाते में नाम (डेविट) लिख देगा।

7. चार्टर्ड बैंक की मुम्बई शाखा भुगतान प्राप्ति की सूचना अपने लन्दन शाखा को देगी, सूचना प्राप्त होने पर निर्यातक के खाते में वह रकम जमा कर देगी। यदि बिल की कटौती की गयी थी, तो कटौंती ग ह अपने बैंक के माध्यम से स्टेट बैंक, मुम्बई को भुगतान प्राप्त करने के लिए बिल प्रस्तुत करेगा। भुगतान प्रप्ति की सूचना मिलने पर कटौती ग ह के बैंक खाते में वह रकम जमा करा दी जायेगी।

8. यदि चार्टर्ड बैंक की मुम्बई मे शाखा नहीं है, तो वह स्टेट बैंक की लन्दन शाखा को बिल मुम्बई भेजने के लिए दे सकता हैं। अन्य स्थानों के लिए जहाँ सम्बन्धित बैंको (आयातक तथा निर्यातक के बैंको की) शाखाएँ क्रेता व विक्रेता के शहर में नहीं हैं तो किसी अन्य बैंक के माध्यम से कार्य किया जाएगा, जो प्रतिनिधि बैंक (Correspondent Bank) के रुप में कार्य करता हैं।

चित्र द्वारा स्पष्टीकरण - उपरोक्त सम्पूर्ण क्रिया को निम्न चित्र द्वारा समझा जा सकता है -

बैंक के माध्यम से भुगतान

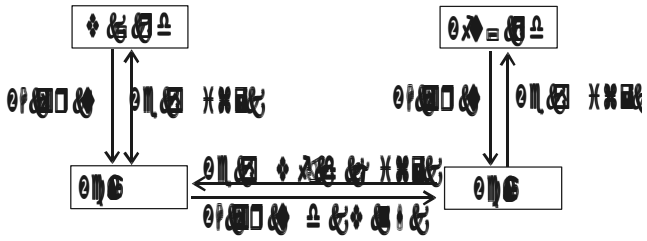

विनिमय बिलों की स्वीकृति एवं कटौती तथा स्वीकृति एवं कटौती ग ह

(Acceptance and Discounting of Bills and the Accepting and Discounting Houses)

(1) विनिमय बिलों की स्वीकृति

(Acceptance of Bills of Exchange):–

विनिमय बिल तब लेखक (Drawer) द्वारा माल के अन्य अधिकार पत्रों सहित देनदार (**Drawee**) के सामने प्रस्तुत किया जाता है। देनदार, लेखपत्र प्राप्त होने पर बिल की वैधता स्वीकार करता है जिसे तकनीकी भाषा में 'स्वीकृति' कहते हैं। अतः बिल की स्वीकृति का आशय विनिमय बिल लिखे जाने के पश्चात बिल के देनदार (जिसके नाम बिल लिखा गया है - Drawee) द्वारा 'स्वीकृति' शब्द लिखकर हस्ताक्षर करने से हैं। अर्थात देनदार लेखक द्वारा दिये गये आदेश को पूरा करने की स्वीकृति देता हैं।

माँग पर देय बिल या दर्शनी बिलों की स्वीकृति आवश्यक नहीं है, क्योंकि इसमें तुरन्त भुगतान करने का आदेश है। सावधि बिलों के लिए स्वीकृति की आवश्यकता पडती है और उनकी अवधि तीन माह की होती है आयातक व निर्यातक दोनों एक - दूसरे की साख से परिचित नहीं होते। अतः बिल बैंक अथवा स्वीकृति ग हों द्वारा स्वीकृत करवाये जाते हैं। बैंक अथवा स्वीकृति ग हों द्वारा बिल स्वीकार किये जाने पर उन्हें बट्टा करवाना भी आसान होता है, क्योकि बैंक अथवा स्वीकृति ग ह तथा बट्टा ग ह कुछ शुल्क वसूल करते हैं।

(i) सामान्य स्वीकृति

इसके अन्तर्गत देनदार बिल में लिखी शर्तो को स्वीकार करा लेता है तो उसे सामान्य स्वीकृति कहा जाता है। ऐसी दशा मे वह बिल पर 'स्वीकृत' (Accepted) शब्द लिखकर अपने हस्ताक्षर कर देता है अथवा खाली हस्ताक्षर कर देता है ।

(ii) शर्त सहित स्वीकृति

(Qualified Acceptance):–

जब स्वीकारकर्ता बिल स्वीकार करते समय कोई शर्त लगा देता है और उस शर्त को उस बिल पर लिखकर अपने हस्ताक्षर कर देता है तो उस शर्त सहित स्वीकृति कहते हैं। इस प्रकार की शर्त कम राशि के लिए स्वीक ति देना, अधिक अवधि के बाद भुगतान देना आदि के सम्बन्ध में हो सकती है।

स्वीकृत किये गये विनिमय बिलों के द्वारा भुगतान प्राप्त करने की प्रक्रिया 'स्वीकृति' साख (Acceptance Credit) कहलाती है। जब विदेशी व्यापार में दो व्यापारी एक - दूसरे से अपरिचित होते हैं अथवा एक दूसरे की साख के प्रति आश्वस्त नहीं हैं तो क्रय - विक्रय के सौदों में बडी कठिनाई आती है । ऐसी स्थिति में क्रेता अपने बैंक से ऐसी व्यवस्था करता है कि वह विक्रेता द्वारा लिखे हुए बिल को स्वीकार कर ले। इस प्रकार बैंक द्वारा अपने ग्राहक (माल के क्रेता) को अपनी साख उधार दे दी जाती हैं। इसी को 'स्वीकृति साख' कहते हैं।

कभी - कभी ऐसा भी होता है कि निर्यातक माल का तुरन्त भुगतान चाहता है। इस स्थिति में आयातक एक बिल अपने बैंक पर लिखता है जिसे बैंक स्वीकार कर लेता है। आयातक इस बिल की कटौती करवा कर रकम प्राप्त कर लेता है और निर्यातक को भुगतान कर देता है। इस प्रकार बैंक द्वारा बिल की स्वीकृति भी स्वीकृति साख कहलाती है ।

स्वीकृति साख का तीसरा रुप भी होता है। निर्यातक अपने विदेशी ग्राहक (आयातक) को उधार माल देना चाहता है। किन्तु निर्यात के लिए माल तैयार करने के लिए उसे रकम की आवश्यकता पडती है। इस स्थिति में निर्यातक एक बिल बैंक पर लिखता है जिसे बैंक स्वीकार कर लेता है। निर्यातक , बैंक द्वारा स्वीकृत बिल की कटौती करवा देता है और रकम प्राप्त कर अपने खर्चो की पूर्ति कर लेता है। यह भी स्वीकृत साख का एक रुप है।

(2) विनिमय बिलों की कटौती

(Discounting of Bills of Exchange):–

प्रायः बिल का धारक तुरन्त भुगतान चाहता है, ऐसी स्थिति में भुगतान तिथि तक इन्तजार करना सम्भव नहीं है। अतः विनिमय बिल की स्वीकृति के पश्चात धारक या निर्यातक, बिल को बैंक से अथवा कटौती ग ह से कटौती करा लेता है। बिल की कटौती का आशय उस क्रिया से है जिसमें विनिमय बिल बैंक द्वारा बिल की राशि से कुछ कम राशि पर खरीद लिया जाता है। तथा शेष राशि बिल के धारक को दे दी जाती है। बाद में भुगतान की तिथि पर इसका पूरा भुगतान प्राप्त कर लेता है। बैंक कटौती की तारीख से भुगतान की तिथि तक की ब्याज राशि व अन्य व्यय मिलाकर कटौती रकम (Discount) का निर्धारण करता हैं । जो ब्याज दर प्रचलन में होती है, प्रायः उसी के अनुसार कटौती काटी जाती हैं। बैंक कटौती करते समय ग्राहक की स्थिति व स्वीकृति करने वाले देनदार की साख का ध्यान रखता हैं। बैंक निम्न प्रकार के विदेशी बिलों की कटौती सामान्यतः नहीं करता है-

(i) अहस्तान्तरणीय बिलों (**Non – Transferable Bills**) की कटौती नहीं की जाती । इनका भुगतान किसी व्यक्ति विशेष को ही हो सकता है।

(ii) बिल के "स्वीकारक" द्वारा भुगतान किये जाने में सन्देह हो।

(iii) जिन बिलों की आवश्यकता पड़ने पर पुनः कटौती (Rediscount) नहीं करायी जा सके।

(iv) बिल अपूर्ण है, उसे सही ढंग से स्वीकार नहीं किया गया तथा पर्याप्त स्टाम्प लगाया हुआ नहीं है।

(3) स्वीकृति ग ह

(Accepting Houses):–

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में देशों की अधिकता व भिन्नता होने के कारण निर्यातक को आयातक की साख के बारे में अधिक जानकारी नहीं होती है। अतः लिखे गये विनिमय बिलों पर किसी प्रतिष्ठित संस्था की स्वीकृति आवश्यक होती है। इन्हें स्वीकृति प्रदान करने वाली संस्थाओं को स्वीकृति ग ह कहा जाता है।

अर्थ एवं परिभाषा

(Meaning and Definition):–

"स्वीकृति -ग हों का अभिप्राय उन फर्मो अथवा कम्पनियों से होता है जिनके कार्यो का एक महत्वपूर्ण भाग बिलों की स्वीकृति देना होती है ।" ये विदेशी व्यापार की अल्पकालीन वित्त व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । ये सहायक कार्य के रुप में अंशों का अभिगोपन, बैंकिंग का कार्य , विदेशी विनिमय का कार्य, बीमा व्यवसाय , आयात - निर्यात आदि कार्य भी करते हैं ।

संसार भर में लन्दन ही एकमात्र ऐसा मुद्रा बाजार है जहाँ विनिमय बिलों की स्वीकृति देने वाली विशिष्ट संस्थाएँ हैं। ये स्वीकृति - ग ह मर्चेंट बैंक (Merchant Bank) भी कहलाते हैं। ये स्वीकृति - ग ह जिन व्यापारियों के बिलों की स्वीकृति दे देते हैं उनकी विनिमय सहायता बढ़ जाती है और इन्हें कोई भी कटौती ग ह कटौती करने के लिए तैयार रहता है। स्वीकृति ग ह अपने इस कार्य के लिए ग्राहकों से कमीशन लेते हैं ।

लन्दन मुद्रा बाजार में ऐसे स्वीकृति ग हों की संख्या ३३ है जिनके नाम इस प्रकार हैं -

(1) एन्थोनी गिल्स एण्ड संस, (2) ब्राउन शिप्ले एण्ड कम्पनी, (3) बेरिंग ब्रादर्स एण्ड क.•लि., (4) आर्बथना ट लैथमैन एण्ड कम्पनी लि.•, (5) ब्राउन शिप्ले एण्ड क.•लि.•,(6) म्यूनेस माहान एण्ड कम्पनी, (7) चार्टर हाउस जैफेट लि. , (8) ग्यूनेस माहान (गुर्नसे) लि., (9) हैम्ब्रास बैंक लि., (10) हैम्ब्रास (गुर्नसे) लि., (11) हैम्ब्रास (जेसै) लि•, (12) हिल सेम्युएल एण्ड क. लि., (13) हिल सेम्युएल एण्ड क.• (गुर्नसे) लि•, (14) हिल सेम्युएल एण्ड क. जर्सी लि.•, (15) जे• हेनरी स्त्रोडर बाग एण्ड क., (16) क्लिनवर्ट बेनसन लि•, (17) क्लिनवर्ट बेनसन (चर्नेल आर लैण्डस) लि.•(18) क्लिनवर्ट बेनसन (गुर्नसे) लि•, (19) लजाई ब्रादर्स एण्ड क• लि•, (20) मिडेन स्कियुरीीिज (जेर्सी) लि•, (21) मार्गन गै नफेल एण्ड क• लि•, (22) मार्गन गनफेल (गुर्नसे) लिं•, (23) मार्गन ग नफेल (जेर्सी) लि.•, (24) एन• एम• स्थस्चाइल्ड एण्ड संस (सी• आई) लि.•, (25) सेम्युल मान्टेंगु एण्ड क• लि.•, (26) एन• एम• स्थस्चाइल्ड एण्ड संस लि.•, (27) रीआ ब्रादर्स लि.•, (28) रीआ ब्रादर्स (गुर्नसे) लि.•,(29) रीआ ब्रादर्स (इस्ले आफ मैन) लि, (30) एस• जी वारबर्ग एण्ड क.• लि (31) एस• जी• वारबर्ग एण्ड क.• (जेर्सी) लि., (32) सिगंर एण्ड फ्रिड लेण्डर लि.•, तथा (33) सिंगर एण्ड फिड-लैण्डर (इस्ले आफ मैन (लि.•।

स्वीकृति - ग हों की कार्य प्रणाली

(Working of Accepting Houses): स्वीकृति ग हों ने विश्व के प्रमुख बन्दरगाहों और व्यापारिक व औद्योगिक केन्द्रों पर अपने सहायक कार्यालयों की स्थापना कर रखी है । ये कार्यालय विभिन्न व्यापारिक ग हो की वितीय सुद ढ़ता व साख की जानकारी करके उन्हें स्वीकति साख प्रदान करते हैं। स्वीकृति ग ह उपरोक्त जानकारी के आधार पर प्रत्येक व्यापारिक इकाई के लिए अधिकतम साख सीमा का निर्धारण कर देता है, और स्वीकृति देते समय इस सीमा का अतिक्रमण नहीं करता है।

स्वीकृति ग ह द्वारा बिल की स्वीकृति देने के पश्चात धारक इस स्वीकृत बिल की कटौती करवाकर पैसा प्राप्त कर लेता है । ऐसे बिलो का बेचना भी सुगमता से हो सकता हैं । क्योंकि देय तिथि पर भुगतान का दायित्व स्वीकृति - ग ह पर होता है । इसके लिए वे अपने पास तरल कोष रखते हैं । ये ग ह अपनी स्वीकृति के लिए सामान्य सा शुल्क लेते हैं । जिसे स्वीकृति शुल्क कहा जाता है । जो बिलों की राशि का 1 प्रतिशत से 1/½ प्रतिशत वार्षिक होता हैं । शुल्क की दर ग्राहक की साख तथा बिल की भुगतान शर्तो के अनुसार भिन्न - भिन्न होती है ।

(4) कटौती ग ह

(Discount Houses):

अर्थ : - कटौती ग हों का आशय उन व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से है जो विनिमय बिलों तथा हुण्डियों की कटौती तथा बट्टा करने का कार्य करते हैं। दूसरे शब्दों में यह ग ह अल्पकालीन व्यापारिक विनिमय बिलों व हुण्डियों का देय तिथि से पूर्व करते हैं और बाद में या तो बेच देते हैं या देय तिथि को आहार्थी (**Drawee**) को भुगतान के लिए प्रस्तुत कर रकम प्राप्त कर लेते हैं । इस प्रकार कटौती ग ह अल्पकालीन वित्त ही पूर्ति का एक महत्वपूर्ण अंग हैं ।

कार्य क्षेत्र : -- कटौती ग ह केवल लन्दन मुद्रा बाजार में पाये जाते हैं । लन्दन कटौती ग हों की संख्या 11 है जो जिनके

नाम इस प्रकार हैं -- (1) यूनियन डिस्काउन्ट, (2) क्लाइव डिस्काउन्ट, (3) जेराड एण्ड नेशनल डिस्काउन्ट, (4) अलेग्जेण्डर्स , (5) केटर राइडर एण्ड कम्पनी , (6) जिलेट ब्रादर्स , (7) स्मिथ सेंट एविन एण्ड क•, (8) जेसेल टोयनबी, (9) एलेन डाखे एण्ड कम्पनी। (10) किंग एण्ड सेक्सन और (11) सेकम्ब मार्शल एण्ड कम्पनी ।इन सभी कटौती ग हों का एक संघ है जिसे 'लन्दन कटौती ग ह संघ' कहते हैं । इनके अतिरिक्त कुछ प्राइवेट लि.• कम्पनियाँ तथा फर्मे भी कटौती का व्यवसाय करती हैं। कटौती ग ह लन्दन मुद्रा बाजार की एक अनूठी विशेषता हैं। बैंको तथा बैंक ऑफ इंगलैण्ड के बीच एक कड़ी का काम करते हैं। संसार के अन्य देशों में यह कार्य व्यापारिक बैंक ही करते है ।

कार्य व कार्य प्रणाली :-- कटौती ग हों का मुख्य कार्य विनिमय बिलों व हुण्डियों की देय तिथि से पूर्व कटौती करना है । बिल की राशि में से कटौती ग ह बिल की अवधि का ब्याज व संग्रहण व्यय काट कर शेष राशि बिल कटौती करवाने वाले को तुरन्त भुगतान कर देते हैं। कटौती ग ह इस राशि की व्यवस्था व्यापारिक बैंको से अल्प सूचनार्थ (Short Notice) एवं याचना राशि (Money at Call) द्वारा करते हैं । ये बिलों को देय तिथि से पूर्व ही बैंक को बेच देते हैं और कार्य में ब्याज दरों व कटौती दरों में अन्तर के द्वारा लाभ कमाते हैं । यदि कटौती के लिए पेश किये जाने वाले बिल स्वीकृति ग ह से स्वीकृति हों तो कटौती आसानी से बिना किसी हिचकिचाहट के कर दी जाती है और यदि बिल स्वीकृति ग ह से स्वीकृत नहीं हों ता लेखक व आहार्थी (Drawee) की प्रतिष्ठा के आधार पर की जाती है । कटौती ग ह प्रायः याचना राशि के रुप में व्यापारिक बैंक से अल्पकालीन ऋण प्राप्त करते हैं तथा इस बात का निरन्तन ध्यान रखते हैं कि कौन-सा बैंक कितनी रकम वापिस लेना चाहेगा तथा कौन सा बैंक ऑफ इंगलैण्ड भी प्रथम श्रेणी के बिलों, सरकारी प्रतिभूतियों तथा कोषागार विपत्रें की धराहर पर कटौती ग हों को त्यक्ष श्रेंणी के बिलो, सरकारी प्रतिभूतियों तथा कोषागार विपत्रों की धरोहर पर कटौती ग हों को प्रत्यक्ष ऋण प्रदान करता हैं । कभी -कभी आवश्यकता पड़ने पर बैंक ऑफ इंगलैण्ड कटौती ग हों के विनिमय बिलों की पुनकटौती कर कोषागार विपत्रों की खरीद पर वित्त की व्यवस्था करता है । बैंक ऑफ इंगलैण्ड कटौती दरों पर अनेक प्रकार से भावी नियन्त्रण रखता है।

(5) प्रलेखीय साख अथवा साख पत्र

(Documentary Creadit as Letters of Credit or L/C)

साख पत्र (**Letter of credit**) के माध्यम से बैंकों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अल्पकालीन साख प्रदान की जाती है । यही साख पत्र व्यवस्था ' लेखीय साख' (**Documentary Credit**) कहलाती है। अतः प्रलेखीय साख के अर्थ को समझने से पूर्व साख पत्र सम्बन्धी ज्ञान होना आवश्यक है ।

विनिमय बिल की भाँति ही विदेशी व्यापार में साख पत्र के माध्यम से विदेशी भुगतान किये जाते है । साख पत्र (**Letter of credit or L/C**) से आशय एक ऐसे प्रमाण पत्र से है होता है जो किसी व्यक्ति , संस्था अथवा बैंक द्वारा लिखा जाता है। इस प्रमाण पत्र में लेखक किसी अन्य व्यक्ति , संस्था अथवा बैंक से यह प्रार्थना करता है कि वह प्रमाण पत्र में अंकित व्यक्ति को एक निश्चित सीमा के भीतर किसी अंश तक साख प्रदान करें। डेविस (**Davi**s) के अनुसार "साख-पत्र वह पत्र हैं जिसमें एक व्यक्ति (साधारणतः बैंक अथवा व्यापारी) दूसरे व्यक्ति (जिसका नाम उसमें लिखा है अथवा जिससें वह तीसरे पक्ष (वह ग्राहक जिसे वह साख पत्र दिया गया है) का माल के जहाज से भेजने या किसी व्यापारिक सौंदें का भुगतान करने के लिए दी गई साख का पुर्नभुगतान कर देगा"[1]। इस प्रकार साख -पत्र बैंक द्वारा अपनी शाखा के ग्राहक का परिचायक है जिससे वह शाखा उस ग्रहक को साख दे सके।

साख पत्र में निम्न बातें सम्मिलित की जाती हैं --

(1) आयातकर्ता (क्रेता) का नाम

---

1. "Letter whereby one peron (usually a merchant or banker) promises another person (who is either named in the letter or to whom it is intended that the letter shall be shown and who is known as beneficiary) that he will reimburse the beneficiary any amount for which he may give credit to a third person (usually a customer of the person giving the letter), either by the shipment of goods or payment of money, in respect of a commercial transaction into which the beneficiary has entered or intends to enter with the third party."

– **Davis** '*Law relating to Commercial Letters of Credit*'.

(2) निर्यातकर्ता (विक्रेता) का नाम

(3) साख की राशि एवं अवधि

(4) व्यापार की शर्ते

(5) माल का वितरण

(6) महत्वपूर्ण लेख, जिनमें साधारणतः जहाजी बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी आदि होते हैं ।

साख पत्र की मुख्य विशेषतांएँ निम्नलिखित हैं--

(1) यह एक प्रमाण पत्र है जो आयातकर्ता के बैंक द्वारा निर्यातकर्ता के बैंक अथवा अपने ही शाखा को लिखा जाता है ।

(2) साख पत्र में निर्यातकर्ता को रकम के भुगतान का वचन दिया जाता है ।

(3) साख पत्र में विक्रय की शर्ते लिखी रहती हैं , जिनका पालन आवश्यक है ।

(4) इन समस्त शर्तो के पालन पर ही रकम का भुगतान सम्भव होता है ।

साख पत्र व्यक्तिगत साख पत्र अथवा वाणिज्यिक साख पत्र हों सकता है :--

(1) व्याक्तिगत साख

(Personal Credit):– व्यक्तिगत साख पत्र को व्यक्तिगत साख के नाम से सम्बोधित किया जाता है। व्यक्तिगत साख एक देश के बैंक द्वारा किसी विदेश में कार्य करने वाले बैंक के नाम लिखित प्रार्थना होती है कि वह साख के धारक (**Holder of this credit**) को साख में उल्लेखित राशि , साख पत्र के प्रस्तुत करने पर अपने देश की मुद्रा में दे। व्यक्तिगत साख के दो स्वरुप हो सकते हैं -- (1) यात्री चैक (**Traveller's cheque**) तथा (2) गश्ती साख (**Circular credit**)

(i) यात्री चैक :- विदेशी यात्राओं के मध्य धन के खोने आदि का डर रहता है ,अतः यात्री धन अपने देश के किसी बैंक में जमा कराता हैं, और बैंक उसके बदले में उसे यात्री चैक देता है । इस यात्री चैक में बैंक अपने दूसरे देश की शाखा को यात्री को निश्चित राशि का भुगतान करने का आदेश देता है। पहचान के लिए यात्री से भुगतान करने का आदेश देता है। पहचान के लिए यात्री से हस्ताक्षर चैक पर उसी समय करा लिये जाते है और भुगतान करने वाला बैंक उन हस्ताक्षरों से हस्ताक्षर मिलाकर भुगतान कर देता है। यात्री चैक का प्रयोग प्रायः कम रकम की आवश्यकता होने पर ही किया जाता है।

(ii) गश्ती साखः- व्यक्तिगत साख गश्ती साख अर्थात विश्वव्यापी भी हो सकती है । ऐसे साख पत्र को यात्री साख - पत्र (**Traveller's letter of credit**) भी कहते है। इस प्रकार यात्री साख पत्र एक गश्ती साख पत्र होता है जिसे ग्राहक का बैंक अपनी विदेशी शाखाओं अथवा प्रतिनिधियों के नाम लिखता है जिनमें उनको यह आदेश देता है कि अमुक राशि तक की रकम दी जा सकती है अतः इस प्रकार का साख - पत्र किसी बैंक विशेष के नाम में नहीं लिखा जाता।

इस प्रकार के साख पत्र में प्रायः एक निश्चित रकम लिख दी जाती है जो साख की सीमा का काम करती है । ग्राहक जब भी विदेश में किसी बैंक से कोई रकम लेता है तो वह रकम साख पत्र की पीठ पर लिख दी जाती है। इस प्रकार प्रत्येक बैंक (जिससे ग्राहक रकम लेता है। साख पत्र की पीठ वह रकम अंकित करता चला जाता है । प्रत्येक बैंक अपने से पहले बैंको द्वारा दी गयी रकमों को देख लेता है और यह ध्यान रखता है कि ग्राहक को दी जाने, वाली कुल रकम सीमा से अधिक न हो जाये ।

गश्ती साख - पत्रों के अन्तर्गत बैंक अपने ग्राहक को (अर्थात जिसे साख पत्र दिया जाता है। एक परिचय पत्र (**Letter of Identification**) देता है। इस परिचय पत्र पर ग्राहक के हस्ताक्षर होते हैं। इससे गलत व्यक्ति को भुगतान मिलने की आंशका कम हो जाती है। गश्ती साख -पत्र का योग प्रायः बड़ी रकम की आवश्यकता होने पर किया जाता है।

2. वाणिज्यिक साख

(Commercial Credit):– वाणिज्यिक साख पत्रों को वाणिज्यिक साख के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इसका आशय ऐसे साख पत्रों से होता है जो एक बैंक द्वारा लाभ प्राप्तकर्ता (जो सामान्यतः माल को विक्रेता होता है) के नाम में इस आश्वासन के साथ लिखा जाता है कि लाभ प्राप्तकर्ता को, यदि साख पत्र में उल्लिखित सभी शर्तों को उस ने पूरा कर दिया है तो तत्काल अथवा निर्धारित अवधि में सम्बन्धित राशि का भुगतान कर दिया जायेगा। यदि लाभ प्राप्तकर्ता को तत्काल भुगतान प्राप्त हो जाता है तो ऐसी साख को दर्शनी साख (**Sight credit**) कहते है तथा परिपक्वता तिथि पर भुगतान प्राप्त करने पर ऐसी साख को अवधि साख (**Term credit**) कहते हैं।

साख सम्बन्धी शर्तों के अनुसार लाभ प्राप्तकर्ता को भुगतान प्राप्त करते समय अथवा अपने द्वारा लिखित बिल पर स्वीकृति प्राप्त करते समय माल से सम्बन्धित विशिष्ट प्रलेखों को प्रस्तुत नहीं करना होता है तो साख को अप्रलेखीय साख (**clean credit or Non– documentary Credit**) कहते हैं । परन्तु प्रलेखों के प्रस्तुत किये जाने की स्थिति में साख को प्रलेखीय साख (**Documentary credit**) कहते हैं। इस प्रकार बैंकर द्वारा लिखा गया साख पत्र ही प्रलेखीय साख पत्र कहलाता हैं क्योंकि इसमें आयातक द्वारा खरीदे जाने वाले माल के अधिकार प्रपत्र विनिमय बिल के साथ प्रस्तुत किये जाने पर, बिल के भुगतान का प्रावधान होता है।

प्रलेखीय साख
(Documentary credit)

प्रलेखीय साख का अर्थ एवं परिभाषा--

(Meaning and Definition of Documentary credit)

जब साख सम्बन्धी शर्तों के अनुसार निर्यातकर्ता को भुगतान प्राप्त करते समय अथवा अपने द्वारा लिखित बिल पर स्वीकृति प्राप्त करते समय माल से सम्बन्धित महत्वपूर्ण प्रलेखों (जहाजी , बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी,) को प्रस्तुत करना होता है तो ऐसी साख को प्रलेखीय साख कहते है, जिसमें आयातकर्ता अपने बैंक को यह आदेश देता है कि अमुक देश के निर्यातक के पक्ष में अमुक रकम की साख खोल दी जाय और माल सम्बन्धी विशिष्ट प्रलेखों के प्रस्तुत करने पर उसे (निर्यातक) भुगतान कर दिया जाए। आयातक का बैंक निर्यातक के देश में स्थित किसी अभिकर्ता बैंक (**Correspondent Bank**) को निर्देश देता है कि, साख पत्रों की सभी शर्तो को पूरा करने तथा प्रलेख देने पर, किसी निर्यातकर्ता को भुगतान कर दे अथवा उसके द्वारा लिखित विनिमय बिल को स्वीकार कर ले। उन सारे प्रलेखों को फिर बैंक आयातक को प्रदान कर उसके खाते में उतनी ही रकम लिख देता है। प्रलेखीय साख पत्र की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं --

1. **एस॰ के वर्गीज** के अनुसार -- " प्रलेखीय साख व विधि के अन्तर्गत साख - पत्र निंगमित करने वाला बैंक क्रेता की ओर से यह लिखित आश्वासन देता है कि यदि निर्धारित पत्र के साथ उसे विनिमय बिल प्रस्तुत किया गया तो वह (बैंक) उस बिल को स्वीकृत अथवा भुगतान कर देगा।"[2]

2. **वी.॰वी.॰केशकामट** के अनुसार -- " वह साख - पत्र , निर्यातक के पक्ष में , आयातक के बैंक द्वारा लिखा गाया वह पत्र है , जिसमें निर्यातक को निश्चित माल भेजने और माल निर्धारित जहाजी अधिकार - पत्र की सुपुर्दगी करने पर एक निश्चित राशि तक विनिमय बिल लिखने का अधिकार दिया जाता है और उस बिल का निर्यातक के देश में ही भुगतान का आश्वासन दिया जाता है।"[2]

---

1. "Under a banker's letter of credit, the issuing bank gives a written undertaking on behalf of the buyer that the bank will honour the obligation of payment of acceptance, as the case may be on presentation of stipulated documents."
   – *Foreign Exchange and Financing of Foreign Trade* (1976 ed.) by. **S.K. Verghese**, p. 186.
2. "A letter of credit is a letter issued by the importer's bank in favour of the exporter authorising him to draw bills up to a particular amount (usually the contracted price) covering a specified shipment of goods and assuming him a payment against the delivery of presecribed shipping documents in his own country."
   – *Finance of Foreign Trade*, by **V.V. Keshkamat**, 1975 Edition, p. 70.

3. **अन्तर्राष्ट्रीय चैम्बर ऑफ कॉमर्स** के अनुसार -- " प्रलेखीय साख (**L/C**) की तकनीकी परिभाषा (**technical definition**) अन्तर्राष्ट्रीय चैम्बर ऑफ कॉमर्स द्वारा तैयार किए हुए 'यूनिफार्म कस्टम एण्ड प्रेक्टिस फॉर डॉक्यूमेण्टरी क्रेडिट' में दी गयी है, जिसमें लिखा है कि " लेखीय साख वह व्यवस्था है जिसके अनुसार सभी उल्लेखित प्रलेख प्राप्त हो जाने पर तथा साख सम्बन्धी उल्लिखित सभी शर्तो की पूर्ति हो जाने पर, साख प्रदान करने वाले बैंक द्वारा साख प्रार्थी (आयातकर्ता) के आदेशानुसार तीसरे पक्ष (लाभ प्राप्तकर्ता) या उसके आदेशित अन्य व्यक्ति को भुगतान किया जाता है अथवा लाभ प्राप्तकर्ता द्वारा लिखे गये विनिमय बिलों का भुगतान, स्वीकृति या कटौती की जाती है अथवा किसी दूसरे बैंक को ऐसे भुगतान करने के लिए अथवा बिलों की स्वीकृति या कटौती के लिए अधिकृत किया जाता है ।"[1]

अतः स्पष्ट है कि प्रलेखनीय साख या साख - प्रमाण पत्र (**L/L**) आयातकर्ता के बैंक द्वारा दी गयी अधिकृत सूचना है जिसमें निर्धारित व्यापारिक सौदे की शर्तो की पूर्ति होने पर निर्यातकर्ता द्वारा भेजे गये माल के भुगतान की गारन्टी दी जाती हैं।

प्रलेखीय साख की विशेषताएँ :-- प्रलेखीय साख की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :-

(1) प्रलेखीय साख की व्यवस्था आयातकर्ता के द्वारा अपने बैंक के माध्यम से की जाती है ।

(2) प्रलेखीय साख की सूचना आयातकर्ता का बैंक निर्यातक को देता है । इसमें प्रलेखीय साख की शर्तो का भी उल्लेख होता है।

(3) सम्बन्धित शर्तो को पूरा करने पर ही आयातक का बैंक निर्यातक के बिल की स्वीकृति कर देता है या उसका भुगतान कर देता है। इसमें भुगतान पर प्रलेख (**D/P**) अथवा स्वीकृति पर प्रलेख (**D/A**) स्पष्ट रुप से अंकित किया गया है।

(4) निर्यातक माल जहाज में रवाना कर उसके विशिष्ट प्रलेख (जहाजी, बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी) आयातकर्ता के बैंक को भेज देता है।

(5) बैंक को पत्र देने पर निर्यातक को भुगतान कर दिया जाता है।

(6) भुगतान के पश्चात भुगतान की राशि आयातक के नाम लिख दी जाती है और माल सम्बन्धी प्रलेख उसे दे दिये जाते हैं।

(7) आयातक के बैंक को ' प्रलेखीय साख का खोलने वाला बैंक' (**Issuing Bank**) कहा जाता है।

(8) निर्यातक के देश में स्थित सहयोगी बैंक को ' प्रलेखीय साख का भुगतान करने वाला (**Paying Bank**) कहा जाता है।

(9) प्रलेखीय साख कई प्रकार की होती है तथा खण्डनीय व अखण्डनीय, पुष्टिकृत व अपुष्टिकृत, दर्शनी व सावधि आदि।

प्रलेखीय साख के पक्षकार
(Parties to Documentary credits or L/C)

प्रलेखीय साख में चार पक्षकार सम्मिलित होते हैं, जैसे साख का आवेदक (आयातकर्ता) , साख का लाभार्थी (निर्यातकर्ता) तथा प्रलेखीय साख खोलने वाला बैंक एवं अभिकर्ता बैंक, जिनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है--

---

1. "Documentary credit, as any arrangement however named or described whereby a bank (the issuing bank) acting at the request and in accordance with the instruction of a customer (The applicant to the credit) is the make payment to or to the order of a third party (the beneficiary) or is to pay, accept or negotiate bills of exchange (drafts) drawn by the beneficiary, authorise such payments to be made or such drafts to be paid accepted or negotiated by another bank against stipulated documents and compliance with stipulated terms and conditions."

– Uniforms and Practice for Commercial Documentary Credit, published Internationl chamber of Commerce.

1. आयातकर्ता

(Importer):– यह माल का आयातक होता है तथा अपने बैंक को निर्यातकर्ता के पक्ष में साख पत्र खोलने के लिए प्रार्थना करता है। इसे प्रलेखीय साख खुलवाने वाला (**opener of the letter of credit**) भी कहते है।

2. लेखीय साख खोलने वाला बैंक

(Issuing Bank or opening bank): यह वह बैंक होता है जिसे आयातकर्ता साख प्रारम्भ करने के लिए आवेदन-पत्र देता है। यह बैंक आयातकर्ता के देश में स्थित होता है तथा आयातकर्ता की ओर (**on behalf of**) से साख - पत्र जारी करता है। अभिकर्ता बैंक इसी के आदेश का पालन करता है।

3. अभिकर्ता का बैंक

(paying Bank, confirming Bank or Correspondent bank or Negotiating Bank)

यह बैंक निर्यातकर्ता के देश में स्थित होता है तथा साख प्रदान करने वाला बैंक (**Issuing Bank**) के निर्देशानुसार कार्य करता है और अपनी सेवा के लिए कमीशन लेता है सेवा के रुप में यह निर्यातकर्ता से प्रलेख लेकर भुगतान करता है अथवा बिल स्वीकार करता है।

4. लाभार्थी

(Beneficiary):– प्रलेखीय साख का लाभार्थी निर्यातकर्ता होता है । इसी के कारण साख पत्र जारी करने की आवश्यकता पड़ती है । प्रलेखीय साख आयातकर्ता के बैंक द्वारा इसी के पक्ष में खोली जाती है । भुगतान पर प्रलेख (**D/P**) अथवा स्वीकृति पर प्रलेख (**D/A**) लाभ प्राप्तकर्ता ही लिखता है। अभिकर्ता बैंक इसे भुगतान करता है अथवा बिल पर स्वीकृति अंकित करता है।

चित्र द्वारा स्पष्टीकरण :-- प्रलेखीय साख की सम्पूर्ण प्रक्रिया में इन चारों पक्षकारों का जो दायित्व तथा कार्य होता है उसे निम्न चित्र के द्वारा समझा जा सकता है :-

प्रलेखीय साख पद्धति में पक्षकारो के दायित्व कार्य तथा भुगतान

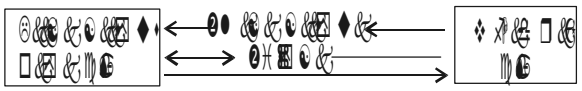

अतः इस रेखाचित्र को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है --

1. आयातक तथा निर्यातक के मध्य जब लिखित में, माल भेजने के लिए अनुबन्ध हो जाता है तो आयातक अपने बैंक को , निर्यातक के पक्ष में प्रलेखीय साख खोलने के लिए आवेदन पत्र देता है।
2. साख प्रदान करने वाला बैंक (**Issuing Bank**) आवेदन पत्र का विश्लेषण कर, सन्तुष्ट होने पर, आवेदन पत्र मंजूर कर अपने निर्देशों सहित साख - पत्र अभिकर्ता बैंक को भेज देता है।
3. अभिकर्ता बैंक जो कि निर्यातकर्ता के देश में स्थित होता है, साख - पत्र की सूचना निर्यातकर्ता को देता है तथा भुगतान करने के लिए गारन्टी देता है ।
4. अभिकर्ता बैंक की सूचना पर निर्यातकर्ता माल भेजने की व्यवस्था करता है। बिल लिखता है तथा सम्बन्धित सभी प्रलेख अभिकर्ता बैंक को दे देता है। यदि बिल दर्शनी है तो निर्यातक तुरन्त भुगतान प्राप्त कर लेता है। यदि बिल मुद्धती है तो अभिकर्ता बैंक बिल की स्वीकृति दान करता है तथा निर्यातक उसकी कटौती करा लेता है या अपने पास रख लेता है।

5. अभिकर्ता बैंक भुगतान या स्वीकृति सम्बन्धी कार्य करके, सम्बन्धित प्रलेख (जहाजी , बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी) साख प्रदान करने वाले बैंक (**Issuing Bank**) को भेज देता हैं।

6. अन्त में साख प्रदान करने वाला बैंक आयातकर्ता को सूचित करता है कि माल सम्बन्धी प्रलेख आ गये है, आयातकर्ता इस सूचना के आधार पर इस बैंक का हिसाब निपटाकर सभी प्रलेख प्राप्त कर लेंता है। जब माल गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाता हैं तो आयातकर्ता इन प्रलेखों की सहायता से माल प्राप्त कर लेता है।

लेखीय साख के प्रकार
(Types of Documentary Credit or L/C)

प्रलेखीय साख निम्न प्रकार की होती है--

1. खण्डनीय साख

(Revocable credit): इस प्रकार की साख ,किसी भी समय माल बेचने वाले को सूचित किये बिना रद्द अथवा परिवर्तित की जा सकती है। ऐसे परिवर्तन या रद्द से बैंक पर कोई कानूनी बाह्यता पैदा नहीं होती है, लेकिन बैंक को उसके द्वारा किये गये उन सभी भुगतानों स्वीकृतियों, अथवा कटौतियों के लिए पुनर्भरण का अधिकार रहता है जिन्हें उसने खण्डनीय साख में परिवर्तन अथवा रद्द करने की सूचना प्राप्ति के पूर्व किया हैं। सूचना मिलते ही बैंक

सम्बन्धित साख पत्र के अन्तर्गत सभी भुगतान बन्द कर देता है। साख - पत्र पर यह लिखना आवश्यक होता है कि जो साख दी जा रही है वह खण्डनीय (**Revocable**) है तथा अखण्डनीय (**Irrevocable**) है। यदि साख पत्र पर (**Revocable**) एवं (**Irrevocable**) शब्दों में से कुछ भी नहीं लिखा गया हो तो ऐसी साख को खण्डनीय (**Revocable**) समझा जाता हैं।

2. अखण्डनीय साख

(Irrevocable credit):– अखण्डनीय साख में बैंक पर निर्धारित रकम तक के भुगतान की कानूनी बाह्यता होती है क्योंकि एक बार खोलने के बाद इस प्रकार की साख में बिना सभी पक्षों (आयातक, निर्यातक तथा बैंक) की सहमति के न तो परिवर्तन किया जा सकता है, न इसे रद्द किया जा सकता है । इस प्रकार निर्यातकर्ता की द ष्टि से अखण्डनीय साख का विशेष महत्व है क्योंकि इसमें गारन्टी हो जाती है कि साख प्रदान की जाएगी । यही कारण है कि व्यवहार में खण्डनीय साख का प्रयोग बहुत कम होता है। प्रायः अखण्डनीय साख का ही प्रयोग होता हैं ।

3. पुष्टिकृत साख

(Confirmed credit):– जब साख खोलने वाला बैंक इस निर्देश के साथ साख-पत्र अभिकर्ता बैंक को भेजता है कि वह साख पत्र की पुष्टि कर दे, और जब अभिकर्ता बैंक साख - पत्र की पुष्टि कर देता है तो वह पुष्टिकृत प्रलेखीय साख कहलाती हैं। पुष्टि एक प्रकार से इस बात की गारन्टी है कि बिल स्वीकार कर लिया जायेगा अथवा भुगतान कर दिया जायेगा। इस प्रकार की पुष्टि के परिणामस्वरुप , अभिकर्ता बैंक भी साख पत्र की शर्तो में बँध जाता है पुष्टि करने के लिए बैंक कुछ कमीशन लेता है ।

4. अपुष्टीकृत साख

(Unconfirmed Credit)

जब साख खोलने वाले बैंक द्वारा, अभिकर्ता बैंक को साख-पत्र की पुष्टि करने का अधिकार नहीं दिया जाता है तो इसे अपुष्टिक त साख -पत्र कहते हैं। पुष्टिक त एंव अपुष्टिक त साख में मुख्य अन्तर यह है कि पुष्टिकर्ता साख भुगतान प्राप्त नहीं होता हैं तो निर्यातकर्ता को कोई दायित्व नहीं होता जबकि अपुष्टिकर्ता साख में निर्यातकर्ता का दायित्व बना रहता है कि वह प्राप्त साख का वापस भुगतान अभिकर्ता बैंक का करा दे अर्थात् अभिकर्ता बैंक लाभार्थी से रकम वापस वसूल कर सकता हैं।

5. दर्शनी एवं सावधि साख

(Sight and Term Credit): प्रलेखीय साख दर्शन अर्थात माँग पर देय अथवा सावधि अर्थात मुद्धती (लाभार्थी) को तत्काल भुगतान प्राप्त हो जाने की व्यवस्था की जाती है साख को दर्शनी साख कहते हैं । अभिकर्ता बैंक भुगतान करके माल

सम्बन्धी प्रलेख ले लेता है। इसके विपरीत यदि अभिकर्ता बैंक निर्यातकर्ता को उसके द्वारा माल सम्बन्धी प्रलेख ले लेता हैं। इसके विपरीत यदि अभिकर्ता बैंक निर्यातकर्ता को उसके द्वारा माल सम्बन्धी लेख प्रस्तुत करने पर बिल की स्वीकृति ही देता हैं। तो इसे सावधि साख कहा जायेगा। निर्यातकर्ता या तो बिल की कटौती करा लेगा या परिपक्वता तिथि पर भुगतान प्राप्त कर लेगा।

6. आश्रय - विहीन साख पत्र

(Without Resource letter of credit):– कई बार साख पत्र में यह व्यवस्था होती है कि यदि आयातक बैंक को रकम चुकाने में असमर्थ हों जाय तो बैंक वह रकम निर्यातक से वापस वसूल कर सकता है। ऐसी स्थिति में निर्यातक की जोखिम बढ जाती है। अतः निर्यातक ऐसे साख - पत्र को स्वीकार नहीं करना चाहता। ऐसे साख पत्र को आश्रय - युक्त साख पत्र (**With Resources L/C**) कहते हैं। अतः सामान्यतः जो साख - पत्र लिखे जाते हैं उनमें बैंक जो रकम निर्यातकर्ता को भुगतान कर देती है उसे वापस लौटाने की कोई व्यवस्था नहीं होती । इस प्रकार यदि आयातकर्ता की आर्थिक स्थिति बिगड़ जाती है। तो उसका दायित्व निर्यातकर्ता को नहीं भुगतान पड़ता। अतः इस प्रकार के सामान्य साख पत्रों को आश्रय विहीन साख - पत्र (**Without Resources letter of credit**) कहा जाता हैं।

7. लाल वाक्य साख

(Red clouse L/C):– इस प्रकार की साख का प्रयोग लाभार्थी, आयातक से पेशगी रकम (**Advance**) प्राप्त करने के लिए करता है। रकम प्राप्त कर निर्यातक इसका प्रयोग आन्तिरक भागों से माल एकत्रित कर उसे बन्दरगाह तक लाने अथवा आवश्यक कच्चे माल की प्राप्ति में करता है।

8. हस्तान्तरणीय साख

(Transferable L/C):– ऐसी साख में लाभार्थी यह अधिकार प्राप्त कर लेता है कि वह साख पत्र या बिल की राशि स्वयं प्राप्त कर सकता है अथवा उस साख -पत्र या बिल का हस्तान्तरण उस व्यक्ति को कर सकता है जिससे उसने (निर्यातक ने) माल खरीदा है । फलतः वह राशि उस मध्यस्थ व्यापारी को प्राप्त हो जायेगी जिससे निर्यातक ने माल खरीदा है । साख पत्र में हस्तान्तरणशीलता का गुण लाने हेतु लाभार्थी के नाम के बाद **or assignee** शब्द को लिखा जाता है। फलतः लाभार्थी को साख - पत्र को दूसरे के नाम में हस्तान्तरण करने का अधिकार मिल जाता है । अतः ऐसे साख पत्र को हस्तान्तरणीय साख के नाम से पुकारा जाता है।

प्रलेखीय साख में प्रयुक्त किये जाने वाले प्रलेख

प्रलेखीय साख में , विनिमय बिल के साथ सामान्यतः निम्नलिखित प्रलेखों को संलग्न किया जाता है, इन प्रलेखों की प्राप्ति पर ही बैंक द्वारा भुगतान अथवा विनिमय बिल को स्वीकृत किया जाता है--

1. जहाजी बिल्टी (**Bill of lading or B/L**)
2. वाणिज्यिक बीजक (**Commercial Invoice**)
3. बीमा पॉलिसी (**Insurance Policy**)
4. वाणिज्यदूतीय बीजक (**Consular Invoice**)
5. बान्धक पत्र (**Letter of Hyothecation**)
6. उद्‌गम का माण पत्र (**Certificate of origin**)

Note: (प्रथम 6 प्रलेख "विदेशी व्यापार - प्रमुख प्रलेख " नामक अध्याय 13 में देखे)

7. किस्म का प्रमाण पत्र

(Certificate of Quality):– आयातकर्ता द्वारा भेजे गये आदेश में सामान्यतः यह लिखा होता है कि माल की किस्म कैसी होगी । अतः इस हेतु निर्यातक द्वारा एक किस्म का प्रमाण - पत्र विश्वस्त मानक संस्थाओं के द्वारा अथवा अधिकारी से प्राप्त कर विनिमय बिल के साथ संलग्न करना होता है। यह प्रमाण - पत्र यह बताता है कि भेजा गया माल अनुबन्ध के अनुरुप ही है।

8. भार सम्बन्धी प्रमाण पत्र
(Certificate of Weight)

ऐसे पदार्थ जिनमें स्वतः ही होती रहती है उनके लिए भार - सम्बन्धी माण पत्र आवश्यक समझा जाता है। यह प्रमाण पत्र बन्दरगाह अधिकारियों द्वारा किया जाता है जो इस बात का प्रमाण है कि जहाजी लदान के वक्त उस माल का वास्तविक वजन क्या था?

प्रलेखीय साख पद्धति के लाभ या महत्वः

1. व्यावसायिक द ष्टि से प्रलेखीय साख का अत्यधिक महत्व है क्योंकि यह साख व्यापार के दोनों पक्षों के लिए उपयोगी होती है और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अभिव द्धि में सहायता करती है। भुगतान की यह पद्धति अपेक्षाकृत कम खर्चीली होती है
2. निर्यातकर्ता को बैंक की ओर से वस्तुओं के लिए भुगतान प्राप्ति का आश्वासन मिलता है जो मात्र आयातकर्ता की ख्याति एवं साख पर निर्भर रहने की तुलना में अधिक अच्छा समझा जाता है।
3. प्रलेखीय साख से निर्यातकर्ता उन वस्तुओं के लिए जिन्हें वह स्वयं खरीदता है, बैंक से ऋण प्राप्त करने में भी सफल हो जाता है।
4. प्रलेखीय साख अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान से सम्बन्धित हस्तान्तरण जोखिम को कम करके निर्यातकर्ता को सुरक्षा प्रदान करती है।
5. आयातकर्ता को भी यह विश्वास रहता है कि निर्यातकर्ता को भुगतान तब ही मिलेगा जबकि उसने साख - पत्र में उल्लेखित सभी शर्तो का पूर्ण रुप से पालन कर लिया है।

निष्कर्ष :- अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान में सर्वोतम विधि कौन सी है यह निश्चय करना अत्यन्त कठिन है । कोई एक ही विधि सर्वोतम नहीं हो सकती । फिर भी प्राथमिकता के क्रम में निर्यातकर्ता की द ष्टि से निम्न सूची तैयार की जा सकती हैं -

1. रोकड़ भुगतान पर प्रलेखों की सुपुर्दगी,
2. प्रलेखीय साख
   (a) पुष्टिकृत एवं अखण्डनीय
   (b) अपुष्टिकृत एवं अखण्डनीय
   (c) अपुष्टिकृत एवं खण्डनीय
3. विदेशी विनिमय बिल :--
   (a) दर्शनी बिल , भुगतान पर प्रलेखों की सुपुर्दगी
   (b) मुद्धती बिल, स्वीकृति पर प्रलेखों की सुपुर्दगी
   (c) अप्रलेखीय बिल
4. खुला खाता प्रेरणाएँ
5. अन्य विधियाँ।

अध्याय-7
निर्यात विपणन एवं संवर्द्धन
(Export Marketing and Promotion)

साधराणतया अधिकांश व्यवसायिक संस्थान विदेशी विपणन की तुलना में धरेलू विपणन को श्रेयस्कर समझते हैं, क्योंकि देश के भीतर विपणन करना अधिक सरल व कम जोखिम वाला है। उदाहरण के लिये ऐसा करने में व्यवसायियों को किसी भिन्न भाषा, भिन्न मुद्रा प्रणाली, भिन्न आर्थिक, राजनैतिक, वैधानिक एंव सामाजिक आशाओं का सामना नहीं करना पडता है। जबकि विदेशों मे कानूनी और राजनैतिक अनिश्चतताएं एंव जटिलताएं कहीं अधिक हो सकती है। मुद्रा तथा भाषा सम्बधीं कठिनताएं भी विदेशी व्यापार में समस्या उत्पन्न कर देती हैं। विदेशी उपभोक्ताओं का व्यवहार, स्वभाव आदि बिल्कुल अनजाना होता है। अब प्रश्न यह उठता है कि इतनी सब समस्याओं, कठिनतायों तथा अतिरिक्त जोखिम के होते हुए भी व्यापारिक फर्म अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के लिए क्यों, उत्सुक रहती है? इसके कई कारण हो सकते हैं :

(i) देश के भीतर विपणन के अवसर समुचित मात्रा में उपलब्ध न हो अथवा व्यापार को बढ़ाने के अवसर अत्यन्त सीमित अवस्था में हो, देश की आर्थिक प्रगति बहुत धीमी हो, सरकार का रूख व्यापारियों के प्रति अनूकूल न हो, टेक्सों की दरें बहुत उचीं हो तो भी आन्तरिक विपणन की प्रगति में बाधा पड सकती है।

(ii) दूसरे इन सब परिस्थितियों के विपरीत विदेशों मे विपणन के अवसर विशेष आकर्षक हों तथा अपेक्षाकत लाभदायक एवं सुलभ हों।

(iii) तीसरे, मन्दी के दुष्परिणामों को समाप्त करने के लिए उत्पादन बढाकर कीमतों में कमी लाने के लिए, तथा अपनी विस्तारवादी नीति के रूप में फर्म विदेशी विपणन की ओर निहार सकती है।

(iv) कभी कभी सरकार द्वारा भी व्यावसायियों को विदेशी व्यापार के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। अतः सरकार द्वारा दी जाने वाली इन निर्यात प्रेरणाओं का लाभ उठाने के लिए भी व्यवसायी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को अपनाने लगते है।

निर्यात विपणन, विपणन प्रणाली (Marketing System) का ही एक भाग है। प्रभावी निर्यात विपणन के लिए अपनाये जाने वाले सिद्धान्त, विचार एवं तकनीकें वही है जिनका प्रयोग आन्तरिक विपणन (Internal Marketing) में किया जाता है। संक्षेप में निर्यात विपणन कार्यक्रम को विकसित करते समय भी किसी फर्म के सामने यही लक्ष्य रहता है कि उचित उत्पाद, उचित कीमत पर, उचित समय पर उचित व्यक्ति के पास पहुँचा दिया जाए। यघपि यह स्पष्ट है कि राष्टीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विपणन के विभिन आधारभूत सिद्धांतों में समानता है लेकिन विभिन्न देशों के आर्थिक, राजनीतिक, सास्क तिक एंव व्यवसायिक वातावरणों घटकों की जानकारी प्राप्त करें जो कि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को प्रभावशाली है जैसे उस देश विशेष की सभ्यता, संस्क ति, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक वातावरण आदि।

(I) निर्यात विपणन से आशय (Meaning of Export Marketing) विपणन से व्यावसायिक क्रियाओं की एक सम्पूर्ण प्रणाली है जो वर्तमान एवं भावी ग्राहको की इच्छाओं को सन्तुष्ट करने वाले उत्पादों एवं सेवाओं की योजना बनाने, कीमत निर्धारित करने, संवद्धर्न करने व वितरण करने के अभिन्यास से सम्बन्ध रखती है । निर्यात विपणन सें एक फर्म या उत्पादक द्वारा की जाने वाली उन क्रियाओं से है, जो दूसरे देश या देशों के उपभाक्ताओं, प्रयोक्ताओं की इच्छाओं को सन्तुष्ट करने वाले उत्पादों एवं सेवाओं के विक्रय से सम्बन्ध रखती हैं।

(II) निर्यात विपणन के उद्धेश्यों (Objects of Export Marketing) निर्यात विपणन के उद्देश्यो का वर्गीकरण मुख्य रुप से दो भागों में किया जाता है, प्रथम निर्यात विपणन के सामान्य उद्देश्य एवं द्वितीय निर्यात विपणन के विशिष्ट उद्देश्य। इनका वर्णन इस प्रकार किया जा सकता हैं-

(1) निर्यात विपणन के सामान्य उद्देश्य
(General Objectives of Export Marketing)

निर्यात विपणन के सामान्य उद्देश्य भी दों प्रकार से वर्णित किये जा सकते है, प्रथम ऐसे उद्देश्य जिनका सीधा सम्बन्ध लाभार्जन से हो इसमें अधिकतम लाभ कमाना, प्रति इकाई लाभ में व द्धि करना आदि को शामिल किया जाता है। दूसरे प्रकार के उद्देश्य ऐसे होते है, जिनका सीधा सम्बन्ध लाभ कमाने से न हो कर अन्य उद्देश्य प्राप्त करने से होता है । इसमें विदेशी मुद्रा कमाना, बिक्री की मात्रा में व द्धि करना, अधिक बाजार भाग को अपने अधिकार में करना, अधिक निर्यात करके देश के आर्थिक विकास में योगदान देना ,रोजगार के साधनों में व द्धि करना, विदेशी बाजारो में अपने उत्पादों की पहचान बनाना, ख्याति एवं प्रतिष्ठा में व द्धि करना' को सम्मिलित किया जा सकता है।

निर्यात विपणन के द्वारा लाभ कमाने का उद्देश्य हालाँकि सदैव प्राथमिकता के क्रम में ऊपर रहेगा, पर यह आवश्यक नहीं है । अधिकांश भारतीय फर्मे लाभोपार्जन के लिए निर्यात नहीं करती, क्योंकि उन्हे माल खपाने की समस्या है ही नही। ये फर्म विदेशी मुद्रा कें अर्जन या आयातों के लिए विदेशी मुद्रा की व्यवस्था करने हेतु निर्यात करती हैं।

(2) निर्यात विपणन के विशिष्ट उद्देश्य
(Specific Objectives of Export Marketing):–

निर्यात विपणन के उपरोक्त सामान्य उद्देश्यों के अतिरिक्त अनेक विशिष्ट उद्देश्यों को भी प्राप्त किया जा सकता है। इनका उद्देश्य विक्रय एवं उत्पादन की अस्थिरता को दूर कर स्थिरता प्रदान करना देश के आर्थिक विकास में योगदान देना, कम्पनी के प्रयोग में आने वाली विदेशी मुद्रा को कमाना , पूर्ण उत्पादन क्षमता के उपयोग के लिए अवसर जुटाना, रोजगार - विक्रय लाभ में स्थिरता लाना आदि अनेक निर्यात विपणन के विशिष्ट उद्देश्य होते है ।

उपयुक्त उद्देश्यों का चयन
(Selection of Appropriate Objectives)

प्रत्येक फर्म को अपनी आवश्यकता के अनुरुप इन उद्देश्यो या लक्ष्यों का चयन करना चाहिए। इनका अनुकूलतम संयोग भी अपनाया जा सकता हैं उद्देश्यों को प्राथमिकता के क्रम में भी रख जा सकता है। लेकिन उद्देश्यों का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये उद्देश्य राष्ट्रीय उद्देश्यों के समपार्रिवक हो उसके विरोघी या उसकी अवमानना करने वाल नही। भावनात्मक द ष्टिकोण को छोडकर यथार्थवादी द ष्टिकोण से इन उद्देश्यों या लक्ष्यो का चयन किया जाना चाहिए फर्म के लिए इन उद्देश्यों की व्यापक उपदेयता तभी होगी, जब ये फर्म की विपणन व्यूह-रचना के लिए उपयोगी सार्थक हों।

(III) निर्यात विपणन का महत्व
(Importance of Export Marketing)

भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में निर्यात विपणन का अपना विशेष महत्व है । हमारा व्यापार सन्तुलन आयातों की अधिकता से सामान्यतया प्रतिकूल रहता है । निर्यातो से जो हम बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का अर्जन करते है उसका बड़ा भाग तेल के आयात में हमें व्यय करना पड़ता है, इसके बाद बहुत कम विदेशी मुद्रा अन्य कार्यो के लिए बहुत बचती है।

जब तक तेल का कोई शक्तिशाली विकल्प उभर कर सामने नही आता, तब तक हमें अपने अर्जित विदेशी मुद्रा के संसाधनो को इसमें व्यय करना ही होगाा, इसका अब तक कोई विकल्य नही है। लेकिन विदेशी बाजारों में अपने उत्पाद का बाजार बना कर इस अमूल्य विदेशी मुद्रा को कमाया जा सकता है। निर्यात विपणन की सम्भवनाओं का पता लगाकर उनकी पूर्ति व विदोहन के लिए उचित कार्यक्रम बनाकर, व्यावसायिक फर्मे न केवल अपनी विधमान उत्पाद - पंक्तियो का विस्तार व विविधीकरण कर सकती है, वरन अपने लाभ अर्जन करने के अवसरों को भी बढ़ा सकती हैं

हमारे देश के पास विपुल प्राकृतिक साधनों के असीम भण्डार हैं एवं अपार मानवीय क्षमता हैं, प्रबन्धकीय चातुर्थ है, फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हमारा भाग बहुत कम है। जापान जैसा छोटा सा देश जिसके पास ना तो खनिज एवं प्राकृतिक सम्पदा है, न ही अपार मानवीय शक्ति हैं, फिर भी कई उत्पादों में जापान ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की हैं। विश्व का सर्वाधिक कारें बनाने वाला देश अमेरिका आज जापान सें कारों का आयात करता है। आखिर इस सब का श्रेय किसे है? यह श्रेंय है तो जापान के निर्यात विपणन को है जिसने उचित निर्यात नीति की स्थापना करके उसे सही रुप सें क्रियान्वित किया हैं।

IV. निर्यात विपणन की प्रकृति
(Nature of Export Marketing)

विपणन प्रबन्धक निर्यात नीति बनाते समय उन सभी बाजार शक्तियों पर उचित रुप सें ध्यान देता हैं, जो विपणन कार्यक्रम पर अपना प्रभाव डालती है। इसमें व्यापारियों के व्यवहार , उपभोक्ताओं के व्यवहार, प्रतियोगियों के व्यवहार, सरकारी संस्थाओं के व्यवहार आदि को शामिल किया जाता है। इसका भी उचित रुप से आकलन करता है, घरेलु बाजारों की तुलना में विदेशी बाजारों के सन्दर्भ में इनका मूल्यांकन करना कठिन कार्य हैं।

आन्तरिक व्यापार की तुलना में विदेशी व्यापार उतना सरल नहीं होता। भारत में अधिकांश उत्पादों में आन्तरिक प्रतियोगिता बहुत कम हैं, अतः व्यावसायिक फर्मो को यहाँ विक्रय करने में अधिक सुविधा होती हैं । यहाँ जोखिम भी कम होती है व विपणन के असीमित अवसर भी उपलब्ध रहते हैं। विदेशी बाजारों में वैधानिक जटिलता, राजनैतिक अनिश्चितताएँ आदि अधिक होती है। इसके अलावा जटिलता की मात्रा भी अपेक्षाकृत अधिक होती हैं।

उपभोक्ताओं की रुचियों व आदतो, क्रय व्यवहारों, प्रव तियों में होने वाले परिवर्तनों की शीघ्र जानकारी विदेशी बाजारों के सन्दर्भ में नही हो पाती । इस प्रकार यह कहा जा सकता हैं, कि निर्यात विपणन की प्रकृति गतिशील, जटिल एवं अनिश्चिततापूर्ण होती है।

V. निर्यात विपणन के आधारभूत कार्य
(Basic Functions of Export Marketing) —

निर्यात विपणन के कार्यो में निम्न बातें सम्मिलित हैं --

(1) निर्यात नीति का विकास
(Development of an Export Policy)

निर्यात नीति से यहाँ हमारा आशय केन्द्रीय सरकार द्वारा समय-समय पर घोषित की जाने वाली निर्यात नीतियों से नहीं हैं। यहाँ निर्यात नीति से आशय किसी व्यावसायिक फर्म द्वारा अपनायी जाने वाली निर्यात नीति से है। यह बात गौण है कि व्यावसायिक फर्म सरकारी है या निजी। प्रत्येक फर्म जो विदेशी बाजारों के समुचित विदोहन के लिए प्रयास करना चाहती हो, उसे उपयुक्त निर्यात नीति का विकास करना आवश्यक है। प्रत्येक फर्म के लिए एक सामान्य रूप से लागू होने वाली निर्यात नीति को नहीं अपनाया जा सकता । यह इस बात पर निर्भर करेगा, कि फर्म के समक्ष उपलब्ध चुनौतियाँ क्या है, व उनका मुकाबला एवं सामना वह फर्म किस प्रकार कर सकती हैं।

कोई भी सरकारी या गैर सरकारी व्यावसायिक उपक्रम जी विदेशी बाजारों के विदोहन हेतु निर्यात का एक निश्चित विपणन कार्यक्रम बनाती है, एवं उसके भावी रूप से क्रियान्वयन, विपणन कार्यक्रम के अनुरूप उचित दिशा प्रदान करने तथा समस्त विपणन यासों को समन्वित करने, प्रयत्नों में सामज्जस्य स्थापित करने क लिए फर्म का शीर्ष विपणन अधिकारी या निर्यात प्रबन्धक जो आधार नीति तैयार करते हैं, उसे ही निर्यात नीति के रूप में वर्णित किया जा सकता है।

अतः स्पष्ट है कि निर्यात नीति से आशय सरकार द्वारा घोषित निर्यात नीति से नहीं होकर फर्म द्वारा अपनायी जाने वाली निर्यात नीति से हैं।

निर्यात नीति का क्षेत्र अत्यन्त ही व्यापक होता हैं। उसपे निर्यात के क्षेत्र में प्रवेश का निर्णय लेने से पूर्व विचार करने योग्य बातें, निर्यात पर प्रभाव डालने वाले अनेक प्रकार के आर्थिक व गैर आर्थिक तत्वो के प्रभाव का अध्ययन, विपणन कार्यक्रम

के आधारभूत उद्देश्यों का निर्धारण, निर्यात विपणन कार्यक्रम के उद्देश्यों को इस आशय के लिए तय राष्ट्रीय उद्देश्यों के साथ समायोजित करना, निर्यात बाजारों का चुनाव, निर्यात सामग्री का चुनाव, वस्तु नियोजन सम्बन्धों का निर्णय , वितरण नीतियाँ, कीमत एवं उधार नीतियाँ आदि सभी इसके क्षेत्र के अन्तर्गत आने हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की समस्याएँ भी, जिनका सम्बन्ध निर्यात विपणन से है, इसके क्षेत्र के अन्तर्गत आती है।

इस प्रकार उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि निर्यात क्षेत्र में प्रवेश करने से लेकर निर्यात विपणन कार्यक्रम के लिए विभिन्न प्रकार की नीतियों को तय करने, निर्धारित करने तक के सभी कार्य इसमे सम्मिलित है।

(2) निर्यात के लिए उत्पाद अनुकूलन
(The adoptation of the product for export)

अधिकांश उत्पादन जों कि देश के आन्तरिक बाजारों में उत्पाद कें लिए निर्मित किया जाता है, विदेशी मण्डियों में भी उसी रूप में नहीं बिक सकता तथा प्रत्येंक विदेशी बाजार में एक प्रकार का ही माल पसन्द किया जाए, यह भी सम्भव नही। अतः जब एक संस्था निर्यात बाजार में प्रवेश करती है तो वह उस बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप अपने उत्पाद को समायोजित करने के लिए उसमें सुधार करती है तो इस क्रिया को अनुकूलन कहा जाता है।

(3) निर्यात के लिए वस्तु का पैकेजिंग सम्बन्धी कार्यक्रम बनाना।

(4) विक्रय विज्ञापन एवंम विक्रय प्रवर्तन सम्बन्धी कार्यक्रम बनाना।

(5) उत्पाद के लिए परिवहन तथा प्रलेखों की व्यवस्था करना।

(6) साख एवं भुगतान की विधि का निर्धारण करना ।

(7) वित्त , विनिमय सम्बन्धी कार्य।

(8) विक्रय उपरान्त सेवाओं सम्बन्धी कार्य करना ।

VI. निर्यात विपणन क्रियाविधि
(Export Marketing Procedure)

निर्यात विपणन एक विशिष्टता प्राप्त कार्य है । इसके अन्तर्गत बहुत से कार्य करने पड़ते है जिनके लिए सम्पूर्ण जानकारी व सूचनाओं के ज्ञान की आवश्यकता होती है। निम्नलिखित विषय (Points) निर्यात विपणन क्रियाविधि में सम्मिलित किये जाते है-

1. निर्यात औपचारिकताएँ - एक समीक्षा।
2. निर्यात बाजार अनुसन्धान एवं निर्यात बाजार का चयन ।
3. निर्यात विपणन के लिए योजना ।
4. निर्यात आदेश का संसाधन एवं निर्यात प्रलेखपोषण।
5. निर्यात बाजार में उत्पाद नियोजन ।
6. निर्यात वितरण वाहिका ।
7. निर्यात विपणन एवं निर्यात विक्रय संवर्द्धन।
8. निर्यात पैकेंजिंग।
9. निर्यात मूल्य।
10. निर्यात वित्त पोषण।

(1). निर्यात औपचारिकताएँ - एक समीक्षा।
(Export Formalities & A Review) : –

विदेशी व्यापार के संदर्भ मे माल के जहाज पर लदान से पूर्व तथा लदान के पश्चात् कई औपचारिकताओं को पूरा करना

पड़ता है । उदाहरण के लिए -

(i) निर्यातक अपनी वस्तु के बारे में आयातक को चाही गई सूचनाएँ देता है। वह आयातक के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करता है ।

(ii) एक भारतीय निर्यातक अग्रलिखित अधिकारियों तथा संस्थाओं सें आयातको के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता हैं ।

(a) निर्यात संवर्द्धन परिषदे - जिनकी संख्या 16 है तथा जो 16 विभिन्न वस्तुओं के लिए है ।

(b) चाय, काफी, रबड़, इलायची, तम्बाकू, सिल्क के लिए बने वस्तु मण्डल ।

(c) भारतीय वाणिज्यिक सूचना एवं समंक विभागं।

(d) विदेशी राष्ट्रो के भारत में दूतावास ।

(e) विदेशी राष्ट्रो में भारतीय दूतावास ।

(f) राजकीय उपक्रम , विशेषतया भारतीय राज्य-व्यापार निगम।

(g) व्यापार विकास प्राधिकरण (TDA), भारतीय निर्यात संगठन संघ (FIEO), भारतीय व्यापार मेला अधिकरण (TFAI) राज्य-व्यापार निगम।

(h) वाणिज्यि बैंक तथा भारतीय रिजर्व बैंक ।

(i) फेडरेशन ऑफ इण्डियन चेम्बर ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्री, विभिन्न राज्यों के वाणिज्यिक चेम्बर तथा व्यापारिक पार्षद।

(j) विदेशी वाणिज्यिक चेम्बर जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक चेम्बर भी सम्मिलित है।

(j) विभिन्न संगठनो द्वारा प्रकाशित सामग्री , जर्नल , पत्रिकाएँ आदि।

(iii) आयातक व्यापारी निर्यातक से माल के सम्बन्ध में पूछताछ करता है। इस सम्बन्ध में निर्यातक द्वारा आयातक का निम्न शर्ते लिखनी चाहिए--

(a) मूल्य के सम्बन्ध में -- जहाज - लदाई मुक्त (FOB), बीमा व्यय मुक्त (CIF), जहाजी भाड़ा मुक्त (C & F), सर्व-व्यय मुक्त मूल्य आदि।

(b) आदेश की पुष्टि पर निर्यातक द्वारा कितने समय पश्चात् माल भेजा जायेगा।

(c) भुगतान की विधि क्या रहेगी जैस प्रलेखीय साख आदि।

(d) पैकिंग के सम्बन्ध में निर्देश।

(e) कमीशन तथा छूट के सम्बन्ध में निर्देश।

(f) पंच-निर्णय का निर्धारण।

(g) अन्य-सूचनाएँ।

(iv) यदि आयातक उपरोक्त मूल्य उद्धरण (Quotation) से सन्तुष्ट है तो उसके द्वारा आदेश दे दिया जायेगा, जिसकी स्वीक ति निर्यात द्वारा दे दी जायेगी।

(v) इसके पश्चात भारतीय निर्यातकों को रिजर्व बैंक से सांकेतिक संख्या (Code Number) लेनी पड़ती है। इसकी आवश्यकता विदेशी विनिमय नियन्त्रण के अन्तर्गत होती है।

(vi) इसके पश्चात् निर्यातक पैकिंग की व्यवस्था करता है ताकि आदेश्ति माल एकत्रित किया जा सके।

(vii) जैसे ही प्रेषण के लिए माल तैयार हो जाये, निर्यातक का निर्यात निरीक्षण एजेन्सी से निरीक्षण प्रमाण -पत्र के लिए सम्पर्क स्थापित करना चहिए यदि उसका माल किस्म नियन्त्रण और लदान से पूर्व नियमों के अन्तर्गत आता है।

(viii) निर्यातक एजेन्ट सीमा शुल्क कार्यालय के अधिकारियों से माल का निर्यात करने की आज्ञा करने के लिए आवेदन पत्र देता है। इस आवेदन पत्र में माल का पूर्ण विवरण होता है। इस प्रकार की अनुमति प्राप्त करना इसलिए अनिवार्य होता

है कि यह ध्यान रखा जा सके कि जिस माल के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगा हो वह बाहर न जा सके। इसके पश्चात् निर्यातक जहाजी बिल तथा अन्य प्रलेख तैयार करता है जिनकी आवश्यकता कस्टम अधिकारियों को होती है।

(ix) कस्टम की आज्ञा मिल जाने के बाद निर्यातक या प्रेषक एजेन्ट जहाज की व्यवस्था करता है तथा जहाजी आज्ञा-पत्र प्राप्त करता है। इस आज्ञा-पत्र के देखने के बाद ही माल जहाज पर लादने के की अनुमति दी जाती है।

(x) निर्यातक द्वारा निम्न निर्यात प्रलेख प्राप्त किये जाते हैं।

(a) रिजर्व बैंक से सांकेतिक संख्या।

(b) व्यापरिक बीजक।

(c) GR-1 from/PP/EP/COD Form

(d) मूल स्थान का प्रमाण पत्र

(e) बीमा पॉलिसी/ECGC पॉलिसी

(f) जहाजी बिल।

(g) मेंट की रसीद/जहाजी बिल्टी।

(h) साख-पत्र/D.A. Bill of DP. Bill।

(i) निर्यात निरीक्षण एजेन्सी का प्रमाण-पत्र।

(K) अन्य प्रेलख जिनकी आवश्यकता नियमों के अन्तर्गत पड़ती हो।

(xi) उपरोक्त सभी औपचारिकताओं, की प्रर्ति के पश्चात माल कर लदान आयातक को कार दिया जाता है तथा निर्यातक या प्रेषक एजेन्ट द्वारा समस्त प्रेलख विभिन्न अधिकारियों से प्राप्त कर लिये जाते हैं।

(xii) सब कार्य सम्पन्न हो जाने पर प्रेषक एजेन्ट अपने द्वारा कियें गये खर्चो का एक बिल तैयार करता है और उसमें अपना कमीशन भी जोड़ देता है इस बिल को जहाजी बिल्टी की प्रतियों, जहाजी बिल की दो प्रतियों, डॉक चालान तथा बीमा-पत्र के साथ निर्यातक को भेजता है। निर्यातक इन सब प्रलेखों को प्राप्त करने पर प्रेषक एजेन्ट को बिल चुका देता है।

(xiii) इसके पश्चात निर्यातक भेजे गये माल का बीजक तैयार करता है।

(xiv) निर्यातक बैंक को सम्बन्धित प्रलेख सौंपने के साथ-साथ तुरन्त आयातक को इस बात की सूचना दे देता है कि माल रवाना कर दिया गया है और अधिकार सम्बन्धी प्रलेख बैंक द्वारा भेजे जा रहे हैं। साथ ही जानकारी के लिए बीजक की एक प्रति भी भेज दी जाती है। सूचना प्राप्त करते ही, आयातक, बैंक से माल सम्बन्धी प्रलेख आदि छुड़ाकर माल प्राप्त करने की व्यवस्था करता है।

(xv) निर्यातक को सम्बन्धित वस्तु-मण्डल तथा निर्यात संवर्द्धन समिति व अन्य अधिकारियों के साथ पंजीयन करा लेना चाहिए, जिनके द्वारा उसको सुविधाएँ व सेवाएँ प्राप्त होती हैं।

(xvi) निर्यातक की आयात पुनः पूर्ति (Import Replenishment) नकद सहायता (Cash Assistane) तथा चुंगी की वापसी (Customs Drawback) से सम्बन्धित औपचारिकताओं को पूरा कर लेना चाहिए।

(2) निर्यात बाजार अनुसन्धान एवं निर्यात बाजार का चयन (Choosing Export Market & Export Market Research)

निर्यात बाजारों के चुनाव का निर्णय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसलिए निर्यात बाजारों का चयन वास्तव में निर्यात बाजार अनुसन्धान परिणामों के आधार पर किया जाना चाहिए। निर्यात बाजार या बाजारों के चयन सम्बन्धी अन्तिम निर्णय लेते समय निम्न बातों का ध्यान में रखना चाहिए -

(i) प्रारम्भ में एक या दो बाजार पर ही शक्ति केन्द्रित करना श्रेयस्कर है।

(ii) निर्यातक को छोटे और कम स्पष्ट बाजारों की अनदेखी नहीं करनी चाहिए।

(iii) विदेशी बाजारों में यात्रा करने की योजना बनानी चाहिए और हालात को अपनी आँखो से भी देखने का प्रयास करना चाहिए।

(iv) निर्यात आदेश स्वीक त करने के सम्बन्ध मे निर्यातक का यह भली-भाँति देख लेना है कि वह ग्राहकों की सेवा करने की उसकी क्षमता के अनुरूप ही ऐसा कर रहा है। ऐसे आदेशों को स्वीकार कर लेना जिनकी कार्यकुशलता के साथ पूर्ति नहीं की जा सकती, निर्यातक के लिए ठीक नहीं है।

(v) ऐसे बाजारों से दूरी रहना श्रेयस्कर है जहाँ तटकर व गैर-तटकर बाधाएँ निर्यातक की वस्तुओं के निर्यात के क्षेत्र को सीमित करती हैं।

(vi) सफलता को सुनिश्चित करने हेतु निर्यातक को निर्यात बाजार व आयातक की जरुरत को ढूँढ़ निकालना चाहिए और उसको पूरा करने का भरसक प्रयास करना चाहिए।

(vii) वास्तविक निर्यात प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पूर्व ये सुनिश्चित कर लेना परमावश्यक है कि निर्यात व्यवसाय लाभप्रद होगा। इस सम्बन्ध में फिलिप कोटलर का कहना है कि निर्यात बाजारों का चुनाव करने में विनियोग पर प्रतिफल का आधार सर्वश्रेष्ठ है तथा जहाँ तक सम्भव हो, इसी आधार को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इस सम्बन्ध में फिलिप कोटलर ने केपिटल बजटिंग (Capital Budgeting) विधि का प्रयोग करने का सुझाव दिया है। इस विधि के अन्तर्गत निम्नलिखित पाँच चरण सम्मिलित किये जा सकते हैं -

(a) चालू बिक्री सम्भावना का अनुमान लगाओ।

(b) भविष्य में बिक्री सम्भावना का अनुमान लगाओं।

(c) बाजार में फर्म के सम्भावित हिस्से का अनुमान लगाओं।

(d) लागतो तथा सम्भावित लाभ का पूर्वानुमान लगाओ।

(e) विनियोग पर प्रतिफल की दर का अनुमान लगाओ।

इसके लिए एक भारतीय निर्यातक को पिछले 4-5 वर्षो के हमारे देश प्रकाशित निर्यात सांख्यिकी (Export Statistics) की जांच (Examine) करनी चाहिए। इसके अलावा उसे निम्न से भी सम्पर्क करना चाहिए - सार्वजतिक पुस्तकालय, मन्त्रिमण्डलीय रिर्पाट विदेशी राष्ट्रों के दूतावास से प्रकाशित रिर्पोट, निर्यात संवर्द्धन परिषदें, वस्तु मण्डल, वाणिज्य परिषद, व्यापारिक बैंक, भारतीय विदेशी व्यापार संस्थान, राष्ट्रीय व्यापारिक-आर्थिक अनुसंधान परिषद व्यापार विकास अधिकरण, भारतीय निर्यात संगठन संघ आदि।

(viii) निर्यातक को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि उसका निर्यात संगठन सही रूप में है जो की निर्यात कार्य को शीघ्रता से पूरा कर सके।

इस प्रकार निर्यात बाजार अनुसंधान एक निर्यातक को , निर्यात बाजार के चयन में तथा उसमें विश्वास के साथ प्रवेश करने में सहयता प्रदान करता है तथा उसे सम्भावित हानि व निराशाओं से मुक्त रखता है। स्थायी आधार पर अच्छे परिणाम प्राप्त करने हेतु यह आवश्यक है कि निर्यात बाजार अनुसंधान को व्यवसाय में एक निरन्तर प्रक्रिया माना जाए क्योंकि विदेशी बाजारों में परिवर्तन स्वदेशी बाजारों की अपेक्षा अधिक द्रुत गति से होते है और वहाँ प्रतिस्पर्धा भी समूचे विश्व से होती है।

(3) निर्यात विपणन के लिए योजना (Plan for Export Marketing)

निर्यात विपणन के लिए योजना का आशय है - ब हत(macro) तथा सूक्षम (micro) स्तर पर भौतिक व मानवीय साधनों की सूची बनाना तथा भविष्य के लिए पूर्वानुमान लगाना।

निर्यात विपणन के लिए योजना का विकास करते समय निम्न तथ्यों को ध्यान में रखा जाना चाहिए :-

(a) संगठन के लक्ष्य का निर्धारण करना -

जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संस्था का निर्माण होता है वह संस्था का लक्ष्य होता है। प्रत्येक संगठन का लक्ष्य लाभ कमाना होता है, परन्तु यह तो बड़ा व्यापक लक्ष्य है, कुछ कार्य करने से ही लाभ कमाया जा सकता है, अतः क्या कार्य किया जाए यह लक्ष्य है। लक्ष्य दो प्रकार हो सकते है -

(i) सामान्य लक्ष्य - ये दीर्घकालीन चलते हुए लक्ष्य होते हैं जैसे निर्यात विक्रय में सुधार, वस्तु में सुधार कार्य कुशलता, प्रबन्ध विधि में सुधार, लाभ व द्धि आदि।

(ii) विशिष्ट लक्ष्य - जब दीर्घकालीन उद्देश्यों को व्यवहार की द ष्टि से दिन, सप्ताह या मास के लक्ष्यों में तोडा जाता है तो इस प्रकार तोड़े हुए लक्ष्यों को विशिष्ट या अल्पकालीन लक्ष्य कहते है।

(a) उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक साधनो की समीक्षा करना।

(b) निर्यात विपणन की योजना को कार्यन्वित करने के लिए कार्यपद्धति एवं व्यूह रचना (methods & strategy) का निर्माण करना।

(c) विदेशी विक्रय की व्यवस्था करना - इसके दो तरीके हो सकते है -

  (i) मध्यस्थ के माध्यम से।

  (ii) बिना मध्यस्थ के।

(d) निर्यात बाजार मूल्यांकन एवं वातावरण का मूल्यांकन करना।

  (i) भुगतान सन्तुलन प्रव ति की जानकारी।

  (ii) अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय पद्धति की जानकारी।

  (iii) निर्यात बाजार अनुसंधान की जानकारी।

  (iv) अन्य शब्दों में बाजार वातावरण के अन्तर्गत निम्न विश्लेषणों का वर्णन करना चाहिए - जलवायु, संदेश वाहन के साधन, भौगोलिक स्थिति, राजनैतिक तन्त्र, यातायात के साधन, प्रतिस्पर्धा, शिक्षा, भाषा आदि।

(4) निर्यात आदेश का संसाधन एवं निर्यात प्रलेखापोषण (The Processing of an Export Order & Export Documentation)

निर्यात विपणन क्रियाविधि का अलग कदम निर्यात आदेश का संसाधन करना है -

(i) भारत में निर्यातकर्त्ता व्यापारी को विदेशी मुद्रा अधिनियम, 1947 के अन्तर्गत अपने निर्यात का पूर्ण विवरण रिजर्व बैंक को भेजना अनिवार्य होता है। साथ ही वह एक लिखित घोषणा-पत्र रिजर्व बैंक को देता है कि मै सारा विदेशी विनिमय रिजर्व बैंक को जमा करा कर स्वदेशी मुद्रा प्राप्त कर लूँगा। अतः निर्यातकर्त्ता व्यापारी के लिए विदेशी मुद्रा विनिमय कार्यवाही रिजर्व बैंक के साथ करना आवश्यक है।

(ii) निर्यातकर्त्ता विदेशी आयातकर्त्ता से साख की माँग करता है। यह साख-पत्र विदेशी विनिमय का कार्य करने वाले बैंक से निर्यातकर्त्ता के नाम मे आयात मूल्य के बराबर रकम जमा कर प्राप्त कर लिया जाता है। इस साख-पत्र के आधार पर निर्यातकर्त्ता को अपनी राशि के लिए निर्दिष्ट बैंक पर विनिमय पत्र (Bill of Exchange) लिखने का अधिकार प्राप्त हो जाता है और निर्यातकर्त्ता भुगतान के बारे में निश्चित हो जाता है।

(iii) आदेश की स्वीक ति से पूर्व निर्यातक को निम्नलिखित तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिए।

  (a) माल लदान की अनुमानित तारिख।

  (b) मूल्य उद्धरण-पत्र तथा मूल्य सूची का मिलान

  (c) साख वैधता अवधि।

  (d) क्या क्रेता निर्यातक द्वारा भेजी गई भुगतान की शर्तो को स्वीकार करता है।

(e) लदान की विधि।

(f) पैकिंग, मार्किंग व लेबल लगाने सम्बन्धी अपेक्षाएँ।

(g) बैंक का नाम जिसके माध्यम से भुगतान किया जाएगा।

(h) माल का उपेक्षित मात्रा।

(i) निर्यातक को खासकर विनिमय विपत्र पत्र के साथ आवश्यक प्रेलखों को देख लेना चाहिए, क्योंकि आयातक, बैंक के माध्यम से उन प्रलेखों की माँग करता है ताकि जहाज से माल की सुपुर्दगी ली जा सके।

(a) व्यापारिक दूतीय अथवा चुंगी बीजक।

(b) जहाज पर लदे माल से सम्बन्धित जहाजी बिल्टी।

(c) जहाजी बीमा प्रमाण पत्र अथवा पॉलिसी।

(d) कप्तान की रसीद-यह प्रलेख जहाज के कप्तान से मिलता है जो इस बात का प्रमाण है कि माल जहाज पर लाद दिया गया है।

(e) साख-पत्र (Letter of Credit)

(i) खण्डनीय एवं अखण्डनीय साख

(ii) पुष्टिक त एवं अपुष्टिक त साख

(iii) आश्रय युक्त एवं आशय-विहीन साख पत्र

(f) विदेशी विनिमय पत्र (Foreign Bill of Exchagne)

(i) स्वीक ति पर प्रलेख वाला बिल (D/A)।

(ii) भुगतान पर प्रलेख वाला बिल (D/P)।

(g) उद्‌गम का प्रमाण-पत्र।

(h) GR-1 फार्म, EP/PP/VP/COD फार्म।

(i) एयर कन्साइनमेंट नोट।

(j) किस्म का प्रमाण-पत्र।

(k) पैकिंग सूची।

(l) डायरेक्टर जनरल तकनीकी विकास (D. G. T. A) से पंजीयन प्रमाण पत्र।

(m) कच्चा माल मँगाने हेतु आयात लाइसेन्स।

(n) नकद सहायता (Cash Assistance) के निर्धारित फॉर्म प्रार्थना पत्र "पात्रता प्रमाण पत्र" (REP)

(o) चुंगी की वापसी (Customs Drawback) के लिए प्रार्थना पत्र।

(5) निर्यात बाजार में उत्पाद नियोजन (Product Planning in Export Market)

निर्यात-विपणन का एक महत्वपूर्ण घटक उत्पाद नियोजन हैं। विभिन्न निर्यात बाजारों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक, विदेशी ग्राहक की आवश्यकता की सन्तुष्टि आदि विशिष्ट परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निर्यातकर्त्ता फर्म अपनी मूल वस्तु अथवा विक्रय-सामग्री में किस प्रकार का तथा किस सीमा तक निर्यात परिवर्तन करने के लिये तैयार होगी। यह निर्णय पूर्व निर्धारित होना चाहिए। निर्यात विपणन के अन्तर्गत आने वाल उत्पाद का नियोजन इस प्रकार होना चाहिए जो निर्यात बाजार की अपेक्षाओं को पूरा कर सके। उत्पाद का रंग, डिजाइन, पैकेज, किस्म, वस्तु मिश्रण आदि सभी निर्यात बाजार के अनुरूप होने चाहिए।

वारेन जे. कीगन के अनुसार इस सम्बन्ध में पाँच विकल्प प्रयोग में लाये जा सकते हैं। फर्म इनमें से उपयुक्त विकल्प का चुनाव कर सकती है। ये विकल्प इस प्रकार है :-

(a) सीधा विस्तार।

(b) विपणन सन्देशों में परिवर्तन

(c) वस्तु में परिवर्तन

(d) दोहरा परिवर्तन

(e) नयी वस्तु का निर्माण।

(a) सीधा विस्तार
(Straight Extentions)

उसका अर्थ है कि जिस प्रकार की वस्तु फर्म अपने आन्तरिक बाजारों में बेच रही है, उसी वस्तु को निर्यात बाजारों में बेचना। अर्थात सम्पूर्ण विश्व के लिए एक वस्तु तथा एक ही संदेश। इसका उदाहरण निम्नलिखि वस्तुओं के निर्यात में पाया जाता है - कोका कोला जैसे पेय, सिगरेट, मोटरकार, वायुयान आदि।

(b) विपणन सन्देशों में परिवर्तन
(Communicatin Adaptation)

इस विकल्प में वस्तु वही रहती है, जिसका विपणन फर्म अपने आन्तरिक बाजारों में कर रही है, अन्तर केवल विपणन के सन्देश (विज्ञापन) में होता है। इस विधि के उदाहरण निम्न वस्तुओं के निर्यात में पाये जाते है, - दंत मंजन, तैयार कॉफी, टिकाऊ उपभोक्ता माल।

(c) वस्तु में परिवर्तन
(Product Adaptation)

विकल्प के अन्तर्गत फर्म आन्तरिक बाजारों हेतु जिस वस्तु का विक्रय कर रही है, उसमें समुचित परिवर्तन निर्यात बाजार की आवश्यकताओं के अनुसार कर दिये जाते है। इसमें बाजार सन्देशों को अपरिवर्तित रखा जाता है। इस प्रकार के उदाहरण हैं - पेट्रोल, खाद्य पर्दाथ, रासानियक खाद, तैयार कपड़े, घरेलु उपकरण, रेडियों, टेलीविजन आदि।

(d) दोहरा परिवर्तन
(Dual Adaptation)

इसके अन्तर्गत वस्तु तथा विज्ञापन सन्देशों दोनों में ही परिवर्तन कर दिये जाते हैं। इसके उदाहरण हैं - कार्यालय में काम आने वाली मशीनें, स्वास्थ्य व द्धि के लिए खाद्य पर्दाथ - आदि।

(e) नयी वस्तु का निर्माण
(Product Invention)

इस विकल्प के अन्तर्गत निर्यात बाजारों के लिए बिल्कुल नयी वस्तु का निर्माण किया जाता है। फर्म के द्वारा अपने आन्तरिक बाजारों में बेची जा रही वस्तुओं से इसका सम्बन्ध नहीं होता।

(6) निर्यात वितरण वाहिका
(Export-Distribution channesl)

(a) अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में वितरण वाहिकाएं
(Channels of Distribution in International Marketing)

जब निर्यात फर्म यह निश्चय कर ले कि एक अमुक विदेशी बाजार उसके लिए आकर्षक अवसर प्रदान करता है, तो उसका अगला

कदम उस बाजार में प्रचलन सम्बन्धी सर्वोत्तम वाहिक का निश्चय करता है। प्रमुख वाहिकाएँ या विधियां निम्नलिखित हैं -

(i) **प्रत्यक्ष निर्यात** (Direct Export) प्रत्यक्ष निर्यात से आशय निर्यातकर्त्ता फर्म द्वारा स्वयं ही निर्यात बाजारों में वस्तु का विपणन करना है। इसके लिए निर्यातकर्त्ता कई वैकल्पिक व्यवस्थाओं में से किसी का चुनाव कर सकता है -

(a) **विदेशी ग्राहक** (Foreign Buyer)

(b) **विदेश में विक्रय शखा** (Overseas Sales Branch)

(c) **विक्रय सहाायक कम्पनी** (Sales Subsidiary)

(d) **यात्री विक्रयकर्त्ता** (Travelling Salesman)

(e) **कम्पनी का निर्यात विभाग**(Export Department of the Company)

(f) **विदेश स्थित निर्यात प्रतिनिधि** (Overseas Based Export Agent)

(ii) **अप्रत्यक्ष निर्यात** (Indirect Export) — अप्रत्यक्ष निर्यात में निर्यातक स्वतन्त्र अन्तर्राष्ट्रीय विपणन मध्यस्थों की सेवाओं का प्रयोग करता है -

(a) **सहकारी संगठन** (Co-operative Organisation)

(b) **देश में स्थित एजेन्ट** (Domestic Based Agent)

(c) **देश में स्थित व्यापारी** (Domestic Based Marchant)

(d) **निर्यात प्रतिनिधि** (Export Agent)

(e) **दलाल** (Broker)

(f) **निर्यात क्रय प्रतिनिधि** (Export Buying Agent)

(iii) **संयुक्त उपक्रम** (Joint Venture) — निर्यात विपणन के क्षेत्र में संयुक्त उपक्रम व सहयोग का भी प्रभावी उपयोग हो सकता है। इसके अन्तर्गत निर्यातक दूसरे देश में वही के राष्ट्र जनों के साथ मिलकर उत्पादन एवं विपणन सुविधाओं की स्थापना करता है। ऐसा कार्य अधिक व क्षमता के बाहर होने पर किया जाता हैं, जिससे उपलब्ध विपणन अवसरों का अनुकूलतम विदोहन किया ज सके। संयुक्त उपक्रम चार प्रकार के हो सकते है :-

(a) **अनुज्ञापन** (Licensing) — इसमें निर्यातक कम्पनी अन्य देशों की फर्म को अनुज्ञा-पत्र में वर्णित शर्तो के आधार पर विक्रय करने का अधिकार देते है, इसमें विदेशी फर्म को समान उत्पाद, किस्म व ब्राण्ड का उपयोग करना होता है। इससे विदेशी फर्म को निर्यातक कम्पनी के नाम, ख्याति व प्रतिष्ठा का लाभ मिल जाता है तथा निर्यातक कम्पनी से विक्रय की कुल राशि का निश्चित प्रतिशत प्रतिफल के रूप में प्राप्त करती है।

(b) **ठेका निर्माण** (Contract Manufacturing) — इस विधि के अन्तर्गत उत्पाद (Product) के निर्माण के लिए विदेशी स्थानीय निर्माताओं के साथ मिलकर अनुबन्ध किया जाता है।

(c) **तकनीकी व प्रबन्धकीय अनुबन्ध** (Technicals & Managerial Contracting) — निर्यात विपणन के क्षेत्र में वर्तमान तकनीकी व प्रबन्धकीय जानकारी भी सम्मिलित हो गयी है। इस विधि में निर्यातक देश अपने तकनीकी विशेषज्ञ व प्रबन्धकों को उसके आयतक देशों में भेजकर वहाँ के व्यक्तियों को तकनीकी व प्रबन्धकीय चातुर्य का ज्ञान कराते हैं। इस विधि में उत्पाद की जगह सेवा का निर्यात होता है।

(d) **संयुक्त स्वामित्व वाले उपक्रम** (Joint Ownership Ventures) — इस विधि में विदेशी विनियोजकों तथा स्थानीय विनियोजकों द्वारा मिलकर मिश्रित उपक्रम खोले जाते हैं।

(iv) **बहुराष्ट्रीय विपणन** (Multinational Marketing) : – James C. Baker का मत है कि कम्पनी यदि कई विदेशी बाजारों में एक साथ विपणन करना चाहती है तो इसे बहुराष्ट्रीय विपणन की दशा कहा जायेगा। इस प्रकार का विपणन अपनाने वाली कम्पनी को बहुराष्ट्रीय निगम (Multinational Corporation) कहेंगे।

(B) निर्यात संगठन को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors affecting the Export Organisation) :—

निर्यात संगठन पर अनेक प्रकार के घटक अपना प्रभाव डालते है, जो इस प्रकार है :-

(a) निर्यात की जानेवाली वस्तुओं का स्वभाव एवं प्रक ति।

(b) व्यापार की परम्परायें।

(c) विदेशों के नियम एवं अधिनियम।

(d) निर्यात होने वाले उत्पाद की अपेक्षित मात्रा।

(e) उपलब्ध सरकारी सहायता व प्रोत्साहन।

(f) संस्था का आकार, प्रतिस्पर्धा तथा लाभ तत्व,

(g) वित्तीय स्थिति एवं संसाधन

उपरोक्त घटक इस बात का निर्धारण करते हैं कि निर्यात संगठन का आकार क्या होगा।

(7) निर्यात बाजार में विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन
(Advertising & Sales Promotion in Export Market)

विदेशी निर्यात संवर्द्धन मिश्रण में व्यक्तिगत विक्रय (Personal Selling), विज्ञापन (Advertisement), तथा विक्रय संवर्द्धन (Sales Promotion) सम्मिलित है। फर्म को इनका उचित प्रकार से नियोजन करना चाहिये। निर्यात विपणन हेतु यह मिश्रण इस प्रकार हो जो लाभदायक विक्रय परिमाण को बढ़ाने में अपना योगदान दे सके। निर्यात संवर्द्धन मिश्रण की योजना बनाते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए :-

(i) संभावित निर्यात बाजार की जनसंख्या।

(ii) शिक्षा का विस्तार किस सीमा तक है।

(iii) विदेशी ग्राहकों का जीवन स्तर किस प्रकार है।

(iv) व्यावसयिक संदेशवाहन के साधन किस प्रकार, स्तर व संख्या में उपलब्ध हैं।

(v) विक्रय की कौन कौन सी विधियाँ वहाँ पर प्रचलित हैं।

(vi) यातायात के साधन।

(vii) प्रतियोगिता क स्तर किस प्रकार का है :- सामान्य-मध्यम-तीव्र या गलाकाट

(viii) संभावित निर्यात बाजार के ग्राहकों की आय की संरचना किस प्रकार की है।

(ix) किस प्रकार की राजनैतिक विचारधारा का प्रभुत्व उस देश पर है।

(x) धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था।

(xi) भौगोलिक विशेषताएँ।

(xiii) उपभोक्ताओं का उद्देश्यो एवं क्रय आदतें।

(a) व्यक्तिगत विक्रय
(Personal selling) :–

ऐसे उत्पाद, जिनके, प्रति-इकाई मूल्य ऊँचे हो, जिनके ग्राहकों की संख्या सीमित हो, उनके लिए व्यक्तिगत विक्रय का तरीका प्रभावी व कम लागत वाला हो सकता है।

(B) निर्यात विज्ञापन
(Export Advertisment)

विदेशी निर्यात संवर्द्धन मिश्रण में विज्ञापन का महत्वपूर्ण स्थान है। निर्यात विज्ञापन सामान्य विज्ञापन का ही एक भाग है। जब विज्ञापन का उद्देश्य निर्यात करना या निर्यात संवर्द्धन हो तब ऐस विज्ञापन निर्यात विज्ञापन कहलायेगा। यदि बेची जाने वाली इकाइयाँ संख्या में असीमित हों, उनके क्रेताओं की संख्या अधिक हो, क्रेता विस्त त भौगोलिक क्षेत्र पर छाये हुए हों उत्पाद में छुपी हुई क्रय-प्रेरणाएँ हों, तो ऐसी स्थिति में विज्ञापन का प्रयोग प्रभावी व लागत को सीमित रखने वाला हो सकता है।

निर्यात विज्ञापन माध्यम
(Export Advertising Media)

सही माध्यम का चयन एक अच्छे निर्यात विज्ञापन की आवश्यक शर्त है। अतः यह आवश्यक है कि अच्छे निर्यात विज्ञापन के माध्यम का चुनाव करने से पूर्व सम्बन्धित देश में उपलब्ध प्रचलित विभिन्न माध्यमों का विश्लेषण कर लिया जाये। निर्यात विज्ञापन हेतु उपलब्ध प्रमुख माध्यम निम्नलिखित है :-

1. समाचार पत्र
2. पत्रिकायें
3. यातायात के माध्यम
4. प्रत्यक्ष डाक माध्यम
5. प्रदर्शन व क्रय बिन्दु विज्ञापन
6. सिनेमा
7. रेडियो
8. टेलीविजन (T.V)
9. सन्दर्भ प्रकाशन
10. डाइरेक्टरी
11. इन्टरनैट (Internet)
12. विविध

निर्यात विज्ञापन में ध्यान रखने वाले योग्य बाते :-

(1) निर्यात विज्ञापन की भाषा
(Language of Export Advertisement) :–

विज्ञापन की सफलता या असफलता उसकी भाषा पर निर्भर करती है। अतः विज्ञापन की भाषा एवं शैली - आकर्षक, पढ़ने योग्य, समझने योग्य, विश्वसनीय एवं रूचि जाग त वाली होनी चाहिए।

(2) विज्ञापन सन्देश
(Advertisement) :–

एक अच्छे विज्ञापन सन्देश (विज्ञापन प्रति) में निम्नलिखित तत्व होने चाहिए :-

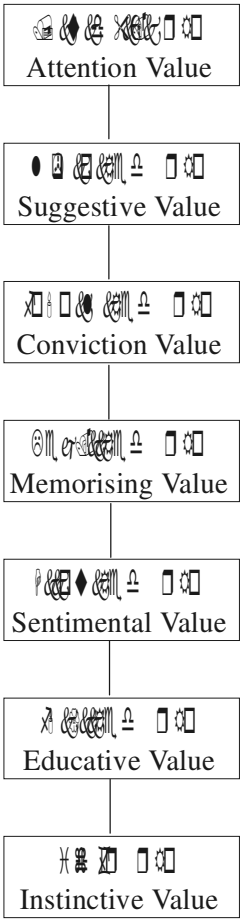

(3) विज्ञापन एजेन्सी
(Advertisement Agency) :–

विज्ञापन एजेन्सी का चयन करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

(i) एजेन्सी ऐसी हो, जिसका मुख्य व्यवसाय निर्यात विज्ञापन हो न कि सहायक व्यवसाय।

(ii) विज्ञापन एजेन्सी द्वारा किये जाने वाले कार्य अपने व्यवसाय की आवश्यकताओं के अनुरूप होने चाहिए।

(iii) एजेन्सी के पास विज्ञापन माध्यम, बाजार इत्यादि से सम्बन्धि सूचनाएँ एकत्रित हों।

(iv) एजेन्सी की वित्तीय स्थिति का विश्लेषण

(C) विक्रय संवर्द्धन
(Sales Promotion) :–

व्यक्तिगत विक्रय तथा विज्ञापन के अतिरिक्त विक्रय बढ़ाने के लिए जो भी उपाय किये जाते है, उन्हें विक्रय संवर्द्धन में सम्मिलित किया जाता है, जिसमें नमूने, कूपन, अतिरिक्त वस्तु उपहार, मूल्यों में कटौती, धन वापसी प्रस्ताव, निःशुल्क प्रशिक्षण, मेले एवं प्रदर्शनियाँ, प्रतियोगिताएँ, उपभोक्ता सेवाएँ आदि शामिल हैं।

व्यक्तिगत विक्रय में उपयुक्त विक्रयक त्ताओं का चयन व विज्ञापन में उचित विज्ञापन के माध्यम का चुनाव किया जाना चाहिए।

संवर्द्धन कार्यक्रम में ऐसे उपायों को अपनाया जाना चाहिए, जो शीघ्र परिणाम् दे सके, नहीं तो अन्य फर्में भी उसे अपना लेंगी। तीनों मे से किसी भी एक पर अधिक ध्यान नहीं देकर सभी पर उचित रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए।

(8) निर्यात पैकेजिंग
(Export Packaging)

विश्व बाजारों में उत्पादों के विपणन में पैकेजिंग की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। पैकेजिंग उत्पाद का कन्टेनर या रेपर है, जिसमें उत्पाद को रखा या लपेटा जाता है, जैसे लकड़ी की पेटी, गत्ते के डिब्बे, जूट या कपड़े के बोरे, कागज के थैले, काँच की बोतल, टीन के डिब्बे, प्लास्टिक के थैली, घास की टोकरी, एल्युमीनियम के डिब्बे आदि। इसका उद्देश्य उत्पाद को सही रूप में ग्राहकों तक पहुँचाना एवं परिवहन में सुविधा प्रदान करना है।

उद्देश्य कार्य एवं लाभ -

(o) पैकेज उत्पाद का तापक्रम, नमी, वर्षा, आंधी से सुरक्षा व सरंक्षण प्रदान करता है।

(ii) परिवहन में सुविधा प्रदान करता है।

(iii) वस्तु का आकर्षक ढंग से प्रचार करना, फलतः विक्रय में सहायता मिलती है।

(iv) ग्राहक उत्पाद को शीघ्र पहचान जाते हैं।

(v) उत्पाद को बाहर भेजते समय चोरी, गबन, टूट आदि जोखिम से रोकना।

(vi) विभिन्न ग्राहकों की आवश्यकतानुसार अलग-अलग साइजों में उत्पाद को पैक किया जा सकता है।

(vii) पैकिंग द्वारा वस्तु की डिजाइन निर्धारित होती है।

(viii) पैकिंग द्वारा माल स्टॉक रखने में सुविधा रहती है।

पैकिंग एवं पैकेजिंग में ध्यान रखने योग्य बातें -

(i) पैकेजिंग का निर्णय लेते समय विदेशी बाजारों की जलवायु, भौगोलिक स्थिति, परिवहन के उपयोग में लाये जाने वाले माध्यम, इस सम्बन्ध में वहाँ की सरकार द्वारा घोषित नियमों को भी ध्यान में रखना चाहिए।

(ii) एल. के. जोनसन (K. K. Jonson) ने कहा है कि पैकिंग का उद्देश्य सिर्फ वस्तु को खराब होने व टूटने से बचाना नहीं होना चाहिए, बल्कि पैकिंग ऐसी होनी चाहिए जो आँखों को अच्छी लगे। इस प्रतिस्पर्धा के युग में पैकिंग प्रभावशाली होनी चाहिए। एक सन्दर्भ पैकिंग में निम्न लिखित विशेषतायें होनी चाहिए :-

(a) प्रभावजनक,

(b) नष्ट होने से बचाने वाले,

(c) सुन्दर आक ति,

(d) सुविधा

(iii) निर्यात बाजारों का लगभग 80% माल समुद्री जहाजों के द्वारा जाता है। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि पैकेज Sea Proof हो और पैकेजों को एक बड़े कन्टेनर में रखा जायें।

(iv) औद्योगिक वस्तुओं को छोटे-छोटे भागों में पैक किया जाना चाहिए जिससे परिवहन में सुविधा रहें।

(v) कीमती औद्योगिक वस्तुओं के पैकेज इस प्रकार के बने हुए होने चाहिए, जिनसे विभिन्न बन्दरगाहों में माल चढ़ाने-उतारने में कोई भी नुकसान उत्पाद को नही हो।

(vi) सौन्दर्य प्रसाधन एवं अनेक उपभोक्ता वस्तुओं में पैकेज का अपना विशेष महत्व है विभिन्न सर्वेक्षणों ने सिद्ध कर दिया है कि पैकेज ग्राहकों को क्रय प्रेरणा देने में अपना महत्व रखता है।

भारती उत्पादक एवं पैकेजिंग
(Indian Manufacturers and Packaging)

अक्सर यह देखा गया है कि भारतीय माल, अच्छे किस्म का होते हुए भी विदेशी बाजारों पर घटिया पैकिंग के कारण अधिक प्रभाव नहीं डालते हैं। अतः जहाँ तक भारतीय उत्पादकों के पैकेजिंग का सम्बन्ध है, उन्हें तो अपनी बिगड़ी हुई छवि को सुधारना है व उसके बाद उसे उन्नत करना है। हमारे देश में पैकेजिंग के स्तर को सुधारने के लिए **"भारती पैकेजिंग संस्थान"** की स्थापना की गयी है। यह संस्थान पैकेजिंग के क्षेत्र में विश्व स्तर पर होने वाले प्रयोगों और नयी तकनीको से भारतीय उद्योगों को परिचित कराने हेतु **"एश्यिन फैडरेशन ऑफ पैकेजिंग"** तथा **"वर्ल्ड पैकेजिंग औरगेनाइजेशन"** का सक्रिय सदस्य है। अतः भारतीय निर्यातकों को चाहिए कि विदेशी बाजारों में अपने उत्पाद का विक्रय करते समय इस संस्थान द्वारा उपलब्ध कराये गये पैकेजिंग के स्तरों का उपयोग करे।

(9) निर्यात मूल्य
(Pricing For Export)

निर्यात विपणन के क्षेत्र में मूल्य निर्धारण का कार्य अधिक जटिल है, क्योंकि इसके निर्णय में आन्तरिक मूल्य निर्धारण के अतिरिक्त भी अनेक प्रकार की समस्याएँ जुड़ी होती हैं। निर्यात विपणन के द ष्टिकोण में मूल्य निर्धारण करते समय निर्यातकर्त्ता को निम्नलिखित बातों का भली भाँति ध्यान रखना चाहिए :-

(a) सबसे पहले यह निर्णय करना होता है कि

(i) निर्यात कीमत आन्तरिक कीमत से अधिक रखी जाए ?

(ii) निर्यात कीमत आन्तरिक कीमत से कम रखी जाए ?

(ii) निर्यात कीमत आन्तरिक कीमत के बराबर रखी जाए ?

उपरोक्त निर्णय को अनेक तत्व प्रभावित करते है, जैसे विदेशी बाजार में व्याप्त प्रतियोगिता वहाँ के वातावरण व आर्थिक परिस्थितियों के दबाव निर्यातक को स्थिति तथा उसके उद्देश्य आदि। यदि निर्यातक का उद्देश्य विक्रय की मात्रा को बढाकर लाभ कमाना है तो कीमतें नीचले स्तर पर रखनी चाहिए। उसके विपरित यदि निर्यात लागतें कुल लागतों को बहुत बढ़ा सकती हैं तो निर्यात कीमतें अपेक्षाक त ऊँचे स्तर पर रखी जानी चाहिए।

(1) भारतीय निर्यातक :-

अधिकांश भारतीय निर्यातक निर्यात कीमतें नीचे स्तर पर रखते हैं। चीनी आदि वस्तुओं के निर्यात में इनका मूल्य आन्तरिक बाजारों में प्रचलित मूल्य से काफी कम रखा जाता है। इन्जीनियरिंग वस्तुएँ आन्तरिक मूल्य पर ही सामान्यतया बेची जाती हैं। किन्तु दास्तकारी का सामान, कलात्मक वस्तुओं तथा फैशन सम्बन्धित वस्तुओं की कीमते आन्तरिक मूल्यों से काफी ऊँची रखी जाती हैं।

(2) निर्यात उधार तथा शर्तें :-

सामान्तया निर्यात विपणन उधार ही होता है। अतः यह निर्धारित करना होगा कि भुगतान की विधि क्या होगी :-

(a) साख पत्र (Letter of Credit)

(b) दर्शनीय ड्राफ्ट (Time or Sight Draft)

(c) चालू खाता (Open Account)

(d) प्रेषण (Consignment)

यदि कम्पनी की वित्तीय स्थिति अच्छी है और वह उदारता से उधार दे सकती है तो बिक्री की मात्रा कम समय में बढ़ाई जा सकती है। यदि कम्पनी की वित्तीय स्थिति व क्षमता बहुत अच्छी नही हैं, तो उसे कड़ी उधार नीतियाँ अपनानी चाहिए, जिसमें शीघ्र भुगतान की शर्तें व व्यवस्थाओं की जानी चाहिए।

भारत जैसे देश के लिये छोटे देशों में अपने माल के विक्रय के लिए उदार उधार नीतियाँ ही अधिक प्रभावी हो सकती हैं। इन नीतियों को अपनाने से नियति के कार्य में परोक्ष रूप से काफी मदद मिलती है। लेकिन इसका अर्थ कभी भी विक्रय राशि की वापसी को खतरे में डालना नहीं है।

(3) मूल्य निर्धारित करते समय निम्नलिखित विषयों पर निर्यातक को अवश्य विचार करना चाहिए :-

(a) उपभोक्ता के लिए अन्तिम मूल्य।

(b) मध्ययों एवं थोक व्यापारियों के लिए मूल्य।

(c) मूल्य नियन्त्रण प्रक्रिया।

(d) उपमूल्य (Subsidiary Pricing)

(e) विपणन-मिश्रण तथा मूल्यों में सम्बन्ध।

(f) नव निर्मित वस्तुएँ v/s पूर्व प्रतिष्ठित वस्तुएँ।

(g) सरकारी कानून, नियम तथा नीतियाँ

(h) वितरण माध्यम।

(i) उत्पादन लागत एवं खर्चे।

(j) कम्पनी के उद्देश्य।

(k) उत्पाद की माँग तथा प्रतिस्पर्द्धा।

(10) निर्यात वित्त-पोषण (Export Financing) :—

जब निर्यातक को आयातक से पुष्ट (Confirmed) आदेश प्राप्त हो जाते है तो इस आदेश की पूर्ति हेतु निर्यातक को वित्त की व्यवस्था करनी होती है। निर्यात वित्त (Export Finance) में दोनों जहाजी लदान से पूर्व साख (Pre-shipment Credit) तथा जहाजी लदान के बाद साख (Post-shipment Credit) आ जाती है। वित्त की आवश्यकता उत्पादन करने, माल के सवाँरने, माल का पैकिंग करने से लेकर माल को जहाज पर लदान होने तक की अवस्था में अथवा लदान के समय से विदेशी आयातकर्त्ता से मूल्य के वसूल होने के तिथि तक पड़ सकती हैं।

(A) वित्त पोषण की स्त्रोत या विधियाँ :
(Channels for Financing) :—

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में वित्त व्यवस्था के स्त्रोत या विधियाँ निम्नलिखि हो सकती हैं -

(1) निर्यातक स्वयं (By the exporter himself)

(2) निर्यात मध्यस्थ द्वारा (By the export middlemen)

(3) आयातक (By Importer)

(4) आढतिया (By Factors)

(5) स्वीक ति ग ह (Accepting House)

(6) कटौती ग ह (Discount Houses)

(7) बैंक (By Bank)

(B) निर्यात वित्त पोषण की पद्धतियाँ
(Techniques of Export Financing):—

(1) जहाजी लदान के पूर्व वित्त (Pre-shipment Finance)

(2) जहाजी लदान के बाद वित्त (Post-shipment Finance)

(C) निर्यात व्यापार के वित्त पोषण में साधन या प्रपत्र
(Instrument used in Financing Export Trade):—

(1) विनिमय बिल
(Bills of Exchange)

(a) अप्रलेखीय विनिमय बिल (Non Documentary or clean Bill)

(b) प्रलेखीय बिल (Documentary Bill)

(i) स्वीक ति पर प्रलेख बिल

(Documents against Acceptance or D/A)

(i) भुगतान पर प्रलेख बिल

(Documents against Payment or D/P)

(2) साख पत्र
(Letter of Credit or L/C)

(a) खण्डनीय साख (Revocable Credit)

(b) अखण्डनीय साख (Irrevocable Credit)

(c) पुष्टिक त साख (Confirmed Credit)

(d) अपुष्टिक त साख (Unconfirmed Credit)

(e) दर्शनी एवं सावधि साख (Sight or Term Credit)

(f) आश्रय विहीन साख पत्र (Without Resource L/C)

(ii) भारत में निर्यात साख एवं वित्त व्यवस्था
(Export Credit and Finance System in India) :—

भारत में साख एवं वित्त की समस्याओं का समाधान सामान्तया बैंको के माध्यम से किया जाता है। वर्तमान समय में अग्रलिखित संस्थाएँ भारतीय निर्यातकों को साख एवं वित्त की सुविधाएँ प्रदान कर रही है -

(1) व्यापारिक बैंक (Commercial Bank)

(a) पूर्व-पोत लदान वित्त (Pre-shipment Finance)

(b) पोत-लदानोत्तर साख (Past-shipment Credit)

(2) भारतीय रिजर्व बैंक

(3) भारतीस स्टेट बैंक

(4) भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (I. D. B. I)

(5) निर्यात साख एवं गारण्टी नियम (E. C. G. C.)

(6) राज्य व्यापार निगम (S.T.C)

(7) भारतीय आयात-निर्यात बैंक (The Export-Import Bank)

निर्यात विपणन एवं भारतीय फर्मे :-

निर्यात विपणन के लिए अनेक आकर्षण होने का उपरान्त भी भारतीय सन्दर्भ में कहा जा सकता है, कि अधिकांश भारतीय फर्मे

इस ओर उदासीनता का रवैया अपनाये हुए है। भारतीय फर्मो ने निर्यात विपणन अर्न्तमन की अभीप्सा से जाग त होकर नहीं, बल्कि सरकारी अनिवार्यता एवं बाध्यता के कारण किया हैं। यह बात बिल्कुल गवारा है, कि बाद में निर्यात में पौबारह होने पर उन्होनें जड़े पकड़ ली हों। अनेक क्षेत्रों में उत्पादन का अनुज्ञापत्र देते समय सरकार यह शर्त लगा देती है, कि कुल उत्पादन का अमुक भाग निर्यात किया जायेगा। प्रश्न यह है कि इस स्थिति के कारण क्या हैं, इसके लिए जिम्मेदार कारणों का वर्गीकरण निम्नलिखित शीर्षकों में किया जा सकता है।

(1) सुरक्षित आन्तरिक बाजार :

भारतीय सन्दर्भ में यह पूर्णतया सही है, अनेक वस्तुओं जिसमें मुख्य रूप से उपभोक्ता व कुछ औद्योगिक वस्तुएँ हैं, जिनका असीमित बाजार इस देश में उपलब्ध है। जब यही चीजें नहीं मिलती हैं तो उपभोक्ता मनमाने मूल्य देने को तैयार रहता है। कई वस्तुओं की हमेशा ही की कमी चलती रहती हो, तो किसे निर्यात विपणन के लिए पड़ी है व क्यों सरदर्द मोल लेना चाहेंगे।

(2) कम प्रतिफल की प्राप्ति :

निर्यात के कारण अनेक प्रकार के व्यय भी वस्तु के मूल्य में जुड़ जाते हैं। इससे आन्तरिक बाजारों की तुलना में निर्यात बाजार के मूल्य ऊँचे होते है। इससे उन्हें आन्तरिक बाजारों की तुलना में कम प्रतिफल भी प्राप्त होता है, इस कारण भी भारतीय फर्मे अनिच्छुक रहती हैं।

(3) प्रतियोगिता :

आन्तरिक बाजारों की तुलना में विदेशी बाजारों में अत्यधिक प्रतियोगिता हैं। भारतीय व्यवसायी अपने आप को अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में विपणन कर रहे बहुराष्ट्रीय निगमों आदि की प्रतिस्वपर्धा में खडे रहने या खडे होने की क्षमता नहीं रखते। प्रतियोगिता से लाभों में भी कमी हो जाती हैं।

(4) वित्तीय क्षमता का सुद ढ न होना :

निर्यात व अन्तर्राष्ट्रीय विपणन मे कार्यरत बड़ी कम्पनियों व बहुराष्ट्रीय निगमों की तुलना में भारतीय फर्मो की वित्तीस स्थिति तुलनात्मक रूप से बहुत कमजोर हैं। अतः विदेशी बाजारों के अनुरूप उत्पाद नियोजन उदार विक्रय, नीतियों को अपनाने में भारतीय फर्मे असमर्थ हैं, जबकि इसके लिए भारतीय फर्मो के पास उचित वित्तीस साधन नहीं हैं।

(5) जोखिम व साहस तत्व का अभाव :

निर्यात बाजारों में अनेक प्रकार की अनिश्चितताएँ होती हैं। आर्थिक, राजनैतिक, व्यापारिक अनेक प्रकार की जोखिमें विदेशी व्यापार में है। न जाने कब सम्बन्धित देश की सरकार अपने वैधानिक प्रावधानों में परिवर्तन कर दे। भारतीय व्यवसायियों में इस अनिश्चितता व जोखिम को वहन करने की क्षमता अपेक्षतया कम है।

(6) उपयुक्त गतिशीलता का अभावः

आन्तरिक बाजारों के उपभोक्ताओं की तुलना में निर्यात बाजार के उपभोक्ताओं की आदतों, क्रय-व्यवहारों, पसन्दगियों, रूचियों आदि में शीघ्र परिवर्तन होते रहते है। इन परिवर्तनों अनुरूप अपने को शीघ्र ढालने के लिए उत्तम गतिशीलता की आवश्यकता होती है। प्रतियोगी अवसरों की तलाश में रहते हैं। ऐसी गतिशीलता भारतीय फर्मो में नहीं हैं।

उपरोक्त कारणों से भारतीय फर्मे निर्यात विपणन की ओर उदासीन रहती हैं। लेकिन अनेक ऐसी कम्पनियाँ भी हैं, जिन्होंने मन्दी से बचने के लिए पहले ही अपने उत्पादनों के लाभप्रद विपणन अवसर निर्यात बाजारों में स जित किये हैं। भारतीय फर्मो को इस ओर उदासीनता का रूख छोड़कर , सरकार द्धारा प्रदत निर्यात सुविधाओं का उपयोग करने हेतु दीर्घकालिक निर्यात नीति बनानी चाहिए, जिससे न केवल अपने लाभों को बढ़ा सकें, वरन् राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एंव विकास को ठोस आधार प्रदान करने में, भी योगदान दे सकें।

vii. निर्यात संवर्द्धन

(Export Promotion)

1. आशयः-

निर्यात संवर्द्धन से आशय उन सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयत्नों से है जिनसे निर्यात व्यापार में व द्धि हो, निर्यात संवर्द्धन में वे सभी उपाय, कार्य तथा विधियाँ सम्मिलित होते है जिनके द्धारा देश के निर्यातों में व द्धि होती हैं। जैसे निर्यात प्रोत्साहन योजनाएँ आदि।

II. आवश्यकताः-

भारत में निर्यात संवर्द्धन की आवश्यकत निम्नलिखित कारणों से होती है।

(1) देश के समक्ष विदेशी मुद्रा का संकट अनवरत रूप से विद्यमान हैं। हमारे विदेशी मुद्रा का भण्डार 1950-51 में 950 करोड़ रूपयों से घटाकर 1962-63 में 295 करोड़ रूपयें रह गया। बाद में सरकार के प्रयास स्वरूप इसमें कुछ व द्धि हुई और 1971-72. में यह 849 करोड़ रूपये था। आयातों के फलस्वरूप भुगतान करने के लिए विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ती है और विदेशी मुद्रा तभी प्राप्त हो सकती है जब निर्यात अधिक हो और निर्यात तभी बढेगें निर्यात संवर्द्धन की विधियों एंव उपायों का सहारा लिया जाये। अतः विदेशी मुद्रा की कमी को दूर करने के लिए निर्यात प्रोत्साहन आवश्यक हैं।

(2) स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार का भुगतान सन्तुलन निरन्तर विपक्ष में रहा है । अर्थात भारत के आयातों की मात्रा निर्यातों की अपेक्षा अधिक रही है। केवल 1972-73 तथा 1976-77 में व्यापार सन्तुलन क्रमशः 104 करोड़ रूपये व 69 करोड़ रूपये के पक्ष में रहा। 1997-98 में यह प्रतिकूलता बढ़कर 30,579 करोड़ रूपये हो गई । अतः प्रतिकूल व्यापार क्षेत्र को पक्ष में करने हेतु निर्यात प्रोत्साहन की अत्यन्त आवश्यकता है।

(3) देश को आर्थिक एंव औधेगिक द ष्टि से सम द्ध बनाने के लिए निर्यातों की मात्रा में व द्धि करना अत्यन्त आवश्यक हैं।

(4) इसी प्रकार नवीन उत्पादित वस्तुओं के लिए बाजारों की खोज करने, विदेशी सहायता तथा ऋणों की अदायगी करने विविध पंचवर्षीय योजनाओं को सफलतपूर्वक कार्यान्वित करने तथा अर्थ-व्यवस्था को आत्मनिर्भरता की स्थिति में लाने के लिए निर्यात संवर्द्धन एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

अतः निर्यात ही हमारी बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का आधार हैं जिसके अभाव में हमारे देश का आर्थिक एंव औद्योगिक विकास का मार्ग अवरूद्ध हो सकता है। पण्डित जवाहर लाल नेहरू का कथन है कि '' यदि हम निर्यात के माध्यम से रूपया कमाना चाहते हैं तो हमें चाहिए के हम अपनी आवश्यकताओ को कम करके बची हुई वस्तुओं का निर्यात करें । वास्तव में यह प्रश्न बचत का नहीं है । मेरा तात्पर्य यह है कि हम आवश्यक वस्तुओं को अपने प्रयोग में न लाकर विदेशी मुद्रा कमाने के लिए उनका निर्यात करें"।

III भारत मे निर्यात संवर्द्धन के लिए किए गए प्रयत्न

(Efforts Made in India for Export Promotion)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही सरकार निर्यात बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रही है। इस सम्बन्ध में समय-समय पर जो प्रयत्न किये गये, उनको सुविधा की द ष्टि से तीन भागों में बाटां जा सकता हैः-

1. विशेषज्ञ समितियाँ
2. निर्यात सवंर्द्धन संगठनों की स्थापना
3. प्रोत्साहन योजनाएँ तथा सहायता।

1. विशेषज्ञ समितियों का गठन
(Establishment of Export Committees)

निर्यात सम्बन्धी समस्याओं के गहन अध्ययन एंव उनके निवारण के सुझाव देने के विचार से समय-समय पर सरकार द्धारा

अनेक समितियों का गठन किया गया। प्रमुख समितियाँ अग्र हैंः-

1. गोरवाला जाचँ समिति,1949

भारत सरकार द्वारा जुलाई 1949 में श्री. ए. डी. गोरवाला की अध्यक्षता में निर्यात संवर्द्धन समिति (Export Promotion Committee) की नियुक्ति की गई। इस समिति ने भारत के निर्यातों में व द्धि करने के लिए अनेक सुझाव दिए

(i) भारत से प्रतिवर्ष सरकारी व गैर-सरकारी व्यापारिक मण्डल विदेशों में सम्पर्क स्थापित करें,

(ii) निर्यात संवर्द्धन हेतु एक प थक निर्यात प्रोत्साहन निदेशालय (Directorate of Export Promotion) की स्थापना की जाय

(iii) भारत में भी ब्रिटेंन के सामान बेरो (British Export Research Organisation BERO) जैसे संस्थायें बनायी जायें तो भारतीय निर्माता वस्तुओं के लिए नए बाजारों की खोज कर सके,

(iv) निर्यात करों में कमी की जाय, अर्थात निर्यात करों का उद्देश्य आय कमाना न होकर आर्थिक हितों की रक्षा करना होना चाहिए आदि, समिति द्वारा दिये गये सभी सुझावों को सरकार द्वारा स्वीकार किया गया । इन सुझावों को अमल में भी लाया गया। किन्तु पर्याप्त सावधानी एवं तत्परता के अभाव के कारण इनसे पर्याप्त अनूकूल परिणाम द ष्टिगत नहीं हुए।

2. डी सूजा समिति,1957

प्रथम योजनाकाल में आयातों की मात्रा में त्रीवगति से व द्धि हुई किन्तु निर्यातों की मात्रा में कोई सुधार सम्भव नहीं हुआ, फलतः भुगतान सन्तुलन भारी मात्रा में प्रतिकूल हो गया। इस कारण निर्यातों को बढ़ाने की आवश्यकता द ष्टिगत हुई। अतः फरवरी 1957 में डॉ. वी. एल. डीसूजर की अध्यक्षता में एक द्वितीय निर्यात प्रोत्साहन समिति (Export Promotion Committee) की स्थापना की गई। समिति ने अपनी रिर्पोट नवम्बर 1957 में प्रस्तुत की और समिति ने निर्यात संवर्द्धन हेतु निम्नलिखित सिफारिशें प्रस्तुत की और (i) उत्पादन में आधुनिकीकरण एवं वैज्ञानिक प्रबन्ध की नीति अपना कर व द्धि की जाये और हम उत्पादन लागत में कमी करें। (ii) निर्यातको को आयकर और निर्यात करों में छूट दी जायें, (iii) किसी वस्तु का निर्यात किसी एक ही संगठन द्वारा किया जाय,(iv) देश से पुननिर्यात व्यापार को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये, (v) विदेशी बाजारों का सर्वेक्षण , विज्ञापन एंव प्रचार पर पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए, (vi) उत्पादित वस्तु की किस्म, प्रभाव एंव पैकिंग व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहि। (vii) निर्यात व द्धि हेतु निर्यात जोखिम बीमा निगम की स्थापना की जानी चाहिए, (viii) निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के रेल-भाड़ा की दरें न्यूनतम की जानी चाहिए, (ix) समिति ने द्विपक्षीय समझौतों पर अधिक जोर दिया।

3. मुदालियर समिति,1961

सन् 1961 में श्री ए. रामास्वामी मुदाालियर की अध्यक्षता में एक आयात-निर्यात नीति समिति गठित की गई। इस समिति के प्रमुख सुझाव निम्नलिखित थे (i) चतुर्थ योजना की समाप्ति तक देश का निर्यात व्यापार दूना हो जाना चाहिए। इसी लक्ष्य को लेकर निर्यात व्यापार प्रक्रिया को संगठित किया जाना चाहिए, (ii) आयात-निर्यात व्यापार में स्थापित लाने हेतु एक प थक आयात-निर्यात स्थिरता कोष (Export Estabilisation Fund) की स्थापना की जाय , (iii) जो काफी उद्योग निर्यात सम्बन्धी कठिनाईयों (चाय व काफी उद्योग) का सामना करते है उनकी कठिनाईयों को दूर किया जाये, (iv) देश मे निर्यात प्रोत्साहन आन्दोलन बड़े पैमाने पर शुरू किया जाना चाहिए, (v) निर्यातान्मुख उद्योंगो के लिए पर्याप्त कच्चे माल, मशीनरी आदि आयात हेतु आवश्यक विदेशी मुद्रा की व्यवस्था की जाय, (vi) रेल यातायात की सहायत से निर्यात की जाने वाल मदों पर किराया भाड़ी में 2.5 प्रतिशत की सामान्य छूट दी जाय, (vii) आयात कर प्रणाली का अधिक सरल बनाया जाना चाहिण (ix) आयात शुल्क, उत्पादन शुल्क और विक्रय कर आदि की वापसी एक ही स्थान पर अर्थात कलैक्टर कस्टम्स द्वारा की जानी चाहिए।

4. अलेक्जेण्डर पेनल, 1977

इस विशेषज्ञ समिति का गठन भारत सरकार ने नवम्बर 1977 में किया। डॉ पी.सी. अलेक्जेण्डर समिति के अध्यक्ष थे।इस समिति ने निम्नलिखित सिफारिशें प्रस्तुत की (i) निर्यात हेतु लघु क्षेत्र का अधिक महत्व दिया जायें, (ii) निर्यात ग्रहों (Export House) को छोटे पैमाने के उत्पादन हेतु विशेष प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। (iii) वार्षिक आयात- नीति की घोषणा के स्थान पर तीन वर्षो के लिए नीतियाँ बनाई जानी चाहिए, (iv) लाइसेसिंग प्रणाली का पुनवर्गीकरण तीन शीर्षको के अर्न्तगत होना चाहिए प्रथम

कच्चा माल कम्पोनेट, द्वितीय पूर्जीगत सामान व उपकरण (Capital Goods and Equipments) तथा उपभोक्ता माल समिति ने यह भी सुझाव दिया कि इन तीनों के लिए अलग- अलग आयात नीति बनायी जाय।(v) उद्यागों का सरंक्षण प्रदान करने हेतु लाइसेसिंग प्रणाली के स्थान पर धीरे -धीरे प्रशुल्क प्रणाली को अपनाया जाये, (vi) दीर्घकालीन लाभों की प्राप्ति हेतु निर्यात प्रोत्साहन के नये क्षेत्रों की खोज विकास पर ध्यान दिया जाय।

5. टण्डन अन्तरिम रिर्पोट, 1980

टण्डन कमेटी ने अपने अन्तरिम प्रतिवेदन से निम्नलिखित प्रमुख सुझाव दिये है(i) समिति ने 1990-91 के लिए 17968 करोड़ रूपये के निर्यात लक्ष्य रखे है। (ii) विश्व व्यापार में भारत का भाग वर्तमान समय में घटकर 0-5% रह गया है, अतः समिति ने सुझाव दिया है कि 1990-91 तक यह भाग 1 % हो जाना चाहिए।

(iii) समिति ने यह भी सुझाव दिया है कि माँस के विपणन और निर्यात हेतु माँस बोर्ड (Meat Board) स्थापित किया जाय, (iv) निर्यातों में 190 प्रतिशत वार्षिक विकास दर प्राप्त की जानी चाहिए।

2. निर्यात सवंर्द्धन संगठनों की स्थापना (Establishment of Export Promotion Organizations)

भारत सरकार ने निर्यात सवंर्द्धन के लिए कई विशिष्ट संगठन स्थापित किये हैं। इनमें महत्वपूर्ण संगठन निम्नलिखित हैः-

(i) वाणिज्य विभाग

(Department of Commerce) :–

भारत के विदेशी व्यापार के विकास एंव नियन्त्रण से सम्बन्धित सभी कार्य, वाणिज्य मंत्रालय के वाणिज्य- विभाग द्धारा किये जाते हैं। इस विभाग के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैः-

(i) दूसरे देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों का निर्धारण,

(ii) राज्य व्यापार को प्रोत्साहन

(iii) निर्यात सवंर्द्धन के प्रयास, तथा

(iv) निर्यात उद्योगों के विकास एंव नियन्त्रण सम्बन्धी कार्य

उपरोक्त कार्यो को सम्पन्न करने के लिए वाणिज्य विभाग ने निम्न डिवीजनों की स्थापना की हैः-

(a) अर्न्राष्टीय व्यापार नीति डिवीजन

(International Trade Policy Division) :–

निर्यात वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने , उनके गुण-सुधार और बिक्री क्षमता बढ़ाने के निमित भारत सरकार संयुक्त राष्ट्र संघ और सम द्ध पाश्चात्य देशों के विविध विशेषज्ञों की सहायता लेती रहती हैं । इन कार्यो का सम्पादन इस डिवीजन द्धारा किया जाता है। डिवीजन संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) सयुंक्त राष्ट्र औधोगिक विकास संगठन (UNIDO), सयुंक्त राष्ट्र व्यापार विकास सम्मेलन (UNCTAD), व्यापार प्रशुल्क सामान्य समझौता (GATT- WTO) तथा यूरोपीयन आर्थिक समुदाय (EEC) आदि के निरन्तर सम्पर्क में रहता हैं।

(b) विदेशी व्यापार क्षेत्रीय डिवीजन

(The Foreign Trade Territorial Division) :–

डिवीजन विश्व के विभिन्न देशों तथा क्षेत्रों (Different) के साथ व्यापार के विकास से सम्बन्धित कार्यो को देखता है।साथ ही राजकीय व्यापार तथा द्विपक्षीय व्यापार मेलों तथा प्रदर्शनियों का आयोजन, व्यापरिक प्रचार (Commercial Publication) आदि से सम्बन्धित कार्य भी इस डिवीजन द्धारा देखें जाते हैं। यह विदेशों में भारतीय व्यापार मिशनों से भी सम्पर्क रखता हैं।

(c) निर्यात उत्पादन डिवीजन

(Export Production Division)

यह निर्यात उत्पादन निम्न तीन डिवीजनों से बना है-

(i) निर्यात उत्पाद डिवीजन, (ii) निर्यात उद्योग डिवीजन , तथा (iii) निर्यात सेवाएँ डिवीजन ।

(i) निर्यात उत्पाद डिवीजन

(The Export Products Division) :–

इस डिवीजन के क्षेत्र में उत्पादन से सम्बन्धित समस्यायें, विभिन्न वस्तुओं के लिए बाजार का विकास तथा अतिरिक्त उत्पादन से सम्बन्धित क्रियाएँ रखी गयी है। वस्तुओं में क षि उत्पाद, समुद्री उत्पाद, रसायन , प्लास्टिक, तैयार चमड़ा व चमड़े की वस्तुएँ खेल साम्रगी, फिलम्स, स्टील मेटल्स अभियान्त्रिकी वस्तुएँ, खनिज प्रदार्थ, कोयला, पैट्रोलियम उत्पाद, अभ्रक तथा नमक आदि है। यह डिवीजन उपरोक्त वस्तुओं तथा उत्पादों से सम्बन्धित निर्यात संगठनों तथा निगमों की कार्यप्रणाली को भी देखता हैं।

(iii) निर्यात उद्योग डिवीजन

(The Export Industries Division) :–

यह डिवीजन सूती वस्त्रों, ऊनी, जूट,हस्तशिल्प, रेशम तथा सेल्यूलोजिक वस्त्रों, नारियल जटा, चाय, कॉफी, रबड़, तम्बाकू इलायची आदि निर्यात उद्योगों के विकास एंव नियन्त्रण को देखता है। डिवीजन उपरोक्त उत्पादों से सम्बन्धित संगठनों की गतिविधियों को भी देखता हैं।

(iii) निर्यात सेवायें डिवीजन

(Export Service Division) :–

यह डिवीजन निर्यातकों की सहायता के लिए अनेक सेवायें देता हैं। इन निर्यातकों को आयात पुनः पुर्ति लाइसेन्स (Import Replenishment Licensing), नकद सहायता , निर्यात साख, निर्यात ग ह (Export Houses) विपणन विकास निधि से सहायता स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्र किस्म नियन्त्रण , निर्यात से निरीक्षण आदि प्रमुख हैं। डिवीजन निर्यात उद्योगों को पूंजीगत वस्तुओं के आयातों की प्रक्रिया को प्राथमिकता के आधार पर देखता है।

डिवीजन भारतीय निर्यातकों को विदेशी में संयुक्त साहस के सम्बन्ध में राय भी देता हैं।

(D) आर्थिक डिवीजन

(Economic Division) :–

यह डिवीजन निम्न कार्य करता है निर्यात सरंचना का मूल्यांकन, निर्यात योजना, नीतियों की समीक्षा जिनका सम्बन्ध विभिन्न निर्यात सवंर्द्धन संगठनों से हैं। निर्यातकों को तकनीकी एंव प्रबन्धकीय सहायता तथा विदेशों में विनियोग के लिए जानकारी देना।

(E) आयात- निर्यात महानियन्त्रक कार्यालय

(Office of the Chief Controller Of Imports and Exports)

यह कार्यालय मन्त्रालय द्धारा निर्धारित नीतियों के कार्यान्यन के लिए उतरदायी होता है। इसके सहायक कार्यालय देश के महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्रों पर खाले गए है, जैसे अहमदाबाद, अम तसर , बंगलौर, मुम्बई, कलकत्ता, एर्नाकूलम, हैदराबाद , कानपुर , चेन्नई, नई दिल्ली, कांदला, पणजी, पांडिचेरी, राजकोट, शिलांग, श्रीनगर, विशाखापट्टनम आदि में है।

(F) वाणिज्य सूचना एंव सांख्यिकी निदेशालय

(Directorate of Commercial Intelligence and Statistics)

निदेशालय का मुख्य कार्यालय कलकत्ता में स्थित है। यह विदेशी व्यापार से सम्बन्धित सूचनाओं तथा आंकडों के एकत्रीकरण एंव नियमित रूप से प्रकाशन का कार्य करता है। यह निदेशालय अनेंक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी करत है, जैसे Indian Trade Journal, Monting Statistics of Foreign Trade of India, The Directory of Exporters of Indian Products and Manufacturers, आदि।

(a) काडँला स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्र
(Kandla Free Trade Zone)

भारत सरकार ने 1965 में कांडला बन्दरगाह पर 32.0 एकड़ क्षेत्र का स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्र बना दिया है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत आये हुए माल तथा निर्मित किये गये माल पर आयात एंव निर्यात कर देय नहीं होता। इस प्रकार विदेश से माल मंगाकर उसका इस क्षेत्र में परिष्करण करके बिना आयात कर दिये निर्यात किया जा सकता है। वर्तमान समय में 35 इकाइयाँ इस क्षेत्र में स्थापित हो चुकी है तथा उस क्षेत्र की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जा रही है। इसका विविधीकरण भी किया जा रहा है।

(b) सान्ताक्रुज विद्युत विधायन क्षेत्र
(Santa Cruz Electronics Export Processing Zone)

सन् 1973 में, सांताक्रुज मुम्बई में एक निर्यात प्रोसेसिंग क्षेत्र बनाया गया हैं।जो इलैक्ट्रोनिक उपकरणों और पुर्जो का निर्यात बढ़ाएगा। यह पूरी तरह निर्यातान्मखी परियोजना है और इसमें शामिल होने वाले को अपने शत्-प्रतिशत उत्पादन का निर्यात करना होगा। इस क्षेत्र में उद्योग स्थापित करने के लिए एक बोर्ड बना है। बोर्ड ने दिसम्बर,1977 तक 641 फर्मो को मान्यता प्रदान की थी । आजकल यहाँ से प्रतिवर्ष करीब 4 करोड़ रूपये के माल का निर्यात होता है इन उद्योगो के विकास का कार्य सान्ताक्रुज विद्युत विधायन क्षेत्र विकास कमिश्नर की देख-रेख में होता है।

(2) विशिष्ट संगठनों की स्थापना
(Establishement of specialised Organisation) :–

देश के निर्यात व्यापार को सुनियोजित और संगठित ढ़ंग से बढ़ाने के लिए उद्योग एंव वाणिज्य मन्त्रालय द्धारा 1950 में इन संगठनों की स्थापना की गई। वर्तमान समय में ऐसी 17 परिषदें काम कर रही हैं जिन्हें निम्न तालिका से दर्शाया जा रहा है।

तालिका

निर्यात सवंर्द्धन परिषदों की सूची

1. मूल रसायन, दवाइयाँ और साबुन निर्यात संवर्द्धन परिषद् , मुम्बई
2. काजू निर्यात संवर्द्धन परिषद्, ऐर्नाकुलम।
3. रासायनिक व सम्बन्धित उत्पादन निर्यात सवंर्द्धन परिषद् , कलकत्ता
4. सूती वस्त्र निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई।
5. अभियांत्रिकी निर्यात संवर्द्धन परिषद् कलकत्ता ।
6. तैयार चमड़ा व चमड़े की वस्तुएँ बनाने वाली निर्यात सवंर्द्धन परिषद्, कानपुर।
7. हीरे तथा जवाहारत निर्यात संवर्द्धन परिषद्, मुम्बई-34
8. चमड़ा निर्यात संवर्द्धन परिषद् चेन्नई-3
9. समुद्री उत्पाद निर्यात संवर्द्धन परिषद्, एर्नाकुलम
10. प्लास्टिक और लिनोलियम निर्यात संवर्द्धन परिषद् मुम्बई-25
11. तैयार आहार निर्यात संवर्द्धन परिषद्, नई दिल्ली।
12. अभ्रक निर्यात संवर्द्धन परिषद् कलकत्ता-1
13. सिल्क व रेयाँन निर्यात संवर्द्धन परिषद् मुम्बई-1
14. मसाले (spices) निर्यात संवर्द्धन परिषद् कोचीन-16
15. खेल सामग्री निर्यात संवर्द्धन परिषद्, नई दिल्ली-1
16. तम्बाकू निर्यात संवर्द्धन परिषद, चेन्नई1
17. ऊन एंव ऊन से निर्मित सामग्री निर्यात संवर्द्धन परिषद् मुम्बई.2.0

इन निर्यात सवंर्द्धन परिषदों का पंजीयन अलाभकारी (Non-Profit) संगठनों के रूप में कम्पनीच अधिनियम के अन्तर्गत किया गया है। सम्बन्धित उत्पादों के निर्यातक इन परिषदों के सदस्य से फीस के रूप में वार्षिक चन्दा प्राप्त किया जाता हैं। सदस्य

अपने मतों (Voting System) के आधार पर एक कार्य समिति (Working Committee) का चुनाव करते हैं। कार्य समिति निर्यात से सम्बन्धित समस्याओं व नीतियों पर विचार करती है। सरकार इन परिषदों को सहायता (Grants) प्रदान करती है तथा कार्य समिति का मार्ग दर्शन करने हेतु अपना प्रतिनिधि नियुक्त करती है। इन परिषदों के मुख्य कार्य निम्न हैं-

(i) निर्यात योग्य वस्तुओं की विदेशों में बिक्री की सम्भावनाओं का सर्वेक्षण (ii) विदेशी बाजारों का सर्वेक्षण करना , (ii) निर्यात माल का गुण नियन्त्रण करना, (iv) विदेशों को व्यापार प्रतिनिधि मण्डल योजना, (v) विदेशी मेलों में माल का प्रदर्शन, (vi) आयातकों और निर्यातकों को एक दूसरे के निकट लाना और उनके झगड़ों का फैसला करना, (vii) निर्यात सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाना, (viii) परिषद् सलाहकार का तथा प्रबन्धकीय कार्य भी करती है।

2. वस्तु मण्डल

(Commodity Boards) :–

ये बोर्ड वैधानिक संस्थाएँ है और कुछ वस्तुओं का उत्पादन, विकास और निर्यात इसके जिम्मे हैं। इस समय ऐसे 5 बोर्ड है जो कॉफी, चाय, इलायची, रबड़ और तम्बाकू के लिए है।

(i) कॉफी बोर्ड

(Coffee Board)

इसकी स्थापना कॉफी अधिनियम 1942 के तहत की गयी है। कॉफी उद्योग के विकास की जिम्मेदारी इस बोर्ड पर हैं। और इसने कॉफी की किस्म सुधारने और उत्पादन के लिए कॉफी विकास योजना चलाई है। इसके लिए यह कॉफी उगाने वालो को ऋण देता हैं।

(ii) चाय बोर्ड

(Tea Board):–

भारत सरकार द्धारा इस बोर्ड की स्थापना चाय अधिनियम 1955 के तहत की गई हैं चाय बोर्ड चाय उद्योग के विकास के लिए मुख्य अभिकरण है और यह चाय का उत्पादन बढ़ाने के लिए कई योजनाएँ कार्यान्वित कर रहा है। इनमें चाय बागानों को दीर्घकालीन ऋण देना , किराया खरीद आधार पर मशीने लेने की सुविधा देना और चाय की पुरानी झाड़ों को पुनः लगाने के लिए सहायता देना शामिल हैं। कलकत्ता में एक चाय व्यापार निगम भी स्थापित किया गया है, जो भारतीय चाय को कुछ चुने हुए देशों में उपभोक्ताओं के लायक डिब्बों में भरकर बेचता हैं।

(iii) रबड़ बोर्ड

(Rubber Board) :–

इसकी स्थापना रबड़ अधिनियम 1947 के तहत की गई है। रबड़ बोर्ड रबड़ उद्योग की समस्याओं के समाधान में सहायता करता हैं और इससे सम्बन्धित महत्वपूर्ण बातों का फैसला करता हैं। इसने 1957 में पुनः व क्षारोपण के लिए आर्थिक सहायता की एक योजना आरम्भ की थी। अब तक इसके अन्तर्गत 8 करोड़ रूपये से अधिक की आर्थिक सहायता दी जा चुकी है।

(iv) इलाइची बोर्ड

(Cardamon Board):–

यह बोर्ड इलाइची अधिनियम 1965 के तहत स्थापित किया गया। इसका मुख्य कार्यालय एर्नाकुलम, केरल राज्य में है। भारत इलाइची का विश्व में सबसें बड़ा निर्यातक और दूनियाँ के इलायची के व्यापार का 70% व्यापार करता है।

(v) तम्बाकू के उत्पादन और विपणन की समस्याओं को निपटाने के लिए तम्बाकू बोर्ड की स्थापना जनवरी, 1976 में की गई।

(3) निर्यात प्रोत्साहन

(The Directorate of Export Promotion)

इसकी स्थापना अगस्त 1957 में की गयी थी। निदेशालय का मुख्य दफ्तर नई दिल्ली में है, परन्तु क्षेत्रीय कार्यालय मुम्बई, चेन्नई और कलकत्ता में भी है। निदेशालय विभिन्न निर्यात संवर्द्धन परिषद् व अन्य विशिष्ट संस्थाओं की गतिविधियों में समन्वय स्थापित करता है। तथा उनके प्रशासन में सहायता पहुँचाता है

(4) भारतीय विदेशी व्यापार संस्था

(Indian Institute of Foreign Trade):–

इस संस्था की स्थापना भारत सरकार ने 1963 में एक स्वायत संस्था के रूप में की। यह संस्थान सोसायटीज रजिस्ट्रेशन एकट (Societies Registration Act) के अन्तर्गत सोसायटी के तौर पर पंजीक त है। इस संस्थान के प्रमुख कार्य अग्रंकित प्रकार है।

(i) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की आधुनिक विधियों का प्रशिक्षण देना।

संस्था ने दो निर्यात प्रशिक्षण कोर्स भी प्रारम्भ कर दिये है-(a) अन्तर्राष्ट्रीय विपणन तकनीक (b) विदेशी विपणन अनुसंधान

(ii) बाजार सर्वेक्षण एंव अनुसंधान सम्बन्धी कार्य।

(ii) विदेशी व्यापार सम्बन्धी सूचनायें व आंकड़े एकत्रित करना तथा विज्ञापन एंव प्रचार की व्यवस्था करना।

(5) केन्द्रीय व्यापार सलाहकार परिषद्

(Central Advisory Council on Trade) :–

सन् 1962 में स्थापित और अक्टूबर 1976 में पुनर्गठित व्यापार बोर्ड तथा जनवरी 1977 में बनी व्यापार सलाहकार परिषद को समाप्त करके उनके स्थान पर 15 फरवरी 1978 को केन्द्रीय व्यापार सलाहकार परिषद को गठित किया गया हैं। यह सरकार को निम्न मामालें में परामर्श देता है-(i) आयात और निर्यात नीति तथा कार्यक्रम (ii) आयात और निर्यात नियंत्रण का सचांलन , (iii) वाणिज्यिक सेवाओं का गठन और विकास, (iv) निर्यात उत्पादनों का प्रबन्ध और विस्तार।

(6) भारतीय निर्यात संगठन संघ

(The Federation of Indian Export):–

सन् 1966 में दिल्ली में निर्यात संगठन की स्थापना की गयी। इसका काम निर्यात संवर्द्धन परिषदों, वस्तु बार्डो, चेम्बर्स आफॅ कॉमर्स, व्यापार संघों और अन्य विशिष्ट निकायों की निर्यात प्रोत्साहन सम्बन्धी गतिविधियों में समन्वय करना है। और उन्हें बढ़ाना है। संघ के अन्तर्गत पंजीयत संस्थाओं को विदेशों में उपलब्ध निर्यात प्रोत्साहन के अवसरों की खोज हेतु वित्तीय सहायता भी सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाती हैं।

(7) व्यापार विकास प्राधिकरण

(Trade Development Authority) :–

जुलाई, 1970 के संसद के निर्यात नीति प्रस्ताव (Export Policy Resolution, 1970) के परिणामस्वरूप भारत सरकार ने 1971 में व्यापार मंत्रालय के अधीन इसकी स्थापना की इसका मुख्यालय नई दिल्ली में हैं। इसकी स्थापना विशेषकर मंझले और छोटे उद्यमियों को प्रोत्साहन देने और उन्हें संगठित करने के लिए की गई है। जिससे उनकी निर्यात क्षमता का विकास हो। प्राधिकरण के मुख्य कार्य निम्न है। (i) निर्यात क्षमता वाली हुई वस्तुओं के निर्यात की द ष्टि से उपयुक्त निर्माताओं और निर्यातकों का पता लगाना और ग्राहक सूची बनाना,(ii) विदेशी बाजारों के बारे में सूचना संग्रहण , (iii) बाजार अनुसंधान , (iv) उत्पाद विकास , (v) निर्यात वित की उपलब्धि और निर्यात आदेशों को प्राप्त करना, (vi) विदेशों में कार्यालय स्थापित करना जहाँ स्थायी सम्पर्क तथा पूछताछ व्यवस्था की जाती है। (vii) विशेष बाजारों के अनुकूल माल का गुण सुधार इत्यादि।

प्राधिकरण ने कुछ चुनी हुई वस्तुओं को 18 उत्पाद समूहों में बाटँ दिया है। इन समूहों में करीब 150 मदें (items) शामिल है। प्रमुख उत्पाद समूह (Product group) निम्न है। सीने की मशीन के उपकरण, साइकिल के कुछ उपकरण, विद्युत उपकरण, एल्यूमीनियम सिलिण्डर के सिरे, एल्मूमीनियम मोल्डिंग्स , प्लास्टिक इंजेक्शन, कैरेज, नट-बोल्ट, मशीन स्क्रू, कील आधुनिक फर्नीचर, चमड़े की वस्तुएँ, खेल के सामान आदि।

8. निर्यात निरिक्षण परिषद्

(Export Inspection Council):–

इस परिषद् की स्थापना निर्यात(किस्म नियन्त्रण एंव निरीक्षण) अधिनियम 1963 अन्तर्गत 1 जनवरी, 1964 को की गई थी। यह एक संविधिक निकाय है। यह विभिन्न निर्यात योग्य वस्तुओं के लदान-पूर्व अनिवार्य निरीक्षण और किस्म के उपायों लागू करने और उनका पालन कराने का काम करती हैं। इस परिषद् के मुख्य कार्यालय कलकत्ता तथा दिल्ली में है तथा मुम्बई व

कोचीन में इसके क्षेत्रीय कार्यालय हैं परिषद् की स्थापना से अब 751 निर्यात वस्तुएँ अनिवार्य किस्म नियन्त्रण एंव लदान से पूर्व निरीक्षण के अन्तर्गत लाई जा चुकी हैं इसके लिए परिषद् के पाचँ निर्यात निरीक्षण प्राधिकरण है, जो कलकत्ता , चेन्नई, कोचीन , मुम्बई तथा दिल्ली में स्थित है जिनके 43 कार्यालय व उपकार्यालय हैं।

कपड़ा और कपड़ा मशीनों की किस्म नियन्त्रण का काम कपड़ा समिति अधिनियम, 1963 के अन्तर्गत स्थापित कपड़ा समिति मुम्बई करती है। क षि-उपज (वर्गीकरण एंव बिक्री) अधिनियम, 1973 के अन्तर्गत लगभग 15 क षिजन्य पदार्थो के निर्यात से पूर्व भारत सरकार ने उनकी श्रेणीबद्धता अनिवार्य कर दी है। ऐसी वस्तुओं में इलायची, तम्बाकू , काजू, सन, लाल मिर्च, ऊन, काली मिर्च, सूअर के बाल, चन्दन का तेल इत्यादि मुख्य हैं।

(9) भारतीय मानक संस्थान

(Indian Standard Institute):–

1946 में स्थापित भारतीय मानक संस्थान नई दिल्ली वस्तुओं , पदार्थो तथा क्रियाविधियों के लिए राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय मानक निश्चित करता है। इसका उद्देश्य भारतीय माल की विदेशों में साख जमाना है। यह संस्था मानकीकरण विषयक अन्तर्राष्ट्रीस संगठन और अन्तर्राष्ट्रीय विद्युत तकनीकी आयोग में भारत का प्रतिनिधित्व करती है।

यह संस्थान औधोगिक टेक्नोलॉजी में मानकीकरण और किस्म नियन्त्रण को बढ़ावा देता हैं। तथा भारतीय और विदेशी कम्पनियों के कार्यकारी और तकनीकी अधिकारियों की मानकीकरण सम्बन्धी तकनीक का प्रशिक्षण देता है।

यह संस्थान आई. एस. आई (ISI) प्रमाणीकरण चिन्ह योजना भी चलाता है, जिसके अन्तर्गत निर्माताओं को उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं पर प्रमाणीकरण मुहर लगाने के लिए लाइसेन्स जारी किये जाते हैं यह उनकी किस्म के बारें में एक तीसरे पक्ष की गारन्टी होती है।

(10) भारतीय पैकिंग सस्थान

Indian Institute of Packaging

इसकी स्थापना सन् 1996 में मुम्बई में की गई। यह पैकेजिंग उद्योग के लिए कच्चा माल सम्बन्धी जानकारी देने वाला संस्थान है। इसका कार्य नई पैकिंग सामग्री के लिए अनुसंधान करना और पैकिंग की नई-नई विधियों की जानकारी देना है। इसके अतिरिक्त यह संस्थान पैकिजिंग सेवाओं का प्रबन्ध करता हैं। इसके दो प्रादेशिक कार्यालय है। एक मद्रास और दूसरा कलकत्ता में हैं।

(11) भारतीय पंच फैसला परिषद्

(Indian Council of Arbitration):–

कई बार निर्यात व्यापार में अनुबन्ध सम्बन्धी शर्ते पूरी नहीं करने पर क्रेता एंव विक्रेता के मध्य झगड़ा हो जाता है। इसके कई कारण हो सकते हैं, जैसे किस्म, मात्रा , सुपुर्दगी , पैकिंग ,विशिष्ट्रीकरण मूल्य आदि। अतः ऐसी दशा में पचं-निर्णय की आवश्यकता पड़ती है।

भारतीय सरकार ने सन् 1965 में भारतीय पंच फैसला परिषद् की स्थापना की, जो सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम के अन्तर्गत पंजीक त अलाभकारी संगठन हैं। इस परिषद् के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं। (i) व्यापार करने वालो को कानूनी परामर्श देना,(ii) पंच-फैसले द्वारा विदेशी व्यापार सम्बन्धी झगड़ों का निबटारा करना (iii) सर्वमान्य संविदा -पत्र प्रस्तुत करना और व्यापारिक वर्ग की बीच सद्भावना बढाना(iv) व्यापारिक पंच-निर्णयों सम्बन्धी सामग्री का प्रकाश आदि।

परिषद् पंचों का निर्वाचन एंव नियुक्ति करती हैं। परिषद् ने पंचों की एक सूची भी तैयार की है।

(12) समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण

(Marine Products Export Development Authority)

यह प्राधिरकण अगस्त 1972. में सांविधिक बोर्ड के रूप मे कोचीन में स्थापित किया गया। कोचीन, चेन्नई, मुम्बई एंव कलकत्ता में इसके क्षेत्रीय कार्यालय हैं इसका कार्य समुद्री उत्पाद उद्योग को विशेषकर उसके निर्यात को और बढ़ाना हैं प्राधिकरण कानून के अधीन समुद्री उत्पादों के सभी निर्यातकों, मछली पकड़ने के जहाजों परिष्करण करने वाले कारखानों , भण्डार-भवनों तथा

परिवहन साधनों के सभी मालिकों को स्वंय प्राधिकरण के पास पजीयन कराना होता हैं।

13. क्षेत्रीय निर्यात-आयात सलाहकार समितियाँ

(Zonal Export-Import Advisory Committees) :–

देशों में आयात एंव निर्यात व्यापार के विभिन्न पहलुओं पर सलाह देने के लिए चार क्षेत्रीय निर्यात-आयात सलाहकार समितियाँ बनाई गई है। ये समितियाँ नई दिल्ली, मुम्बई, कलकत्ता और चेन्नई में कार्य कर रही हैं ये समितियाँ आयात निर्यात से सम्बन्धित समस्याओं पर विचार-विमर्श करती हैं तथा सुधार के लिए सुझाव देती है। मुख्य (Prominent) व्यापारी इस क्षेत्रीय सलाहकार समितियों का अध्यक्ष नियुक्त किया जाता है। तथा मुख्य आयात-निर्यात नियन्त्रक (Chief Controller of Imports & Exports) सचिव के रूप में कार्य करता है। इन समितियों में व्यापार, उद्योग, उपभोक्ता पोर्ट ट्रस्ट आदि के प्रतिनिधि शामिल किये जाते हैं। ये प्रतिनिधि 3 या 4 बार वर्ष में मिलतें हैं और सभी क्षेत्रीय स्थानीय समस्याओं पर विचार करते हैं, जो निर्यातको के सामने आती है।

14. भारतीय व्यापार मेला प्राधिकरण

(Trade Fair Authority of India) ;–

देश के व्यापार प्रसार को मेलों और प्रदर्शनियों द्वारा नई दिशा देने के विचार से कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 25 के अन्तर्गत भारतीय व्यापार मेला प्राधिकरण के नाम से एक स्वायतशासी संगठन सरकारी कम्पनी के रूप में स्थापित किया गया है। यह संगठन अब वे सब कार्य करता है जों पहले प्रदर्शनी और वाणिज्यिक प्रचार निदेशालय, व्यापार मेला संगठन और भारतीय व्यापार मेला परिषद् द्वारा किये जाते थें। इस प्राधिकरण ने 1 मार्च 1977 से कार्य करना शुरू किया यह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेलों में भाग लेकर तथा विदेशों में पूर्णतः भारतीय प्रदर्शनियाँ आयोजित करके भारतीय वस्तुओं का प्रचार करता है। यह भारत में राष्ट्रीय मेलों और प्रदर्शनियों का आयोजन करता है।

सन् 1977-78 में व्यापार मेला ने 17 अन्तर्राष्ट्रीय मेलों में भाग लिया। 1978-79 में तेहरान, जाम्बिया, बुडापेस्ट, मिलान, दमिश्क, स्टॉक होम, त्रिपोली लाइटिजंग और बगदाद के अन्तर्राष्ट्रीय मेलों में शामिल होने का कार्यक्रम बनाया गया । 1979-80 के वर्ष में प्राधिकरण का 16 अन्तर्राष्ट्रीय मेलों औ।र प्रदर्शनियों में भाग लिया।

(3) सार्वजनिक क्षेत्र के व्यापारिक उपक्रमों की स्थापना

(Public Sector Trading Undertaking):–

(i) राज्य व्यापार निगम

(State Trading Corporation)

भारत के राज्य व्यापार निगम लिमिटेड का भारतीय कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत 1956 में पंजीक त किया गया। इसका मुख्य कार्य भारत के निर्यात व्यापार के क्षेत्र को व्यापक बनाना और देश के लिए अत्यावश्यक सामान के आयात की व्यवस्था करना है । इसकी गतिविधियों का उद्देश्य परम्परागत और गैर-परम्परागत वस्तुओं के निर्यात के लिए वर्तमान मण्डियों का विस्तार तथा नई मण्डियों को तलाश करना और निर्यात में विविधता लाना हैं। निगम अपना कार्य सरकार, व्यापार और उद्योग के निकट सहयोग से करता हैं।

राज्य व्यापार निगम समूह में अब निगम के अतिरिक्त भारतीय काजू निगम (CCI) , हस्तशिल्प और हाथ करघा निर्यात निगम (HHEC) , भारतीय परियोजना और उपकरण निगम (PEC) राज्य रासानियम तथा औषधि निगम (CpC) , केन्द्रीय कुटीर उद्योग निर्यात निगम (CCIC) है।

2.खनिज तथा धातु व्यापार निगम

(Minerals and Metals Trading Corporation) :–

इस निगम की स्थापना सितम्बर 1963 में की गई थी। देश मे उपलब्ध खनिज पदार्थो के निर्यात के विकास के लिए यह सरकारी क्षेत्र का प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संस्थान हैं। मुख्य रूप से निगम कोयला, लोहा , मैंगनीज, बॉक्साइट के निर्यात की व्यवस्था करता हैं, एंव उसे बढ़ावा देता हैं। तथा तांबा जस्ता सीसा, टीन एल्यूमीनियम इत्यादि अलोह धातु इस्पात, उर्वरक एंव गन्धक इत्यादि का आयात करता हैं।

(3) अभ्रक व्यापार निगम

(Mica Trading Corporation):–

भारतीय अभ्रक व्यापार निगम लिमिटेड, पटना की स्थापना 1973 में खनिज तथा धातु व्यापार निगम की एक सहायक संस्था के रूप में पूर्णतया अभ्रक का व्यापार करने के लिए की गई थी। इससे 1 जून 1974 से काम करना शुरू किया। इसका मुख्य ध्येय छोटे निर्यात कत्ताओं की निर्यात व्यापार में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना है, जिस पर अब तक कुछ बड़े निर्यातकर्ताओं तथा खान मालिकों का एकाधिकार तथा प्रमुख था।

4. भारतीय चाय निगम

(Tea Trading Corporation of India)

इस निगम की स्थापना 2.1 दिसम्बर, 1971 को एक सरकारी कम्पनी के रूप में कलकत्ता में की गई हैं। निगम भारतीय चाय को उपभोक्ता पैकिटों मे पश्चिमी एशिया के चुने हुए देशों और अन्य देशों में बेंचता हैं। तथा उसका प्रचार करता है। निगम चाय के निर्यात को अतिरिक्त आन्तरिक क्षेत्र की मांग को पूरा करने का प्रयास भी करता है।

(5) भारतीय पटसन निगम

पटसन के आयात-निर्यात और देश के भीतर इसकी हाट- व्यवस्था के लिए सन् 1971 में पटसन निगम की स्थापना की गई। 1977-78 में यह कच्चे पटसन की कीमतों को स्थिर रखने में ,विशेषकर असम और त्रिपुरा के कुछ भागों में सफल रहा। पटसन से बनी वस्तुओं का 1977-78 में जों निर्यात किया गया उसका मूल्य 2.31 करोड़ रूपये था।

(6) भारतीय रूई निगम

(Cotton Corporation):-

इस निगम की स्थापना कपास के व्यापार को सरकारी क्षेत्र में लेने के लिए की गई। निगम विदेशी कपास का आयात तथा देशी कपास की खरीद , बिक्री और निर्यात करता है।

(7) राष्ट्रीय टेक्सटाइल निगम

(National Textile Corporation):–

इस निगम की स्थापना सन् 1968 में की गई। सूती वस्त्र उद्योग के अनेक बीमार मिलों का राष्ट्रीय करण करके निगम के अन्तर्गत पुर्नगठन किया गया हैं। सूती वस्त्र उद्योग के लिए आवश्यक मशीनों का आयात करना और इनके द्धारा उत्पादित माल का निर्यात करना निगम का मुख्य कार्य है।

(8) राष्ट्रीय औधोगिक विकास निगम
(National Industrial Development Corporation)

यह निगम 1954 में सूती कपड़ा और पटसन उद्योगों के पुनः स्थापन तथा आधुनिकीकरण और मशीनी औजारों के कारखानों के विस्तार के लिए स्थापित किया गया था। आजकल यह देश और विदेश में इंजीनियरी परामर्श देता है। निगम की परामर्श सेवाओं का लाभ ईरान, केनिया, लीबिया, मलेशिया , नेपाल , तन्जानिया, खाड़ी के देशों जैसे विकासशील देश और इटली जैसे विकसित देश भी उठा रहे हैं। सयुंक्त राष्ट्र औधोगिक विकास संगठन और इंग्लैण्ड की कुछ फर्मो ने भी इसे कुछ कार्य सौंपे हैं।

(9) निर्यात साख तथा गारण्टी निगम

(Export Credit and Guarantee Corporation)

30 जुलाई 1957 को निर्यात जोखिम बीमा निगम लिमिटेड की स्थापना की गई और सन् 1964 में इसका नाम निर्यात साख और गारन्टी निगम लि. (ECGC) रखा गया। इसका मुख्यालय मुम्बई में है इसका उद्देश्य निर्यात साख बीमा का प्रबन्ध करना है।

निगम तीन प्रकार के उतरदायीत्व अपने ऊपर लेता है (i) संवोष्टन साख गारन्टी (Packing Credit Gurantee) (ii) पोतलदान

के पश्चात् निर्यात साख निगम गारन्टी (Post-shipment Export Credit Guarantee) तथा (iii) निर्यात वित्त गारन्टी (Export Finance Guarantee)

(10) निर्यात-आयात बैंक

(Export-Import Bank):–

अमेरिका एंव जापान के आयात-निर्यात बैंक की भांति भारत सरकार ने भी भारतीय निर्यातकर्ताओं की वित सम्बन्धी समस्याओं का निवारण करने हेतु एक निर्यात-आयात बैंक (EXIM Bank) की स्थापना की है। निर्यात-आयात बैंक की आरम्भिक पूँजी दो अरब रूपये Rs. 200 Million की होगी। जो बाद में बढ़ाकर पांच अरब रूपये Rs. 500 Million कर दी जायेगी।

बैंक का संचालन एक संचालक-मण्डल द्धारा होगा। जिसमें भारतीय रिजर्व बैंक, विकास बैंक्स, निर्यात साख एवं गारन्टी निगम के प्रतिनिधि तथा केन्द्रीय सरकार अनुसूचित बैंक का होगा। और वह विदेशी व्यापार के लिए दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध करने के अलावा वाणिज्य ऋण देने वाली विभिन्न संस्थाओं की गतिविधियों को समन्वित करेगा।

4. अन्य संगठन समितियाँ तथा परिषदें:-
(Other Organisation, Committees and Associations)

(i) निर्यात सदन

(Export Houses)

सरकार द्धारा निर्यात व्यापार में विशिष्टीकरण करने वाले के लिए यह योजना 1 जुलाई , 1968 से प्रारम्भ की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत सरकार कुछ प्रसिद्ध व्यापारिक संस्थाओं, उत्पादक ईकाइयों, सलाहकारी समितियों आदि को निर्यात सदन के रूप मे मान्यता प्रदान करती हैं।

वर्तमान योजना के अनुसार जिन कम्पनियों , सहकारी समितियों अथवा व्यापार संघों का वार्षिक निर्यात चुनी हुई वस्तुओं (Selected Export Products) का 4 करोड़ रूपये है, उन्हें सरकार 'निर्यात सदन' घोषित कर सकती हैं 20 करोड़ रूपये शुद्ध विदेशी विनिमय आय अर्जित करने वालों का व्यापार ग्रह का दर्जा दिया जाता है । चुनी हुई वस्तुओं को विभिन्न समूहों में बांटा गया है। जैसे(i) अभियान्त्रिकी माल (ii) रासायनिक- प्लास्टिक व सम्बन्धित उत्पादन (iii) चमड़ा एंव खेलकूद का सामान, (iv) आहार, क षि उत्पाद ,(v) सूती वस्त्र (vi) हीरे जवाहरात (vii) हस्तशिल्प आदि। प्रत्येक आवेदक के काम की सही जांच के बाद आयात- निर्यात के मुख्य नियन्त्रक द्धारा मान्यता प्रमाण-पत्र दिये जाते हैं। अब तक भारत सरकार 375 निर्यात सदनों को मान्यता दे चुकी है। मान्यता प्राप्त निर्यात सदनों को कुछ विशेष सुविधाएँ दी जाती है। (i) विदेश में व्यापार सम्बन्धी यात्रा के लिए विदेशी मुद्रा एक साथ देना, (ii) बाजार अनुसंधान एंव निर्यात प्रचार के लिए विपणन विकास नीधि (Market Development Fund) से अनुदान देना, (iii) विदेशों में कार्यालय खोलने के लिए विपणन विकास निधि से अनुदान देना, (iv) ये निर्यात सदन खुला सामान्य लाइसेन्स के अन्तर्गत पूंजीगत माल, कच्चा माल आदि का आयात कर सकते हैं (v) इसके अतिरिक्त बड़े उद्योगों द्वारा बनाई हुई निश्चित वस्तुओं के लिए निर्यात के 5% और लघु उद्योग के माल के निर्यात के 33.3% के बराबर निर्यात सदनों को और आयात लाइसेन्स दिये जाते है। (vi) इसके अतिरिक्त निर्यात सदनों को अपनी आवश्यकता के पदार्थ पुनः पूर्ति (Replenishment) लाईसेन्स द्धारा मंगाने की सुविधा दी गयी है।

2.. भारत सरकार ने चीनी निर्यात अधिनियम, 1958 कें अन्तर्गत एक भारतीय चीनी उद्योग निर्यात निगम लिमिटेड की स्थापना की है। यह निगम निर्यात एजेन्सी के रूप में कार्य करता है तथा भारत के सम्पूर्ण चीनी का निर्यात इसी के माध्यम से होता है। यह निगम भारत से चीनी के निर्यात के लिए एक मात्र अधिक त संस्था है।

3. वाणिज्य सचिव की अध्यक्षता में जून1971 से एक नीति सलाहकार समिति (Policy advisory Committee) बनाई गई थी जो अभी तक कार्यशील हैं । समिति दीर्घकालीन आयात-निर्यात नीति कें महत्वपूर्ण तथ्यों का अध्ययन कर आवश्यक निर्णय लेती है।

4. चेम्बर आफॅ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज:

ये व्यापार तथा उद्योग के निर्यात संवर्द्धन हेतु अपनी महत्वपूर्ण निभाते है। इसकी सदस्यता व्यापार एंव उद्योग के सभी सदस्यों

के लिए खुली है। ये (i) मूल स्थान का प्रमाण-पत्र (Certificate of Origin) निर्गमित करते हैं तथा निर्यातकर्ताओं के विशेष मामलों का सरकार के समक्ष रखते है; (ii) ये व्यापार, वाणिज्य और उद्योग को प्रोत्साहन देते है। (iii) सदस्यों के हित से सम्बन्धित आँकड़े तथा सूचनाएँ इकट्ठा करना, (iv) सरकार को सदस्यों के हित में नये कानून बनाने की प्रेरणा देना आदि।

(5) टेक्सटाइल समिति, मुम्बई

यह कमेटी विदेशों में भेजे जाने वाले सूती वस्त्र, धागों, सूत आदि को जहाज में लदान से पूर्व उनकी उतमता की जाँच हेतु कार्यरत है। यह समिति बाजार अनुसंधान कार्य भी करती है।

(6) मूंगफली निष्कर्षण निर्यात विकास परिषद् :-

यह परिषद् भारत में मूंगफली निष्कर्षण में संलगन समस्त उत्पादकों तथा व्यापरियों का प्रतिनिधित्व करती है। जो कि उसके निर्यात से सम्बन्धित हैं। यह परिषद मुम्बई में स्थित है।

(7) भाडा जॉच ब्यरो :-

समुद्री भाड़े में रियायत हेतु मुम्बई के सामान्य निदेशालय जहाजरानी में इस ब्यूरों की स्थापना की गई है। चेन्नई कोचीन, कलकत्ता, विशाखापटनम और गाँधी धाम में इसकी शाखाएँ है। यह ब्यूरों जहाजरानी सुविधाओं, जहाज मे स्थान व भाड़े से सम्बन्धित समस्याओं को हल करता है।

(8) जहाजरानी स्थायी समिति :-

(Scope shipping) :–

यह समिति निर्यात माल से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की जहाजरानी एवं बन्दरगाह सम्बन्धी कठिनाइयों को हल करने का कार्य करती है। समिति में अनेक सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिनिधियों को शामिल किया गया है।

(9) वायु स्थायी समिति

(Scope - Air):–

यह समिति वायु मार्ग द्वारा भेजे जाने वाल निर्यात माल में आने वाले समस्याओं को दूर करती है इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु कलकत्ता, मुम्बई, चेन्नई, बंगलौर, अहमदाबाद हवाई अड्डों पर Intergrate Air Cargo Complexes के स्थपना की गई है। इन कॉम्पलेक्सेज पर निर्यातक लदान के सम्बन्ध में आवश्यक सुविधाए प्राप्त करता हैं।

(10) रेल स्थायी समिति

(Scope - Rail) :-

यह उच्च स्तरीय समिति रेल यातायात द्वारा निर्यात माल के सम्बन्ध में आने वाली कठिनाईयों को दूर करने का कार्य करती है।

प्रोत्साहन योजनाएँ तथा सहायता
(Export Incentives and Assistane)

विभिन्न संस्थाओं व संगठनों की स्थापना के अतिरिक्त, वर्तमान समय में निर्यात संवर्धन के लिए प्रोत्साहन और सहायता योजनाएँ भी कार्यान्वित की जा रही हैं इनमें से प्रमुख निम्नलिखित है -

(1) करो में छूट :-

(Relief in Taxes) :–

सरकार ने निर्यात संवर्द्धन के लिए करो मे छूट दी है। निर्यात संवर्द्धन हेतु विज्ञापन, सर्वेक्षण, यात्राओं, विदशी एजेन्सी एवं कार्यालयों की स्थापना पर किया व्यय आयकर में पूर्णतः या आंशिक छूट के लिए मान्य है इसी तरह उत्पादन कर में भी छूट की व्यवस्था है। स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्रों (Free Trade Zones) में माल के आयात निर्यात करों में छूट दी जाती है।

(2) रेल भाड़े कमी व प्राथमिकता :-
(Priority and concession in Railway Freight) :–

निर्यात योग्य वस्तुओं को बन्दगाहों तक पहुँचाने के लिए रेलों द्वारा प्राथमिकता दी जाती है तथा निर्यात वस्तुओं पर भाड़े में छूट दी जाती है।

(3) देशी माल की पूर्ति :-
(Supply of Indigenous Goods):-

निर्यातकों को आवश्यक देशी माल प्राथमिकता के आधार पर रियायती दरों पर उपलब्ध कराया जाता है। नियार्तकों को इस्पात, कच्चा लोहा, टीन की चादरें इत्यादि रियायती दरों पर दिये जाते है।

(4) **अतिरिक्त आयात सुविधा**
(Additional Import Facility):—

13 अगस्त 1991 को घोषित नई व्यापारिक नीति में कुछ निर्यात उद्योगो को 10 प्रतिशत अतिरिक्त आयात सुविधा देने का प्रावधान किया गया है। ये उद्योग निम्नलिखित है - सशोधित, चाय, कॉफी, डिब्बा बन्द सब्जी, फल मछलियाँ, काजू, फूल, पौधे, दवाईयाँ, भेषज, सभी इलेक्ट्रोनिक उत्पाद और उच्च तकनीक उत्पाद।

(5) **कच्चे माल और उत्पादन सामग्री की आयात :-**
(Import of Raw Material and Manufacturing Goods) :–

उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चे माल और अन्य उत्पादन सामग्री के आयात की नीति को सरल बनाया गया है। अधिकांश कच्चा-माल और अन्य उत्पादन सामग्री (प्रतिबन्धित सूची वाली मदों को छोडकर) को या ता एक्सिमस्क्रिप (Exim Scrip) के बदले या फिर खुला सामान्य लाइसेन्स (Open General Licence) के आधार पर मुक्त आयात किया जा सकता है।

(6) **एस. टी. सी. और एम. एम. टी. सी. के एकाधिकार की समाप्ति :-**
(Abolisihing Monopoly of S.T.C. and M.M.T.C.) :–

निजी निर्यातकों को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ वस्तुओं के निर्यात पर S.T.C. तथा M.M.T.C. का एकाधिकार समाप्त कर दिया गया है। ये वस्तुएँ है - अंरडी का तेल, पोलिथिलीन, कोयला और कोक, रंगीन -पिक्चर ट्यूब्स और रंगीन टी.वी. की उप सहायक सामग्री, ईथल, अल्कोहल, स्प्रिट, फिल्म, वीड़ियों टेप, खाड़सारी, शीरा इत्यादि।

(7) **एक्सिम स्क्रिप की सुविधा :-**
(Facility of EXIM Scrip):–

निर्यात घरानों तथा व्यापार घरानों को प्रोत्साहन के रूप में जो अतिरिक्त लाइसेन्स दिये जाते थे। उन्हें 1 अप्रेल, 1992, से समाप्त कर दिया और उनके स्थान पर प्रोत्साहन का रूप अतिरिक्त एक्सिम स्क्रिप की हकदारी होगी।

पुनर्भरण लाइसेन्स पद्धति (Replenishment Licensing System - REP) को विस्त त तथा उदार बनाया गया है। तथा इसका नाम एक्सिम स्क्रिप रखा गया है। हीरे-जवाहरात, कुछ धातु आधारित हस्तकौशल तथा पुस्तकों को छोडकर अन्य सभी वस्तुओं के निर्यातकर्त्ताओं को निर्यात मूल्य के 30 प्रतिशत के बराबर एक्सिम स्क्रिप निर्गमित की जायेगी। इससे निर्यातकर्त्ता अपनी आवश्यक वस्तुओं का आयात कर सकेंगे। जिसमें निर्यातों में व द्धि हो सकेगी। इस योजना में चॉदी व प्लेटिनम को भी शामिल किया गया है।

(8) पूँजीगत सामान के आयात की सुविधा
(Import Facility for capital Goods) :–

विश्व बाजार में निर्यात उद्योगों को प्रतियोगी बनाने हेतु पूँजीगत वस्तुओं के आयात पर सीमा शूल्क में रियायत की एक योजना प्रारम्भ की गई है, ताकि विश्व बाजार में भारतीय निर्यातक प्रतियोगिता में टिक सकें। इस योजाना के अन्तर्गत नियमित रूप से निर्यात करने वाले निर्यातक 16 करोड़ रू. मूल्य तकी की पूँजीगत वस्तुएँ आयात कर सकेंगे, बशर्ते वे इस आयातित पूँजीगत

माल के तिगुने के बराबर निर्यात करने का उत्तरदायित्व निभायें तथ पिछले वर्षो की औसत निर्यात कार्यकुशलता बनाये रखें।

(9) निर्यात सदनों को मान्यता एवं सुविधाएँ
(Recognition and Facility to Export Trading Houses)

निश्चित शर्तो की पूर्ति करने पर प्रमुख निर्यातकों को निर्यात सदनों की मान्यता दी जाती है। इससे उनको प्रचार एवं विपणन में सहायता, अनुदान, विदेशी यात्रा के लिए विदेशी विनिमय प्राप्ति में सुविधा आदि का लाभ दियाा जाता है। वर्तमान में ऐसे निर्यातक जो वर्ष में 4 करोड़ रू. से अधिक शुद्ध विदेशी विनिमय आय (Net Foreign Exchange Earnings) अर्जित करते है। उनहैं 'निर्यात सदन' (Export House), 20 करोड़ रू. शुद्ध विदेशी आय अर्जित करने वालो को 'व्यापारिक ग ह' (Trading House) तथा 75 करोड. वार्षिक से अधिक शुद्ध विदेशी विनिमय आय अर्जित करने वाले निर्यातकों को 'तारांकित व्यापारिक गह' (Star Trading House) का दर्जा दिया जाता है इस वर्ष एक नयी 'सुपर स्टार ट्रेडिंग हाऊस' श्रेणी बनायी गई है। इसे निर्यात नीति बनाने वाली शीर्ष संस्थाओं की सदस्यता दी जायेगी।

(10) व्यापारिक केन्द्र एवं शोरूम
(Trade Centres and Showrooms):–

भारतीय वस्तुओं की मांग में व द्धि करने हेतु प्रमुख व्यापारिक केन्द्रों पर शो-रूप एवं व्यापारिक केन्द्र स्थापति किए गए हैं। इससे भारतीय माल की विदेशों में माँग में व द्धि हुई है।

(11) पुरस्कार :-
(Awards) :–

सन् 1969 से निर्यातकों को पुरस्क त करने की एक योजना शूरू की गई। इस योजना के अनुसार निर्यात व्यापर में महत्वपूर्ण योगदान करने वाले व्यक्तियों तथा व्यापारिक फर्मो को योग्यता प्रमाण-पत्र एवं पारितोषिक वितरित किया जाते हैं। योजना का प्रमुख उद्देश्य निर्यातों से प्रोत्साहित करना है।

(12) स्वतन्त्र व्यापार क्षेत्र :-
(Free Trade Zones):–

भारत सरकार ने छः निर्यात संवर्द्धन क्षेत्रों (EPZs) की स्थापना की है, जिनका प्रमुख उद्देश्य निर्मित वस्तुओं के निर्यातों में व द्धि करता है। वर्ष 1999-2000 की EXIM नीति में EPZs का नाम बदलकर FTZ करर दिया गया। इन क्षेत्रों में स्थापित उत्पादक इकाइयों को शुल्क मुक्ति की सुविधा दी जाती है, ताकि वे अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में बराबरी कर सकें। निर्यात संवर्द्धन क्षेत्र कांडला, शान्ताक्रुज, कोचीन, चेन्नई, फाल्टा तथा नोइडा (NOIDA) में स्थापित किये गये है। विशाखापट्टनम में सातवाँ FTZ स्थापित किया जा रहा है जो शीर्घ ही कार्य प्रारम्भ कर देगा।

(13) डॉलर में खाता खोलना की मंजूरी
(Approval for Opening Dollar Account) :—

सरकार ने निर्यातकों को डॉलर में खाता खोलने की मंजूरी देने का निर्णय किया है। अब तक ऐसे खाते रत्न और आभूषणों तथा मारूति वाहन के निर्यातक खोल सकते थे। अब यह खातें अन्य निर्यातकों द्वारा भी खोले जा सकेगें।

इन खातों में डॉलर में प्राप्त राशि जमा की जाएगी, जिसका उपयोग निर्यातकों द्वारा कठोर मुद्रा (Hard Currency) में प्राप्त ऋणों के भुगतान में होगा यदि इस भुगतान के अलावा और राशि इस डॉलर खाते में बचती है। तो वह रिजर्व बैंक के खाते में हस्तान्तरिक कर दी जायेगी। इससे देश के विदेशी मुद्रा खाते पर दबाव कम होगा।

(14) केन्द्रीय मन्जूरी व्यवस्था की समाप्ति
(Abolition of Centralised Approval System)

अग्रिम लाइसेन्स, निर्यातोन्मुखी इकाईयों और निर्यात संसाधित क्षेत्रों में स्थापित इकाईयों के आयात की केन्द्रीय मन्जूरी व्यवस्था अब समाप्त कर दी गई है।

(15) निर्यात साख
(Export Credit) :–

रिजर्व बैंक आफ इण्डिया ने निर्यात साख में व द्धि की है। कच्चे माल की आपात् जरूरत पूरी करने की लिए सरकार ने मध्यम अवधि के ऋण देने के लिए निर्यात आयात बैंक को मंजूरी दी है।

(16) भारतीय मुद्रा का अवमूल्यन
(Devaluation of Indian Currency) :—

भारत सरकार ने निर्यात संवर्द्धन तथा व्यापार सन्तुलन को पक्ष में करने के लिए समय-समय पर भारतीय रूपये का अवमूल्यन किया है। सन् 1949 तथा 1966 में भारतीय रूपये का क्रमशः 30.5% तथा 36.5% अवमूल्यन किया गया है। जुलाई, 1991 में सरकार ने रूपये का दो बार लगभग 20% अवमूल्य किया है, ताकि भारतीय माल विदेशों में सस्ता हो तथा निर्यातों में व द्धि हो।

भारत सरकार द्वारा निर्यात संवर्द्धन के लिए किए गए विभिन्न प्रयासो के कारण भारतीय निर्यातों में विविधता आई है तथा गैर-परम्परागत वस्तुओं का निर्यात बढ़ा है। भारतीय व्यापार की दिशा में भी परिवर्तन हुआ है। लेकिन अब भी भारत का व्यापार सन्तुलन हमेशा प्रतिकूल रहता है। अतः निर्यात संवर्द्धन के लिए सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयासों में तेजी लाना आवश्यक है।

निर्यात संवर्द्धन के लिए निर्यातकों को विशेष रियायतें

निर्यातों में आनें वाली गिरावट को रोकने एवं निर्यात व द्धि के लिए भारतीय जनता पार्टी की सरकार ने 4 अगस्त, 1998 को निर्यातकों के लिए विशेष रियायतों की घोषणा की, तत्कालीन वाणिज्य मन्त्री श्री रामक ष्ण हेगंड़े ने लोकसभा में विशेष रियायतो की घोषणा करते हुए बाताया है कि ये रियायते निर्यात संवर्द्धन के लिए व्यापक एवं दूरगामी प्रभाव वाली साबित होंगी।

सरकार द्वारा निर्यात संवर्द्धन के लिए घोषित रियायते एवं सुविधाए निम्नलिखित है :-

(1) ब्याज दर में कमी :-

सरकार द्वारा लदान पूर्व और लदानोत्तर ऋण पर ब्याज की दर 11 प्रतिशत से घटाकर 9 प्रतिशत कर दी गयी। यह भारतीय रिजर्व बैंक के साथ परामर्श करके तय किया गया है। कि निर्यातकों को एक विशेष्स अस्थायी सुविधा के रूप में 9 प्रतिशत की दर पर निर्यात ऋण उपलब्ध कराया जायेगा। यह सुविधा अगले वर्ष 31 मार्च तक जारी रहेगी।

(2) शुल्क प्रतिपूर्ति टर्मिनल उत्पाद शुल्क की वापसी :-

टर्मिनल उत्पाद शुल्क की वापसी (शुल्क प्रति अदायगी) के रूप में सरकारी देय में यदि दो महीने से अधिक को विलम्ब होता है तो सरकार निर्यातकों को 20 ब्याज का भुगतान करेगी। शुल्क प्रति अदायगी के मामले में इस अवधि की गणना लदान बिल की तारीख से और टर्मिनल उत्पाद शुल्क के मामले में इस अवधि की गणना शुल्क के भुगतान की तारीख से की जायेगी। निर्यात के 15 दिनों के भीतर निर्धारित दस्तावेज प्रस्तुत करने पर किया जायेगा। यह प्रणाली 1 सितम्बर, 1998 से लागू होगी।

(3) आयात के लिए प्रतिभूति :-

एक वर्ष से अधिक उत्क ष्ट तथा निष्कलंक निर्यात कीर्तिमान रखने वाले विनिर्माता निर्यातकों को शुल्क मुक्त कच्ची सामग्री आदि के आयात के लिए प्रतिभूति के रूप में सीमा शुल्क विभाग को बैंक गारण्टी की बजाय निर्धारित शर्तो के अनुसार कानूनी वचन पत्र की सुविधा की अनुमति दी जायेगी। इससे निर्यातक को न केवल लागत को कम करने मे मदद मिलेगी। वरन् कार्यशील पूँजी बढ़ाने में भी मदद मिलेगी।

(4) मदर बाँड :-

जिन निर्यातकों को उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क बॉड अधिकारियों को बॉड देने की अनुमति दी जाती है, उन्हें इसके बाद विभिन्न दायित्वों को पूरा करने के लिए अलग से बॉड देने की जरूरत नहीं होगी, बल्कि उन्हें वार्षिक आधार पर एक 'मदर बॉड' देना होगा, जिसमे विभिन्न प्रयोजनों के लिये दिये जाने वाले अपेक्षित सभी बॉड सम्मिलित होंगे। इससे निर्यातकों को समय और खर्च भी बचेगा।

(5) संवर्धनात्मक उपायों और प्रक्रियात्मक परिवर्तनों के बारे में सहमति :-

निर्यातकों से ऐसे प्रतिवेदन मिल रहे हैं कि कुछ क्षेत्रों में निर्यात व द्धि में जो गिरावट आई हैं, उसके मुख्य कारण प्रक्रियात्मक, कठिनाईयाँ और प्रतिस्पर्धा का ह्रास है। निर्यातकों द्वारा सुझाये गये अनेक संवर्धनात्मक उपायों और प्रक्रियात्मक परिवर्तनों के बारे में सहमति हुई है। इनमें सम्मिलित हैं -

(a) ई.ओ. यू. ई. पी. जेड. एककों के लिए कर में छूट की अवधि को पाँच से बढाकर दस वर्ष करने का विचार किया जायेगा और कानून में आवश्यक संशोधन किये जायेगें।

(b) ई. ओ. यू को घरेलू टैरिफ के क्षेत्र में ठेके देने को अनुमति दी जायेगी।

(c) गैर सरकारी साफ्टवेयर प्रोघोगिकी पार्को को ई. पी. सी. जी. योजना के लाभ प्राप्त करने की अनुमति दी जायेगी।

(d) ई.पी.जेड. से कूरियर के जरिये निर्यात की सुविधा दी जायेगी।

(e) विनिर्दिष्ट किये जाने वाल जैव प्रोद्योगिकी एवं लघु इन्जीनियरी उद्योग भी एक करोड की प्रारम्भिक सीमा के नीचे शून्य शुल्क ई.पी.सी.जी. योजना के लाभ के लिए हकदार होंगे।

(6) हार्डवेयर इलैक्ट्रॉनिक्स क्षेत्र :-

इसके लिए एक विशेष पैकेज को बहुत जल्दी ही अन्तिम रूप दिया जायेगा।

(7) माल की निकासी की अनुमति :-

एक निश्चित कारोबार वाले विनिर्माता निर्यातकों को इसके बाद स्वयं प्रमाणन के आधार पर माल की निकासी की अनुमति दी जायेगी। इस प्रक्रिया को निर्धारित करने वाली आवश्यक अधिसूचना शीघ्र ही जारी की जायेगी।

(8) उपकरण पर शुल्क का समुचित संशोधन :-

प्रसंस्करण खाघों, बागबानी और पुष्पोत्पादों आदि के निर्यात को बढ़ाने के लिए मोबाइल कूलिंग उपकरण तथा अन्य कोल्ड चेन उपकरण पर शुल्क को समुचित रूप से संशोधित किया जायेगा ताकि ऐसे उपकरण की लागत को कम किया जा सके।

(9) क्रियाविधियों का सरलीकरण :-

इसके लिए कुछ और उपायों को भी अनुमोदित किया गया है और आवश्यक आदेश शीघ्र ही जारी किये जायेंगें।

निर्यात संवर्द्धन के सुझाव
(Suggestions for export Promotion)

(1) लागत में कमी

(Cost Reduction):–

निर्यातों में व द्धि के लिए उत्पादन लागत में कमी करना आवश्यक है। लागत में कमी करने से पूर्व भारतीय वस्तुएँ विदेशी बाजार में प्रतियोगिता का सामना कर सकेंगी।

(2) गुणवता में सुधार

(Quality Improvement):–

भारतीय वस्तुओं की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए किस्म नियन्त्रण (Quality Control) पर जोर देना चाहिए। उत्पादकों को चाहिए कि वे दोष रहित वस्तुओं का उत्पादन करें। इसके लिए हमें जापान की तरह कारखानों में शून्य दोष (Zero Defect) आन्दोलन चलाना चाहिए।

(3) नये बाजारों की खोज

(Search for New Markets) :–

भारत के अधिकांश निर्यात 5.6 देशों को दिये जाते है। अतः हमें नये बाजारों के खोज के प्रयास करने चाहिए। एशिया, अफ्रीका,

खाड़ी के देशों तथा दक्षिणी अमेरिकी देशों को निर्यात में व द्धि की विपुल सम्भावनाएँ है।

(4) मुद्रा प्रसार पर रोक

(Check on Inflation) :–

भारत में लगातार मुद्रा स्फीति के कारण निर्यात वस्तुओं की लागतों में व द्धि हो जाती है। अतः सरकार को बढती हुई कीमतों तथा मुद्रा प्रसार पर नियन्त्रण करना चाहिए।

(5) उत्पादन तथा निर्यात योग्य अतिरेक में व द्धि

(Increase in Production and Exportable Surplus):–

देश में क षि व औद्योगिक उत्पादन में व द्धि करके निर्यात योग्य अतिरेक में व द्धि की जानी चाहिए।

(6) घरेलू उपयोग पर नियन्त्रण

(Control on Domestic Consumption) :–

अनेक वस्तुओं के घरेलू उपभोग में व द्धि हो रही है, जैसे चाय, चीनी, कपड़ा और तम्बाकू, चमड़े का सामान आदि। अतः इन वस्तुओं के घरेलू उपभोग में कमी लाने का प्रयास करना चाहिए।

(7) साख सुविधा

(Credit Facility)

निर्यातकों को सस्ती दरों पर पर्याप्त साख उपलब्ध करायी जानी चाहिए।

(8) विज्ञापन एवं प्रचार

(Advertisement and Publicity) :–

विदेशों में भारतीय वस्तुओं की रूचि उत्पन्न करने, उत्तमता का प्रचार करने, विविध वस्तुओं को जानकारी देनें तथा दूसरी देशों के उत्पादों के मुकाबले भारतीय माल की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए विज्ञापन व प्रचार कार्यो को तेज किया जाना चाहिए।

(9) विदेशों में मेलों तथा प्रर्दशनियों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(10) द्विपक्षीय व्यापारिक समझोतों को प्रोत्साहन देना चाहिए।

(11) परिवहन में आने वाली बाधाओं को दूर करना चाहिए।

(12) देश के मध्यवर्ती भागों में अधिक से अधिक सूखे बन्दरगाह (Dry Ports) स्थापित किये जाने चाहिए।

अध्याय-8
व्यक्तिगत विक्रय एवं निर्यात सेविवर्गीय प्रबन्ध
(Personal Selling and Export Personnel Management)

तीव्र प्रतिस्पर्धा एवं चुनौतियों से युक्त अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में विक्रय करना वर्तमान समय में अत्यन्त कठिन कार्य हो गया है। प्रतिस्पर्धा के स्तर व मात्रा ने निर्यात प्रबन्धकों को अपना विक्रय बढ़ाने के लिए मजबूर कर दिया है। प्रतियोगिता के कारण प्रति इकाई लाभ की दर काफी कम हो गयी है। इसका एक ही निदान है, वह है विक्रय की मात्रा को यथासम्भव अधिकाधिक करना। विक्रय मात्रा को बढ़ाने में व्यक्तिगत विक्रय का अपन महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अन्तर्गत विक्रयकर्त्ता संभावित ग्राहक या प्रयोगकर्त्ता से व्यक्तिगत सम्पर्क करके माल या सेवा को विक्रय करने का प्रयास करता है। व्यक्तिगत विक्रय में उत्पाद के विक्रय के लिए विक्रेता एवं ग्राहक में किसी उत्पाद के गुणों, कीमत, प्रयोग विधि आदि के सम्बन्ध में वार्तालाप होता है और विक्रेता ग्राहक को प्रभावित करके अपनी उत्पाद को विक्रय करने की चेष्टा करता है। व्यक्तिगत विक्रय को विपणन की रीढ़ (Back Bone of Marketing) कहा जाता है। कुछ प्रमुख विद्वानों ने व्यक्तिगत विक्रय को अग्र प्रकार परिभाषित किया है -

रिचर्ड बसर्किक (Richard Buskirk) के शब्दों में, " वैयक्तिक विक्रय में किसी उत्पाद के भावी क्रेताओं से वैयक्तिक सम्पर्क स्थापित किया जाता है।"[1]

विलियम जे. स्टेन्टन (William J. Stanton) के अनुसार, "वैयक्तिक विक्रय में अकेला व्यक्तिगत सन्देश सम्मिलित होता है जो अव्यक्तिगत सन्देश, विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन एवं अन्य प्रवर्तन उपकरणों के विपरीत है।"[2]

अमेरिकन मार्केटिंग एसोसियेशन (American Marketing Association) के अनुसार, "यह एक या अधिक भावी क्रेताओं के साथ बातचीत करने में विक्रय करने के इरादे से की गयी मौखिक प्रस्तुति है।"[3]

व्यक्तिगत विक्रय में भावी ग्राहक से विक्रयकर्त्ता प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करता है। ऐसे उत्पाद जिनमें प्रति इकाई लागत अधिक है, जिनमें प्रदर्शन मूल्य है व क्रय निर्णय में विक्रेता का व्यक्तित्व अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है, ऐसी स्थिति में व्यक्तिगत विक्रय राम बाण का काम करता है। व्यक्तिगत विक्रय के लाभों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि पहले विज्ञापन करके विक्रयकर्ताओं के लिए आधार का निर्माण किया जाये। उसका अर्थ है कि जिन विक्रय क्षेत्रों में इस विधि का उपयोग किया जाना है, उनमें पहले विज्ञाापन के विभिन्न माध्यमों का उपयोग कर उत्पाद व अन्य बातों के विषय में अग्रिम जानकारी दे दी जाये, जिससे इन सभी बातों को प्रत्येक ग्राहक को प थक-प थक रूप से विक्रयकर्त्ता को बताने का आवश्यकता न रहे।

---

1. "Personal Selling consists of contacting prospective buyers of product personally." **Richard Buskirk**
2. "Personal Selling consists of individual personal communication, in contrast to mass relatively impersonal communication of advertising, sales promotion and the other promotion tools." **William J. Stanton**
3. "Oral presentation is a conversation with one more prospective purchaser for the purpose of making sales." **— American Marketing Association**

निर्यात विक्रय संवर्द्धन के लिए इस विधि का उपयोग करने के लिए यह आवश्यक है, कि विक्रयकर्त्ता इस प्रकार के चयनित किये जावें, जो विदेशी बाजारों की सरंचना, विशेषताओं, ग्राहकों की क्रय प्रेरणाओं, उनकी परम्पराओं, रीति-रिवाजों, भाषा आदि की जानकारी रखते हों। इससे उनका विक्रय कार्य में सहजता व स्वाभाविकता रहेगी। इसके लिए स्थानीय व्यक्तियों को उचित मात्रा में नियुक्त करना अधिक लाभदायक रहता है। निर्यातक देश के व्यक्तियों को भी उचित अनुपात में रखना आवश्यक है, जिससे उन्हें भी निर्यात बाजारों की पूरी जानकारी प्राप्त हो।

वैयक्तिक विक्रयकर्त्ताओं के प्रकार :
(Types of Personal Salesman)

वैयक्तिक विक्रयकर्त्ताओं का वर्गीकरण दो भागों में किया जा सकता है :-

(A) स जनशील विक्रयकर्त्ता

(B) सहारा देने वाले विक्रयकर्त्ता

(A) स जनशील विक्रयकर्त्ता
(Creative Salesmen)

इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता उत्पाद या सेवा के विक्रय के लिए सम्भावित क्रेताओं की खोज करते हैं। इसलिए इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता को स जनशील विक्रयकर्त्ता कहते हैं। ये विक्रयकर्त्ता निर्माता, थोक व्यापारी एवं फुटकर व्यापारियों की ओर से आदेश प्राप्त करते हैं। निर्यात बाजार के विक्रयकर्त्ताओं में विशेष योग्यताओं का होना आवश्यक है। स जनशील विक्रयकर्त्ता विदेशी बाजारों में भ्रमण करते हैं, उत्पाद के गुणों, उसकी विशेषताओं से सम्भावित क्रेताओं को अवगत कराते हैं। उनकी आपत्तियों का निवारण करते हैं, तथा उत्पादक या निर्यातक के लिए आदेश प्राप्त करते हैं।

(B) सहारा देने वाले विक्रयकर्त्ता
(Supporting Salesmen)

इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता न तो आदेश प्राप्त करते हैं, न ही विक्रय का कार्य करते हैं। इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता उत्पादक या निर्यातको के उत्पादों का विदेशी बाजारों में प्रभावी विक्रय के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करते हैं। इस प्रकार के विक्रयकर्त्ताओं को भी दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है -

प्रथम प्रकार के विक्रयकर्त्ता मिशनरी विक्रयकर्त्ता कहलाते हैं। यह संस्था की ख्याति में व द्धि का कार्य करते हैं तथा उत्पाद की विशेषताओं की जानकारी सम्भावित क्रेताओं को देते हैं।

दूसरे प्रकार के विक्रयकर्त्ता तकनीकी विशेषज्ञ होते हैं। ऐसे उत्पाद जिनमें तकनीकी जटिलता पेचीदगियाँ लिये हुए होती है, इन उत्पादों का विक्रय करना स जनशील विक्रयकर्त्ताओं के बस की बात नहीं है। इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता करते है। इस प्रकार के विक्रयकर्ता इंजीनियर होते हैं। ये भावी क्रेता को बारीकी से उत्पाद की जानकारी देते हैं। यदि आवश्यक हो तो उत्पाद को प्रदर्शित करके भी बताते हैं।

विक्रय प्रक्रिया
(Selling Process)

विक्रयकर्त्ता निर्यात बाजार में अच्छा प्रदर्शन तभी कर सकते हैं, जब उन्हें विक्रय प्रक्रिया की जानकारी हो। उन्हें इसकी विस्तार से जानकारी दी जानी चाहिए।

प्रथम तो उन्हें उन सम्भावित क्रेताओं का पता लगाना चाहिए जो उत्पादक के उत्पादों को क्रय करने वाले हों। इससे विक्रयकर्त्ता के विक्रय प्रयास उद्देश्यपूर्ण व लाभदायक हो सकेंगे।

द्वितीय चरण में उसे सम्भावित क्रेता के विषय में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। इसमें उसे क्रेता की आयु, धर्म, परिवार, अभिरूचि, शैक्षणिक स्तर, क्रय-प्रेरणाओं आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

तृतीय चरण में उसे क्रेता से व्यक्तिगत सम्पर्क करना चाहिए। इसके अन्तर्गत यदि वह क्रेता के पास किसी सन्दर्भ में पहुँचा है, तो इस सन्दर्भ की जानकारी क्रेता को देनी चाहिए। उसके बाद स्वयं का व उत्पादक का परिचय क्रेता को देना चाहिए। वस्तु के गुणों, उसकी विशेषताओं, प्रतियोगियों के उत्पादों से स्वयं के उत्पाद में तुलनात्मक रूप से जो अतिरिक्त गुण हैं, उनकी जानकारी क्रेता को देनी चाहिए। यह चरण अत्यन्त उपयोगी है, क्योंकि यही उसके क्रय निर्णय को सर्वाधिक प्रभावित करता है। उन लाभों एवं विशेषताओं को भी क्रेता को बताना चाहिए जो वह उत्पाद से प्राप्त कर सकता है।

चतुर्थ चरण में यदि आवश्यकता हो, तो विक्रयकर्त्ता को अभिनय के द्वारा भी उत्पाद के सम्बन्ध में क्रेता को बताना चाहिए। इससे भावी क्रेता उत्पाद से प्रभावित होता है।

पंचम चरण में उसे ग्राहक या भावी क्रेताओं से आपत्तियों को आमन्त्रित करना चाहिये। विक्रयकर्त्ता को ग्राहक की आपत्तियों या शंकाओं को विपरीत रूप से नहीं लेना चाहिए। उसे आपत्तियों को सहज रूप में हल करना चाहिए। कई बार इस प्रकार की आपत्तियों से विक्रयकर्त्ता को बहुत ही उपयोगी सुझाव मिल सकते हैं।

आपत्तियों के समाधान के बाद उसे विक्रय कार्य सम्पन करना चाहिए। उसके बाद उसे अनुगमन (Follow-up) भी करते रहना चाहिए। अनुगमन का अर्थ यह है कि एक विक्रयकर्त्ता को अपने कर्त्तव्यों का इतिश्री विक्रय पूरा होने के साथ ही नही समझना चाहिए वरन् उसे क्रेता से भविष्य में मिलते रहना चाहिए जिससे उसके कार्योपरान्त अनुभवों का पता लग सके। अनुगमन अधिकाधिक ग्राहक सन्तुष्टि प्रदान करता है।

व्यक्तिगत विक्रय को संवर्द्धन की एक प्रभावी तकनीक के रूप में तभी उपयोग किया जा सकेगा, जब प्रभावी व्यक्तित्व वाले, योग्य एवं कुशल विक्रयकर्त्ताओं का चयन किया जाये। उन्हें विक्रय प्रक्रिया के बारे में विस्तार से प्रशिक्षण दिया जाये। विदेशी बाजारों की विशेषताओं, संरचनाओं, परम्पराओं, क्रय-प्राथमिकताओं की जानकारी प्रदान की जाये। मिशनरी विक्रयकर्त्ताओं व स जनशील विक्रयकर्त्ताओं में समन्वय स्थापित किया जाये। विदेशी भाषा की जानकारी दी जाये व विज्ञापन से व्यक्तिगत विक्रय के अनुकूल वातावरण का निर्माण किया जाये।

व्यक्तिगत विक्रय की कठिनाइयाँ एवं दोष
(Difficulties and Demerits of Personal Selling)

निर्यात संवर्द्धन व्यक्तिगत विक्रय की अनेक कठिनाइयाँ हैं। इसमें सबसे बडी कठिनाई विदेशी क्रेताओं की मानसिकता उनके छुपे हुये क्रय प्रयोजनों को समझने की आती है। भाषा की कठिनाई भी रहती है। निर्यात विक्रय में विक्रयकर्त्ताओं को जो सबसे बड़ी समस्या आती है वह जलवायु सम्बन्धी परिवर्तनों के कारण स्वास्थ्य में उत्पन्न होने वाली समस्याएँ हैं। बहुत अच्छे स्वास्थ्य वाला व्यक्ति ही जलवायु के इन उच्चावचनों को सहन कर सकता हैं। एक देश की जलवायु दूसरे देश की जलवायु से भौगोलिक कारणों से भिन्न होती है। इसे साथ ही विशेषकर भारतीय सन्दर्भ में जहाँ शाकाहारी व्यक्ति अधिक है उनके सामने खाने की समस्या कुछ सीमा तक रहती है।

व्यक्तिगत विक्रय का एक दोष यह भी है कि इसकी लागत अधिक आती है। विक्रयकर्त्ता का पारिश्रामिम, यात्रा व्यय व अन्य भत्ते देने होते हैं। इससे प्रति इकाई लागत काफी आती है। इसके साथ ही प्रत्येक क्रेता के पास सही समय पर पहुँचने में भी समस्या रहती है। विक्रयकर्त्ता की जरा सी मानवीय चूक क्रेता को हमेशा के लिए कम्पनी के उत्पाद के उत्पादों के प्रति उदासीन बना सकती है।

निर्यात व्यापार के लिए अपेक्षाक त योग्यता वाले विक्रयकर्त्ता पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना भी अपने आप में एक बहुत बड़ी चुनौती है।

व्यक्तिगत विक्रय के लाभ
(Advantages of Personal Selling)

निर्यात व्यापार में व्यक्तिगत विक्रय के अनेक लाभ हैं। जिनमें प्रमुख निम्न हैं :-

(1) प्रभावी एवं आक्रामक विज्ञापन उत्पाद की बाजार में छवि बना देते हैं। इस छवि का व्यापारिक विदोहन व्यक्तिगत विक्रय से ही हो सकता है।

(2) व्यक्तिगत विक्रय में विक्रयकर्त्ता के प्रयास लक्ष्य-अभिमुखी होते हैं। वह विद्यमान व भावी ग्राहकों की वास्तविक सूची बनाकर प्राथमिकता के आधार पर विक्रय कार्य सम्पन्न करता है। इससे उसके प्रयत्न व्यर्थ कम होते हैं।

(3) परिचालन सम्बन्धी जो लोचशीलता इस माध्यम से हैं, वह अन्य में नहीं है। व्यक्तिगत विक्रय में विक्रयकर्त्ता भावी ग्राहकों की जीवन शैली, आदतें, व्यवहार व उनके क्रय निर्णयों को प्रभावित करने वाली बातों का पता लगाकर उसी के अनुसार अपने विक्रय प्रस्तुतीकरण में परिवर्तन कर सकता है, जिससे ग्राहक आसानी से उस उत्पाद को स्वीकार कर सके।

(4) विक्रयकर्त्ता को आकर्षक व्यक्तित्व, मनोहारी छवि, प्रभावी प्रस्तुतीकरण से ग्राहक आदेश देने से मना नहीं कर पाता है।

(5) इस विधि में विक्रयकर्त्ता क्रेता की उत्पाद सम्बन्धी आपत्तियों का निवारण उसी समय कर देता है। जिससे ग्राहक की सन्तुष्टि का लाभ उठाकर तुरन्त विक्रय किया जा सकता है।

(6) ऐसे उत्पाद जिनमें प्रदर्शन मूल्य (Demonstration Value) है अर्थात जिन्हें क्रय करने से पूर्व ग्राहक चलाकर अपने सामने देखना चाहता है, उनके लिए व्यक्तिगत विक्रय ही एकमात्र माध्यम है। टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुएँ जैसे टेलीविजन, सिलाई मशीन, मिक्सर, स्कूटर आदि एवं औद्योगिक वस्तुओं को ग्राहक प्रदर्शन के बाद लेना पसन्द करता है।

(7) उच्च तकनीकी वस्तुएँ जैसे कम्प्यूटर आदि की बिक्री के लिए यही एकमात्र माध्यम है।

(8) अच्छे विक्रयकर्त्ता निर्यातक फर्म की अनूकूल जनधारणा व छवि, को बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। वह एक प्रकार से कम्पनी के राजदूत के रूप में कार्य करते हैं।

(9) व्यक्तिगत विक्रयकर्त्ता विक्रय के अलावा भी अनके गैर विक्रय सेवाएँ प्रदान करते हैं। इसमें बाजार सूचनाओं की प्राप्ति, साख सूचना एकत्र करना व उधार की वसूली का कार्य शामिल है, जो सामान्यतया उनके कार्यो में नहीं गिने जाते है।

व्यक्तिगत विक्रय के लिए आवश्यक गुण
(Skills in Personal Selling)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में व्यक्तिगत विक्रय का लाभ उठाने के लिय विक्रयकर्त्ता में निम्नलिखित गुण होने चाहिए -

(1) उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए।

(2) उच्च स्तर की शैक्षणिक योग्यता होनी चाहिए।

(3) उसे विशेषकर ग्राहक मनोविज्ञान व अभिप्रेरणा अनुसन्धान का विशेष ज्ञान होना चाहिए।

(4) निर्यात बाजार में प्रचलित विदेशी भाषा का ज्ञान होना चाहिए।

(5) अपनी बात को प्रभावी रूप से प्रस्तुत करने की कला का धनी होना चाहिए।

(6) विक्रय की जाने वाली वस्तु के बारे में उसे गहन एवं व्यापक जानकारी होनी चाहिए।

(7) उसकी स्मरण शक्ति उच्च स्तर की होनी चाहिए।

(8) उच्च स्तर के आत्मविश्वास का भाव उसमें होना चाहिए।

(9) उसे विदेशाी बाजारों, जहाँ उसे वस्तुओं का विक्रय करना है, उस बाजार के लक्ष्य ग्राहकों की क्रय प्रेरणाओं, आदतों व उनके मनोविज्ञान की पूरी जानकारी हो।

(10) स्वभाव से मितभाषी, सहज व उच्च स्तर की सहनशीलता वाला व्यक्ति होना चाहिए।

(11) उसमें उच्च स्तर की शारीरिक क्षमता का होना आवश्यक है, जिससे विभिन्न देशों में प्रवास करने पर होने वाले जलवायु, खान-पान सम्बन्धी परिवर्तनों को उसका शरीर वहन कर सके।

(12) सहज मानवीय गुणों का होना वांछनीय है।

भ्रमणशील क्रेताओं को व्यक्तिगत विक्रय
(Personal Selling to Visiting Buyers)

भ्रमणशील क्रेताओं से आशय उन विदेशी क्रेताओं से है, जो विभिन्न देशों में स्वयं जाकर अपनी पसन्द का माल क्रय करते हैं। ये क्रेता विभिन्न देशों मे पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार व्यापारिक संस्थाओं में जाकर, प्रत्यक्ष माल देखकर, वहीं उसका क्रय करते हैं। इस प्रकार की प्रव ति क षि उत्पादों, हस्तकला, धातुओं, जवाहरात उद्योग में पायी जाती है। सूरत व मुम्बई में हीरा, जयपूर में पन्ना तथा हैदराबाद में मोती से तैयार वस्तुएँ विदेशी क्रेता वहीं जाकर क्रय करते हैं। अतः क्रेता बड़ी मात्रा मे माल क्रय करते हैं।

इस विदेशी क्रेताओं के आगमन का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि विक्रयकर्त्ता को उनके आने से पूर्व साथ ही यह पता होना चाहिए कि उन्हें किस-किस प्रकार का माल, किन-किन कीमतों पर व किन विक्रय शर्तो पर चाहिए। उसके लिए विक्रयकर्त्ता को क्रेताओं के साथ पत्र व्यवहार तथा E-Mail के द्वारा सम्पर्क में रहना चाहिए। उनके आने से पूर्व उनके आवास एवं स्वागत की पूरी तैयारी की जानी चाहिए। आने से पूर्व ही वांछित माल को सभी संभव स्त्रोतों से एकत्र कर लें। प्रत्येक वस्तु पर विक्रय मूल्य के टेग लगा दें। यदि सौदेबाजी की सम्भावना हो तो टेग मूल्य व वास्तविक मूल्य में अन्तर स्थापित करना अच्छा रहता है।

विदेशी क्रेता के आगमन पर उनके उचित स्वागत की व्यवस्था होनी चाहिए। विक्रय के समय ऐसा माल पहले दिखाया जाये जिसमें विक्रय की अधिक सम्भावना हो। जिन-जिन वस्तुओं के सौद हो चुके हों उनकी विक्रय शर्ते लिखित रूप मे तय कर ली जाये। यदि कभी विवाद हो तो इनका प्रयोग किया जा सकता है। विक्रय शर्तो के अनुरूप माल को शीघ्र भेजना चाहिए, जिससे विश्वसनीयता बनी रहे। एक बार विक्रय होना पर्याप्त नहीं है वरन् बारम्बार विक्रय आवश्यक है। इसके लिए अनुगमन (Follow-up) आवश्यक है।

विक्रयकर्त्ता का विदेशी यात्रा नियोजित करना
(Planning Visits Abroad of Salesman)

निर्यात व्यापार में विक्रयकर्त्ताओं की विदेश यात्रा में सबसे बड़ा बाधक तत्व इसकी लागत है। विक्रयकर्त्ता के प्रवास के दौरान यात्रा व अनेक अन्य व्यय होते हैं। इसकी भारी लागत को देखते हुए यह आवश्यक है, कि यात्रा से पूर्व उसके कार्यक्रम का सही नियोजन किया जाये, जिससे यात्रा का अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके। इसके लिए निम्नलिखित उपाय उपयुक्त हो सकते हैं :-

(1) यात्रा के पूर्व पर्याप्त अनुसन्धान किया जायै

(2) पत्र व्यवहार व E-Mail से विक्रय संभावनाओं को निश्चित किया जाये।

(3) यात्रा का मार्ग ऐसा निश्चित किया जाये जिससे की अधिकांश बाजार को सुगमता से कवर किया जा सके।

(4) विक्रयकर्त्ता को यात्रा मार्ग के पूरे नक्शे व अन्य सामग्री दे दी जाये।

(5) कार्यक्रम को अत्यन्त गोपनीय रखा जाये ताकि प्रतिस्पर्धी संस्थाओं का उसका पता न लग सके।

(6) यात्रा से पूर्व विक्रयकर्त्ता का सामान्य मेडिकल चेक अप करा लिया जाये तथा उसे मेडिकल किट भी दे दी जाये।

(7) विक्रय क्षेत्र नया होने पर इसे सन्दर्भ दिये जाने चाहिये जिससे आवश्यकता होने पर वह उनकी मदद ले सके।

(8) समय तत्व पर पूरा विचार होना चाहिये। लक्ष्य बाजारों के लिए क्या वही समय उपयुक्त है। वहाँ की जलवायु व उस समय के मौसम की जानकारी अग्रिम रूप से प्राप्त कर लेनी चाहिए।

(9) औद्योगिक माल के विक्रय हेतु यदि किन्हीं उच्च अधिकारियों से मिलना हो तो अच्छा होगा पत्र व्यवहार करके उनकी सुविधा मालूम कर ली जाये।

"सेविवर्गीय प्रबन्ध"

(Personnel Management)

निर्यात संगठन के सेविवर्गीय प्रबन्ध के अन्तर्गत हम निर्यात प्रबन्धक का चुनाव निर्यात कर्मचारियों का चुनाव, प्रशिक्षण एवं प्रबन्ध ा को सम्मिलित करते हैं। निर्यात संगठन की सफलता या असफलता इन्हीं की कार्य-कुशलता व क्षमता पर निर्भर करती है। ऐसी उत्पादक कम्पनियाँ जो अपने सम्पूर्ण उत्पाद या उसके महत्वपूर्ण भाग को केवल निर्यात के लिए ही प्रयुक्त करती हैं, इनके लिए तो इस प्रकार के संगठन का महत्त्व और बढ़ जाता है।

निर्यात प्रबन्धक
(Export Manager)

प्रत्येक ऐसी कम्पनी जो देशी विपणन के साथ-साथ निर्यात विपणन पर भी ध्यान देना चाहती है, यह प्रभावशाली तरीके से निर्यात बाजारों में प्रवेश करने की महत्वकांक्षा रखती है, उसके लिए निर्यात प्रबन्धक की भूमिका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण होती है। निर्यात प्रबन्धक निर्यात व्यवसाय का प्रधान होता है, कम्पनी के लिए उपयुक्त निर्यात नीति का विकास करता है, विदेशी बाजारों के बारे में जानकारी प्राप्त करता है, उपयुक्त मध्यस्थों को खोजता है व निर्यात विभाग के कर्मचारियों का प्रबन्ध करता है।

निर्यात प्रबन्धक को निर्यात के सर्वोच्च कार्यकारी अधिकारी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो निर्यात विपणन के लिए उत्तरदायी होता है। इस आशय के लिए वह उद्देश्यपूर्ण नियोजन करता है; उसे क्रियान्वित करने के लिए अच्छे संगठन का निर्माण करता है, उपलब्ध साधनों व व्यक्तियों में समन्वय बैठाता है, लक्ष्य-अभिमुखी (Goal-Oriented) क्रियाओं पर प्रभावशाली नियन्त्रण रखता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि निर्यात प्रबन्धक की भूमिका निर्यात संगठनों में एक धुरी के समान होती है।

निर्यात प्रबन्ध की भूमिका :

प्रेट के अनुसार निर्यात संगठनों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्यात प्रबन्धक निभाता है। उसकी संगठनात्मक स्थिति धुरीय होती है। निर्यात प्रबन्धक की भूमिका को तीन रूपों में स्पष्ट प्रकार से समझा जा सकता है -

(1) **निर्यात प्रबन्धक की भूमिका संगठन की धुरी के रूप में** - निर्यात प्रबन्धक ही फर्म की क्षमता व बाजार में उपलब्ध अवसरों के आधार पर विक्रय के लिए अल्पकालीन, मध्यमकालीन योजनाए तैयार करता है, उनके क्रियान्वयन के लिए वह संगठन स्थापित करता है।

योग्य, निर्यात विपणन में दक्ष, अनुभवी व्यक्तियों का चयन करता है। निश्चित विपणन कार्यक्रम बनाकर उसे समयबद्ध तरीके से पूरा करता है। आवश्यकता होने पर पूर्व निश्चित कार्यक्रमों में आवश्यक परिवर्तन करता है। इस प्रकार निर्यात संगठनों में उसकी धूरीय भूमिका होती है।

(2) **विक्रय कर्मचारियों के रूप में** - **स्टिल, कण्डिफ एवं गोवानी** ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि विक्रय परिणाम, शुद्ध लाभ तथा दीर्घकालीन विकास को संभव बनाने हेतु विभिन्न समन्वयकारी क्रियाओं के सम्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ठीक यही स्थिति निर्यात प्रबन्धक की भी होती है। वह भी दीर्घकालीन विकास के सन्दर्भ में विभिन्न क्रियाओं में इस प्रकार की समन्वयकारी भूमिका निभाता है जिससे फर्म दीर्घकालीन लाभ कमा सके तथा बाजारों को स्थायी रूप से बनाये रख सके।

उपरोक्त उद्देश्य के लिए निर्यात प्रबन्धक योग्य व प्रतिभावान कर्मचारियों का चयन करता है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों व अपने व्यवहार, कार्य से इनका इस प्रकार से विकास करता है, जो ग्राहक सन्तुष्टि से विक्रय करने में सक्षम हों। समय समय पर उससे मिलने का कार्यक्रम बनाता है, उससे आपसी कठिनाइयों को बताने का अवसर मिलता है, ऐसे अवसरों पर वह उनका उचित मार्गदर्शन करता है। कभी-कभी स्वयं विक्रय क्षेत्रों में दौरा कर कठिनाइयों, ग्राहक शिकायतों का मौके पर जायजा लेता है एवं ऐसे उचित कदम उठाता है, जिनसे उनकी पुनर्राव ति को रोका जा सके। विक्रयकत्ताओं को एक मित्र, मार्गदर्शक के रूप में अपनी बहुमूल्य राय देता है। इस प्रकार उसकी महत्वपूर्ण भूमिका विक्रयकर्त्ताओं के मार्गदर्शन की भी है।

(3) **विदेशी क्रेताओं के प्रतिनिधि के रूप में** - यद्यपि इसकी यह भूमिका अब अटपटी अवश्य लगती है, लेकिन वास्तव में निर्यात प्रबन्धक विदेशी क्रेताओं के एजेन्ट के रूप में भी कार्य करते है। वह यह पता लगान का प्रयास करते है कि विदेशी ग्राहक किस प्रकार का माल चाहते है, उनकी किस्म सम्बन्धी पसन्दगी कैसी है। किस मूल्य, डिजाइन, रंग, पैक आदि में चाहते हैं। उनका सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिवेश क्या है ? उस परिवेश का उनकी क्रय पसन्दगियों, प्राथमिकताओं पर क्या प्रभाव पड़ता है ? इन सब बातों का पता निर्यात प्रबन्धक लगाता है। विदेशी ग्राहक वस्तु को कब, कहाँ चाहते हैं, उसके अनुसार ही वह उपयुक्त वितरण की वाहिका खोजता है। इस प्रकार औपचारिक रूप से नहीं होते हुए भी वह अनौपचारिक रूप से विदेशी बाजारों के क्रेता के प्रतिनिधि के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि निर्यात प्रबन्धक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है।

निर्यात प्रबन्धक के कार्य
(Duties of Export Manager):–

निर्यात प्रबन्धक का मुख्य कार्य विदेशी बाजारों में कम्पनी द्वारा उत्पादित वस्तुओं का लाभप्रद आधार पर विक्रय करना है। निर्यात प्रबन्धक के कार्य का क्षेत्र संकुचित या विस्त त हो सकता है। यह इस पर निर्भर करेगा कि उस पर किस प्रकार का किस परिमाण में उत्तरदायित्व है। फिर भी सभी निर्यात प्रबन्धकों के कई कार्य ऐसे हैं, जो समान रूप से सभी को करने होते हैं।

(1) बाजार स्थिति का अध्ययन एवं विश्लेषण

निर्यात प्रबन्धक का सर्वप्रथम कार्य लक्ष्य बाजार में विपणन सम्भावनाओं का पता लगना तथा उन बाजारों के सम्बन्ध में पूरी सूचनाएं प्राप्त करना है। क्रेता किस प्रकार का माल, किन कीमतों पर, कब चाहते हैं। जिन वस्तुओं को कम्पनी निर्यात करने की सोच रही है, उनकी मांग किस प्रकार की है, वह अल्पकालिक है यह दीर्घकालिक है। प्रतियोगिता किस प्रकार की है। कम्पनी क्या उस योग्य है, कि जिसेस प्रतियोगियों की चुनौतियों का सामना कर सके। उस देश में विदेशी व्यापार को नियमन व नियन्त्रण करने वाले अधिनियम किस प्रकार के हैं। उनका कितना अनुकूल व प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इन सभी बातों पर निर्यात प्रबन्धक को गम्भीरता से विचार करना चाहिए व उसका समय समय पर विश्लेषण करना चाहिए।

(2) निर्यात नीति का विकास :-

बाजार की स्थिति का विश्लेषण करने के उपरान्त निर्यात प्रबन्धक को निर्यात नीति का विकास करना चाहिए। इसके अन्तर्गत विदेशी बाजारों के विदोहन के लिए निश्चित विपणन कार्यक्रम बनाया जाता है। उसके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए समस्त विपणन प्रयासों में समन्वय किया जाता है। अतः दूसरा उसका महत्वपूर्ण कार्य निर्यात नीति का विकास करना है।

(3) निर्यात संगठन की स्थापना :-

इसके बाद निर्यात प्रबन्धक का महत्वपूर्ण कार्य निर्यात संगठन की स्थापन करना है। इसके लिए उपयुक्त प्रकार का संगठन उसे निर्मित करना चाहिए। निर्यात संगठन अनेक प्रकार के हो सकते हैं। यदि फर्म की कुल बिक्री में निर्यात विक्रय की मात्रा सीमित है, तो एकीक त निर्यात संगठन व विदेशी विक्रय की मात्रा बढ़ने पर प थक निर्यात विभाग व इस प्रकार से अन्य निर्यात संगठनों को उनकी उपयोगिता व कम्पनी की आवश्यकता के अनुसार अपनाया जाना चाहिए।

(4) निर्यात विभाग के लिए कर्मचारियों का चयन :-

उपर्युक्त प्रकार के संगठन का चुनाव करने के पश्चात् निर्यात प्रबन्धक को संगठन की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त स्त्रोतों से, जिसमें आंतरिक व बाह्य स्त्रोत दोनों ही शामिल हैं, योग्य व उपयुक्त कर्मचारियों का चयन करना चाहिए। ऐसा करते समय अन्तर्राष्ट्रीय विपणन की जानकारी व व्यावसायिक प ष्ठभूमि को महत्व दिया जाना चाहिए।

(5) कर्मचारी प्रशिक्षण :-

चयन के पश्चात् कर्मचारियों के उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। प्रशिक्षण कार्यक्रमों में अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की विशेषताओं, प्रतियोगियों की चुनौतियों, उत्पाद के बारे में पूरी जानकारी, प्रभाव विक्रय करने की विधियों आदि के बारे में विस्त त रूप से प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इसके लिए उचित रूप से प्रशिक्षण कार्यक्रम को बनाया जाना चाहिए।

(6) विभिन्न विभागों में समन्वय :-

उपरोक्त सभी कार्य पूरा करने के पश्चात् निर्यात प्रबन्धक को अगला बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य विभिन्न विभागों के बीच समन्वय करना होना चाहिए। विदेशी बाजारों के अनुसन्धान से जो परिणाम निकले हों उसे उत्पादन विभाग को सूचित किया जाना चाहिए, उससे उत्पादन विभाग विदेशी क्रेताओं की आवश्यकता के अनुसार वस्तुओं का उत्पादन कर सके। डिजाइन व पैकिंग विभाग को भी इसी के अनुरूप बताना पड़ता है। परिवहन विभाग को यह बताना पड़ता है कि कितना माल किस देश को कब, किस जगह भेजा जाना है। इस प्रकार उसे सभी विभागों से समन्वय स्थापित करना होता है।

(7) विज्ञापन कार्यक्रम संचालित करना :-

इससे पहले कि माल विदेशी बाजारों में पहुँचे, उसके लिए आधार का निर्माण विज्ञापन करता है। इस आशय के लिए विज्ञापन के अच्छे सन्देश का चयन किया जाना चाहिए, जो विदेशी क्रेताओं को अपील करता हुआ हो। प्रारम्भ में विज्ञापन कार्यक्रम का स्वरूप आक्रामक होना चाहिए, व वहाँ पर उपलब्ध हर सम्भव माध्यम का इससे उपयोग करना चाहिए। ऐसा करते समय वस्तु के आधार पर माध्यम की उपयोगिता व वित्तीय क्षमता का भी ध्यान रखना चाहिए।

(8) विक्रयकर्त्ताओं में विक्रय क्षेत्रों का आवंटन :-

विक्रयकत्ताओं के चयन व उनके प्रशिक्षण के पश्चात, उन्हें कार्य-क्षेत्रों में भेजने की व्यवस्था निर्यात प्रबन्धक को करनी चाहिए ऐसा करते समय विक्रयकर्त्ता को दिये जा रहे विक्रय क्षेत्र की आवश्यकता व विक्रयकर्त्ता की योग्यता व तुलनात्मक अध्ययन करके, उसी विक्रयकर्त्ता को वह क्षेत्र दिया जाना चाहिए, जो उसके सर्वाधिक योग्य हो। विक्रय-क्षेत्रों का आवंटन सामान आधार पर हो, यह आवश्यक नहीं है। असमान विक्रय क्षेत्र भी काफी उपयुक्त रहते हैं। प्रत्येक विक्रयकर्त्ता की क्षमता अलग-अलग होती है। अतः किसी का क्षेत्र छोटा हो सकता है, किसी का विक्रय क्षेत्र बड़ा हो सकता है।

(9) उपयुक्त सन्देशवाहन व्यवस्था स्थापित करना :-

निर्यात प्रबन्धक का अगला कार्य इस प्रकार की सन्देशवाहन व्यवस्था स्थापित करना है, जिससे सभी आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त होती रहें। इसके लिए कई प्रकार के फर्मो व विवरणों का प्रयोग किया जा सकता है, जिन्हें समय-समय पर भरकर भेजा विदेश स्थित कार्यालय या विक्रयकर्त्ताओं के लिए आवश्यक हो। इन सूचनाओं में विभिन्न वस्तुओं की कुल बिक्री, उनकी क्षेत्रों के अनुसार बिक्री, विभिन्न व्ययों, प्रतियोगियों की गतिविधियों आदि के बारे में सूचनाएँ प्राप्त की जानी चाहिए।

इन सूचनाओं को प्राप्त करके निर्यात प्रबन्धक को उनका विश्लेषण करना चाहिए व निष्कर्ष के रूप में अपने विचारों के साथ इन्हें कम्पनी के उच्च प्रबन्ध को अवगत कराते रहना चाहिए।

(10) विपणन क्रियाओं पर नियन्त्रण :-

निर्यात विपणन में लगे विक्रयकर्त्ताओं की क्रियाओं को नियन्त्रित करना भी निर्यात प्रबन्धक का महत्वपूर्ण कर्तव्य है। इसके लिए उसे खर्चो की सीमा तय कर लेनी चाहिए। अपवादजनक स्थितियों में विक्रयकर्त्ताओं को तय सीमा से अधिक व्यय करने की छूट भी होनी चाहिए। खर्चो का ब्यौरावार विवरण विक्रयकर्त्ता नियत समय में मुख्यालय को भेजे। इससे हिसाब-किताब में प्रमाणिकता बनी रह सकेगी।

इस प्रकार की व्यवस्था भी की जानी चाहिए जिससे प्रत्येक विक्रयकर्त्ता अपने तय विक्रय क्षेत्र में प्रवास करने के पश्चात् अपनी रिपोर्ट मुख्यालय के भेजे। इसमें उनकी गतिविधियों, क्रियाओं व विक्रय के लिए किये गये प्रयास का विवरण हो। इसका विश्लेषण कर निर्यातक प्रबन्धक इस बात का पता लगा सकते हैं, कि विक्रयकर्त्ता की क्रियाएँ कितनी उद्देश्यपूर्ण रही हैं। इससे उसे भावी निर्देशन देने में भी निर्यात प्रबन्धक का सही दिशा व आधार मिल जाता है। प्रयासों की तुलना निर्धारित विक्रय लक्ष्यों से कर इस बात का पता लगाया जा सकता है, कि परिमाणात्मक लक्ष्य कितने प्राप्त हुए हैं।

इसके साथ ही विक्रयकर्त्ताओं की सेवाओं के गुणात्मक स्तर को भी ध्यान में रखना चाहिए। इसका पता लगान के लिए निर्यात प्रबन्धक को इस बात का सर्वेक्षण करना चाहिए कि विक्रयकर्त्ता को ग्राहकों को दी जा रही सेवाएँ कैसी हैं, उसका व्यवहार किस प्रकार का रहता है। उनकी शिकायतों को वह किस रूप में लेता है। इन सभी बातों का पता लगाकर निर्यात प्रबन्धक ऐसे विक्रयकर्त्ता, जिनकी सेवाओं का स्तर ठीक नहीं है, उन्हें सही दिशा निर्देश दे सकता है।

सम्पूर्ण निर्यात विपणन को लाभपूर्ण व प्रभावी बनाने के लिए निर्यात प्रबन्धक को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के अधिकारों का प्रत्योजन ठीक प्रकार से करना चाहिए।

एक सफल निर्यात प्रबन्धक के गुण
(Qualities of a Successful Export Manager)

प्रत्येक निर्यात बाजार की अपनी मौलिक व अन्य विशेषताएँ होती हैं। इनके प्रबन्ध व नियन्त्रण के लिए अलग-अलग गुणों वाले निर्यात प्रबन्धकों की आवश्यकता होती है, जो बाजार विशेष का अपने गुणों के कारण प्रबन्ध कर सकें। इसलिए गुणों का कोई भी ऐसा एक समूह बनाना अपने आप में बेमानी होगी। लेकिन फिर भी कुछ सामान्य गुणों का ऐसा समूह स्वीकार्य हो सकता है, जो सभी निर्यात प्रबन्धकों पर लागू किया जा सके। निर्यात प्रबन्धक की संगठन में धुरीय स्थिति होती है। उसमें निम्नलिखित गुण अपरिहार्य रूप से होने चाहिए -

(1) प्रबन्धकीय योग्यता :-

निर्यात प्रबन्धक में सर्वप्रथम गुण अच्छे स्तर की प्रबन्धकीय योग्यता है। वह नियोजन, संगठन, अभिप्रेरण, समन्वय व नियन्त्रण में दक्ष व्यक्ति होना चाहिए। उसे नियोजन की सम्पूर्ण क्रियाविधि की जानकारी होनी चाहिए। उसमें उच्च स्तर का संगठन कौशल आवश्यक है जिससे वह कार्यकुशल व प्रभावी निर्यात संगठन बना सके। प्रभावी विपणन के लिए सभी विभागों में उत्तम समन्वय होना चाहिए। अतः उसमें समन्वय दक्षता भी होनी चाहिए। निर्धारित कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किस प्रकार हो रहा है, उसमें विचलन कितना है। विचलनों को दूर करने के लिए प्रभावी कदम क्या हो सकते हैं, यही नियन्त्रण प्रक्रिया है, इसकी जानकारी भी उसे होनी चाहिए।

(2) सेविवर्गीय प्रबन्ध की जानकारी:-

प्रबन्धकीय योग्यता के साथ-साथ निर्यात प्रबन्धक को सेविवर्गीय प्रबन्ध की जानकारी भी होनी चाहिए। भर्ती के कौन-कौन से स्त्रोत हो सकते हैं, उनकी तुलनात्मक उपयोगिता क्या है, चयन की प्रणाली, प्रशिक्षण की विधियों आदि बातों को उसे भली प्रकार जानकारी होनी चाहिए, तभी वह एक अच्छा निर्यात संगठन स्थापित कर सकेगा। इसकी जानकारी होने पर ही वह अच्छे-अच्छे कर्मचारियों का उपयुक्त चयन करने में समर्थ हो सकेगा।

(3) निर्णय लेने की योग्यता :-

विदेशी बाजारों की गतिशीलता के सन्दर्भ में निर्यात प्रबन्धक के लिए यह अति आवश्यक है, कि वह बाजार की दशाओं के आधार पर अपने भावी कार्यक्रम का शीघ्र निर्णय करे। इसके लिए उसे निर्णय लेने की प्रक्रिया की जानकारी आवश्यक है। विश्लेषणात्मक मस्तिष्क का होना इसकी प्रथम आवश्यकता है। अच्छे निर्णय लेने की क्षमता के साथ-साथ उसमें शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता होनी चाहिए। तभी उनकी प्रासांगिकता होगी, अन्यथा देर से निर्णय होने पर हो सकता है कि बदली हुई परिस्थिति में वह निर्णय कारगर नहीं हो।

(4) साहस :-

चुनौती को स्वीकार कर, उसके अनुरूप कार्य करने को साहस कहा गया है। ऐसे व्यक्ति जो चुनौती को स्वीकार करने के बजाय, चुनौती आते ही दूर भाग जाता है, वह व्यक्ति निर्यात प्रबन्धक के लिए कुपात्र है। निर्यात विपणन तो आजकल काँटों भरा रास्ता हो गया है, जिस पर पग-पग पर चुनौतियाँ मुँह बाये खड़ी हैं। ऐसी स्थिति में उसमें साहस जैसा गुण होना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे वह इनका सामना खुशी से कर सके। अच्छे निर्यातों के क्रियान्वयन के लिए साहस का गुण आवश्यकता है।

(5) नवाचार की क्षमता योग्यता :-

निर्यात बाजारों में प्रतिस्पर्धा अधिक होती है। इसके साथ ही ये बाजार अधिक गतिशील होते हैं। उपभोक्ताओं की रूचियों क्रय-प्राथमिकताओं आदि में शीघ्र गति से परिवर्तन होते हैं। प्रतियोगिता के कारण जहाँ विद्यमान बाजारों में वस्तुओं का विक्रय कठिन होता है, वहीं नये बाजारों में विक्रय तो और भी कठिन होता है। ऐसी स्थिति में विक्रयशीलता के लिये निर्यात

प्रबन्धक में नवाचार की क्षमता होनी चाहिए। विक्रय के ढंग, रीति व विधियों में परिवर्तन कर बाजार की आवश्यकता के अनुरूप विपणन कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए। ऐसे करने के लिए निर्यात प्रबन्धक में नवाचार की क्षमता होनी चाहिए।

(6) लागत एवं लेखा सम्बन्धी ज्ञान :-

निर्यात प्रबन्धक को लागत निर्धारण के बारे में पूरी जानकारी होनी चाहिए। इससे उसे विक्रय बजट, विज्ञापन बजट, संवर्द्धन बजट आदि के बनाने में सफलता मिलेगी। निर्यात बाजारों में विभिन्न वस्तुओं के विक्रय के लिए किए जा रहे विक्रय प्रयासों की सापेक्षिक लागत का विश्लेषण कर वह विक्रय प्रयासों को ऐसी दिशा में मोड़ सकेगा जो अधिक उद्देश्यपूर्ण, दीर्घकालीन लाभ देने वाले हों, ऐसा वह लागत सरंचना की जानकारी हाने पर ही कर सकेगा। इसके साथ ही उसे लेखा सम्बन्धी जानकारी भी होनी चाहिए। विक्रयकर्त्ताओं के द्वारा बिक्री के सम्बन्ध में व व्ययों के सम्बन्ध में भेजे गये विभिन्न विवरणों से उपयोगी निष्कर्ष निर्यात प्रबन्धक तभी निकाल सकेगा जबकि उसे लेखा सम्बन्धी जानकारी हो।

(7) धैर्य एवं आत्म-विश्वासः-

निर्यात बाजारों के विकास के लिए निर्यात प्रबन्धक को लम्बा सफर तय करना पड़ता है। इसके लिए समय लगता है, इस बीच के समय की व्याकुलता की छटपटाहट अधीर व्यक्ति सहन नहीं कर सकते। निर्यात विपणन में अनके खट्टे-मीठे अनुभव भी होते रहते हैं। कभी-कभी निराशा के समन्दर संस्था एवं व्यक्ति को तोड़ देते है, ऐसी स्थिति में यह अत्यन्त आवश्यक है कि निर्यात प्रबन्धक में धैर्य एवं आत्म-विश्वास जैसे गुण उच्च स्तर पर विद्यमान हों।

(8) विदेशी भाषाओं की जानकारी :-

निर्यात विपणन के लिए निर्यात प्रबन्धकों को अनके देशों में जाना पड़ता है। नये बाजारों में प्रवेश के लिए प्रयास करने एवं विद्यमान बाजारों पर प्रभावी नियन्त्रण के लिए अत्यन्त आवश्यक है, कि उसे उन देशों में प्रचलित भाषाओं की जानकारी हो। इससे वह उस देश के क्रेताओं व व्यापारियों की भावनाओं व विचारों को जहाँ खुद भली प्रकार समझ सकेगा, वहीं उन्हें भी स्वयं की भावनाएँ व विचार स्वाभाविक रूप से व प्रभावी तरीके से बता सकेगा। ऐसा ज्ञान विदेशी क्रेताओं के साथ एकात्मकता उत्पन्न करने में भी सहायक होता है।

(9) प्रभावी व्यक्तित्व :-

उसके स्वयं का व्यक्तित्व इस प्रकार का होना चाहिए जो प्रभावकारी हो। शारीरिक गठन, रंग-रूप, आक ति, बोलने का ढंग, हावभाव, व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण इस प्रकार के होने चाहिए, जिससे जो भी व्यक्ति उसके सम्पर्क में आवे, उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहे।

(10) नेत त्व क्षमता :-

अधीनस्थ कर्मचारियों की क्रियाओं व कार्य-निष्पादन को प्रभावित कर सकने की क्षमता का नेत त्व कहा गया है। नेता अपने व्यवहार से जो परिस्थिति- सापेक्ष हो, अधीनस्थों को प्रभावित करता है। निर्यात प्रबन्धक में ठोस नेत त्व क्षमता का गुण अत्यन्त आवश्यक है। जिससे वह अपने कर्मचारियों को उनकी भूमिका के अनुरूप कार्य करने को प्रेरित कर सके।

(11) अधिकारी के भार्रापण की इच्छा व योग्यता :-

निर्यात संगठन कुशलता से प्रभावी ढंग से कार्य कर सके, इसके लिए यह आवश्यक है, कि संगठन के प्रत्येक स्तर पर अधिकारों का उचित रूप से भार्रापण हो। निर्यात विपणन की गतिशीलता के सन्दर्भ में बाजार की आवश्यकता के अनुसार निर्यात संगठनों को शीघ्र निर्णय लेकर, उनका क्रियान्वयन करना पड़ता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि निर्यात प्रबन्धक में न केवल अधिकारों के भार्रापण की भावना हो अपितु उसे भार्रापण की प्रक्रिया व विधि की जानकारी होना भी आवश्यक है, जिससे वह हर स्तर पर आवश्यकतानुसार अधिकारों का भार्रापण कर सके। अधिकारों की उचित मात्रा का हर स्तर पर निर्धारण बहुत ही जटिल कार्य है, अधिक अधिकार जहाँ व्यक्ति को निरंकुश बनाते हैं, वहाँ कम अधिकार उसे लाचार, असहाय व स्थिति का मूकदर्शक बनने को बाध्य कर देते हैं।

(12) समय का अनुकूलतम उपयोग करने की योग्यताः-

निर्यात प्रबन्धक को अनेक प्रकार के कार्यो को सम्पादित करना होता है। इसके लिए यह आवश्यक है, कि वह कार्य की प्राथमिकताओं का स्पष्ट निर्धारण कर ले व उसके अनुसार ही उपयुक्त समय उन कार्यो के निष्पादन में लगावे। उसे अपने

समय की इस प्रकार उपयोग करना चाहिए। जो संस्था को अधिकतम लाभ देने वाला हो।

(13) अनुशासनप्रियता :-

व्यवस्था के अनुसार बनाये गये नियमों, रीतियों के पालन को हम अनुशासन कह सकते हैं। अनुशासन के अभाव में अराजकता उत्पन्न हो जाती है, जो संस्था को ही समाप्त कर सकती है। यह तभी हो सकेगा जब स्वयं निर्यात प्रबन्धक ही अनुशासनप्रिय व्यक्ति हो।

(14) अच्छा श्रोता :-

एक कुशल प्रबन्धक का यह भी एक गुण है, कि उसे अच्छा श्रोता होना चाहिए। इससे वह बाजार में व्यापारियों व उपभोक्ताओं की विभिन्न शिकायतों व विचारों को जान सकेगा। उनकी उपयोगी रायों व विचारों पर ही संस्था का भविष्य टिका होता है।

इसके साथ ही अधीनस्थ कर्मचारियों व विक्रयकर्त्ताओं को भी उसे ध्यान से सुनना चाहिए। इससे समस्याओं के हल व असन्तोष के निवारण में काफी मदद मिल सकेगी।

इस प्रकार निर्यात प्रबन्धक में अनेक प्रकार के गुण होने चाहिए, जिनका वर्णन विस्तार से हम ऊपर कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त उसे सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से रहित होना चाहिए, जिससे वह सम्यक निर्णय ले सके। उसे वस्तुओं का पूरा ज्ञान होना चाहिए, जिनका विपणन संस्था निर्यात बाजारों में कर रही है। इसके साथ ही उसमें सहकारिता की भावना होनी चाहिए। प्रतियोगी फर्मो से संघर्ष के बजाय उसमें सहयोग की भावना अपनाने की योग्यता होना आवश्यक है। इसके साथ ही संगठन के लिए अनुकूल जन-भावना के निर्माण के लिए उसमें जन-सम्पर्क की योग्यता भी आवश्यक है।

निर्यात प्रबन्धक का चुनाव
(Selection of Export Manager)

निर्यात विपणन के लिए निर्यात प्रबन्धक का चुनाव अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वह निर्यात व्यवसाय के लिए पूर्ण रूप से जिम्मेवार होता है। प्रेट के अनुसार कई अमेरिकन निर्माताओं ने निर्यात प्रबन्धकों के चुनाव में भारी गलती की, उन्होने ऐसे व्यक्तियों का चयन किया जो विदेशी बाजारों में रहते थे, व जिन्हें विदेशी भाषाओं की उत्तम जानकारी थी। लेकिन उन्हें व्यवसाय एवं उत्पादन के बारे में थोड़ी या नगण्य जानकारी थी। ऐसे निर्यात प्रबन्धक सफल नहीं हो सके। इससे यह बात बिल्कुल स्पष्ट है, कि विदेशी भाषाओं की जानकारी होना व फर्राटेदार तरीके से धाराप्रवाह रूप से विदेशी भाषा की वाक्पटुता निर्यात प्रबन्धक के चयन में महत्वपूर्ण आधार नहीं हो सकती।

पिछले प ष्ठों में एक सफल निर्यात प्रबन्धक के जिन गुणों का वर्णन किया गया है उन्हें सम्पूर्णता के रूप में देखे जाने का प्रयास होना चाहिए। किसी भी एक गुण को अधिक भार नहीं दिया जा सकता। इसी प्रकार गुणों के किसी भी समूह को सभी निर्यात प्रबन्धकों के चुनाव पर लागू नहीं किया जा सकता है। इसके लिए वैज्ञानिक विधि यह हो सकती है, कि पहले विदेशी बाजार का सभी प्रकार से विश्लेषण किया जाना चाहिए। बाजार की विभिन्न विशेषताओं को सूचीबद्ध कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् उन गुणों की सूची बनानी चाहिए, जो उस बाजार विशेष की आवश्यकता के अनुसार निर्यात प्रबन्धको में होने चाहिए। यदि आवश्यक हो तो विभिन्न गुणों का आवश्यकतानुसार भारित (Weighted) किया जा सकता है।

पॉल वी. हॉर्न एवं हेनरी गोमज (Paul V. Horn and Henry Gomez) के अनुसार, "निर्यात प्रबन्धक का चयन करते समय निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(1) निर्यात प्रबन्धक को अर्थशास्त्र, विपणन, भूगोल, वित्त एवं एक या अधिक विदेशी भाषाओं की पूरी व्यापक जानकारी होनी चाहिए। वह इन विषयों में प्रशिक्षित होना चाहिए।

(2) वह योग्य विक्रय प्रबन्धक होना चाहिए।

(3) उसे अपनी कम्पनी के संगठन, नीतियों व उत्पादों की पूरी जानकारी होनी चाहिए। उसे इन सब से भली प्रकार से परिचित होना चाहिए।

(4) उसे मानव प्रक ति (Human Nature) की अच्छी समझ होनी चाहिए। उसे विभिन्न राष्ट्रीयताओं के लोगों के विचारों, निर्यात प्रबन्धकभावनाओं व मनोविज्ञान से परिचित होना चाहिए।

(5) उसे विदेशी बाजारों को अध्ययन, भ्रमण एवं अनुभव से जानना चाहिए।

इसके साथ ही निर्यात प्रबन्धक एक या अधिक विदेशी भाषाओं को अच्छी प्रकार से बोलने व पढ़ने में सक्षम व्यक्ति होना चाहिए। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि निर्यात प्रबन्धक का चुनाव बहुत ही सावधानी से करना चाहिए। उसके विश्वव्यापी द ष्टिकोण को भी उचित स्थान चयन में दिया जाना चाहिए। यह आवश्यक नहीं है, कि सभी गुण निर्यात प्रबन्धक में प्रारम्भ में ही हों, उचित प्रशिक्षण से उनका विकास किया जा सकता है।

निर्यात कर्मचारियों का चुनाव
(Selection of Export Personel)

निर्यात कर्मचारी निर्यात संगठन की रीढ़ की हड्डी के समान होते हैं। निर्यात प्रबन्धक निर्यात बाजारों को लिए जो भी अल्पकालीन, मध्यमकालीन व दीर्घकालीन योजनाए बनाता है, उसका क्रियान्वयन तो कर्मचारीगण ही करते हैं। वास्तव में तो **एच.आर. मोटले** ने सही कहा है : "जब तक कोई कुछ बेचता नहीं है तब तक कुछ भी घटित नहीं होता है।" यह सत्य भी है, संस्था जो भी वस्तुओं का उत्पादन करती है, उसका अन्तिम लक्ष्य ग्राहकों, उपभोक्ताओं को विक्रय करना ही तो है। आज की संरक्षणवादी अर्थव्यवस्था में जहाँ विश्व में प्रत्येक देश की सरकार आयातों का नियमन व नियन्त्रण कर रही है उसमें तो विश्व बाजारों में वस्तुओं का विक्रय टेढ़ी खीर है।

निर्यात विपणन के लिए चयन किये जाने वाले कर्मचारी अत्यन्त ही महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। उनके चयन में पर्याप्त सावधानी बरती जानी चाहिए। वह न केवल उस कम्पनी का ही निर्यात बाजारों मे प्रतिनिधि होता है, उसका व्यवहार उस देश के आदर्शो का प्रतिबिम्ब होता है अपने व्यवहार से वह जहाँ उस कम्पनी व देश की गरिमा को मड़ित कर सकता है, वहीं गलत व्यवहार से खण्डित भी कर सकता है। निर्यात कर्मचारियों का चयन इस द ष्टि से भी काफी महत्वपूर्ण है, कि चयन करने वाले कम्पनी उनके चयन व प्रशिक्षण पर काफी धन व्यय करती है। गलत चयन से बाद में व्यक्तियों को हटाना इतना आसान नहीं होता, साथ ही प्रशिक्षण का धन व समय भी व्यर्थ जाता है। श्रम आवर्तन की दर बढ़ जाती है। गलत चयन से प्रबन्धकों व कर्मचारियों में सम्बन्ध मधुर नहीं रह पाते। अन्ततोगत्वा गलत कर्मचारी संगठन के विकास के बजाय उसकी कब्र खोदने में ही अधिक सहायक होते हैं।

विक्रयकर्त्ताओं के चयन में ध्यान रखने योग्य बातें

निर्यात विपणन के लिए विक्रयकर्त्ताओं का चयन बहुत ही सावधानी से किया जाने वाला कार्य है। चयन में थोडा सा भी अविवेकपूर्ण निर्णय संस्था के लिए भारी हानि का कारण बन सकता है। यद्यपि विक्रयकर्त्ता के चयन के समय ध्यान रखने योग्य बातें विक्रयकर्त्ताओं के प्रकार के आधार पर भिन्न-भिन्न होगी, फिर भी कुछ ऐसी सामान्य बातें हैं, जिनका ध्यान रखा जाना अति आवश्यक है, ये महत्वपूर्ण बातें निम्नलिखित हैं :

(1) ऐसे कर्मचारियों को, जिनको व्यापारिक प ष्ठभूमि का वातावरण मिला है, जो वस्तु के बारे में जानकारी रखते हैं, ऐसे व्यक्तियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(2) भ्रमणशील निर्यात विक्रयकर्त्ताओं के चयन के समय यह बात विशेष रूप से देखी जानी चाहिए कि उसे उस देश की भाषा, रीति-रिवाजों, परम्पराओं, की जानकारी हो। उसका स्वास्थ्य इस प्रकार का हो, जो प्रतिकूल जलवायु व वातावरण में भी ठीक रह सके।

(3) यह देखा जाना चाहिए कि विक्रयकर्त्ता के सामान्य गुण उसमें किस मात्रा तक मौजूद हैं, व प्रशिक्षण के द्वारा उनका कितना विकास किया जा सकता है। **श्री रसैल** के अनुसार एक विक्रयकर्त्ता में अनुशीलन, अध्ययन की इच्छा, स्वास्थ्य, प्रभावशीलता, चातुर्य, अनुशासन, युक्तिसम्पन्नता जैसे गुण होने चाहिए। इन सभी गुणों में प्रभावशीलता का गुण विक्रयकर्त्ता के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। यदि उसमें ग्राहकों व क्रेताओं को प्रभावित करने की क्षमता नहीं है, तो वह कुछ भी नहीं कर सकता, उसका व्यक्तित्व भी इस प्रकार का होना चाहिए जो प्रभावोत्पादक हो।

(4) चयन के अवसर बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि भर्ती के सभी स्त्रोतों का उपयोग किया जाना चाहिए। आन्तरिक व बाह्य स्त्रोतों का सन्तुलन बना कर उपयोग किया जाना चाहिए।

(5) संस्था का अधिकतम प्रयास यह होना चाहिए, कि अधिकांश विक्रयकर्त्ता उसी देश के हों जहाँ संस्था को अपना निर्यात विपणन करना है। इससे एक ओर तो वे ग्राहक की मानसिकता, प्राथमिकताओं, रूचियों से परिचित होंगे, दूसरा वहाँ के उनके स्वयं के सम्पर्को का भी उन्हें पूरा लाभ मिल सकेगा। स्थानीय व्यक्ति पर लोग सहजता से विश्वास भी कर लेते हैं।

(6) विक्रयकर्त्ताओं का चयन संस्था के योग्य अधिकारियों के द्वारा किया जाना चाहिए। इसके अलावा बाहरी संस्थओं को भी, जो इस कार्य मे दक्ष व अनुभवी हैं, उन्हे भी यह कार्य सौंपा जा सकता है।

(7) चयन की प्रक्रिया को तर्कसंगत व वैज्ञानिक रूप से व्यवस्थित बनाया जाना चाहिए। प्रक्रिया सरल, स्पष्ट व लोचपूर्ण होनी चाहिए।

(8) चयन की प्रणाली इस प्रकार की निर्धारित करनी चाहिए, जो संस्था की वहन करने की क्षमता के भीतर हो। मितव्ययिता चयन प्रणाली का महत्वपूर्ण गुण होना चाहिए।

(9) चयन के मापदण्डों का सुस्पष्ट निर्धारण किया जाना चाहिए, जिससे किसी भी व्यक्ति को पक्षपात या पूर्वाग्रहों के आधार पर कार्य करने का अवसर ही नहीं मिले। इसके साथ ही जिस देश से विक्रयकर्त्ताओं का चयन किया जा रहा है, उस देश में प्रचलित कानून, वैधानिक नियमों, परम्पराओं, सामाजिक रीति-रिवाजों का भी पूरा ध्यान रखने की आवश्यकता है।

इस प्रकार निर्यात विक्रयकर्त्ताओं के चयन में उपरोक्त अनेक महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए। इसके साथ ही कर्मचारियों का चयन संगठन की सामान्य नीतियों के अनुरूप ही होना चाहिए।

निर्यात कर्मचारियों का प्रबन्ध
(Management of Export Personnel)

संकीर्ण अर्थ में प्रबन्ध का आशय अन्य व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला है। विस्त त अर्थ में प्रबन्ध एक ऐसी कला तथा विज्ञान है, जिसके द्वारा मानवीय प्रयासों को निर्धारित लक्ष्य की ओर प्रेरित किया जाता है। इसमें प्रबन्धक नियोजन, संगठन, समन्वय, निर्देशन व नियन्त्रण के द्वारा कर्मचारियों व संगठन का प्रबन्ध करता है। निर्यात प्रबन्धक के लिए निर्यात कर्मचारियों का प्रबन्ध कुशलतापूर्वक करने में ही उसकी सफलता की परिणीति है। उसके प्रयत्नों की कसौटी कर्मचारियों का कुशल प्रबन्ध है। निर्यात प्रबन्धक को निर्यात कर्मचारियों के कुशल प्रबन्ध के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण क्रियाएँ करनी चाहिए :-

(1) निर्यात कर्मचारियों की भर्ती व चुनाव :-

निर्यात प्रबन्धक को सर्वप्रथम कार्य-योग्य व कुशल कर्मचारियों की भर्ती करनी चाहिए। इसके लिए उपलब्ध सभी स्त्रोतों का उपयोग किया जाना चाहिए। निर्यात कर्मचारियों का चयन वैज्ञानिक विधि से करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम विक्रय-क त्य विवरण व विक्रय-क त्य विशिष्ट विवरण बनाया जाना चाहिए। विक्रयकर्ताओं की संख्या निर्धारित करते समय न केवल वर्तमान आवश्यकता का ही ध्यान रखना चाहिए वरन् भावी आवश्यकताओं का आकलन भी अच्छी प्रकार से करना चाहिए। विक्रयकर्त्ताओं के चयन के लिए आमन्त्रित किये जाने वाले आवेदन पत्रों का प्रारूप व चाही गयी जानकारी इस प्रकार से प्राप्त की जानी चाहिए, जिससे आवेदनकर्ता के व्यक्तित्व का स्पष्ट पता लग जाये। विक्रयकर्त्ताओं के चयन में लिखित परीक्षा के बजाय साक्षात्कार का अधिक महत्व है। इसके लिए साक्षात्कार कार्यक्रम को भली प्रकार से पूर्व में कर लेना चाहिए। भ्रमणशील विक्रयकर्त्ताओं के चयन के साथ उनके जीवन साथियों का साक्षात्कार भी कर लेना चाहिए, जिससे उसकी प्रतिक्रियाओं का पूर्व में ही पता लगाया जा सके। चयन के समय विक्रयकर्त्ताओं की मानसिक योग्यता, व्यक्तित्व जाँच परीक्षण, रूचि जाँच परीक्षण, विशिष्ट प्रव ति जाँच परीक्षण, मनोवैज्ञानिक परीक्षण कर लिये जाने चाहिए। इससे विक्रयकर्त्ता के सही व्यक्तित्व का पता लग जायेगा। इस प्रकार विक्रयकर्त्ता के चयन के पूर्व सावधानीपूर्वक उसका सभी द ष्टियों से विश्लेषण किया जाना चाहिए, जिससे बाद में पछताना नहीं पड़े।

(2) विक्रयकर्त्ताओं को प्रशिक्षण :-

चयन के पश्चात् विक्रयकर्त्ताओं को दो प्रकार से प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। प्रथम तो उन्हें विक्रय करने की विधि, प्रक्रिया आदि का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, जिससे वे कुशलतापूर्वक विक्रय सीख सकें। प्रशिक्षण में उन्हें बेचे जाने वाले उत्पाद बाजार की विशेषताओं, उपभोक्ताओं की प्रक ति का पूरा ज्ञान करा देना चाहिए। द्वितीय, निर्यात बाजारों में वस्तुओं के विक्रय के लिए उन्हें विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इसमें विदेशी बाजार की विशेष बातों प्रतियोगिता से निपटने, विदेशी भाषा का ज्ञान आदि शामिल किये जा सकते हैं इसके लिए प्रशिक्षण के उद्देश्यों का पहले स्पष्ट निर्धारण कर लेना चाहिए। उसी के अनुरूप प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का निर्धारण करना चाहिए। विभिन्न विषयों को समय का आवंटन उनकी प्राथमिकता व प्रासंकगिकता के अनुसार किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण के लिए योग्य प्रशिक्षकों की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। इसके साथ ही प्रशिक्षण की उन्ही विधियों को अपनाया जाना चाहिए, जो प्रशिक्षण कार्यक्रम के उद्देश्य व पाठ्यक्रम के अनुरूप हों। समय-समय पर निर्यात प्रबन्धक को इस बात का मूल्यांकन भी करते रहना चाहिए, कि प्रशिक्षण कार्यक्रम का क्रियान्वयन किस प्रकार हो रहा है। इससे समय रहते ही ऐसे कदम उठाना सम्भव होगा, जो प्रशिक्षण को उपयोगी व सार्थक बना सकें।

(3) विक्रय क्षेत्रों का आवंटन :-

चयन व प्रशिक्षण के पश्चात् निर्यात प्रबन्धक को निर्यात विक्रयकर्ताओं को विक्रया क्षेत्रों का आवंटन करना चाहिए ऐसा करते समय विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकता एवं उपलब्ध विक्रयकर्ताओं के गुणों, सम्भावित निष्पादन स्तर का मूल्यांकन कर सही व्यक्ति को सही विक्रय क्षेत्र पर लगाना चाहिए। विक्रयकर्ता की इच्छा का भी एक सीमा तक ध्यान देना चाहिए ऐसा करते समय योग्यता की बलि कदापि नहीं दी जानी चाहिए।

(4) वेतन प्रशासन :-

विक्रयकर्ताओं को विक्रय कार्य प्रतिफल में समुचित पारिश्रामिक मिलना चाहिए। 'फिलिप कोटलर' ने अपनी अच्छी पारिश्रामिक योजना का महत्व बताते हुए तीन महत्वपूर्ण बातों की ओर उल्लेख किया है। प्रथम उन्हें व्यक्तियों को आक ष्ट करना। द्वितीय उन्हें अभिप्रेरित करना, त तीय उनको संस्था छोड़कर न जाने देना। प्रत्येक व्यक्ति यह चाहता है, कि वह उस कम्पनी का ही विक्रय कार्य करे जो अधिकतम पारिश्रामिक देने को तैयार हो। संस्था के स्थायित्व व विकास के लिए अच्छी पारिश्रामिक योजना अत्यन्त महत्व रखती है। पारिश्रामिक योजना जटिलता रहित, सरल, स्पष्ट व लोचपूर्ण होनी चाहिए। पारिश्रामिक व किये जाने वाले प्रयत्नों का किसी भी प्रकार से सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए। जिससे पारिश्रामिक योजना विक्रयकर्ताओं को अधिकाधिक प्रयासों के लिए प्रेरित कर सके। प्रबन्धकों को भी विक्रयकर्ताओं की क्रियाओं पर प्रभावी नियन्त्रण होना चाहिए, आय की निरन्तरता भी अति आवश्यक है। इससे विक्रयकर्ता का जीवन स्तर विचलनशील हो जाता है, जो उसे मानसिक रूप से परेशान कर देता है। न्यायोचित्तता पर भी ध्यान रखा जाना चाहिए अर्थात पारिश्रामिक प्रतिस्पर्धी फर्मो के समकक्ष हो।

(5) विक्रयकर्ताओं को अभिप्रेरण :-

केवल अच्छा प्रशिक्षण व उत्तम पारिश्रामिक प्रणाली की व्यवस्था ही पर्याप्त नहीं हो सकती, जब तक कि उसे उचित रूप से अभिप्रेरणा न दी जावे। इसके लिए वित्तीय व अवित्तीय प्रेरणाओं का उचित रूप से प्रयोग होना चाहिए इसके लिए पहल विक्रय कर्मचारियों की आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। उसके आधार पर ऐसे उत्प्रेरक उपायों को सूचीबद्ध करना चाहिए, जो उपयुक्त हों। उसी के पश्चात् ही उचित उपाय का चयन होना चाहिए। विभिन्न उपायों के अन्तर्गत व पदोन्नति की व्यवस्था कर, संगठन के प्रबन्ध व कार्य संचालन में कर्मचारियों की सहभागिता कर, अच्छे प्रयत्नों को मान्यता व पुरस्कार देकर, अच्छे मानवीय सम्बन्धों का विकास कर, विक्रय प्रतियोगिता का आयोजन कर, समय-समय पर विक्रयकर्ताओं के सम्मेलन व सभाएँ आदि कर विक्रयकर्ताओं को प्रेरित किया जा सकता है।

(6) विक्रयकर्ताओं को कार्य आवंटन :-

विक्रयकर्ताओं को कार्य आवंटन से आशय विक्रयकर्ताओं को विक्रय अभ्यंश आवंटित करना है। इससे कम्पनी अपने कुल भावी विक्रय को लक्ष्य मानकर विभिन्न विक्रयकर्ताओं को बाँट देती है। दिय गये विक्रय लक्ष्यों को, जो कि किसी निश्चित विक्रय-क्षेत्र से सम्बन्धित होते है, विक्रयकर्ताओं को निर्धारित समय में प्राप्त करने होते है। इनका निर्धारण करते समय विक्रयकर्ता की योग्यता, क्षमता व इच्छा का पूरा ध्यान रखन चाहिए। ऊँचे लक्ष्य उसे निराश बना देंगे, वहीं नीचे विक्रय लक्ष्य

उसे कार्य करने के लिए उचित रूप से न प्रेरित कर सकेंगे, नही उसकी वास्तविकता क्षमताओं का विदोहन हो सकेगा। फिर भी यह लक्ष्य उसके सामान्य प्रयत्नों से प्राप्त किये जा सकने वाल लक्ष्यों से कुछ ऊँचे अवश्य होने चाहिए।

(7) प्रभावी संदेशवाहन प्रणाली की व्यवस्थाः-

व्यावसायिक सफलता के लिए कुशल व प्रभावी संदेशवाहन की व्यवस्था एक महत्वपूर्ण उपकरण है। निर्यात प्रबन्धक निर्यात संगठन का कुशल प्रबन्ध कर सकें, इसके लिए आवश्यक है कि उसे बाजार की विभिन्न प्रव तियों, परिवर्तनों, उपभोक्ता व्यवहार में परिवर्तन, प्रतियोगियों की गतिविधियों, विक्रयकर्ताओं के कार्य निष्पादन, उनकी समस्याओं आदि की समय पर सही जानकारी प्राप्त हो सके।

इसके लिए स्वंय निर्यात प्रबन्धक को समय-समय पर निर्यात बाजारों का भ्रमण करना चाहिए, जिससे वह स्वयं भी कई सूचनाओं को प्राप्त कर सके, साथ ही विक्रयकर्त्ताओं द्वारा दी गयी सूचनाओं का सत्यापन भी कर सके। इसके लिए इस प्रकार के प्रारूप तैयार किये जाने चाहिए, जिसमें बाजार, उपभोक्ता, प्रतियोगियों के व्यवहारों के बारें में जानकारियाँ प्राप्त करने का प्रयास हो। इस प्रारूपों को एक निश्चित समयान्तर पर सभी विक्रयकर्ताओं के लिए भरकर भेजना आवश्यक हो। इस प्रकार भेजी गयी सभी रिपोर्टो का सारांश बनाकर बाजार के बारे में नवीनतम सूचनाओं से निर्यात प्रबन्धक अवगत हो सकता है।

विक्रयकर्ताओं को इस ओर भली प्रकार से समझाया व मानसिक रूप से तैयार किया जाना चाहिए कि जितना महत्वपूर्ण विक्रय कार्य है उतना ही महत्वपूर्ण कार्य इस प्रकार की रिपोर्टो को भेजना है। इसके अलावा निर्यात प्रबन्धक को उसी व्यवसाय में लगी फर्मो से भी सूचनाओं का आदान-प्रदान करना चाहिए। उस व्यवसाय से सम्बद्ध निर्यात संवर्द्धन परिषद् एवं सरकार से सम्बन्धित मंत्रालयों से भी उचित रूप से सूचनाओं व विचारों का आदान-प्रदान उपयोगी हो सकता है।

(8) विक्रयकर्ताओं का पर्यवेक्षण, मूल्यांकन व नियन्त्रणः-

विक्रयकर्ताओं के कुशल व प्रभावी प्रबन्ध के लिए यह अति आवश्यक है, कि निर्यात प्रबन्धक सभी स्तरों पर इस प्रकार की व्यवस्था स्थापित करे, जिससे विक्रयकर्ताओं की क्रियाओं व गतिविधियों का उचित रूप से पर्यवेक्षण किया जा सके।

कार्य निष्पादन के सम्यक मूल्यांकन के लिए दो प्रकार के प्रमापों का निर्धारण किया जाना चाहिए। प्रथम परिमाणात्मक निष्पादन प्रमाप- इसमें केवल विक्रय की मात्रा ही आधार नहीं होती वरन् विक्रय व्यय अनुपात, बाजार अंश, औसत आदेश का आकार, विक्रयकर्ता, द्वारा अन्य की गयी अविक्रयण सेवाओं को भी उचित स्थान दिया जाना चाहिए। द्वितीय गुणात्मक निष्पादन प्रमाप-इसमें विक्रयकर्ताओं के निष्पादन की उन विशेषताओं का मूल्यांकन किया जाता है, जो फर्म की दीर्घकालीन बिक्री को प्रभावित करती हैं। जैसे विक्रयकर्ताओं का वस्तु बेचने का तारीका, ग्राहकों के साथ उसका व्यवहार, ग्राहक सम्बन्धों को प्रगाढ़ बनाने की क्षमता, ग्राहकों द्वारा उठायी गयी आपतियों का सन्तोषजनक उत्तर ,ग्राहक समस्याओं को हल करने में किये गये प्रयास आदि का मूल्यांकन भी उतना ही आवश्यक है।

निर्धारित कार्य लक्ष्यों की तुलना निष्पादन से करके विचलनों का पता लगाया जाना चाहिए एवं यदि वह विचलन नकरात्मक है, तो ऐसे उपाय उठाये जाने चाहिए जो इसे दूर कर सके। विक्रयकर्ताओं के व्ययों पर भी समुचित नियन्त्रण लगाया जाना चाहिए। इससे लाभपूर्ण विक्रय व द्धि में अपेक्षित योगदान प्राप्त हो सकेगा। इस प्रकार निर्यात प्रबन्धक को उपरोक्त कदमों का अवलम्बन कर निर्यात कर्मचारियों का कुशलता से प्रबन्ध करना चाहिए।

निर्यात कर्मचारियों के प्रबन्ध में विशेष कठिनाईयां
(Special Problems in the Management of Export Personnel)

देशी विपणन की तुलना में निर्यात विपणन अधिक चुनौतीपूर्ण व कठिन कार्य है। अन्तराष्ट्रीय बाजारों में गला-काट प्रतिस्पर्द्धा विद्यमान है। प्रत्येक देश व्यापार सन्तुलन को प्रतिकूल होने से बचाना चाहता है। इसके लिए वह संरक्षणवादी नीतियाँ अपनाता है। स्वयं के देश का अधिकाधिक औद्योगिक विकास हो, इसके लिए प्रत्येक देश के आयातों का नियमन व नियन्त्रण करता है। इस कारण निर्यात विपणन में कर्मचारियों को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। निर्यात प्रबन्धक कभी-कभी ऐसी स्थिति में आ जाती है कि निर्यात विपणन में कमी के लिए वह किसे दोषी माने। निर्यात विक्रयकर्ता

को या अन्य घटकों को। इसके कारण निर्यात कमचारियों के प्रबन्ध में अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

जो कम्पनियाँ देशी विपणन पर अपनी निर्भरता समाप्त कर निर्यात विपणन पर अधिक ध्यान देना चाहती हैं, उनके सामने योग्य, क्षमतायुक्त कर्मचारियों को प्राप्त करना व उन्हें बनाये रखना भी बड़ा कठिन होता है। अपेक्षित धैर्य की मात्रा विक्रयकर्ता में नहीं होने से वह शीघ्र ही निराश हो संगठन छोड़ जाना चाहता है।

`प्रेट ने अपनी पुस्तक में कुछ ऐसी समस्याओं का वर्णन किया है, जिनका सम्बन्ध निर्यात कर्मचारियों के प्रबन्ध से है । ये इस प्रकार हैः-

(1) राष्ट्रीयता की समस्याः-

निर्यात विक्रय के लिए कर्मचारी उस देश से लिये जाएँ। जहाँ निर्यात विनणन करना है, अर्थात जहाँ माल को बेचना है, या उस देश से लिये जाएँ जो निर्यातक हैं। पहले वाले मत का समर्थन करने वाले लोगों का कहना यह है कि इस प्रकार लिए गये व्यक्ति उस देश की भाषा, आदतों,रीति-रिवाजों व व्यवहारों, परम्पराओं से परिचित होते हैं, इसीलिए प्रभावी रूप से विक्रय कर सकेंगे। दूसरी ओर जो देश से विक्रयकर्ता हों, ऐसा तर्क देने वालों का यह कहना है कि इस प्रकार लिए गये व्यक्ति ही निर्यातक देश का सही प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। भाषा की समस्या आज बहुत सीमित हो गयी है।

(2) विवाहितों या अविवाहितों में चयन की समस्याः-

यह समस्या बड़ी विकट है कि विक्रय-कार्य के लिए विवाहितों को प्राथमिकता दी जाए या अविवाहितों को। अविवाहितो व्यक्ति पारिवारिक उत्तरदायित्वों से मुक्त होने के कारण अपना अधिकांश समय निर्यात विपणन के लिए लगा सकता है। विवाहित व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं होता । इसके अलावा विवाहित व्यक्ति घर से दूर होने पर बीवी-बच्चों की चिन्ता से घिर जाते हैं। परिवार में दूरी उसमें तनाव उत्पन्न कर देती है।

उपरोक्त के अलावा पारिश्रमिक की असमानता की समस्या भी रहती है। निर्यात बाजारों में कार्य करने वाले विक्रयकर्ताओं के पारिश्रमिक में विभेदीकरण हो जाता है जिस देश में निर्यात विपणन करना है, वहाँ प्रतियोगी फर्में अपने विक्रयकर्ताओं को क्या पारिश्रमिक दे रही हैं, इसका ध्यान भी रखना पड़ता है। यह समस्या भी है। राष्ट्रीयता की समस्या को दोनों में उचित संतुलन बनाकर हल किया जा सकता है। विवाहित विक्रयकर्ताओं के चयन में यह ध्यान रखना चाहिए कि क्या वह घर से दूर रह सकेगा । व क्या इसके लिए उसकी पत्नी मानसिक रूप से तैयार हैं। विवाहित विक्रयकर्ताओं का भ्रमण कार्यक्रम इस प्रकार बनाया जा सकता है जिससे वह एक निश्चित समयान्तर पर पर्याप्त समय घर पर रह सके।

अध्याय-9

निर्यात विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन

(Export Advertisement and Sales Promotion)

निर्यात विक्रय संवर्द्धन में विज्ञापन अपनी एक विशेष भूमिका अदा करता है । विज्ञापन के माध्यम से उत्पादक अपना संदेश ग्राहकों तक पहुँचाते हैं।

विभिन्न विद्वानों ने विज्ञापन शब्द की परिभाषा निम्न प्रकार दी है :

(1) **अमरीकन मार्केटिंग एसोसिएशन** के अनुसार ,''विज्ञापन का तात्पर्य एक परिचय प्राप्त प्रयोजक द्वारा विचारों, वस्तुओं या सेवाओं का अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण और प्रवर्तन करने ढंग हैं, जिसका भुगतान किया जाता है।"[1]

(2) **मैसन व रथ** के मत में, "विज्ञापन बिना वैयक्तिक विक्रयकर्ता के विक्रय कला है।"[2]

(3) **अमरीकन पत्रिका एडवरटाइजिंग ऐज** के अनुसार, "विज्ञापनकर्ता की इच्छा के अनुसार कार्य करने के लिए विवश करने के उदेश्य से विचार, सेवा या वस्तु सम्बन्ध में सूचना का फैलाव विज्ञापन कहलाता है।"[3]

(4) **विलियम जे. स्टाण्टन** की राय में, विज्ञापन में ऐसी सब क्रियांए सम्मिलित की जाती हैं जो कि एक वस्तु, सेवा या विचार के बारे में किसी समूह को कोई अवैयक्तिक, मौखिक या द श्यगत एंव खुले रूप से प्रयोजित सन्देश प्रस्तुत करने से सम्बन्धित हैं।"[4]

(5) **रिचार्ड बसक्रिक** के मत में, "विज्ञापन एक परिचय प्राप्त प्रायोजक द्वारा विचारों, वस्तुओं या सेवाओं के अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण या प्रर्वतन का एक ढंग है जिसका कि भुगतान किया जाता है।"[5]

(6) **सी. एल. बॉलिग** के अनुसार, "विज्ञापन को वस्तु या सेवा की मांग उत्पन्न करने की कला कहा जाता है।"[6]

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि विज्ञापन के द्वारा उत्पादक, विक्रेता या मध्यथ अपने उत्पाद या सेवाओं के विक्रय को बढ़ाने के लिये किसी सन्देश को अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण करता है, यही विज्ञापन है । अमेरीका में उपभोक्ता वस्तुओं के विज्ञापन के बारे में किये गये सर्वेक्षण से यह बात सामने आयी है कि विज्ञापित ब्राण्ड की ब्रिकी उसी प्रकार की वस्तुओं

1. Advertising has been defined as "any paid from of non-personal presentation and promotion of goods, service or ideas by an identified sponsor."
— Report of the Definitions Committee : *Journal of Marketing*, America, October 1948.
2. "Advertising is salesmanship without a personal salesman."
— Mason & Rath : *Marketing and Distribution*, p. 381.
3. "Advertising has been defined as the dissemination of information concerning an idea, service, or product to compel action in accordance with the interest of the advertiser."
— *Advertising Age,* Amercian Journal, quoted from Business Organisation
— Mritunjay Banerji, p. 300.
4. "Advertising consists of all the activities involved in presenting to a group a non-personal, oral or visual, openly sponsored massage regarding a product, service, or idea."
— Stanton, *Fundamentals of Marketing*, p. 577.
5. "Advertising is a paid form of non-personal presentation or promotioin of ideas, goods or services by an identified sponsor".
— Richard Buskirt : *Principles of Marketing*, p, 524.
6. "Advertising can be described as the art of creating a demand for article or a service."
— C. L. Bolling : Sales Management.

की कुल ब्रिकी का 70 से लेकर 90 प्रतिशत तक होता है । इससे यह बात सिद्ध होती है कि विदेशों में विज्ञापन कितना महत्वपूर्ण है ।

निर्यात विज्ञापन में ध्यान रखने योग्य बातें
(Essentials of Export Advertising)

लाभदायक विक्रय परिमाण को बढाने के लिए निर्यातक फर्म केवल व्यक्तिगत विक्रय पर निर्भर नहीं रह सकती । लक्ष्य बाजार के असंख्य विद्यमान व भावी क्रेताओं तक अपना सन्देश पहुँचाने व क्रय के लिए प्रेरित करने हेतु, निर्यात विज्ञापन करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है ।

(1) विदेशी बाजारों की प्रक ति की समझना
(To understand nature of foreign markets) :–

विज्ञापन करने से पहले उत्पादक जो विदेशी बाजारों में निर्यात करने का उत्सुक है,उन्हें पहले विभिन्न विदेशी बाजारों की प्रक ति को समझना चाहिए। विभिन्न देशों के सामाजिक रीति-रिवाजों, प्रव तियों ,विश्वासों आदि का ध्यान करना चाहिए। विदेशी बाजारों में विभिन्न तथ्यों के बारें में उससे सम्पर्क व उपयुक्त जानकारी एकत्रित करनी चाहिए। क्रेताओं का क्रय-व्यवहार किस प्रकार का है। वह किन-किन बातों से प्रभावित है, क्रेताओं की क्रय- शक्ति क्या है, उनकी क्रय प्राथमिकताएँ कैसी हैं, विभिन्न वस्तुओं को क्रय करते समय वे किन-किन उत्पाद विशेषताओं पर जोर देते हैं? इन सभी बातों का व्यापक अध्ययन करना चाहिए । इसे निकटता से जानने के लिए विदेशी बाजारों का भ्रमण भी उपयुक्त होगा।

(2) माध्यम
(Media):–

विदेशी बाजारों की प्रक ति का अध्ययन करने के पश्चात् निर्यात लक्ष्य बाजारों में उपलब्ध विज्ञापन के विभिन्न माध्यमों का विश्लेषण किया जाना चाहिए। विज्ञापन के विभिन्न माध्यमों का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है :-

(i) समाचार पत्रीय विज्ञापन
(Press advertising)

वर्तमान जगत में विज्ञापन का यह माध्यम अत्यन्त सशक्त व लोकप्रिय है । इस माध्यम में समाचार पत्र एंव पत्रिकांए शामिल की जाती है । निर्यात विपणन के लिए विश्व-स्तर पर अनेक उच्च स्तर के समाचार-पत्र व पत्रिकाएँ उपलब्ध हैं। इनमें से वाशिंगटन पोस्ट, गार्जियन,प्रावदा, पीपुटस डेली, न्यूयार्क टाइम्स, आदि विश्व स्तर के समाचार-पत्र व पत्रिकांएँ हैं ।

समाचार-पत्र से विज्ञापन में विज्ञापन की प्रति इकाई लागत अत्यन्त कम आती है। समय तत्व प्रभावशाली है, अर्थात विज्ञापन को तत्काल प्रदर्शित किया जा सकता है । परिवर्तन सम्बन्धी लोचशीलता है। विज्ञापन के नित्य नये संदेश का प्रयोग इसमें किया है । कुछ सीमा तक रंगीन चित्रों का प्रयोग भी किया जा सकता है।

जहां इसके उपरोक्त लाभ है, वही पर इसकी सीमाँए भी हैं। निरक्षर व्यक्ति के लिए इसका उपयोग व्यर्थ है। इनका जीवन अत्यन्त अल्प कुछ घंटो या दिनों का ही होता है। समाचार पत्र पढ़ते समय व्यक्ति का ध्यान समाचारों को पढ़ने में ही केन्द्रित होता है, विज्ञापन जब तक उसकी भाषा प्रभावी नहीं हो, कोई नहीं पढ़ता। व्यस्तता के कारण समाचार-पत्र नहीं पढ़ा जा सका तो, अगले दिन बासी अखबार पढ़ना कोई पसन्द नहीं करता।

जहाँ तक पत्रिका विज्ञापन का प्रश्न है। इनका जीवन लम्बा होता है। उच्च स्तर की छपाई से विज्ञापन की प्रभावशीलता बढ़ जाती है। विभिन्न रंगो का उपयोग संभव है। बाजार खंडकरण के आधार पर उपयुक्त पत्रिका का चयन किया जा सकता है। जैसे खिलौने के विज्ञापन बाल-पत्रिकाओं में, स्त्री परिधानों व सौन्दर्य प्रसाधनों के विज्ञापन नारी पत्रिकाओं में, आदि। व्यक्ति पत्रिकाएँ फुरसत के समय में पढ़ता है, अतः इसकी प्रभावशीलता बढ़ जाती है बार-बार पत्रिका पढ़ने पर व्यक्ति विज्ञापन भी पढ़ता है। अतः उसे विज्ञापन स्मरण रहता है। लेकिन इस माध्यम से विज्ञापन का दायरा सीमित हो जाता है। इसकी लागत ऊँची आती है शीघ्र विज्ञापन देना हो तो इसमें संभव नहीं हैं ।

(ii)डाक-विज्ञापन
(Mail Advertising) :–

इसके अन्तर्गत निर्यातक फर्म भावी ग्राहकों या प्रयोक्ताओं को लिखित, छपी हुई सामग्री डाक से भेजती है, जिसमें उनके उत्पादों या सेवाओं की प्रभावी रूप से जानकारी दी जाती है। इसके अन्तर्गत निर्यातक फर्म व्यापारिक जवाबी कार्ड, परिपत्र, मूल्य-सूची, फोल्डर्स, व्यक्तिगत पत्र, पुस्तिकाएँ, सूची-पत्र आदि का प्रयोग कर सकती है।

विज्ञापन के इस माध्यम में भावी ग्राहक को एक परोक्ष व्यक्तिगत सम्पर्क की अनुभूति होती है। व्यक्ति क तज्ञतावश उत्तर भी देता है। विज्ञापन में निर्यातक फर्म अपने पत्र को प्रभावी रूप से प्रस्तुत कर सकती है। इस माध्यम में लागत भी कम आती है।

(iii)बाह्य विज्ञापन
(Outdoor Advertising):–

इस माध्यम में विज्ञापन में आई-अपील का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस माध्यम में विज्ञापन बोर्ड, बसों, ट्राम रेलगाड़ियों में विज्ञापन, वाहनों पर स्पीकर लगाकर, पोस्टर्स अच्छे स्थानों पर लगाकर, दीवार लेखन, सैण्डविच विज्ञापन, बिजली की सजावट द्वारा आकाश लेखन, गुब्बारों के द्वारा विज्ञापन किया जाता है।

इस विज्ञापन में चित्रों का प्रयोग किया जा सकता है। इनका जीवन लम्बा होता है। इनकी लागत भी कम आती है। ध्यान-आकर्षण में इनका कोई मुकाबला नहीं है। लेकिन इनमें कई बार अनैतिक व बेहूदे स्त्री चित्रों के लगाने से सामाजिक आक्रोश खड़ा हो जाता है। इनमें विस्तार से सूचनाएँ भी नहीं दी जा सकतीं।

(iv) अन्य माध्यम
(Other Media):–

इसके अतिरिक्त रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा व सिनेमा स्लाइड, लाउडस्पीकरों के द्वारा, उपहार या भेंट द्वारा, प्रदर्शन द्धारा वस्तुओं का मुफ्त वितरण करके, टेलीफोन डायरेक्टरियों, ईयर बुक में विज्ञापन करके, संगीत कार्यक्रमों के द्वारा एक निर्यातक फर्म अपने उत्पाद व सेवाओं का विज्ञापन कर सकती है। इनमें से विशेषकर रेडियों व टेलीविजन का माध्यम बड़ा सशक्त है। इनमें सैकण्डों से लेकर कुछ मिनटों के व प्रायोजित कार्यक्रमों के द्वारा अत्यन्त प्रभावी विज्ञापन किया जा सकता है। जिन उत्पादों में प्रदर्शन मूल्य हो उसमें सिनेमा विज्ञापन व टेलीविजन का विशेष उपयोग है।

(3) माध्यम विश्लेषण चुनाव
(Media Analysis and Selection):–

विदेशी बाजारों की प्रक ति का अध्ययन करने के पश्चात् माध्यमों का विश्लेषण किया जाना चाहिए। किस-किस प्रकार के विज्ञापन माध्यम उन बाजारों में उपलब्ध हैं, इसका पता लगाया जाना चाहिए। उनके सापेक्षिक गुणों व दोषों का पता लगाया जाना चाहिए। विज्ञापन के लिए विभिन्न प्रकार माध्यमों में समाचार-पत्र ,पत्रिकाएँ, टेलीविजन, रेडियों, प्रत्यक्ष डाक द्वारा, बाह्य विज्ञापनों को शामिल किया जा सकता है। प्रत्येक प्रकार के माध्यमों के अपने लाभ व दोष हैं। इन पर विचार करने के पश्चात् ही माध्यम का चुनाव करना चाहिए। माध्यम का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

(i) विज्ञापन के उद्देश्य
(Objects of Advertising):–

उत्पादक विज्ञापन कार्यक्रम से क्या प्राप्त करना चाहता है? विज्ञापन के अनेक उद्देश्य हो सकते है, जैसे व्यक्तिगत विक्रय को समर्थन देना, अच्छे विक्रयकर्ताओं को आकर्षित करना, मध्यस्थों को आकर्षित करना, नये बाजार में प्रवेश करना ,किसी गलतफहमी को दूर करना, शीघ्रता से कोई जानकारी ग्राहकों को देना आदि। यदि विज्ञापन का उद्देश्य केवल अच्छे विक्रयकर्ता विदेशी बाजारों के लिए ढूँढना हो तो इस प्रकार किया जाने वाला विज्ञापन सीमित होगा। जिस क्षेत्र के लिए ऐसे विक्रयकर्ता चाहिए, वहाँ के प्रचलित अखबारों में ही ऐसा विज्ञापन उपयुक्त होगा। यदि कोई जानकारी शीघ्र ग्राहकों को देनी है, तो पत्रिकाओं की अपेक्षा समाचार-पत्र या रेडियों अधिक उपयुक्त होगा।

(ii) संदेश की आवश्यकताः-

विज्ञापन के लिए उपयोग लाये जाने वाले संदेश की आवश्यकता क्या है, इस पर भी माध्यम का चुनाव निर्भर करेगा। यदि संदेश में चित्रों आदि का उपयोग करना है। तो टेलीविजन उपयुक्त माध्यम हो सकता हैं। यदि संदेश मौखिक रूप में प्रभावी रूप से विज्ञापित किया जा सकता है। तो रेडियों का माध्यम उपयोगी होगा।

(iii) प्रचलित माध्यमः-

जिन विदेशी बाजारों में विज्ञापन करना है उन बाजारों में कौन-कौन से माध्यम विज्ञापन के लिए उपलब्ध हैं इस पर भी माध्यम का चुनाव निर्भर करेगा। एक उत्पादक को केवल उन्हीं माध्यमों में से किसी एक उपयुक्त माध्यम का चुनाव करना होगा, जो वहाँ पर उपलब्ध व प्रचलित हों।

(iv) क्रय निर्णय का समयः-

विदेशी बाजार का क्रेता या उपभोक्ता क्रय की जाने वाली वस्तुओं का निर्णय किस समय करता है, इस पर भी माध्यम का चुनाव निर्भर करेगा। क्रय का निर्णय जिस समय वह लेता है, उस समय उस पर विज्ञापन का कौन सा माध्यम असर करता है। उसी माध्यम का चुनाव किया जाना चाहिए।

(v) माध्यम की लागतः-

माध्यम का चुनाव करते समय उसकी लागत पर ध्यान देना आवश्यक है। चयन किये जाने वाले माध्यम का प्रचलन कैसा है, कवरेज क्या है, क्या कम्पनी के पास इतने पर्याप्त वित्तीय साधन उपलब्ध हैं, जिससें वह उस माध्यम की लागत को सहन कर सके। इस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। उसी माध्यम को अपनाया जाना चाहिए। जो उसके आर्थिक संसाधनों के उपयुक्त हो।

(4) संदेश का प्रभावः-

(Impact of Message):–

विज्ञापन का उद्देश्य ही एक उत्पादक द्धारा अपनी वस्तुओं व सेवाओं के विक्रय के लिए अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण हैं। इसलिए विज्ञापन में इसके सन्देश का व्यापक महत्व है। विज्ञापन के सन्देश को प्रभावी बनाने के लिए यह आवश्यक हैं कि विज्ञापन प्रति (advertising copy) प्रभावशाली हो, इसके बिना सन्देश का प्रभावक्षीण हो जाता है।

उत्पादक या व्यापारी या विक्रेता वस्तुओं या सेवाओं के विक्रय के लिए जो विज्ञापन देता है। वह विज्ञापन -संदेश की विज्ञापन प्रति कहलाती है। विज्ञापन की एक अच्छी प्रति ही सम्पूर्ण विज्ञापन कार्यक्रम की सफलता की आधारशिला है। प्रो. एस. आर. डावर ने अपनी पुस्तक 'Modern Marketing Management' में एक आकर्षक व यशस्वी विज्ञापन प्रति में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक बताया है-

(i) सुझावात्मक मूल्यः-

(Suggestive Value):–

विज्ञापन प्रति में सुझावात्मक मूल्य होना चाहिए, जिससे विज्ञापन प्रति स्वयं ही बोल उठे कि उपभोक्ता के लिए वह वस्तु कितनी आवश्यक है।

(ii) ध्यानाकर्षण गुणः-

(Attention Value):–

विज्ञापन की प्रति में ध्यानकर्षण का गुण भी होना चाहिए जिससे ग्राहक का ध्यान बरबस ही विज्ञापन की ओर चला जाऐ। इसके लिए विभिन्न नारों रंगों, आकर्षण शीर्षकों का उपयोग किया जाना चाहिए।

(iii) विश्वासात्मक गुणः-

(Conviction Value):–

विज्ञापन की प्रति ऐसी होनी चाहिए जो उपभोक्ताओं में विश्वास उत्पन्न करने की क्षमता रखती हो। इसके लिए चित्र ,गारन्टी

का ज़िक्र, महत्वपूर्ण व सामाजिक रूप से प्रतिष्ठित व्यक्तियों की उत्पाद के बारे में राय को भी छापा जा सकता है।

(iv) स्मरणात्मक गुणः-

(Memorising Value)

विज्ञापन प्रति में यह गुण भी होना चाहिए कि लोग विज्ञापन को स्मरण रख सकें। इसके बिना विज्ञापन क्रय-व्यवहार उत्पन्न नहीं कर पायेगा। इसके लिए उत्पाद के छोटे व आकर्षक नाम का उपयोग, नारों का उपयोग किया जाना चाहिए।

(v) भावात्मक गुणः-
(Sentimental Value):–

विज्ञापन की प्रति ऐसी होनी चाहिए जो विभिन्न विदेशी ग्राहकों की भावनाओं को ठेस नहीं पहुचाँती हो। इसके लिए विज्ञापन संदेश में ऐसी बातों को शामिल नहीं किया जाना चाहिए, जिसके बारे में विदेशी ग्राहकों को आपत्ति हों।

(vi) शिक्षात्मक मूल्यः-
(Educative Value):–

विज्ञापन की प्रति में शिक्षात्मक मूल्य भी होना चाहिए। विज्ञापन संदेश में ऐसी बातें शामिल की जानी चाहिए, जो ग्राहकों को उत्पाद के प्रयोग करने की विधि व उत्पाद को सुरक्षित रखने के बारे में बताती हों।

(vii) प्रव त्ति गुणः-
(Instinctive Value)

प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न प्रव तियों से प्रेरित होकर क्रय-व्यवहार करता है सामान्य ग्राहक व कोई विशेष वर्ग किन प्रव तियों से प्रेरित होता हैं। उन्हें ही विज्ञापन संदेश में उभारने की कोशिश की जानी चाहिए। विभिन्न प्रव तियों में खाद्य प्रव त्ति, संचय प्रव त्ति, पैत क प्रव त्ति को शामिल किया जा सकता है।

(5) विज्ञापन बजटिंगः-
(Advertisement Budgeting):–

विज्ञापन कार्यक्रम को संचालित करने में काफी धन व्यय होता है।विज्ञापन के लिए बजटिंग का आशय यह है कि किन -किन मदों में कितना व्यय किया जायेगा। किन-किन माध्यमों पर इसका वितरण कैसे होगा। विज्ञापन पर कुल व्यय किस आधार पर किया जावे। यह बजंटिग का मूल उद्देश्य है। विज्ञापन पर कितना व्यय किया जावे, इसके लिए **एम. जे. बेकर** तथा **फिलिप कोटलर** ने निम्नलिखित विधियां बतायी हैं-

(i) क्षमतानुसार विधिः-
(Affordable Method):–

जैसा कि इस विधि के नाम से स्पष्ट है कि इस विधि में उत्पादक को या व्यापारी को विज्ञापन पर केवल उतना ही व्यय करना चाहिए, जितनी उसकी क्षमता हो, इस विधि से फर्म दीर्घकालीन लाभ नहीं उठा सकती। प्रारम्भ में क्षमता नहीं होने पर भी निर्यातक को विज्ञापन पर अधिक व्यय करना पड़ेगा। इस कारण यह विधि बहुत उपयोगी नहीं है।

(ii) विक्रय प्रतिशत विधिः-
(Percentage of Sales Method):–

इस विधि में पिछले वर्षो के बिक्री रिकार्ड को देखकर, उसका मूल्याकंन चालू वर्ष की सम्भावित बिक्री का आकंलन कर उस वर्ष की बिक्री का निश्चित प्रतिशत निर्यातक अपने विज्ञापन पर व्यय कर सकता है। यह विधि भी काफी लोकप्रिय है। लगभग 93% अमेरिका वाहन कम्पनियाँ अपने विज्ञापन कार्यक्रमों का बजट तैयार समय इसी विधि को अपनाती है।

(iii) विनियोग प्रत्याय विधिः-
(Return on Investment method):–

इस विधि की मान्यता यह है कि विज्ञापन पर किया जाने वाला व्यय, व्यय नहीं होकर विनियोग है, जिसका लाभ फर्म

दीर्घकाल तक उठाती है। इसमें विज्ञापन व्ययों को अगामी वर्षो की बिक्री तक फैला दिया जाता है। इसका कारण यह है कि अगामी वर्षे में विक्रय में होने वाली व द्धि के लिए आज किये जाने वाले विज्ञापन एक आधार का निर्माण करते है अतः उन वर्षो को भी इसका भार वहन करना चाहिए।

(iv) उद्देश्य एंव कार्यविधिः-
(Objectives and Task method):–

यह विधि अपने आप में एक वैज्ञानिक विधि है। इसमें पहले विज्ञापन कार्यक्रम के उद्देश्यों को तय किया जाता हैं। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए क्या-क्या कार्य किये जाने चाहिए, उनको सूचीबद्ध किया जाता है। उन कार्यो पर कितना व्यय होगा, उसका आकंलन किया जाता है वही राशि विज्ञापन पर व्यय की जाती है जितनी आवश्यक हो। इस विधि की सबसे बड़ी कठिनाई सही उद्देश्यों व कार्यो को निर्धारित करने की है।

उपरोक्त सभी विधियों के अपने गुण व दोष है निर्यात विपणन में लगी अधिकांश विदेशी फर्मे बिक्री प्रतिशत विधि का अधिक उपयोग करती हैं। आजकल उद्देश्य एंव कार्यविधि भी लोकप्रिय होती जा रही हैं।

(6) विज्ञापन अभियान की रचनाः-
(Design of Advertisement Campaign):–

उपरोक्त सभी बातों पर विचार करके विज्ञापन अभियान की रचना की जानी चाहिए। उत्पादक को या निर्यातक को विदेशी बाजारों के लिए विज्ञापन अभियान की व्यूहरचना करते समय यह ध्यान रखना चाहिए, कि विज्ञापन के किस संदेश को वह विज्ञापित करना चाहता है। विदेशी ग्राहको के किस वर्ग तक वह विज्ञापन पहुँचना चाहता है। उसे किस प्रकार के उपयुक्त माध्यम का चुनाव करना चाहिए, जिससे प्रभावी रूप से वह अपनी बात को उनके सामने रख सके। विज्ञापन अभियान की रचना करते समय प्रतियोगियों के उत्पादों की कमियों, स्वंय के उत्पाद गुणों को भी ध्यान में रखना चाहिए। विदेशी बाजारों का इस आशय के लिए खण्ड़ीकरण या विभक्तिकरण कर लिया जाना चाहिए व प्रत्येक बाजार के लिए उपयुक्त विज्ञापन कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि विश्व बाजारों के लिए विपणन में विज्ञापन का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। अनेक विदेशी फर्मो ने अपने व्यापक व प्रभावी विज्ञापन कार्यक्रम की सहायता से विश्व बाजारों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। अमेरिकी, जापानी फर्मे विश्व प्रसिद्ध पत्रिकाओं में बड़े आकर्षक रूप से विज्ञापन करती है। रंगों का चुनाव, व सन्देश का चुनाव बड़ा प्रभावी होता है। यद्यपि भारतीय निर्यातकों ने कपड़ों व हैण्डलूम की वस्तुओं, इंजीनियरिगं उत्पादों व अनेक औधेगिक वस्तुओं का विश्व बाजारों में प्रभावी रूप से विज्ञापन किया है।

सेवाओं के क्षेत्र में भी Air India ने अमेरिका व यूरोपिय देशों में प्रभावी रूप से अपना विज्ञापन किया है। आज इसी का कारण है, कि Air India विश्व की चौथी कुशलतम एयर लाइन है। भारतीय भवन निर्माण संस्थानों ने भी अपना अच्छा विज्ञापन विश्व बाजारों में किया है। यह इसी का प्रभाव है कि खाड़ी के विभिन्न देशों में अनेक प्रकार के निर्माण कार्य भारतीय संस्थानों को मिले है। इसकी लागत अरबों रूपयों में हैं।

इतना होने पर भी भारतीय निर्यातकों को इस पर काफी प्रयास करना है। उन्हें विदेशों में विज्ञापन पर उपयुक्त प्रकार का माध्यम व एजेन्सी का चुनाव करना चाहिए। विज्ञापनों की आर्कषण शक्ति उन्हें बढ़ानी चाहिए। प्रतियोगी विदेशी फर्मे जिन माध्यमों का उपयोग कर रही है, उन्हें भी उनको अपनाना चाहिए। विदेशों में विज्ञापन के लिए उपलब्ध अनुकूल वातावरण का उन्हें पूरा लाभ उठाना चाहिए।

(7) अनुगमन या विज्ञापन प्रभावशीलता का मापनः-
(Follow-up of measuring effectiveness of advertising):–

अर्न्राष्ट्रीय विपणन में विज्ञापन करने के पश्चात् या विज्ञापन की प्रति तैयार करते समय उसकी प्रभावशीलता का मापन करना अत्यन्त आवश्यक कार्य है। अनुगमन के अर्न्तगत इस बात का पता लगाया जाता है कि विज्ञापन कितना प्रभावी रहा, उसमें क्या कमियाँ रहीं, उसमें क्या अच्छाईया प्रशेसित की गयी, प्रतिस्पर्धियों की तुलना में वह किस स्तर पर आता है। विज्ञापन की प्रभावशीलता का मापन करने के लिए निम्नलिखित दो मुख्य विधियाँ प्रयोग की जाती हैं।

(I) विक्रय अनुसंधानः-
(Sales Research)

इसकें अन्तर्गत इस बात का मूल्यांकन किया जाता है कि विज्ञापन के फलस्वरूप उत्पाद या सेवा की बिक्री में कितनी व द्धि हुई। इसके लिए दो विक्रय क्षेत्रों में एक परीक्षण केन्द्र (Test Centre) व दूसरे को नियंत्रण केन्द्र (Control Centre) बना दिया जाता है। नियंत्रण केन्द्र में कोई विज्ञापन नहीं किया जाता, जबकि परीक्षण केन्द्र के बाजार में विज्ञापन किया जाता है।

एक समय अवधि के पश्चात् दोनों बाजारों की बिक्री की तुलना की जाती है व परीक्षण बाजार पर विज्ञापन के प्रभाव का पता लगाया जाता है।

(II) संदेशवाहन अनुसंधानः-
(Communication Research):–

इसके अन्तर्गत मुख्य रूप से दो विधियाँ प्रयोग की जाती है। इसका उद्देश्य विज्ञापन प्रति की प्रभावशीलता का विज्ञापन से पूर्व परीक्षण करना या विज्ञापन के बाद उसकी प्रभावशीलता को मापना हैं। ये इस प्रकार है-

(i) उपभोक्ता पंच परीक्षण
(Consumer-Jury Test):–

इस विधि का प्रयोग विज्ञापन करने से पूर्व विज्ञापन प्रति की प्रभावशीलता के मापन में किया जाता है। इस विधि में उपभोक्ताओं के चयनित समूह को विज्ञापित प्रति दिखा दी जाती है। उनसे इस पर उनकी प्रतिक्रियाएँ जानी जाती हैं। इसमें विज्ञापन प्रति का परीक्षण योग्यता-क्रम परीक्षण या तुलनात्मक-युगल परीक्षण के आधार पर हो सकता है। पहली विधि में कई विज्ञापन प्रतियाँ उपभोक्ताओं को दी जाती हैं, उनके पंसदगी के क्रम उन्हें जमाने को कहा जाता है। जबकि तुलनात्मक-युगल परीक्षण में उन्हें 2-2 विज्ञापन प्रतियाँ चुनने को कहा जाता है। यही क्रम अन्त तक सर्वोतम प्रति के चयन तक चलता रहता है।

(ii) पुनः स्मरण परीक्षणः-
(Re-call Test):–

इसी विधि में उपभोक्ताओं के समक्ष किये गये विज्ञापन की कुछ विशेषताओं को बताकर यह पूछा जाता है, कि क्या उन्होंने इस प्रकार कोई विज्ञापन देखा है इसमें अनेक विधियों का प्रयोग किया जाता है , जो इस प्रकार हैं-

(a) साहचर्य परीक्षणः-

(Association Test):–

इसमें विज्ञापन का एक भाग बताकर पूछा जाता है, कि इसके आगे क्या है? जैसे जो बात बातों से न बने गुड़ हेल्थ रिफाइण्ड तेल आदि।

(b) ज्ञान-परीक्षणः-
(Knowledge Test):–

इसके अन्तर्गत उपभोक्ता की जानकारी के आधार पर विज्ञापन प्रभावशीलता का पता लगाया जाता है। जैसे उससे यह पूछा जाता है कि क्या उसने नेशनल पेनासोनिक, सीको, जिलेट का नाम सुना हैं। उसे पता होगा तो वह सब बता देगा।

(c) गेलप एंव रोबिन्सन परीक्षणः-
(Gallup and Robinson Test):–

यह विधि प्रेस विज्ञापन की प्रभावशीलता के मापन में प्रयोग की जाती है। इसमें ग्राहक से पत्रिका दिखाकर यह पूछा जाता है कि क्या उसने उस पत्रिका का अध्ययन किया है, सकारात्मक उत्तर आने पर उसके समक्ष विभिन्न ब्राण्ड रख दिये जाते हैं, व पूछा जाता है , उसने किस ब्राण्ड का विज्ञापन उसमें देखा है। उसके बाद उससे यह विशिष्ट विज्ञापन के बारे में पूछा

जाता है।

(d) रेडियो एंव टेलीविजन पुनः स्मरण परीक्षणः-
(Radio and Television Re-Call Test):–

इस विधि में रेडियों या टेलीविजन पर विज्ञापन करने के दूसरे दिन उपभोक्तओं से व्यक्गित सम्पर्क कर या टेलीफोन पर सम्पर्क कर यह पता लगाने का प्रयास किया जाता है, कि क्या उन्होंने अमुक विज्ञापन देखा है? अधिकांश उत्तर हाँ में मिलने पर यह माना जाता है। कि विज्ञापन प्रभावी रहा है।

यह नहीं कहा जा सकता कि विज्ञापन प्रभावशीलता के मापन की कौन सी विधि सर्वोतम है यह इस बात पर निर्भर करेगा कि विज्ञापन का उद्देश्य क्या है? इसके अलावा भी विज्ञापन की प्रभावशीलता के पर अनेक घटकों का प्रभाव पड़ता है। समय तत्व की भूमिका भी इसमें महत्वपूर्ण है कि समय विज्ञापन किये जाते हैं।

(8) विज्ञापन एजेन्सी का चयनः-
(Selection of Advertising Agency):–

ऐसी निर्यातक फर्मे जिनके कार्यालय विदेशों में नहीं हैं, उन्हें निर्यात बाजारों में विज्ञापन एजेन्सियों पर ही निर्भर रहना होता है। स्वंय के विज्ञापन व प्रचार विभाग के अलावा भी कभी- कभी विशिष्ट सेवाओं की आवश्यकता पड़ जाती है, जिसकी पूर्ती विज्ञापन एजेन्सी ही कर सकती है। विज्ञापन एजेन्सियाँ विशिष्टीकरण के आधार पर कार्य करती है। इनमें विज्ञापन के संबंध में विशेषज्ञ जानकारी रखने वाले व्यक्ति होते हैं।

विज्ञापन एजेन्सियों के कार्य

इनके कार्यो की श्र खंला विविधतापूर्ण हो सकती है। इनके कार्यो को निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है-

(i) प्रभावी विज्ञापन प्रति का स जन करना;

(ii) बाजार अनुसंधान करना;

(iii) अभिप्रेरण अनुसंधान करना, जिससे ग्राहक मनोविज्ञान का पता लग सके;

(iv) विज्ञापन का साहित्य तैयार करना;

(v) रेडियो ,टेलीविजन व अन्य माध्यमों के लिए विज्ञापन तैयार करना;

(vi) फर्म के उत्पाद के लिए आकर्षक नारे खोजना;

(vii) विज्ञापन-मिश्रण का नियोजन करना;

(viii) विज्ञापन बजट तैयार करना।

चयन में ध्यान रखने योग्य बातेंः

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में विज्ञापन एजेन्सी का चयन करते समय अनेक घटक ध्यान में रखने चाहिए, जिससे एजेन्सियों के लाभों का पूर्ण उपयोग किया जा सके। ये घटक इस प्रकार हैं-

(i) कि एजेन्सी के पास ताजा बाजार सूचनाएँ व संमक है ये सूचनाएँ व जानकारियाँ विश्वसनीय है।

(ii) यह सुनिश्चित कर लिया जाये कि किस एजेन्सी का चयन किया जा रहा है। विज्ञापन उसका मुख्य पेशा है।

(iii) विज्ञापन एजेन्सी में कार्यरत विशेषज्ञों का स्तर व योग्यता किस प्रकार की है

(iv) विज्ञापन एजेन्सी का विश्व के कितने देशों में कार्य है।

(v) विज्ञापन एजेन्सी की ख्याति किस प्रकार की है।

(vi) विज्ञापन एजेन्सी की वित्तीय व साधनों की क्षमता किस प्रकार की है।

(vii) क्या निर्यातक फर्म की विपणन आवश्यकता पूरा करने में एजेन्सी सक्षम है।

(viii) एजेन्सी पर कार्यभार कितना है? एजेन्सी के कार्यभार को देखते हुए निर्यातक फर्म की विज्ञापन आवश्यकता को पूरा

कर सकेगी।

(ix) निर्यातक फर्म की उत्पाद पंक्ति के अन्य उत्पादों के विज्ञापन के संबंध में फर्म का अनुभव कैसा रहा है।

(x) लागत तत्व पर पूरा विचार करना आवश्यक है।

निर्यात विपणन एंव प्रसिद्ध विज्ञापन एजेन्सियाँ

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में विज्ञापन एजेन्सी का चयन करते समय विज्ञापन एजेन्सियों का ज्ञान होना आवश्यक है। विश्व स्तर पर लिन्डाज लिमिटेड, हिन्दुस्तान थॉम्पसन एसोसिएट, क्लेरियन, ग्रान्ट्स एण्ड बेनसन्स , बी दत्ताराम एण्ड कम्पनी, शिल्पी एडवरटाइजिंग कम्पनी आदि प्रसिद्ध कम्पनियाँ है। इनकी सेवाएँ निर्यातक फर्म अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में कर सकती है।

उपयोगिता

निर्यातक फर्म का विज्ञापन विभाग होते हुए भी एजेन्सी की सेवाएँ उपयोगी होती हैं। संस्था का विज्ञापन विभाग "Yes-man" की तरह कार्य करता है, व कड़वी व अप्रिय बात कहने से कतराता है, जबकि विज्ञापन एजेन्सियाँ अपनी उद्देश्यात्मक बातें बेबाक तरीके से रखती हैं। उन्हें 'बॉस' की नाराजगी का खतरा नहीं होता । इसके व्यापक संसाधनों का लाभ भी अपेक्षतया कम कीमत पर मिल जाता है।

11. विक्रय संवर्द्धन
(Sales Promotion)

विज्ञापन एंव व्यक्तिगत विक्रय के अलावा जितने भी अन्य माध्यम है जिनका उद्देश्य विक्रय में व द्धि करना हो, विक्रय संवर्द्धन के अर्न्तगत आते हैं। इसमें उपभोक्ताओं को अधिक क्रय करने हेतु मुफ्त नमूनों, अतिरिक्त वस्तु, मूल्यों में कमी, प्रदर्शन, कूपन, धन वापसी के प्रस्ताव एंव प्रदर्शन आदि के द्धारा प्रेरित किया जाता है मध्यस्थों को अधिक विक्रय के लिए प्रेरित करने हेतु क्रय भत्ता , मुफ्त माल, व्यापारिक भत्ता , उपहार आदि का आकर्षण दिया जाता है। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में इनकी भूमिका सीमित होती है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में विक्रय संवर्द्धन के लिए मेले एवं प्रदर्शनियों का व्यापक महत्व हैं। इसलिए इस पर विस्तार से चर्चा करना उचित होगा।

मेले एंव प्रदर्शनियाँ
(Fairs and Exhibitions)

आशय
(Meaning):–

इनका उपयोग विक्रय संवर्द्धन के परम्परागत तरीके के रूप में होता आया है। प्राचीन समय में विभिन्न धार्मिक अवसरों पर मेंलों की परम्परा रही है। इन मेंलो में विभिन्न वस्तुओं के विक्रेता अपनी वस्तुओं की दुकानें भी लगाते थें । कम से कम समय में हजारों ग्राहकों से सम्पर्क करने का यह एक अद्वितीय माध्यम है। इस अर्थ में मेले एवं प्रदर्शनियों के अन्तर्गत एक स्थान पर विशेष उत्पादक एंव निर्माता अपनी वस्तुओं या सेवाओं के विक्रय हेतु एकत्र होते है मेले एंव प्रदर्शनियाँ एक निश्चित समय के लिए सामान्यतया अल्पकाल के लिए होते है। प्राचीनकाल में इनका उपयोग वर्ष भर में बनाये गये माल को इनमें जाकर बेचना होता था।

उद्देश्य
(Objects)

आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय मेंलो एंव प्रदर्शनियों का उद्देश्य केवल बिक्री करना ही नहीं है। वरन् इसके व्यापक उद्देश्य हैं, जिनका वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है-

(i) बाजार सम्भावना का पता लगाना।

(ii) दीर्घकालीन बाजार को विकसित करना।

(iii) प्रतिस्पर्धियों के उत्पादों व सेवाओं का अध्ययन करना।

(iv) ग्राहकों को विभिन्न उत्पादो व निर्माताओं के उत्पादों व सेवाओं की श्र खंला का तुलनात्मक अध्ययन करने का अवसर देना।

(v) एक-दूसरे के अनुभवों को समझना।

(vi) तकनीक हस्तान्तरण हेतु प्रेरित करना।

(vii) व्यापारिक समझौते का मार्ग बनाना।

(viii) संयुक्त साहस के समझौते करना।

(ix) वित्तीय सहभागिता के प्रस्ताव प्रस्तुत करना।

(x) आकर्षक व प्रभावी रूप से अपने उत्पादों व सेवाओं की श्र खंला प्रस्तुत करना। विशेषकर प्रदर्शन मूल्य वाले उत्पादो के प्रभावी प्रदर्शन की व्यवस्था करना।

(xi) अपने देश के विभिन्न क्षेत्रों में किये गये विकास की एक झलक देना

प्रकार
(Types):–

अन्तर्राष्ट्रीय मेंले एंव प्रदर्शनियाँ मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित की जा सकती हैं-

(i) सामान्य या क्षितिज व्यापारिक मेले एंव प्रदर्शनियाँः-
(General or Horizontal Fair and Exhibitions)

इस प्रकार के मेले एंव प्रदर्शनियों में विभिन्न उत्पादक एंव निर्माता अपनी वस्तुओं व सेवाओं को प्रस्तुत करते है। सामान्यतया इनमें एक क्षेत्र विशेष के देशों के निर्माता व उत्पादक भाग लेते है, जिसका उद्देश्य उस देश द्वारा क षि , उद्योग , परिवहन, ऊर्जा आदि क्षेत्रों में की गयी प्रगति को प्रस्तुति करने का प्रयास किया जाता हैं। इसलिए विभिन्न ग्राहकों वर्गो व आयु वर्गो के लोगों की इसमें गहरी रूचि होती है । भारत में ट्रेंड फेयर आथोरिटी आफ इण्डिया लि. नई दिल्ली इस प्रकार के मेले एंव प्रदर्शनियाँ भारत एवं भारत के बाहर इनका आयोजन करती है। 1972 में दिल्ली में आयोजित " Asia 1972 इसका महत्वपूर्ण उदाहरण है।

(ii) विशिष्ट मेले या उदग्र मेले एंव प्रदर्शनियाँ
(Specialized or vertical Fairs and Exhibition):–

इन मेलो एंव प्रदर्शनियों में विभिन्न देशों के एक ही उद्योग मे कार्यरत निर्माता एंव उत्पादक भाग लेते हैं किसी उद्योग समूह के उत्पादों व सेवाओं तक ही ये सीमित होते हैं इसका उद्देश्य उस उधोग विशेष या उधोग समूह के उत्पादों व सेवाओं का एकान्तिक प्रदर्शन करना हैं। ये मेले एंव प्रदर्शनियाँ भी या तो सम्पूर्ण किसी उधोग के लिए आयोजित की जा सकती हैं , या केवल उसके किसी भाग विशेष के लिए। जैसे प्रथम स्थिति में इलेक्ट्रोनिक्स उधोग की प्रदर्शनी व दूसरी स्थिति में केवल टेलीविजन निर्माताओं द्वारा मेले या प्रदर्शनी का आयोजन करना है। पश्चिमी जर्मनी में हनोवर में आयोजित किया गया ईजीनियरिंग उद्योग का मेला इसी श्रेणी के अन्तर्गत आता है।

इंजीनियरिंग उधोग का मेला इसी श्रेणी के अर्न्तगत आता है।

मेले एंव प्रदर्शनियों के लिए तैयारी
(Preparations for fairs and Exhibitions) :–

मेले एवं प्रदर्शनियों के आयोजन के लाभ तभी प्राप्त किये जा सकते है, जबकि इसके लिए पूरी तैयारी की जावे। इसके संबंध में तैयारी को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(a) पहले उठाये जाने वाले कदम
(Steps to the taken before):–

(i) बाजार अनुंसधान रिर्पोट को तैयार करना।

(ii) स्थान आरक्षित करना।

(iii) विपणन व्यूह रचना को तैयार करना।

(iv) लक्ष्य बाजार के संभावित ग्राहकों वह प्रयोक्ताओं की सूची बनाना।

(v) उनसे पत्र-व्यवहार करना।

(vi) प्रारम्भिक बजट को तैयार करना।

(vii) संवर्द्धनात्मक साहित्य को तैयार करना व छपाने की व्यवस्था करना।

(viii) मेले एंव प्रदर्शनी में भाग लेने वाली कम्पनी के प्रबन्धकों व कर्मचारियों के स्तर के अनुसार होटल बुक करना।

(ix) सहायक व पूरक सूचनाओं को आयोजित होने वाले देश की भाषा में छपाने की व्यवस्था करना।

(x) मेले एंव प्रदर्शनी के नियमों के बारे में जानकारी प्राप्त करना।

(xi) वहाँ की सामान्य परम्पराएँ एंव क्रियाविधि की जानकारी प्राप्त करना।

(xii) विज्ञापन एंव प्रचार का कार्यक्रम बनाना। विज्ञापन व प्रचार के उपयुक्त माध्यमों का चयन करना।

(xiii) बजट को अन्तिम रूप देना।

(xiv) मेले एंव प्रदर्शनी के लिए वांछित अस्थायी कर्मचारियों की नियुक्ति करना। इससे पूर्व उनकी छानबीन करना।

(xv) फारवर्डिंग व क्लीयरिंग एजन्टों की नियुक्ति करना।

(xvi) प्रदर्शनी एंव मेले में भेजे जाने वाले सामान का बीमा करना।

(xvii) पवेलियन के निर्माण हेतु निविदाएँ आमन्त्रित करना।

(xviii) पूछताछ व अन्य आवश्यक फार्मो को छपाना।

(xix) सूची-पत्रों, बुकलेट्स, फोल्डर्स व आमन्त्रण पत्रों को छपाना।

(xx) निमन्त्रण पत्रों को डाक से भेजना।

(xxi) स्वागतकर्ता स्टाफ का चयन करना।

(xxii) मेले एंव प्रदर्शनी की पूर्व संध्या पर प्रेस कॉन्फ्रेस एंव व्यापार भोज का आयोजन करना।

(xxiii) कर्मचारियों को आयोजन से पूर्व विस्तार से उनसे अपेक्षित भूमिका की जानकारी देना।

(xxiv) मेले या प्रदर्शनी प्रारम्भ होने के कुछ देर पहले अपेक्षित कर्मचारियों को पुनः संक्षेप में उनसे अपेक्षित कार्य निष्पादन के बारे में समझना।

(b) दौरान उठाये जाने वाले कदम
(Steps to be taken during)

(i) यह सुनिश्चित करना कि आगन्तुकों का उचित स्वागत हो।

(ii) उनके द्धारा चाही गयी जानकारियाँ तुरन्त दी जाए।

(ii) उद्घाटन समारोह में उपस्थित रहना।

(iv) दूसरों के पवेलियनों का भ्रमण करना [स्वंय के पवेलियन की पूरी व्यवस्था करके]।

(v) प्रचार साम्रगी के यथोचित वितरण हेतु कदम उठाना।

(vi) प्रतिदिन रात्रि को दिन भर के कार्य निष्पादन का विचार करना व कमियों को अगले दिन दूर करना।

(vii) भीड़ वाले स्थानों पर विशेष व्यवस्था करना।

(viii) मेले एंव प्रदर्शनी के आयोजक अधिकारियों के सम्पर्क में रहना।

(ix) प्रतिदिन सफाई की समुचित व्यवस्था करना।

(x) सुरक्षा के पर्याप्त कदम उठाना।

(xi) मुख्य विक्रयों की प्रेस को जानकारी देना।

(xii) अपने स्वंय के देश के प्रचार माध्यमों में हाइलाइट्स भेजना।

(xiii) दर्शकों के साथ अनुगमन की व्यवस्था करना।

(xiv) बीच-बीच में यह सुनिश्चित करना कि व्यय निर्धारित सीमा में ही हो रहा हैं।

(xv) खर्चो के लेखांकन एंव सत्यापन की नियमित व्यवस्था करना।

(xvi) प्रतिदिन के क्रियाकलापों की रिर्पोट लिखा जाना।

(b) बाद में उठाये जाने वाले कदम
(Steps to taken after)

(i) पेवेलियन से बचे सामान की सूची बनाना।

(ii) उसके पेकिंग की व्यवस्था करना।

(ii) पेवेलियन को डिस्पोज करने की व्यवस्था करना।

(iv) सम्पूर्ण कार्य निष्पादन का प्रतिवेदन तैयार करना।

(v) प्राप्त सूचनाओं का सांख्यिकीय विश्लेषण करना।

(vi) विश्लेषण के पश्चात् सूचनाओं से उपयोगी निष्कर्ष निकालना।

(vii) ग ह-कार्यालय को विस्त त रिर्पोट भेजना।

(viii) ग ह कार्यालय को समाप्ति का केबल करना।

(ix) अस्थायी कर्मचारियों को भुगतान की व्यवस्था करना।

(x) मेला प्राधिकरण को बकाया भुगतान करना।

(xi) कार्य निष्पादन की कमियाँ पता लगाना, जिससे अगली बार उन्हें दूर किया जा सके।

(xii) सहायता देने वाले व्यक्ति को धन्यवाद के पत्र भेजना।

(xiii) जिस स्थान पर मेला था प्रदर्शनी आयोजित की गयी, वहाँ प्रचलित समाचार-पत्र में वहाँ की जनता को सामान्य आभार प्रदर्शन करना।

(xiv) बचे हुए सामान को ग ह कार्यालय लौटाने की व्यवस्था करना।

अध्याय-10
अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के वितरण-माध्यम
(Channels of Distribution of International Marketing)

प्राचीन काल में निर्माता या उत्पादक अपने उत्पाद का निर्माण करने के बाद उसे उपभोक्ता तक पहुंचाने में स्वयं सफल हो जाता था। क्योंकि उस समय विपणन का क्षेत्र सीमित था, उत्पादन की मात्रा कम होती थी और उपभोक्ताओं की आवश्यकताएं बहुत सीमित होती थी। परन्तु आधुनिक युग में उत्पादन तो देश के एक कोने में होता है लेकिन उसका उपभोग देश विदेशों में दूर-दूर बिखरे हुये असंख्य उपभोक्ताओं के द्वारा किया जाता है। अतः वर्तमान समय में निर्माता द्वारा अपने उत्पाद को उपभोक्ताओं तक प्रत्यक्ष रूप से पहुंचाना असम्भव तो नहीं लेकिन कठिन अवश्य है। इसलिये आधुनिक युग में निर्माता अपने उत्पादों को उपभोक्ताओं तक पहुंचाने के लिये अनक प्रकार के मध्यस्थों का वितरण वाहिकाओं का सहारा लेता है।

वितरण वाहिकाओं से आशय ऐसे वितरण माध्यमों से है जिनके द्वारा उत्पाद, निर्माता या उत्पादक के हाथ से निकलकर अन्तिम उपभोक्ता या प्रयोगकर्ता तक पहुंचती है।

वितरण माध्यमों का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Channels of Distribution)

प्रत्येक वस्तु का उत्पादन उसको अन्तिम उपभोक्ता का पहुंचाने के लिए किया जाता है लेकिन उसको अन्तिम उपभोक्ता तक कई माध्यमों से पहुंचाया जा सकता है, जैसे, निर्माता फुटकर विक्रेताओं को सेवाओं का उपयोग कर उपभोक्ताओं को बेच सकता है। प्रतिनिधि नियुक्त करके भी वस्तुओं को बेचा जा सकता है। एक से अधिक मध्यस्थों की सेवाओं का लाभ भी उठाया जा सकता है। यह सभी विवरण माध्यम या वाहिका की परिभाषा के अन्तर्गत आते हैं। वितरण माध्यम को व्यापारिक माध्यम (Trade Channel) भी कहते हैं। विभिन्न विद्वानों के अनुसार वितरण माध्यम या वाहिका का अर्थ निम्न प्रकार हैः

वितरण वाहिकाओं से आशय ऐसे वितरण माध्यमों से है जिसके द्वारा वस्तु उत्पादक या निर्माता के हाथ से निकालकर अन्तिम उपभोक्ता या प्रयोगकर्त्ता के पास पहुंचाती है।

वितरण माध्यमों की कुछ प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैंः—

1. **विलियम जे. स्टाण्टन** के अनुसार, "वस्तुओं के अधिकार-स्वामित्व को अन्तिम उपभोक्ता या औद्योगिक विक्रेता तक पहुंचाने में जो माध्यम अपनाया जाता है, वह वितरण माध्यम कहलाता है।" ("A channel of distribution for a product is the route taken by the title to the goods as they move from the producer to the ultimate consumer or industrial user.")
2. **रिचर्ड बसक्रिक** की राय में, "वितरण माध्यमों का आशय उन आर्थिक संस्थाओं की रीतियों से है जिनके माध्यम से एक उत्पादक अपना माल प्रयोगकर्ताओं के हाथ में सौंपता है।" ("Distribution channels are systems of economic institutions throught which a producer of goods delivers them into the hands of their users.")
3. **मैकार्थी** के मत में, "उत्पादक से उपभोक्ता तक की संस्थाओं का कोई भी क्रम जिसमें या तो एक मध्यस्थ है या उनकी कोई भी संख्या हो सकती है, वितरण माध्यम कहलाता है।" ("Any sequence of institutions from the producer to the consumer, including one or any number of middlemen, is called a channel of distribution.")

4. **फिलिप कोटलर** की राय में, "प्रत्येक उत्पादक, विभिन्न विपणन मध्यस्थों को, जो फर्म के लक्ष्यों को सर्वोत्तम ढंग से पूरा करते हैं, परस्पर जोड़ने की कोशिश करता है। विपणन मध्यस्थों का यह सेट ही विपणन मार्ग कहलाता है। इसको व्यापारिक मार्ग तथा वितरण मार्ग भी कहते हैं।" ["Every producer seeks to link together the set of marketing intermediaries that best fulfil the firm's objectives. This set of marketing intermediaries is called the marketing channel (also trade channel and channel of distribution].

5. **कण्डिफ, स्टिल** एवं **गोवोनी** के मत में "विपणन माध्यम वे वितरण जाल हैं जिनके माध्य से उत्पादक वस्तुओं को बाजार की ओर प्रवाहित करते हैं।" ("Marketing channels are the distribution network through which producres' products flow to the market.")

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि–

i. वितरण-माध्यम में निर्माता व अन्तिम उपभोक्ता दोनों को सम्मिलित किया जाता है।

ii. अतः उन दोनों को मिलाने में जो भी मध्यस्थ अपनी सेवाएं प्रदान करते हैं वे इसके अन्तर्गत आते हैं।

iii. लेकिन वह संस्थाएं वितरण-मध्यम की परिभाषा में शामिल नहीं की जाती हैं, जो सिर्फ सेवाओं को ही प्रदान करती हैं और वस्तुओं का स्वामित्व सम्बन्धी अधिकार नहीं बदलती है। जैसे, बैंक, परिवहन संस्थाएं भण्डार आदि। उसका अर्थ यह है कि वितरण माध्यम में वस्तु का स्वामित्व बदलना आवश्यक है।

iv. यह भी आवश्यक है कि किसी मध्यस्थ के द्वारा वस्तु में कोई खास परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए। यदि वस्तु की प्रकृति, डिजाइन, गुण आदि में परिवर्तन कर दिया जाता है, तो जिस मध्यस्थ ने परिवर्तन किया है वहां से नया वितरण माध्यम आरम्भ हो जाता है।

संक्षेप में, वितरण माध्यम वस्तुओं के स्वामित्व, हस्तान्तरण का मार्ग है और इसमें केवल उन्हीं संस्थाओं को शामिल किया जाता है जो वस्तुओं के स्वामित्व हस्तान्तरण में सहयोग करती हैं तथा बिना किसी परिवर्तन किये वस्तुओं को अन्तिम उपभोक्ताओं या औद्योगिक उपभोगकर्त्ताओं तक पहुंचाती है।

निर्यात वितरण की वाहिकाएं
(Export Distribution Channels)

निर्यात विपणन की वाहिकाओं से आशय वितरण के उन माध्यमों से है, जिनके द्वारा एक निर्यातक अपने द्वारा उत्पादित वस्तुओं को विदेशी बाजारों के अन्तिम उपभोक्ताओं या प्रयोक्ताओं तक पहुंचाता है। निर्यात वितरण की वाहिकाओं की अपनी कुछ विशेषताएं हैं। देशी बाजारों में वितरण के लिए जहां उत्पादक या निर्माता को असीम स्वतन्त्रता होती है, ऐसी स्वतन्त्रता निर्यात विपणन में वितरण के लिए नहीं होती।

निर्यात विपणन में निर्यातक एक सम्पूर्ण बाजार क्षेत्र में विक्रय प्रयास करने की अपेक्षा पहले कुछ चयनित स्थानों में प्रवेश कर विक्रय प्रारम्भ करता है। शनैः शनैः अन्य स्थानों पर प्रयास कर विक्रय कार्य प्रारम्भ करता है। निर्यात विपणन में लक्ष्य बाजारों का काफी महत्व है। लक्ष्य बाजारों से एक निर्यातक द्वारा अपने संभावित निर्यात बाजार में से प्रारम्भ ऐसे बाजारों का चयन है, जहां से वह अपने निर्यात विपणन का प्रारम्भ करेगा। प्रारम्भ में ऐसे ही बाजारों को चुना जाता है, जहां विक्रय करना अन्य स्थानों की अपेक्षा अनुकूल हो। पहले उस बाजार में अपना आधार मजबूत करके, निर्यातक अन्य बाजारों की ओर प्रयास चालू करता है। निर्यात बाजारों में अत्याधिक प्रतिस्पर्धा को देखते हुए यह उचित ही है, कि पहले सीमित तौर पर पूरे जोर शोर से योजनाबद्ध तरीके से प्रयास किये जावे, जिससे एक ओर तो अनावश्यक प्रयत्नों से बचा जावे व दूसरी ओर वितीय साधनों के अनावश्यक बर्बाद होने से बचा जा सके सीमित विक्रय क्षेत्र में विक्रय कर्त्ताओं को भी प्रभावी विक्रय कार्यक्रम में निष्पादन में सुविधा रहती है। यह इसके पीछे की मूल भावना है।

उपरोक्त सन्दर्भ में निर्यातकर्ता निर्यात विपणन में वितरण की वाहिकाओं के चयन के सम्बन्ध में जब निर्णय लेता है, तब उसे सबसे पहले इस पर विचार करना होता है कि इस लक्ष्य बाजार में वितरण की कौन-कौन सी वाहिकाओं की उपलब्धता है। उनके तुलनात्मक गुण-दोष क्या हैं इस पर सभी पहलुओं पर विचार का निर्णय लिया जाता है। इसके साथ ही उसे यह भी गम्भीरता से सोचना पड़ता है कि ऐसी कौन सी वितरण की वाहिका है, जो उसकी देशी विपणन क्रियाओं का निर्यात वितरण

वाहिका के साथ साम जस्य बैठा सकें। यदि इसमें अन्तर्विरोध हो गया तो निर्यात विपणन में काफी कठिनाई होगी। जापानी कार निर्माताओं ने उपरोक्त दोनों बातों का अच्छी प्रकार से मूल्यांकन कर अमेरिका के लक्ष्य बाजारों में ऐसी वितरण की वाहिकओं को चुना जो उनके विदेशी विपणन क्रियाओं से तालमेल खाती थीं। इसी कारण आज जापानी कार निर्माता अमेरिकी बाजारों में अमेरिकी कार निर्माताओं के लिए भयंकर सिरदर्द बन गये हैं।

निर्यात वितरण व्यूह रचना की विभिन्न विचार धाराएं
(Different Approaches to Export Channel Strategy)

वितरण व्यूहरचना किस प्रकार की जावे, इसमें अलग-अलग विचारधाराएं प्रचलित हैं ये विचार धाराएं इस प्रकार हैं–

1. **ग्रेविटी एप्रौच** (Gravity Approach)—इस प्रकार की विचारधारा के मानने वाले लोगों का कहना है कि निर्यातक स्वयं को कोई ताबड़तोड़ निर्यात विपणन के लिए नहीं करनी चाहिए। बड़ी निष्क्रिय भूमिका का निर्वाह उसे करना चाहिए। निर्यात वितरण के लिए उसे एक मध्यस्थ का चयन कर बाकी सभी कार्य उसी पर छोड़ देना चाहिए। अन्तिम उपभोक्ताओं व प्रयोक्ताओं तक माल कैसे किस प्रकार पहुंचे, इसकी सारी चिन्ता मध्यस्थ ही करे। इसमें निर्यातक न तो स्वयं ही वितरण वाहिका बनाता है, नहीं उसे बहुत गम्भीरता से लेता है।

2. **पुल एप्रोच** (Pull Approach)—इसके अन्तर्गत निर्यातक एक अत्यन्त ही प्रभावी, गहन व समयबद्ध संवर्द्धन कार्यक्रम बनाता है लक्ष्य बाजारों में व्यापक प्रचार व प्रसार से वह अपने उत्पाद या उत्पादों की जानकारी वहां के उपभोक्तओं व प्रयोक्ताओं को देने का प्रयास करता है। गहन विज्ञापन से वह ब्राण्डनिष्ठा उत्पन्न करने का प्रयास करता है। व्यापक विज्ञापन के फलस्वरूप उपभोक्ता व प्रयोक्ता उसके उत्पाद को जानने लगते हैं व उसके पश्चात् वे उस उत्पाद की उन बाजारों में मांग करना प्रारम्भ करते हैं इससे वितरकों में उन वस्तुओं का वितरण करने की प्रबल इच्छा जाग्रत हो जाती है। उपभोक्ता बाजार का बादशाह है। चाहे उत्पादक हो या व्यापारी, सभी के प्रयत्न उसकी खिदमत में पेश होते हैं इस प्रकार इसके अन्तर्गत उत्पाद या निर्माता वितरकों व मध्यस्थों के पास नहीं जाता, वरन् वितरक ग्राहकों के मांग सम्बन्धी दबाव के कारण निर्माता के पास आने को बाध्य हो जाता है।

3. **पुश एप्रोच** (Push Approach)—इस प्रकार की विचारधारा को मानने वाले व्यक्तियों का मत है कि निर्यातक को स्वयं ही आगे आकर निर्यात वितरण के लिए वाहिकाएं बनानी चाहिए उसे उसके सम्बन्ध में नियोजन कर, उनका संगठन कर क्रियान्वित करना चाहिए व उन पर अपना प्रभावी नियन्त्रण स्थापित करना चाहिए। इस विचारधारा के पीछे की मूल भावना यह है, कि निर्यातक निर्यात वितरण वाहिका का नेता बने। वह वितरण की वाहिका को एक कुशल संवर्द्धनात्मक उपकरण के रूप में प्रयोग करने का प्रयास करे।

तुलनात्मक उपयोगिता

एक निर्यातक को उपरोक्त तीनों विचारधाराओं में से किस को अपनाना चाहिए, इसका निर्धारण कई प्रकार के घटक करते हैं। जहां तक ग्रेविटी विचारधारा का प्रश्न है, निर्यात वितरण में उसका स्थान बहुत सीमित है। आज के वातावरण में एक निर्यातक निष्क्रिय भूमिका का निर्वाह कर, निर्यात बाजारों में स्वयं के लिए स्थान नहीं बना सकता।

पुल विचारधारा दिखने में जितनी आकर्षक लगती है, व्यवहार में उसके क्रियान्वयन में काफी धन लगता हैं उसके लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती है। प्रचार व प्रसार सम्बन्धी कार्यो के लिए विदेशी विनिमय की उपलब्धता भी शामिल होती है। विशेषकर भारतीय निर्यातकों के लिए यह विचारधारा भी उपयोगी नहीं है।

उपरोक्त कारणों से विशेषकर भारतीय निर्यातकों के लिए इसमें पुश विचारधारा ही सर्वाधिक उपयोगी प्रतीत होती है, जिसमें वह स्वयं वितरण वाहिका का नियोजन कर, कुशल संगठन, समन्वय से उसे संचालित करे।

वितरण वाहिकाओं के चयन को प्रभावित करने वाले तत्व
(Factors Affecting Choice of Distribution Channels)

वितरण वाहिकाओं के चयन में उत्पाद को असीमित स्वतन्त्रता नहीं होती। अनेक इस प्रकार के घटक हैं, जो वितरण वाहिकाओं के चयन पर अपना प्रभाव डालते हैं। **विलियम जे. स्टेनटन**' ने अपनी पुस्तक में कुछ ऐसे घटकों का वर्णन किया है, जो वितरण वाहिकाओं के चयन पर अपने प्रभाव डालते हैं ये घटक इस प्रकार हैं।

अ. बाजार सम्बन्धी तत्व—बाजार तत्वों में निम्नलिखित घटकों को सम्मिलित किया जायेगाः

1. **सम्भावित क्रेताओं की मात्रा**—विक्रय की जाने वाली वस्तु के सम्भावित क्रेताओं की संख्या कितनी है। यह वितरण वाहिका के चयन पर प्रभाव डालती हैं। यदि निर्यात बाजार के क्रेताओं की संख्या सीमित है, तो निर्यातक के लिए सीधा स्वयं माल का विक्रय ही उपयुक्त होगा। इसमें वाहिका छोटी होगी। यदि सम्भावित क्रेताओं की संख्या विशाल है तो सभी क्रेताओं तक पहुंचाने के लिए निर्यातक को वितरण के सभी सम्भव माध्यमों का उपयोग करना पड़ेगा।

2. **बाजार का भौगोलिक केन्द्रीयकरण**—निर्यात बाजार में बेची जाने वाली वस्तु का विक्रय क्षेत्र यदि भौगोलिक रूप से केन्द्रीयकरण की स्थिति में हैं, तो निर्यातक को वितरण की छोटी वाहिका रख स्वयं वितरण करना उपयोगी रहता है। विपरीत स्थिति में यदि उपभोक्ता भौगोलिक रूप से छितराये हुए हों, तो निर्यातक के लिए विशाल विक्रय क्षेत्र में छोटे-छोटे स्थानों पर रहने वाले क्रेताओं तक पहुंचने के लिए काफी मध्यस्थों की सेवाओं का उपयोग करना पडेगा, अतः वाहिका लम्बी व विशाल होगी।

3. **आदेशों की मात्रा**—यदि निर्यातक को आदेश बड़ी मात्रा में व कम आने की सम्भावना हो तो उसके लिए स्वयं ही इनकी पूर्ति का उत्तरदायित्व लेना ठीक रहेगा। इसके विपरीत यदि आदेश छोटे-छोटे व अनेक आदेशों की सम्भावना हो तो थोक व्यापारियों की सेवाएं उपयोगी रह सकती है।

   इसके अतिरिक्त ग्राहकों की क्रय आदतें, उनकी परम्पराएं, प्राथमिकताएं भी वितरण वाहिकाओं पर प्रभाव डालती हैं यदि किसी बाजार विशेष के ग्राहकों को उधार क्रय करने की आदत है, तो ऐसे मध्यस्थ जो उन्हें उधार दे सके उनका सहयोग लेना ठीक रहता है।

ब. उत्पाद सम्बन्धी बातें

1. **प्रति इकाई लागत**—ऐसे उत्पाद, जिनकी प्रति इकाई लागत कम होती है, उन्हें उपभोक्ता बार-बार व अधिक खरीदते हैं। ग्राहक इन उपभोक्ता माल को क्रय करते समय ज्यादा मोल-भाव भी नहीं करता व इसके लिए दूर जाना भी पसन्द नहीं करता। ऐसी स्थिति में लम्बी वितरण की वाहिकाएं ही उपयुक्त हो सकती हैं। जबकि ऐसे उत्पाद जिनका प्रति ईकाई लागत मूल्य ऊंचा हैं व जो कभी-कभी क्रय की जाती हैं, उनके लिए छोटी वितरण की वाहिका उपयुक्त होती हैं।

2. **नाशशीलता**—यदि उत्पाद में नाशशीलता अधिक है, जैसे दूध, फल, तरकारियां अण्डे आदि तो इनके वितरण के लिए छोटी व शीघ्र वितरण वाहिकायें अपनानी होगी, जिससे माल खराब होने से पहले ही समय पर इनके उपभोक्ताओं तक पहुंच जावे। ऐसे उत्पाद जिनमें नाशशीलता नहीं है, उनकी वितरण की वाहिकायें लम्बी हो सकती हैं।

3. **उत्पाद की तकनीकी प्रव ृत्ति**—ऐसे उत्पाद जो जटिल व तकनीकी प्रकृति के हैं, जैसा कि सामान्यता औद्योगिक उत्पाद के मामले में होता है, उसके लिए छोटी वितरण वाहिका, जिसमें उत्पादक स्वयं ही प्रयोक्ता को माल का विक्रय करे, ऐसी वाहिका उपयोगी होती है। यदि उपभोक्ता माल भी तकनीकी प्रकृति का है, तो उसके लिए भी जहां तक हो, छोटी वितरण वाहिका ही उपयोगी रहती है।

   इन सभी के आलवा वस्तु का वजन भी प्रभाव डालने वाला घटक है। जैसे यदि भारत से पाकिस्तान को कोयले का निर्यात करना है, तो इसके लिए सीधी वितरण वाहिका ही अधिक उपयोगी रहती है। इसके साथ ही उन वस्तुओं की बाजार में प्रतियोगिता कैसी है, यह भी वितरण वाहिका के चयन पर प्रभाव डालती है।

स. मध्यस्थ सम्बन्धी निर्णय

1. **मध्यस्थों द्वारा उपलब्ध करायी गयी सेवाएं**—वितरण की प्रक्रिया में कौन-सा मध्यस्थ कितनी सेवाएं देने को तैयार है इस पर भी वितरण वाहिका के चयन का तत्व प्रभावित है। जो मध्यस्थ जितनी अधिक सेवाएं देने के तैयार हो, उसी का चयन किया जाना चाहिए।

2. **उपलब्धता**—जिस विक्रय क्षेत्र में निर्माता या उत्पादक वस्तुओं का विक्रय करना चाहता है। उस विक्रय क्षेत्र में किस प्रकार के मध्यस्थ विद्यमान हैं यह निर्माता के सामने सीमा आ जाती है। उसे वहां पर विद्यमान मध्यस्थ में से ही उसके तुलनात्मक गुण-दोष का विचार कर उसका चयन करना होगा।

3. **निर्माता की नीतियों का पालन**—मध्यस्थों द्वारा विक्रय पर यदि कोई निर्माता किसी शर्त या शर्तो का अपनी नीति के रूप मे पालन कराना चाहता है, तो उसे इसी प्रकार के मध्यस्थ चुनने होंगे, जो उसकी शर्तो को मानने के लिए तैयार हों। यदि निर्माता विक्रय के लिए स्वयं द्वारा निर्धारित मूल्य पर ही माल बेचना चाहता है। जिससे उसकी बाजार में प्रतिष्ठा बने, ऐसी स्थिति में उसे ऐसे ही मध्यस्थों का चयन करना होगा, जो इसे स्वीकार करें।

इसके अतिरिक्त इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि विभिन्न वितरण मध्यस्थों की लागत क्या होगी। उसके आधार पर ही उसका निर्णय होना चाहिए। मध्यस्थों की विक्रय करने की क्षमता कितनी है, इस बात पर गंभीरता से विचार कर, साधन-सम्पन्न मध्यस्थों को ही अपनाया जाना चाहिए, जो अच्छा विक्रय दे सकें कम्पनी अपने मध्यस्थों पर नियन्त्रण कितना रख सकेगी, पर भी विचार होना चाहिए।

द. कम्पनी सम्बन्धी बातें

1. **फर्म का आकार**—जिन उत्पादक फर्मों का आकार बड़ा होता है, उसकी ख्याति, आर्थिक संसाधन आदि से सम्पन्न होती हैं उनमें उत्तम श्रेणी की प्रबन्धकीय योग्यता भी होता है। ऐसी फर्मे छोटी वितरण वाहिका अपना सकती है विपरीत स्थिति में ऐसी फर्मे जिनका आकार छोटा है, उनके लिए वितरण की लम्बी वाहिका उपयुक्त होगी।

2. **वित्तीय संसाधन**—फर्म के पास उपलब्ध वित्तीय संसाधन कितने है, वह उसका कितना भाग अपनी संवर्द्धनात्मक क्रियाओं, विक्रय शक्ति के नियोजन व प्रबन्ध आदि पर व्यय कर सकती है, इस पर भी वितरण वाहिका का चयन निर्भर करता है। जिन फर्मों के पास इस आशय के लिए उपयुक्त वितीय साधन हैं, वे छोटी वितरण वाहिका अपना सकते हैं। ऐसी फर्में जिनके पास उपयुक्त संसाधन नहीं है, उन्हें लम्बी वितरण वाहिका अपनानी होगी।

3. **वाहिका पर नियन्त्रण की इच्छा**—यदि कोई निर्माता या उत्पादक वितरण वाहिका पर प्रभावी नियन्त्रण रखना चाहता है, तो उसे छोटी वितरण की वाहिका अपनानी होगी, जिससे वह स्वयं ही उपभोक्ता से सम्बन्ध स्थापित कर सके। ऐसी इच्छा के अभाव में वह वितरण की लम्बी वाहिका चुन सकता है।

उपरोक्त तत्वों के अतिरिक्त भी उनके ऐसे तत्व हैं जो वितरण वाहिका के चयन पर अपना प्रभाव डालते हैं। जैसे जिस देश में निर्यातक फर्म अपनी वस्तुओं का निर्यात करना चाहती है, उस देश की सरकार ने वस्तुओं के वितरण के सम्बन्ध में यदि कोई वैधानिक उपाय किये हैं, तो उनका भी ध्यान रखना होगा। यदि एकाधिकारी वितरण पर उस देश-विशेष पर प्रतिबन्ध लगा रखा है, हो तो निर्यातक उस देश में वितरण के लिए एकाधिकारी वितरक नियुक्त नहीं कर सकेगा। इसी प्रकार यदि वहां की सरकार ने किसी वस्तु विशेष के वितरण में वितरक के लिए कोई योग्यता निर्धारित कर रखी है, तो वितरक में वह अपेक्षित योग्यता भी होनी आवश्यक है।

यद्यपि उपरोक्त घटक वितरण वाहिकाओं के चयन पर प्रभाव डालते हैं, फिर भी फर्म को वाहिका चयन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि फर्म वितरण वाहिका पर कितना नियन्त्रण रख सकेगी। नियन्त्रण का ऐसा स्तर तो अवश्य होना चाहिए, जिससे फर्म अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर सके। वितरण वाहिका में अपनाये जाने वाले मध्यस्थ को प्रयोग करने पर उसकी लागत क्या पड़ेगी। बाजार को कितना अपने प्रभाव में मध्यस्थ ला सकेंगे। उनका कवरेज कितना होगा। सर्वाधिक महत्व की बात तो यह है कि आज का विपणन ग्राहक सन्तुष्टि पर टिका है। फर्म के दीर्घ कालिक व्यापारिक हित इसी प्रकार के विक्रय पर निर्भर हैं। फर्म अपेक्षित ग्राहक-सन्तुष्टि का स्तर किस वाहिका से प्राप्त कर सकेंगी, इसे वाहिका के चयन में अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

निर्यात वितरण वाहिकाओं के प्रकार
(Types of Export Distribution Channels)

एक निर्यातक निर्यात बाजारों में निर्यात करने का निर्णय लेता है, तो उसे अपने उत्पाद या वस्तुओं को निर्यात बाजारों में वितरण करने के लिए यह निर्णय करना पड़ता है कि वह किसी प्रकार की वाहिका का चयन करे। इस बात का विस्तार से वर्णन हो चुका है, कि वितरण वाहिका के चयन पर प्रभाव डालने वाले तत्व कौन से है। इसको ध्यान में रखते हुए निर्यातक को यह निर्णय लेना है कि उसे अग्रलिखित में से किस प्रकार की वितरण वाहिका का चयन करना चाहिए–

(अ) अप्रत्यक्ष वितरण वाहिका
(Indirect Distribution Channel)

ऐसी फर्म जो देशी विपणन पर ध्यान देने के पश्चात् अब निर्यात बाजारों में भी प्रवेश करना चाहती है ऐसी फर्म निर्यात विपणन में अनुभवहीन होती है, उससे अपरिचित होती है, अतः उसके लिए यह उपयुक्त होता है कि वह अपना निर्यात ऐसी व्यापारी या संस्थाओं के मार्फत करे जिन्हें इसका अच्छा अनुभव हो। इस प्रकार अप्रत्यक्ष वितरण में निर्यातक फर्म निर्यात बाजारों में स्वयं अपने साधनों से वस्तुओं का वितरण नहीं कर, इस कार्य को ऐसी फर्मो या व्यापारियों को सौंप देती हैं जिनका इसमें विशिष्टीकरण होता है। इन मध्यस्थों के पास निर्यात विपणन के लिए पर्याप्त प्रबन्धकीय क्षमता, आर्थिक सम्पन्नता होती है। वर्षो से निर्यात बाजारों में कार्य करने से इन्हें अनुभव व्यापक होता है, व विदेशी बाजारों में ख्याति व विश्वसनीयता होती है। ये मध्यस्थ वितरक अपनी सेवाओं के बदले निर्यातक फर्म से निर्यात बिक्री पर कमीशन प्राप्त करते हैं। यह कमीशन भिन्न-भिन्न वस्तुओं व बाजारों के लिए प थक-प थक होता है। इसमें निर्यातक फर्म को निर्यात के लिए माल या वस्तुएं ऐसे मध्यस्थों को सौंप देना होता है, बाकी का सारा कार्य अर्थात निर्यातक देश से निर्यात बाजार में माल ले जाना, वहां उसे बेचना विक्रय उपरान्त धन-संग्रह करना सभी कार्य मध्यस्थ ही करते हैं।

अप्रत्यक्ष वितरण वाहिका में मूल रूप से निम्न तीन विकल्प उत्पादक या निर्यातकर्त्ता के पास होते हैं। जिनमें से किसी एक का चयन उसे सोच समझकर करना चाहिये।

1. **निर्यात व्यापारी का निर्यात ग ह** (Merchant Exporter or Export House)– भारत में बहुत सारे निर्यात व्यापारी तथा निर्यात ग ह हैं। जो स्थानीय एवं घरेलू उत्पादकों तथा निर्माताओं से माल क्रय करके विदेशों में उनका सफलतापूर्वक विक्रय करते हैं। निर्यात व्यापारी तथा निर्यात ग ह वित्तीय तौर पर काफी सक्षम होते हैं तथा अपने जोखिम पर निर्यात कार्य को अपने नाम से करते हैं। इनके प्रतिनिधियों तथा ब्रान्डों का जाल देश-विदेश में फैला हुआ होता है। प्रायः यह लोग किसी वस्तु विशेष में अपना व्यवसाय चलाते हैं, जिसका कि इन्हें विशेष ज्ञान और अनुभव होता है। छोटे निर्माताओं के लिये इनकी सेवाये काफी महत्वपूर्ण एवं उपयोगी होती हैं। क्योंकि वह स्वयं निर्यात कार्य की जिम्मेदारी लेने की क्षमता नहीं रखते हैं।

2. **भ्रमणशील एवं निवासी क्रेता** (Visitant and Resident Buyer)–कई आयातक एवं विदेशी कम्पनी अनेक देशों में अपने स्थायी निवासी क्रय प्रतिनिधि रखती हैं, ताकि वह अपने क्षेत्र से कम्पनी के लियें उपयोगी तथा लाभकारी क्रय कर सकें। कई बार विदेशी कम्पनी अपने क्रय प्रतिनिधियों को विभिन्न देशों तथा उनके विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण के लिए भेजती हैं, ताकि वह कम्पनी के लिये उचित तथा सही क्रय मौके पर कर सकें। इस प्रकार के प्रतिनिधि उत्पादकों तथा निर्माताओं के लिये मार्गदर्शक तथा सलाहकार का काम करते हैं। आयातक देश की अपेक्षाओं से उन्हें अवगत कराते हैं। उन्हें वस्तु की किस्म, आकार, रंग रूप, किस्म नियन्त्रक तथा पैकैजिंग इत्यादि के सम्बन्ध में अपने विचारों को बतलाते है, विकसित देश प्रायः इस प्रकार के प्रतिनिधि विकासशील देशों में भेजकर सस्ता तथा अच्छा माल ढूढ़ने का प्रयास करते हैं। विकासशील देश के निर्माताओं को भी उनसे अत्यधिक लाभ होता है।

3. **विदेशी आयात एवं निर्यात ग ह** (Overseas Import and Export House)–कुछ देशों में बड़े आकार के विदेशी आयात एवं निर्यात ग ह कार्य करते हैं, जो आयात एवं निर्यात का कार्य अपने नाम से करते हैं जापान में इस प्रकार की व्यवस्था काफी मात्रा में देखने को मिलती है। भारत में भी इनकी शुरूआत हो चुकी है। इनकी आर्थिक क्षमता काफी मजबूत होती है और इनके प्रतिनिधियों का जाल विभिन्न देशों में फैला हुआ होता है। यह आयात तथा निर्यात दोनों ही सुविधायें कमीशन के आधार पर अपने उपभोक्तओं को प्रदान करते हैं।

लाभ
(Advantages)

अप्रत्यक्ष वितरणों उन फर्मो के लिए विशेष उपयोगी होता है, जिनका आकार छोटा है, जो अभी तक अपना अधिक ध्यान देशी विपणन पर देती रही हैं, जो निर्यात विपणन में नयी-नयी हैं वितीय साधनों व प्रबन्धकीय योग्यता की सीमितता की वजह से ऐसी फर्म इस प्रकार के वितरण को अपनाकर निम्नलिखित लाभ प्राप्त कर सकती हैं:

1. **अधिक पूंजीगत साधनों की आवश्यकता नहीं**—इस प्रकार के वितरण में निर्यातक अपनी स्वयं की वितरण वाहिका निर्यात बाजारों में स्थापित नहीं करता। स्वयं के विक्रयकर्ताओं, निर्यात बाजार में कार्यालय आदि के व्यय में होने वाले पूंजीगत साधनों के व्यय से बच जाता है। इस प्रकार का वितरण माध्यम अपना कर वह अपने सीमित पूंजीगत साधनों से भी कुशलतापूर्वक निर्यात का कार्य कर सकता है।
2. **निर्यात की चिन्ताओं से मुक्ति**—इस प्रकार की वाहिका उसे सभी प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त कर देती है। निर्यात बाजार में वस्तुओं को भेजने के लिए उसका जहाज में लदान करवाना, विभिन्न प्रकर के प्रपत्रों को तैयार करने, सरकार से अनुमति लेने आदि अनेक प्रकार की औपारिकताएं उसे पूरी नहीं करनी होती हैं।
3. **नवीन निर्यातकों के लिए वरदान**—ऐसे निर्यातक जो इस क्षेत्र में नवीन हैं, उन्हें निर्यात विपणन की पेचीदा प्रक्रिया की जानकारी नहीं होती। निर्यात विपणन में अधिक जोखिम होने के कारण ऐसे निर्यातक अपने पूंजीगत साधनों को अपनी वितरण वाहिका बनानें में हिचकते हैं। उनके लिए इस प्रकार की औपचारिकताओं व जटिल प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। चिन्ताओं से मुक्त होने के कारण वे अपना अधिक ध्यान अपने उत्पाद को निर्यात बाजारों की मांग के अनुरूप बनाने पर लगा सकते हैं।
4. **मितव्ययिता**—इस प्रणाली को अपनाने पर निर्यातक फर्म के अनेक प्रकार के व्यय भी बच जाते हैं निर्यात बाजारों में विपणन अनुसन्धान करने, निर्यात बाजारों में विक्रय को बढ़ाने के लिए विज्ञापन, प्रचार करने, विक्रय संवर्द्धनात्मक कार्यक्रम चलाने, व्यक्तिगत विक्रय के व्ययों में पूरी बचत हो जाती है। इस कारण निर्यातक फर्म काफी मितव्ययिता भी इससे प्राप्त कर सकती है।
5. **नवीनतम बाजार सूचनाओं की प्राप्ति**—अप्रत्यक्ष निर्यात के लिए अपनाये जाने वाले मध्यस्थों को निर्यात विपणन का काफी अनुभव होता है। ये मध्यस्थ निर्यात बाजारों पर अपनी पैनी निगाह रखते हैं। समय-समय पर बाजार अनुसंधान करके, विक्रयकर्ताओं के विचारों को जानकर, व्यापारियों से सम्पर्क कर बाजार में होने वाले परिवर्तनों, ग्राहकों की इच्छाओं, उनके विचारों के मूल्यांकन के आधार पर ये मध्यस्थ अपने भावी बाजार आकलन से निर्यातक को अवगत करा देते हैं। इससे निर्यातक फर्म का मुफ्त में नवीनतम बाजार सूचनाओं व भावी परिवर्तनों की जानकारी हो जाती है। मांग व द्धि की आशंका होने पर वह उत्पादन को बढ़ाकर व कम होने पर उसमें कमी कर, मांग में परिवर्तन होने पर उसके अनुरूप अपने उत्पाद में परिवर्तन कर वह हानियों से बचकर अधिक लाभ कमा सकता है।
6. **मध्यस्थ की ख्याति का लाभ**—अप्रत्यक्ष वितरण में एक नवीन निर्यातक को जिसे निर्यात बाजारों में जाना-पहचाना नहीं जाता वह मध्यस्थ की ख्याति का उपयोग करता है। उसकी ख्याति तथा विश्वसनीयता का परोक्ष लाभ निर्यातक फर्म को भी प्राप्त होता है। इसका उपयोग कर वह भावी समय के लिए बाजार में अपना अच्छा स्थान बना सकती है।

हानियां
(Disadvantages)

जहां एक छोटे व नये निर्यातकों को इस प्रकार की वितरण वाहिका अपनाने पर अनेक लाभ मिल सकते हैं, वहीं पर इससे निम्नलिखित हानियां भी हैं—

1. **ऊंचे मूल्य वाले उत्पादों के लिए अनुपयुक्त**—यदि निर्यातक फर्म ऐसे उत्पाद बना रही है, जिनका प्रति इकाई मूल्य काफी ऊंचा है जो औद्योगिक उत्पादों की श्रेणी में आते हैं उनको क्रय करते समय प्रयोक्ता की इच्छा यही होती है कि वह सीधे ही निर्यातक फर्म से इस सम्बन्ध में व्यवहार करे। ऐसे उत्पादों के लिए यह अनुपयुक्त है।

2. **निर्यातक की अनभिज्ञता बनी रहना**—निर्यात की सारी औपचारिकताओं व प्रक्रिया की पूर्ति इसमें मध्यस्थ ही करते हैं इससे निर्यातक फर्मो को इन सब की जानकारी नहीं हो पाती। इसके साथ ही निर्यातक फर्म निर्यात बाजारों में स्वयं वितरण नहीं करती। इससे निर्यात बाजार के क्रेताओं से उसका स्वयं का सम्पर्क स्थापित नहीं हो पाता। लम्बे समय तक फर्म विदेशी बाजारों को नहीं पहचान पाती।

3. **विक्रय कीमतों में व द्धि**—अप्रत्यक्ष वितरण में निर्यात बाजारों में वस्तुओं का निर्यातक फर्म की ओर से वितरण करने पर मध्यस्थ अपनी सेवाओं के बदले में निर्यात बिक्री पर निश्चित दर से अपना कमीशन वसूल करते हैं। इससे निर्यात बाजार में वस्तुओं के विक्रय-मूल्य में व द्धि हो जाती है।

4. **सभी बाजारों में मध्यस्थों की उपलब्धि नहीं**—यह आवश्यक नहीं है कि निर्यातक फर्म को सभी निर्यात बाजारों में विक्रय के लिए मध्यस्थ उपलब्ध हो जावें। साथ ही उपयुक्त मध्यस्थों की सेवाओं को प्राप्त करना भी समस्या होती है। ऐसी स्थिति में इस प्रकार के वितरण की प्रणाली उसकी समस्या को हल नहीं कर सकती।

5. **मध्यस्थ द्वारा अधिक लाभ वाले उत्पादों पर ध्यान**—एक अन्य बड़ा दोष इस प्रकार के वितरण में यह है कि मध्यस्थ अनेक निर्यातकों की वस्तुओं में व्यवहार करते हैं। अलग-अलग निर्यातक से वे भिन्न-भिन्न कमीशन प्राप्त करते हैं इससे जो निर्यातक उन्हें ज्यादा कमीशन दे, उसके उत्पादों के विक्रय के लिए वह स्वाभाविक रूप से अधिक ध्यान देगा। इससे ऐसी छोटी फर्मे जो प्रारम्भिक अवस्था में अधिक कमीशन नहीं दे सकतीं, उनकी उपेक्षा होती है।

6. **निर्यातक के लाभों में कमी**—निर्यात विपणन के लिए मध्यस्थ द्वारा प्रदान की गयी सेवाओं पर उसे कमीशन देना पड़ता है। इससे कुल बिक्री मूल्य में से कम राशि ही निर्यातक फर्म को प्राप्त होती है। इससे उसके स्वयं के लाभों में कमी होती है।

7. **उच्च तकनीकी व जटिल वस्तुओं के लिए उपयुक्त नहीं**—यदि निर्यातक फर्म या संस्था ऐसे उत्पादों का विदेशी बाजारों में निर्यात करना चाहती है, जिनमें उच्च तकनीकी या जटिलता हैं तो इस प्रकार की विधि उपयोगी नहीं हो सकती ऐसे उत्पादों को विदेशी बाजार का क्रेता खरीदने से पूर्व सभी प्रकार से सन्तुष्ट हो जाना चाहता है। उसकी इच्छा यह होती है कि निर्यातक स्वयं या उसका प्रतिनिधि ही उसके पास विक्रय के लिए आवे। एक मध्यस्थ इस सम्बन्ध में पूरी सन्तुष्टि विदेशी क्रेता को नहीं दे सकता।

8. **फर्म के लिए व्यक्तिगत प्रयास नहीं:**—मध्यस्थ के लिए सभी निर्यातक समान होते हैं एक माल पसन्द नहीं आया तो इस पर जोर नहीं देकर वह दूसरे निर्यातक का माल क्रेता को बेचने का प्रयास करता है। उसके लिए तो सभी समान हैं इससे व्यक्तिगत निर्यातक फर्म की बिक्री में आधारभूत व द्धि नहीं होती है।

(ब) प्रत्यक्ष वितरण वाहिका
(Direct Distribution Channel)

इस प्रकार की वितरण व्यवस्था में निर्यातक फर्म निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के विदेशी बाजारों में वितरण के लिए मध्यस्थों की सहायता नहीं लेती। निर्यात की मात्रा में व द्धि होने, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, उसकी प्रक्रिया, आर्थिक संसाधन, पर्याप्त मात्रा में होने पर अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए निर्यातक फर्म यही उचित समझती है कि वह स्वयं ही वस्तुओं का वितरण करे। इसमें निर्यातक अपने स्वयं की वितरण वाहिका का प्रयोग करता है, उसकी इच्छा विदेशी बाजार के उपभोक्ताओं या प्रयोक्ताओं से सीधे सम्बन्ध स्थापित करने की होती है। वह स्वयं विदेशी बाजार की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त वितरण वाहिका का नियोजन करता है, उसका प्रभावपूर्ण संगठन कर उसे संचालित करता है। इस प्रकार के वितरण की प्रक्रिया से निर्यात विपणन उसका सहभाग काफी बढ़ जाता है। इसमें सीधी वितरण वाहिका होने से वाहिका लम्बी नहीं होती। वितरण की सम्पूर्ण वाहिका पर वह अपेक्षित नियन्त्रण स्थापित कर सकता। विदेशी उपभोक्ताओं तक माल पहुंचाने हेतु वह अपने स्वयं के विक्रय केन्द्र निर्यात बाजारों में खोलता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि अप्रत्यक्ष वितरण व्यवस्था में उनका मूल्यांकन कर, निर्यातकर्ता स्वयं की वितरण वाहिका से विदेशी बाजार में वस्तुओं का विवरण करता है।

लाभ
(Advantages)

यह वितरण व्यवस्था ऐसे निर्यातकर्ता जो स्वयं ही निर्यात के क्षेत्र में प्रवीणता प्राप्त करना चाहते हैं, जिनके प्रास इस सम्बन्ध में पर्याप्त प्रबन्धकीय योग्यता है, उनके लिए निम्नलिखित लाभ प्रदान करने वाली है।

1. **विदेशी बाजारों की उत्तम जानकारी**—इसमें निर्यातकर्ता स्वयं की वितरण वाहिका निर्यात बाजारों में वस्तुओं के वितरण के लिए स्थापित करता है, इससे विदेशी बाजारों के बारे में पूरी जानकारी निर्यात फर्म को स्वयं मिल जाती है। बाजार की विशेषताएं क्या हैं, उस पर प्रभाव डालने वाले तत्व क्या हैं। उपभोक्ताओं के क्रय-व्यवहार के पीछे क्या प्रेरणायें है उनके आदत, रीति-रिवाज, परम्परायें क्या हैं, इन सभी के बारे में विस्तार से जानकारी फर्म को मिल जाती है इससे दीर्घकालीन विपणन योजना बनाने में काफी मदद मिलती है।
2. **लाभों में व द्धि**—मध्यस्थों को जो लाभ अप्रत्यक्ष वितरण वाहिका में दिया है, वह लाभ इस प्रकार की वितरण व्यवस्था में समाप्त हो जाते हैं। जो कि विक्रय विदेशी बाजारों में होता है, उनके विक्रय पर सारा लाभ निर्यातकर्ता फर्म को प्राप्त होता है, इससे उसके लाभों में व द्धि होती है। इस प्रकार जुटाये गये अतिरिक्त संसाधनों का उपयोग निर्यात विपणन की व द्धि में किया जा सकता है।
3. **विक्रयोपरान्त सेवाएं**—ग्राहक सन्तुष्टि निर्माण करने व दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति में विक्रयोपरान्त सेवाओं का अपना विशिष्ट योगदान रहता है। विशेषकर औद्योगिक माल का प्रयोक्ता यह चाहता है कि विक्रेता उसे इस प्रकार की सेवाएं प्रदान करे। इसके लिए निर्यातकर्ता निर्यात बाजारों में अपने सेवा केन्द्रों की स्थापना कर इन सेवाओं को प्रभावी रूप से प्रदान कर सकता है।
4. **वाहिका पर पूर्ण नियन्त्रण**—अप्रत्यक्ष वितरण वाहिका को अपनाने पर निर्यातकर्ता का वितरण वाहिका पर किसी भी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता। इस प्रकार की वाहिका का एक बड़ा लाभ यह है कि स्वयं के नियोजन व स्वामित्व वाली वितरण वाहिका से वह उस पर कुशलतम नियन्त्रण स्थापित कर सकता है। जिस प्रकार के आदेश, निर्देश वह देगा, वाहिका उसे ही क्रियान्वयन करेगी।
5. **कुछ उत्पादों के लिए एकमात्र विकल्प**—ऐसे उत्पाद जिनकी प्रति इकाई लागत काफी ऊंची हो, जिनमें उच्च स्तर की तकनीक का प्रयोग हुआ हो, जिनमें अत्याधिक जटिलता हो, उसमें निर्यात बाजारों के प्रयोक्ता की इच्छा यही होती है कि वह सीधे ही इन वस्तुओं के सम्बन्ध में व्यवहार करे। इस प्रकार के उत्पादों में प्रत्यक्ष वितरण प्रणाली ही एकमात्र विकल्प है।
6. **बाजारों का विकास**—संस्था स्वयं ही वितरण का कार्य इसमें करती है। इससे वह विदेशी बाजारों के सम्पर्क में आती है। विदेशी बाजारों व उपभोक्ताओं के बारे में विस्त त जानकारी संस्था प्राप्त कर सकती है, इससे स्वयं का बाजार अनुसन्धान कार्यक्रम चला कर वह उपयोगी निष्कर्ष प्राप्त कर सकती है। इससे विद्यमान बाजारों पर अपनी पकड़ मजबूत कर संस्था नये लक्ष्य बाजारों का चयन कर अपने बाजारों का विकास कर सकती है।
7. **कड़ी प्रतियोगिता का सामना**—नये-नये बाजारों का विकास कर, संस्था उनके समुचित विदोहन के लिए समयबद्ध कार्यक्रम बना सकती है। बिक्री की मात्रा में व द्धि होने के कारण उसे नीचे विक्रय मूल्य की लाभप्रद हो सकते हैं। इससे अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में व्याप्त प्रतियोगिता का सामना प्रभावी रूप से किया जा सकता है।
8. **छोटी वाहिका**—प्रत्यक्ष वितरण में वितरण की वाहिका छोटी होती है। इसके अनेक लाभ निर्यातकर्ता फर्म उठा सकती है। इससे एक ओर तो वितरण लागतों में कमी होती है, क्योंकि मध्यस्थों का उन्मूलन हो जाता है। दूसरी ओर निर्यात बाजारों के उपभोक्ताओं व प्रयोक्ताओं तक शीघ्रता से पहुंचा जा सकता है। यह फैशन उत्पाद के लिए भी बड़ी उपयोगी वितरण प्रणाली है।
9. **विदेशी बाजारों में प्रतिष्ठा का निर्माण**—निर्यातकर्ता फर्म स्वयं वितरण करके विदेशी बाजारों में प्रतिष्ठा का निर्माण भी कर सकती है। अच्छे विक्रयकताओं की सेवाओं, कम मूल्य पर विक्रय, विक्रयोपरान्त सेवाओं के द्वारा संस्था अपनी अच्छी छवि को बना सकती है। यह छवि उसकी अनुकूल जनधारणा के निर्माण में सहयोगी होती है। एक बार बाजार

में प्रतिष्ठा व विश्वसनीयता का अर्जन कर संस्था अपने अन्य उत्पादों को भी सहजता से निर्यात बाजारों के विक्रय कर सकती है।

इस प्रकार प्रत्यक्ष वितरण प्रणाली से संस्था कई प्रकार के लाभों को प्राप्त कर सकती है। इसका उपयेाग एक संवर्द्धनात्मक उपकरण के रूप में कर संस्था अपने उत्पादों की बाण्ड निष्ठा का निर्माण कर, अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में प्रवीणता प्राप्त कर सकती है।

हानियां
(Disadvantages)

जहां प्रत्यक्ष वितरण प्रणाली के अनेक लाभ हैं, वहीं इसकी कुछ हानियां भी हैं। इन्हें हानियों की अपेक्षा इस प्रणाली की सीमाएं कहना अधिक उपयुक्त होगा। ये इस प्रकार हैं–

1. **विशाल पूंजीगत साधनों की आवश्यकता**–इस प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसके प्रबन्ध व संचालन में विशाल वित्तीय साधनों की आवश्यकता होती है। निर्यातकर्ता फर्म विदेशी बाजारों में स्वयं में विक्रय केन्द्र खोलती है, स्वयं के विक्रयकर्ताओं की व्यवस्था करती है। इस कारण ऐसी फर्मे जिनके पास पर्याप्त आर्थिक साधन नहीं है, उनके लिए यह अनुपयोगी हैं।
2. **उत्तम प्रबन्धकीय योग्यता अपरिहार्य**–प्रत्यक्ष वितरण वाहिका के संचालन के लिए ऐसे प्रबन्धकों की आवश्यकता अपरिहार्य है, जिन्हें विदेशी बाजारों का पूरा ज्ञान हो, जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय विपणन को आवश्यकताओं उसकी प्रक्रियाओं की पूरी जानकारी हो, उपभोक्ताओं की विशेषताओं से जो परिचित हो, जिन्हें विदेशी भाषाओं की जानकारी हो ऐसे प्रबन्धकों की अनुपलब्धता पर यह प्रणाली काफी हानिप्रद हो सकती है।
3. **वितरण लागतों में व द्धि**–इससे वितरण लागतों में व द्धि हो जाती है। इसमें स्वयं का विक्रय संगठन व तन्त्र निर्यात कर्त्ता फर्म को स्थापित करना पड़ता है इससे वितरण लगाते बढ़ जाती हैं, जो उसके लाभों में कमी भी करती है।
4. **छोटी फर्मो के लिए अनुपयुक्त**–नवीन निर्यातक फर्म या ऐसी छोटी निर्यातक इकाई जिसके पास पर्याप्त प्रबन्धकीय योग्यता व आर्थिक संसाधन नहीं हों उसके लिए इस प्रकार की वितरण प्रणाली बिल्कुल ही उपयुक्त नहीं है।
5. **व्ययों में व द्धि**–प्रत्यक्ष वितरण प्रणाली अपनाने पर अनेक प्रकार के व्यय की संस्था को स्वयं भुगतान करने होते हैं। बाजार अनुसन्धान, विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय का व्यय जो अप्रत्यक्ष वितरण में मध्यस्थ करता था, अब निर्यातक फर्म को स्वयं करने पड़ते हैं, इससे लागतों में व द्धि होती है।

उपरोक्त दोषों के होते हुए भी आज वही निर्यातक फर्म कुशलता से अपना विपणन कर सकती है, जो इसे अपनाये। प्रत्येक निर्यातकर्ता फर्म का अन्तिम लक्ष्य विदेशी बाजारों में स्वयं की वाहिका का निर्माण करना ही होना चाहिए, भले ही प्रारम्भिक तौर पर मध्यस्थों की सेवाओं का उपयोग अप्रासंगिक नहीं हो।

(स) सहकारी वितरण
(Co-operative Distribution)

सरकारी संगठन एक ऐसे संगठन को कहा गया है, जो वैयाक्तिक संगठन होता है, जिसकी सदस्यता ऐच्छिक होती है जो इसके सदस्यों के हित में कार्य करता है, होने वाले लाभ को उचित अनुपात में विभाजित करते हैं इस प्रकार के संगठनों का लोकतान्त्रिक प्रबन्ध किया जाता है। मताधिकार में सभी सदस्यों को समानता होती है। सेवा एवं सहकारिता की भावना ही इसका मूलाधार है। सामान्यतया कृषि उत्पादों के उत्पादक इस प्रकार के संगठन को अधिक प्रयोग करते हैं इसमें अनावश्यक प्रतियोगिता को समाप्त कर सामूहिक सौदेबाजी को अर्जित करने की भावना रहती है।

निर्यात विपणन में भी निर्यात बाजारों में वस्तुओं के वितरण के लिए इस प्रकार की सहकारी वितरण की व्यवस्था अपनायी जा सकती है। समान सी वस्तुओं का निर्यात करने वाली निर्यातक फर्मे सहकारी आधार पर संगठित हो सकती हैं इस प्रकार की वितरण व्यवस्था अपनाने पर सभी संस्थाएं अपने उत्पादों के लिए समान ब्राण्ड का उपयोग करती हैं एक शीर्ष संस्था बनाकर निर्यातक फर्मे इस प्रकार के संगठन की सदस्य बन कर, लोकतांत्रिक आधार पर इसका संचालन करती हैं विदेशी बाजारों में इस प्रकार का संगठन अपने स्वयं के विक्रय केन्द्र व वितरण व्यवस्था को स्थापित करता है। निश्चित समयावधि में हुए कुल

लाभ को प्रत्येक संस्था के द्वारा दिये माल के आधार पर विभाजित कर दिया जाता है। सरकारी वितरण में उसी प्रकार की वितरण व्यवस्था को अपनाया जाना चाहिए, जिसे अन्य निर्यातक संगठन उन बाजारों में अपना रहे हों। इससे प्रतियोगिता का सामना प्रभावी रूप से किया जा सकेगा। जिन विदेशी बाजारों में वस्तुआं का विक्रय करना है, उन विदेशी बाजारों में कार्यरत सहकारी संगठनों का भी उपयोग सहकारी संस्थाएं अपने वितरण में कर सकती हैं। विगत वर्षो में सहकारी वितरण में लगी विभिन्न संस्थाओं के पारस्परिक सहयोग में भी काफी व द्धि हुई है।

लाभ
(Advantages)

इस प्रकार के संगठन का उपयोग छोटी निर्यातक इकाईयों के लिए काफी लाभप्रद हो सकता है। छोटी-छोटी इकाईयों के लिए निर्यात विपणन में टिकना बड़ा कठिन होता है। जब ये छोटी-छोटी संस्थाएं मिलकर अपने विराट रूप से कार्य करती हैं, तो प्रतियोगिता करने, सौदेबाजी करने की इनकी क्षमता में काफी व द्धि हो जाती है। व्ययों में कमी होती है, मध्यस्थों को दिये जाने वाला लाभ समाप्त हो जाता है, फलतः इनके लाभों में व द्धि होती है। आपस में होने वाली अनावश्यक प्रतियोगिता की जो हानियां है, उससे भी इसकी सदस्य संस्थाओं को मुक्ति मिल जाती है प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तियों को अपनी प्रबन्धकीय योग्यता को प्रदर्शित करने का पूरा अवसर मिल जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था को अपना कर छोटी संस्थाएं भी अपने अस्तित्व को बनाये रख कर, उसे सुद ढ़ आधार दे सकती हैं अपनी लागतों में कमी होने से कम मूल्य पर अच्छा माल विक्रय पर अपनी ख्याति व विश्वसनीयता का निर्माण किया जा सकता है।

हानियां
(Disadvantages)

जहां इस प्रकार की वितरण व्यवस्था को अपनाये जाने के अनेक लाभ छोटी निर्यातक फर्मो को मिल सकते हैं, वहीं इस व्यवस्था के अनेक दोष भी हैं। प्रारम्भ में जब अस्तित्व के आगे ही प्रश्न-वाचक चिन्ह लग रहा हो तब तो बड़े जोश व आत्मीयता की भावना इस प्रकार की व्यवस्था का अवलम्बन कर लिया जाता है। स्थिति में सुधार होने पर व्यक्तिगत फर्म यही सोचना प्रारम्भ कर देती है कि उसका माल तो अन्यों से काफी अच्छा है, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रवीण व अनुभवी प्रबन्धक भी उसके पास हैं, अतः वह अलग व्यवसाय करे, तो अधिक लाभ कमा सकती है। यह विचार आते ही इस प्रकार की वितरण व्यवस्थायें नहीं चल पाती हैं।

(द) विशिष्टीकृत वितरण
(Specialised Distribution)

उपरोक्त तीनों प्रकार की वितरण व्यवस्थाओं में इस बात का वर्णन हैं कि एक निर्यातक फर्म किस प्रकार से विदेशी बाजारों में अपनी वस्तुओं का वितरण कर सकती है। वस्तुओं के निर्यात के अलावा भी आजकल अन्य कई सेवाओं का निर्यात होता है, जो उपरोक्तवर्णित तीनों वितरण व्यवस्थाओं के दायरें में नहीं आतीं।

विभिन्न वस्तुओं के निर्माण की तकनीक की जानकारी देने के लिए एक देश, दूसरे देश को तकनीकी जानकारी का निर्यात करता है। निर्माणी संस्थाओं व व्यापारिक संस्थाओं के कुशल प्रबन्ध के लिए प्रबन्धकीय योग्यता में दक्ष देश अपनी प्रबन्धकीय जानकारी का निर्यात करता है। आज विदेशी मुद्रा के अर्जन में इस प्रकार के निर्यातों का अपना विशेष स्थान हो गया है, विकसित देश विकासशील देशों को व सम द्ध विकासशील देश अपने से कम विकसित देशों को इस प्रकार की जानकारियां का निर्यात कर सकते हैं।

तकनीक व प्रबन्धकीय जानकारी का निर्यात करने पर उसके वितरण के लिए इस प्रकार की वाहिका नहीं चुनी जाती जैसी कि अन्य वस्तुओं के निर्यात में चुनी जाती हैं इनका निर्यातक देश अपने यहां से ऐसे व्यक्तियों को भेजता है, जिन्हें इन विषयों में विशिष्ट जानकारी होती हैं। ये व्यक्ति जिस देश को ऐसी जानकारी देनी हो, उस देश में जाते हैं। व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम की रचना कर उन्हें भली-भांति प्रशिक्षण देते हैं, प्रशिक्षण के उपरान्त सिखायी गई तकनीक का उन्हें व्यावहारिक उपयोग करना सिखाया जाता हैं इस प्रकार से पुनः प्रशिक्षण दिया जाता है। इस प्रकार से इन योग्यताओं का हस्तान्तरण किया जाता है।

वितरण की प्रक्रिया
(Process of Distribution)

वितरण की प्रक्रिया का आशय यह है कि उपरोक्त वर्णित वितरण की वाहिकाओं के द्वारा एक निर्यातक फर्म किस प्रकार से अपने उत्पादित उत्पाद या उत्पादों को निर्यात बाजार के क्रेताओं तक पहुंचती है। किस प्रकार निर्यातक फर्म अपने देश में उत्पादित सामान को विदेशी बाजार के अन्तिम उपभोक्ता या प्रयोक्ता तक पहुंचावें, इसी का अध्ययन हम वितरण की प्रक्रिया में करते हैं, यह इस प्रकार है—

अ. **प्रत्यक्ष वितरण में वितरण की प्रक्रियाएं**—इस प्रकार की वितरण व्यवस्था में एक निर्यातक फर्म अपने स्वयं के विक्रय संगठन का उपयोग कर माल को विदेशी बाजारों में स्वयं ही वितरित करती है। इसमें वह उपभोक्ताओं से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करती है। इसमें निर्यातक फर्म अपना एजेन्ट या वितरक विदेशी बाजार के लिए नियुक्त करती है, यह एजेन्ट या वितरक थोक व्यापारी को, थोक व्यापारी फुटकर व्यापारी को, व फुटकर व्यापारी अन्तिम उपभोक्ताओं को विक्रय करता है। इस प्रक्रिया का पालन उपभोक्ता माल के सम्बन्ध में किया जाता है। औद्योगिक माल के निर्यात के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि वितरण को वाहिका को छोटा करने का प्रयास किया जाता है। उत्पादक व उपभोक्ता के बीच सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। आवश्यकता होने पर वितरक की सेवाओं का भी बीच में उपयोग किया जा सकता है।

उपभोक्ता वस्तुओं के लिये वितरण व्यवस्था

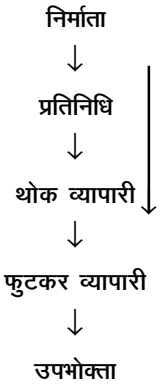

औद्योगिक वस्तुओं के लिये वितरण व्यवस्था

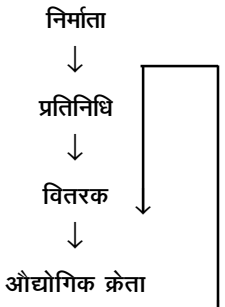

उपभोक्ता वस्तुओं के निर्माता प्रतिनिधि की नियुक्ति कर सकते हैं और यदि वह ऐसा नहीं करते है तो वह सीधे थोक व्यापारियों के माध्यम से उपभोक्ताओं तक पहुंच सकते हैं।

यदि औद्योगिक वस्तुओं, के क्रेताओं की संख्या सीमित है तो निर्माता उनके साथ सीधे सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। इसके विपरीत यदि क्रेताओं की संख्या अधिक है तो प्रतिनिधियों के माध्यम से क्रेता तक पहुंचा जा सकता है।

श्री आर. एल. वार्ष्णेय एवं बी. भटटाचार्य ने अपनी पुस्तक में प्रत्यक्ष निर्यात को इस प्रकार दिखलाया है—

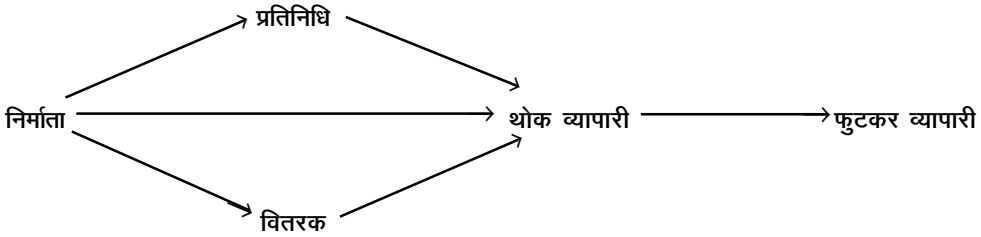

ब. **अप्रत्यक्ष वितरण** (Indirect Distribution)—इस प्रकार की वितरण व्यवस्था में उत्पाक या निर्यातक फर्म अपनी वितरण वाहिका का प्रयोग नहीं करती वरन, इसके लिए, मध्यस्थों की सेवाओं का उपयोग करती है। इस प्रकार की वितरण व्यवस्था पर निर्यातक फर्म का किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता है। मध्यस्थ निर्यातक फर्म से माल या, वस्तुएं प्राप्त कर, विदेशी बाजार में कार्यरत थोक व्यापारियों व थोक व्यापारी फुटकर व्यापारी को, फुटकर व्यापारी, अन्तिम उपभोक्ताओं को विक्रय करते हैं। अप्रत्यक्ष वितरण में मध्यस्थ जिन्हें निर्यातक फर्म माल बेचती हैं, सामान्यतया निर्यात ग ह (Export House) या क्रय संस्थाएं (Buying organisation) होती है।

इस प्रकार की वितरण व्यवस्था में निम्नलिखित प्रकार की वितरण प्रक्रिया अपनायी जाती है—

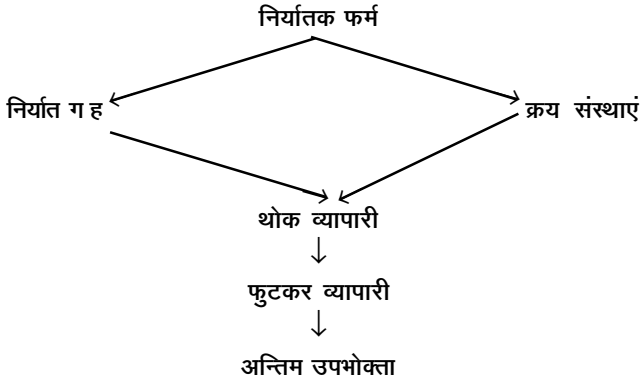

व्यवहार के अन्तर्गत निर्यातक फर्म अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की परिस्थितियों तथा अपनी आथ्रिक स्थिति को ध्यान में रखकर अलग-अलग चरणों में भिन्न-भिन्न वितरण माध्यम अपनाती है। सुविधा की द ष्टि से इसके अध्ययन निम्न चार्ट के द्वारा किया जा सकता है।

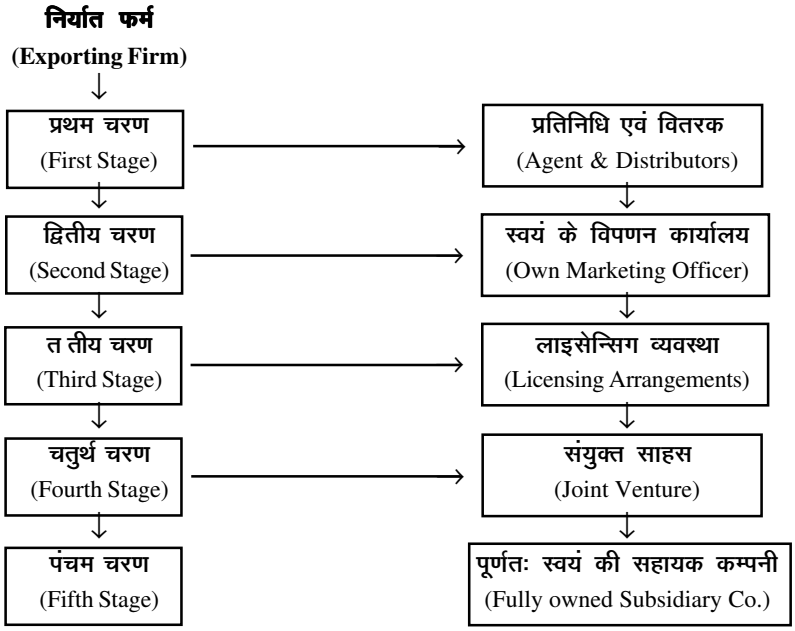

प्रारम्भ में निर्यातक फर्म प्रतिनिधि एवं वितरकों के माध्यम से विदेशी बाजार में अपना कारोबार चलाती है। बाजार पर पकड़ स्थापित होने के बाद वह विदेशी बाजारों में अपने कार्यलय खोलकर उनकी सहायता से निर्यात लक्ष्य प्राप्त करने के प्रयास करती है। निर्यात व्यापार में व द्धि तथा बाजार के विस्तार के साथ-साथ स्थानीय व्यापारियों को लाईसेन्स देकर व उनके साथा संयुक्त साहस के आधार पर विदेशी व्यापार को बढ़ाया जा सकता है। अन्त में विदेशों में अपनी सहायक कम्पनियों की सहायता से विदेशी बाजार पर कब्जा किया जा सकता है। अमरीका की बहुत सी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपनी सहायक कम्पनियों की सहायता से भारत के बाजार में अपने प्रभाव को स्थापित करने में सफल हो रही है।

स. **सहकारी वितरण की प्रक्रिया** (Co-opreative Distribution Process)—सहकारी वितरण की प्रक्रिया में सहकारी संस्था निर्यात बाजारों में प्रचलित वितरण व्यवस्था को अपना लेती है, जो उन बाजारों के अनुरूप व स्वयं की क्षमता पर आधारित हो।

इस प्रकार स्पष्ट है कि निर्यात विपणन में वितरण वाहिका अपना विशेष स्थान रखती है। वाहिका इस प्रकार की हो, जो ग्राहक सन्तुष्टि में अभिव द्धि कर सके, वितरण लागतों को नियन्त्रण में रख सके, निर्यातक फर्म को कुशलतापूर्वक निर्यात वितरण के लिए प्रोत्साहित कर सके। साथ ही संस्था व बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप हो।

अध्याय-11
अन्तर्राष्ट्रीय विपणन–प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्यापार
(International Marketing—Direct and Indirect Trading)

निर्माता तथा निर्यातक के पास विदेशी व्यापार के सन्दर्भ में दो विकल्प हमेशा खुले रहते हैं। उसे यह निर्णय करना होता है, कि वह प्रत्यक्ष व्यापार का रास्ता चुनेगा या अप्रत्यक्ष व्यापार का इस अध्याय में हम दोनों का विस्त त अध्ययन करेगें।

प्रत्यक्ष व्यापार
(Direct Trading)

निर्यातक जब विदेशी बाजार में क्रेताओं के साथ स्वयं सीधे सम्बन्ध स्थापित करने का निर्णय लेता है तो इसे हम प्रत्यक्ष निर्यात व्यापार कहते हैं। इसमें किसी प्रकार के मध्यस्थ की सेवाओं का उपयोग नहीं किया जाता है।

एक निर्यातक के पास प्रत्यक्ष व्यापार के अन्तर्गत निम्नलिखित माध्यम उपलब्ध होते हैं। वह इनमें से किसी एक को अपना सकता है–

1. एकमात्र प्रतिनिधि (Exculsive Agent)

Or

2. वितरक (Distributors)

Or

3. विदेशी कमीशन ग ह (Foreign Commission House)

Or

4. विदेशी दलाल (Foreign Broker)

Or

5. निर्यात विक्रयकर्त्ता (Export Salesmen)

Or

6. फुटकर मध्यस्थ (Retail Outlets)

Or

7. विशेष अधिकार धारक
(Franchise Holders)

Or

8. विदेशी शाखाएं
(Foreign Branches)

I. एकमात्र प्रतिनिधि
(Exclusive Agent)

विदेशी व्यापार में इस विधि का व्यापक उपयोग किया जाता है। एकमात्र प्रतिनिधि निर्यातक द्वारा नियुक्त वह प्रतिनिधि है, जो एक निश्चित बाजार क्षेत्र में विक्रय करने हेतु नियुक्त किया जाता है। ऐसा प्रतिनिधि सामान्यतया एक व्यक्ति ही होता है, पर कभी-कभी साझेदारी फर्म, कम्पनी भी एकमात्र प्रतिनिधि हो सकती है। ऐसी प्रतिनिधि में आपस में प्रतियोगिता नहीं होती। इसके विक्रय का क्षेत्र काफी विस्त त होता है, वह कुलशतापूर्वक प्रबन्ध करने के लिए अपने उप-एजेन्टों की नियुक्ति करता हैं।

एकमात्र प्रतिनिधि उस विक्रय क्षेत्र के थोक व्यापारियों फुटकर व्यापारियों, उपभोक्ताओं आदि से आदेश प्राप्त करता है। इन आदेशों को वह अपने नियोक्ता को भेज देता है। ऐसे आदेशों का पुष्टिकरण कर निर्यातक सीधे ही विदेशी बाजार के क्रेता को माल का लदान करा देता है। इससे स्पष्ट है कि उसकी भूमिका केवल आदेश प्राप्त करने व नियोक्ता तक भेजने तक ही सीमित है, वह अपने नाम में व्यवसाय नहीं कर सकता। क्रेताओं की आर्थिक सूचनाओं को वह अपने नियोक्ता को प्रेषित कर देता है, इसके अलावा उसका निर्यातक व क्रेता के वित्तीय सम्बन्धों का दायित्व नहीं होता है। यदि उसने क्रेता के वित्तीय व्यवहार की प्रत्याभूति ली है, तब तो वह ऐसे स्वयं ऐसे व्यवहारों के लिए उत्तरदायी होगा।

ऐसा प्रतिनिधि निर्यातक के साथ यह अनुबन्ध कर लेता है, कि उस विक्रय क्षेत्र में जिनके साथ उसका निर्यातक से समझौता हुआ है, समस्त माल उसी के द्वारा बेचा जावेगा। ऐसे ऐजेन्टों को उसके प्रयत्नों के लिए कमीशन के आधार पर मौद्रिक भुगतान दिया जाता है। कमीशन की दरों में भिन्नता होती हैं कमीशन, एजेन्ट द्वारा प्रदान की जा रही सेवाओं, माल की प्रकृति, विदेशी बाजारों में मांग की स्थिति स्थानीय रीति-रिवाजों व परम्पराओं के आधार पर तय किया जावेगा। कमीशन का भुगतान रोकड़ में या वस्तुओं के रूप में या ऐसे किसी भी स्वरूप में किया आ सकता है, जिस पर निर्यातक व एजेन्ट सहमत हों।

लाभ
(Advantages)

'प्रेट' के अनुसार यह विधि सरलतम, सबसे कम खर्चीली व निर्यात बाजारों के विकास में सक्षम है, इस विधि में निर्माता स्वयं के द्वारा निर्धारित मूल्यों पर वस्तुओं का विक्रय कर सकता है। निर्माता की विपणन लागत भी इसमें कम पड़ती है, क्योंकि आदेश प्राप्त करने के लिए स्वयं के विक्रयकर्ताओं को उसे विदेशी बाजारों में नियुक्त नहीं करना पड़ता। विभिन्न आदेशों के माल के साथ भेजने पर परिवहन लागत भी कम हो जाती है। विज्ञापन में वस्तुओं के गुणों व मूल्यों को प्रचारित किया जा सकता है। विक्रयोपरान्त सेवाएं भी इसके द्वारा ग्राहकों को अच्छी प्रकार से उपलब्ध करायी जा सकती है। विक्रेता भी वस्तुओं का बेचने का अधिक प्रयास करता है।

हानियां
(Disadvantages)

जहां इस प्रकार की व्यापार विधि के अनेक लाभ हैं, वही इसमें काफी हानियां भी हैं, एक स्थान पर ऐसा विक्रय प्रतिनिधि नियुक्त हो जाने पर उस देश या उसके किसी मांग में दूसरा प्रतिनिधि नियुक्त नहीं किया जा सकता। इससे ग्राहकों को सुविधा के अनुसार क्रय बिन्दु नहीं बनाये जा सकते, एक बार ऐसा प्रतिनिधि नियुक्त हो जाने पर उसे आसानी से नहीं हटाया जा सकता। एकमात्र प्रतिनिधि यदि अपनी प्रतिष्ठा को बिगाड़ लेता है, तो उसका विपरीत प्रभाव निर्यातक की बिक्री पर भी

पड़ता है। निर्यात बाजारों में सभी के लिए इस प्रकार के एजेन्ट उपलब्ध भी नहीं हो पाते। निर्यातक को विदेशी बाजारों के क्रेताओं को आकर्षित करने लिए भारी व्यय विज्ञापन कार्यक्रम पर करना पड़ता है। संवर्द्धनात्मक लागतों में प्रतिनिधि हिस्सा नहीं बंटाता।

उपयुक्तता
(Suitability)

इस प्रकार के व्यापार की विधि ऐसे उत्पादों के लिए काफी उपयोगी है, जो औद्योगिक उत्पाद है, जिनकी प्रति इकाई लागत काफी ऊंची है, उत्पाद में तकनीकी जटिलता है, जिसे खरीदते समय प्रयोक्ता सभी प्रकार से सन्तुष्ट होना चाहता है। ऐसी व्यापार प्रणाली महंगे सौन्दर्य प्रसाधन वस्तुओं, ऊंचे मूल्य की पुस्तकों के विदेशी बाजारों में विक्रय कर लेने के लिए उपयोगी हो सकती है।

II. वितरक
(Distributors)

जिस प्रकार एकमात्र प्रतिनिधि को निश्चित विक्रय क्षेत्र में निर्माता के प्रतिनिधि के रूप में विक्रय का कार्य सौंपा जाता है उसी प्रकार वितरक को भी निर्यात बाजार के किसी निश्चित भाग में निर्यातक के प्रतिनिधि के रूप में विक्रय कार्य करने को नियुक्त किया जाता है। यही तक दोनों में समानता है, दोनों में काफी भिन्नता है। वितरक अपने नाम में निर्माता से माल का क्रय करता है, व अपने नाम से ही उसका विक्रय करता है। सम्भावित बिक्री की मात्रा का आंकलन कर वह उसी हिसाब से निर्यातक से माल मंगवाता हैं, अपने गोदामों में उनका संग्रह करता हैं। वितरक स्वयं के प्रदर्शन ग्रह में माल को प्रदर्शित करता है, उसका विक्रय करता हैं। आवश्यक हो तो क्रेता को उत्पाद का प्रदर्शन करके भी बताता है। जिन उत्पादों को विक्रय के पश्चात सेवा की आवश्यकता होती है, जैसा कि औद्योगिक उत्पादों के सम्बन्ध में होता है, उन उत्पादों के सेवा केन्द्रों की स्थापना करता है।

वस्तुओं के निर्यात बाजारों में मूल्य निर्धारित करने में जहां एकमात्र प्रतिनिधि को स्वतन्त्रता नहीं होती, वही वितरक को इस बारे में स्वतन्त्रता होती हैं, वितरक निर्यातक से वस्तुओं को क्रय कर अपनी शर्तो व दशाओं पर माल का विक्रय करता है। यद्यपि ऐसा करते समय वह कुछ सीमाओं को अवश्य ध्यान में रखता है। वैसे मूल्यों के निर्धारण में हालांकि उसे स्वतन्त्रता प्रतीत होती हैं, पर वास्वत में ऐसा नहीं होता यदि वितरक मूल्य, काफी ऊंचे मूल्य निर्धारित करता है, तो इससे उस वस्तु की मांग में काफी गिरावट आती है। मांग में गिरावट आते ही निर्यातक आपत्ति करता है, व उसे उचित मूल्य निर्धारित होते हैं, मूल्य नीचे निर्धारित करते ही वितरण के लाभ कम हो जाते हैं, अतः बाजारों में लाभप्रद विक्रय के लिए वह पुनः ऊंचे मूल्य निर्धारित करता है। निर्यातक वितरक को इस प्रकार स्वतन्त्रता भी देता है।

उपरोक्त स्वतन्त्रता के साथ ही वह वितरक के ऊपर प्रभावी नियन्त्रण भी रखता है। वह कीमतों, ग्राहक सेवाओं के अपेक्षित स्तर, विक्रयोपरान्त सेवाओं के स्वरूप के बारे में निर्देश देता हैं। वितरक को विज्ञापन कैसा करना चाहिए, विज्ञापन के सन्देश में किस बात पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए, विज्ञापनों के कौन से माध्यमों का उसे उपयोग करना चाहिए, इसके सम्बन्ध में भी वह मार्गदर्शन करता है। विक्रय संवर्द्धन की क्रियाओं का संचालन किस प्रकार किया जावे जिससे बाजारों में सफलता प्राप्त की जा सके, इसके बारे में भी उचित दिशा निर्देश एक निर्यातक अपने वितरक को देता है।

विक्रय क्षेत्रों में बेचे गये माल की राशि पर वितरक को कमीशन नहीं मिलता है। वह तो एक व्यापारी के रूप में कार्य करता है। उसका लाभ तो जिस प्रकार अन्य व्यापारी लाभ निकालते हैं, उसी प्रकार निर्धारित होता है। विक्रय से प्राप्त कुल राशि में से माल को निर्यातक से क्रय करने में व्यय व अन्य सभी व्ययों को घटाकर उसके लाभ की राशि निकाली जाती है।

लाभ
(Advantages)

इस प्रकार की विधि को अपनाने के कई लाभ निर्यातक प्राप्त कर सकता है। वितरक निर्यात विपणन में इस माध्यम से प्रभावकारी भूमिका का निर्वाह करता है। केवल आदेश प्राप्त करने तक ही उसके प्रयत्न सीमित नहीं होते। वह माल को निर्माता से क्रय करता है। इसका सबसे बड़ा लाभ निर्यातक का जोखिम के हस्तान्तरण का होता है। खरीदने के बाद वितरक का माल, बिके, या नहीं, उसकी जोखिम नहीं होती, इससे पूंजीगत साधनों का प्रवाह बना रहता है, निर्यातक निर्यात विपणन

की समस्याओं से मुक्त हो जाता है। विक्रय केन्द्र से लेकर सेवा केन्द्रों तक की सारी व्यवस्था वितरक करता है। यद्यपि निर्यातक कुछ सीमा तक वितरक को मूल्य निर्धारण आदि में स्वतन्त्रता देता है। यद्यपि उसका प्रभावी नियन्त्रण पर उस पर बना रहता है। विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, ग्राहक सेवायें, विक्रयोपरान्त सेवाओं के बारे में वह निर्देश देने का अधिकार रखता है। इससे उसका निर्यात विपणन पर प्रभावी नियन्त्रण बना रहता है।

हानियां
(Disadvantages)

व्यापार की इस विधि से जहां उपरोक्त लाभ प्राप्त किये जा सकते है, वहीं इस विधि की हानियां भी हैं। जितना नियन्त्रण एकमात्र प्रतिनिधि पर निर्यातक रख सकता है, उतना नियन्त्रण इसमें सम्भव नहीं हो इसमें वितरक को कुछ स्वतन्त्रता देनी होती है। इससे एक समस्या नीतियों में एकरूपता के अभाव की भी उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। यदि एक निर्यातक ने निर्यात विपणन हेतु एक देश को लक्ष्य बाजार मानकर अनेक वितरकों की भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए नियुक्ति की गई है, तो उनके द्वारा भिन्न-भिन्न विक्रय मूल्य निर्धारित करने से एक विसंगति उत्पन्न हो जावेगी। कीमतों में इस प्रकार की एकरूपता का अभाव ग्राहक में व्यापक असन्तोष का निर्माण कर सकता है। ग्राहक सेवा विक्रयोपरान्त सेवाओं के स्तर में भिन्नता होने पर भी निर्यातक की संमस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। इन समस्याओं को निर्यातक सभी के लिए सामान्य विषयों पर एकरूप नीति बनाकर कुछ सीमा तक हल कर सकता है, इस नीति की अनुपालना सभी वितरकों के लिए आवश्यक कर सकता है। इससे ग्राहक सेवा का एक न्यूनतम स्तर पर प्राप्त किया जा सकेगा।

उपयुक्तता
(Suitability)

इस प्रकार के व्यापार की विधि ऐसे उत्पादों के लिए उपयुक्त हो सकती है, जिन्हें विक्रय के पूर्व प्रदर्शन की आवश्यकता पड़ती है। सामान्यतया ऐसे उत्पाद औद्योगिक उत्पाद की श्रेणी में आते हैं। इन उत्पादों में रेडियों, कपड़े धोने की मशीनों, टेलीविजन, रेफ्रीजरेटर कार, मोटर-गाड़ियों, स्कूटर, मोटर साइकिलों आदि के निर्यात बाजारों में विक्रय करने के लिए निर्यातकर्ता अपना सकते हैं। निर्यातक संस्था में इसको अपनाने के लिए वितरक को कुछ स्वतन्त्रता देने की भावना होना आवश्यक है।

III. विदेशी कमीशन ग ह
(Foreign Commission House)

प्रत्यक्ष व्यापार करने की विधियों में विदेशी कमीशन ग हों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। निर्यात बाजारों में स्थित ये कमीशन ग ह विभिन्न निर्यातकों का माल उन बाजारों में विक्रय करते हैं। ये ग ह अपने नाम में वस्तुओं को क्रय नहीं करते, सम्भावित बिक्री की मात्रा के आधार पर ये ग ह निर्यातक से माल मंगवा लेते हैं। उसके पश्चात अपने विक्रय केन्द्रों व विक्रयकर्ताओं के माध्यम से उस माल का निर्यात बाजार में विक्रय करने हेतु प्रयास करते है, विज्ञापन का अधिकांश भाग निर्यातक को ही वहन करना पड़ता है। वास्तव में ये ग ह निर्यातक के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते है, विक्रय मूल्य एवं विक्रय की शर्तो के निर्धारण में इनको स्वतन्त्रता नहीं होती। निर्यातक जो विक्रय मूल्य एवं विक्रय शर्त निर्धारित कर दे उन्हीं शर्तो व दशाओं पर इन कमीशन ग हों को माल बेचना होता है।

विक्रय करने के प्रतिफल के रूप में इन कमीशन ग हों को विक्रय की राशि पर निश्चित प्रतिशत पर कमीशन प्राप्त होता है। कमीशन का भुगतान समझौते में तय स्वरूप व विधि के अनुसार करने के लिए निर्यातक बाध्य होता है। ये कमीशन ग ह अनेक प्रकार की वस्तुओं में व्यवहार करते हैं। आपस में ऐसे निर्यातक, जो एक दूसरे के प्रतियोगी है, उनका माल भी यह कमीशन ग ह रखते हैं।

लाभ
(Advantages)

विदेशों में इस प्रकार के कमीशन ग ह काफी लोकप्रिय व प्रतिष्ठा वाले होते हैं, इसकास अच्छा लाभ एक निर्यातक उठा सकता है। निर्यातक के अनेक प्रकार के व्ययों में भी बचत हो जाती है, व निर्यातक प्रभावी रूप से निर्यात बाजारों में विपणन पर रख सकता है।

हानियां
(Disadvantages)

इस व्यवस्था को अपनाने के जहां उपरोक्त लाभ है, वहां इसकी हानियां भी है, ये कमीशन ग ह प्रतियोगी फर्मो के माल को विक्रय करने के स्वतन्त्र होते हैं। इससे ये किसी भी एक निर्यातक के माल को विक्रय करने का प्रयास नहीं करते हैं। इससे निर्यातक फर्म के निर्यातों में आमूलचूल व द्धि नहीं होती। भारी जोखिम निर्यातक को ही बनी रहती हैं, क्योंकि ये तो माल मंगवा कर अपने विक्रय केन्द्रों में जमा देती है, और नहीं बिके तो शिपमेन्ट निर्यातक को वापस करा देती है।

उपयुक्तता
(Suitability)

हालांकि इस प्रकार के व्यापार की विधि की हानियां हैं, ये हानियां इसकी उपयोगिता को कम नहीं करतीं। यह विधि छोटे निर्यातकों के लिए काफी उपयोगी हैं, जो कम मूल्य के ऐसे उत्पाद जिन्हें प्रदर्शन की विक्रय के समय आवश्यकता नहीं पड़े, अपना सकती है।

IV. विदेशी दलाल
(Foreign Broker)

ये दलाल भी उसी प्रकार कार्य करते हैं, जिस प्रकार से अन्य दलाल कार्य करते हैं, दलाल वह व्यक्ति होता है, जो विक्रेता और क्रेता को मिला देता है, वह उन दोनों के बीच सेतु का कार्य करता है, उसी प्रकार से निर्यात विपणन में विदेशी दलालों की सेवाएं भी काफी उपयोगी होती है। ये विदेशी दलाल मुख्य रूप से खाद्यान्नों आदि में व्यवहार करते हैं। वह निर्यातक के माल को निर्यातकक बाजारों में मान्यता प्राप्त स्कन्ध विपणियों के द्वारा या खुली नीलामी से बेचते हैं। जो विक्रय मूल्य निर्यातक ने तय कर रखा है, वह विक्रय की जो शर्ते व दशाएं निर्यातक ने तय की हैं, उसी के आधार पर विदेशी दलाल वस्तुओं का विक्रय निर्यातक बाजारों में करता है। उसे अपनी सेवाओं के बदले में निश्चित प्रतिशत से कमीशन विक्रय मूल्य पर मिलता है। कमीशन की दर बाजार की दशाओं व वस्तसुओं की प्रकृति पर निर्भर करती है।

लाभ
(Advantages)

इस विधि से अनेक लाभ उठाये जा सकते हैं, निर्यातक अपने द्वारा निर्धारित शर्तो व दशाओं पर विक्रय का कार्य कर सकता है। इन दलालों का निर्य्रात बाजार की प्रकृति व विशेषताओं की बारीकी से जानकारी होती है, इसलिए इनको विक्रय करने में सहायता रहती है। प्रतिष्ठित दलालों की सेवाआं का उपयोग किया जा सकता है। ग्राहक को पटाने व सौदा बनाने में माहिर होते है, इससे बिक्री शीघ्र हो जाती हैं।

हानियां
(Disadvantages)

जहां इस विधि में उपरोक्त लाभ है, वहीं दोष भी हैं। दलाल निर्यातक से वह न्यूनतम मूल्य ले लेते हैं, जिस पर वह निर्यात करने को तैयार है। दलाल क्रेता को निर्यातक का मूल्य तो बताते नहीं हैं, इससे यदि कभी क्रेता निर्यातक द्वारा तय मूल्य से अधिक मूल्य की दलाल को देते हैं तो उसे वे डकार जाते हैं। इसके साथ ही दलाल निर्यातक के साथ जोखिम में भी हिस्सा नहीं बनातें।

उपयुक्तता
(Suitability)

उपरोक्त दोषों के उपरान्त भी इस विधि के कई ऐसे उत्पाद हैं, जिनके विक्रय के लिए निर्यातकों द्वारा यह विधि व्यापक रूप से उपयेाग में लाई जाती हैं। इन वस्तुओं में खाद्यान्नों कपास व कच्चे माल को शामिल किया जा सकता हैं, जिनसे अनके प्रकार के उपभोक्ता व औद्योगिक वस्तुओं का निर्माण होता है।

V. निर्माता विक्रयकर्ता
(Export Salesmen)

निर्यात विपणन में निर्यात विक्रयकर्ता एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। वे विदेशी बाजारों में निर्यातक फर्म की ओर से प्रतिनिधित्व करते हैं। विक्रयकर्ताओं को निर्माता द्वारा नियुक्त ऐसे व्यक्ति कहा जा सकता है, जो बाजार में उसकी ओर से वस्तुओं का विक्रय करते हैं, इनको उनकी सेवाओं के प्रतिफल में विक्रय पर कमीशन या निश्चित वेतन दिया जाता है। जिस प्रकार फर्म विक्रयकर्ताओं का देशी विपणन के लिए चयन करते समय, जिन बातों का ध्यान रखती है, उसके अलावा भी कुछ अन्य बाते ऐसी हैं, जिनका निर्यात विक्रयकर्ताओं के चयन के समय ध्यान रखना चाहिए। सामान्य गुणों के अतिरिक्त उसमें उच्च स्तर आदि गुणों पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए, निर्यात विपणन के लिए अपेक्षित विक्रयकर्ताओं का वर्गीकरण दो भागों में किया जा सकता है–

(अ) भ्रमणशील निर्यात विक्रयकर्ता
(Travelling Export Salesmen)

भ्रमणशील निर्यात विक्रयकर्ता वे विक्रयकर्ता हैं, जिन्हें निर्यात बाजार का कुछ निश्चित क्षेत्र आंबटित कर दिया जाता है, वे उस विक्रय क्षेत्र में यात्रा करते हैं, वे निर्यातक संस्था के उत्पादों को उस क्षेत्र में विक्रय करते हैं। निर्यातक को ऐसे विक्रयकर्ताओं के चयन में एक विशेष सावधानी यह रखनी चाहिए कि वह जलवायु के होने वाले परिवर्तनों को सह सके। उसमें ऐसी शारीरिक क्षमता नितान्त आवश्यक है, जिससे वह जलवायु व वातावरण सम्बन्धी परिवर्तनों से अप्रभावित रहकर कार्य कर सके। उसका नैतिक रूप से सुद ढ़ होना, आत्मविश्वास की भावना, व स्थानीय बाजार दशाओं, उपभोक्ताओं के मनोविज्ञान को समझने की क्षमता होनी चाहिए, उसमें स्वयं में परिवार से दूर रहने की क्षमता कितनी है, व उसका जीवन साथी भी क्या इसके लिए तैयार है, इसका भी ध्यान रखना चाहिए।

भ्रमणशील निर्यात विक्रयकर्ताओं के कुशल प्रबन्ध के लिए ध्यान रखने योग्य बातें
(Factors which should be taken into consideration for efficient Management of Travelling Export Salesmen)

वर्तमान परिस्थितियों में निर्यात बाजारों में माल बेच सकना बड़ा ही चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस चुनौतीपूर्ण कार्य को सम्पन्न करने वाला निर्यात विक्रयकर्ता प्रभावी रूप से अपना कार्य कर सके इसक लिए आवश्यक है कि निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना वांछनीय होगा–

1. **उपयुक्त विक्रयकर्ता का चुनाव**–यदि चयन ही गलत विक्रयकर्ता का हो गया, तो उन्हें ठीक नहीं किया जा सकता। ऐसे लोग संस्था के लिए भार सिद्ध हो सकते हैं। इसके लिए यह आवश्यक हैं, कि चयन के समय यह विशेष ध्यान रखा जावे कि निर्यात विपणन के लिए उसमें कितनी अपेक्षित योग्यता है, व उसका कितना विकास किया जा सकता है, विपरीत जलवायु में भी प्रभाव रूप से कार्य करने की क्षमता का, विक्रयकर्ताओं का चयन करते समय अन्य बातों के साथ, अधिक ध्यान दिया जावें।
2. **विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण**–चयन के पश्चात इन विक्रयकर्ताओं को व्यापक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इसमें उत्पाद, विदेशी बाजार के ग्राहकों, उनके मनोविज्ञान, आदतें, रीति-रिवाज व परम्पराएं, भाषा आदि के बारे में पूरा प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। विदेशी क्रेताओं में विभिन्न वर्गो के साथ उनकी विक्रय प्रविधि क्या है, इसकी जानकारी भी उन्हें दी जानी चाहिए।
3. **विक्रय क्षेत्र का चयन**–प्रशिक्षण के पश्चात उसकी इच्छा, क्षमता व योग्यता के आधार पर उसे निश्चित विक्रय क्षेत्र दिया जाता हैं। ऐसा करते समय उस क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं व विक्रयकर्ता की योग्यताओं का उचित मूल्यांकन कर, सही व्यक्ति को सही स्थान पर लगाया जाना चाहिए।
4. **विक्रयकर्ता को उपकरणों से सुसज्जित करना**–विक्रय क्षेत्र के आंबटन के पश्चात् विक्रयकर्ता को विभिन्न प्रकार के उपकरणों से सुसज्जित करना आवश्यक होता है। एक भ्रमणकारी विक्रयकर्ता को निम्नलिखित उपकरणों से युक्त करना चाहिए–

i. **नक्शे व निर्देशिका**—उसे उस विक्रय क्षेत्र के नक्शे प्रदान किए जाने चाहिए, जिससे वह अपने विक्रय क्षेत्र को जान सके। उस विक्रय क्षेत्र में रेल, सड़क व वायु परिवहन किन-किन स्थानों से उपलब्ध हैं। विभिन्न शहर इन परिवहन साधनों से आपस में किस प्रकार जुड़े हुए हैं, इसकी जानकारी इन नक्शों में होनी चाहिए। इसके साथ ही एक निर्देशिका उसे प्रदान की जानी चाहिए, जिसमें इस बात का वर्णन हो कि विभिन्न स्थानों पर किस मौसम व समय पर जाना उपयुक्त रहेगा।

ii. **टीके एवं दवाइयां**—इसके बाद बीमारियों की जोखिम को कम करने के लिए यह आवश्यक है, कि विक्रयकर्ता को विभिन्न प्रकार टीके लगावे जावें। इसमें चेचक, टाइफाइड आदि के बेक्सीन शामिल किये जा सकते हैं। इससे उसकी प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जावेगी। इसके साथ ही उसे सामान्य बीमारियों के लक्षण जिसमें उत्पन्न होते ही उसके तुरन्त उपचार के लिए मेडिसिन किट प्रदान की जानी चाहिए, जिसमें इनके उपचार की औषधियां हों।

iii. **परिचय पत्र**—यदि भ्रमणशील विक्रयकर्ता पहली बार अपने विक्रय क्षेत्र में जा रहा है, तो उसे असुविधा से बचाने हेतु यह उपयुक्त होगा कि निर्यातक फर्म उन स्थानों पर अपने परिचित व्यक्तियों व संस्था के नाम उसका परिचय-पत्र लिख दे।

इसके साथ ही उसका स्वयं का परिचय-पत्र जो उसके बारे में यह जानकारी देता हो कि वह अमुक निर्यातक कम्पनी का विक्रयकर्ता है, होना आवश्यक है। विदेशी क्रेता सौदा करने से पूर्व ऐसे परिचय पत्रों की मांग कर सकते हैं जिससे वह यह सुनिश्चित कर सके कि वह उपयुक्त व्यक्ति है। भ्रमणशील विक्रयकर्ता को पावर ऑफ आटोर्नी भी दी जानी चाहिए, जिससे वह निर्यातक फर्म की ओर से किये जाने वाले अनुबंधों पर हस्ताक्षर करने की वैधानिक पात्रता रखता हो।

iv. **कोष**—विक्रयकर्ता को अपने विक्रय क्षेत्र में प्रवास करने में यात्रा व्यय, व अन्य कई प्रकार के व्यय करने होते हैं। इसके लिए दो प्रकार की व्यवस्था करनी चाहिए। प्रथम ट्रेवलर्स चैक व द्वितीय साख पत्र जिससे उसे किसी भी स्थिति में कठिनाई न हो। उसे पर्याप्त पैसा दिया जाना आवश्यक है। हो सकता है, किसी अवसर विशेष को झपटने के लिए उसे ट्रेन के बजाय प्लेन से यात्रा करनी पड़े।

v. **अन्य**—इन सब के अतिरिक्त उसे विक्रय हेतु सेम्पल, केटेलांग व पूरा विक्रय साहित्य दिया जाना चाहिए उसे सभी प्रकार के कपड़े जो विभिन्न मौसमों में उपयुक्त हो, लेने चाहिए यदि उसके विक्रय क्षेत्र में वर्ष भर भिन्न-भिन्न प्रकार का मौसा रहता है।

इस प्रकार उसे उपरोक्त सभी उपकरणों से सुसज्जित करना आवश्यकक है, तभी वह अपना प्रभावी कार्य निष्पादन कर सकेगा।

5. **यात्रा कार्यक्रम की रचना व क्रियान्वन**—उपरोक्त वर्णित सभी बातें की पूर्ति हो जाने के पश्चात उसके कार्यक्रम की रूपरेखा बनानी चाहिए। इसे बनाने का अवसर विक्रयकर्ता को दिया जाना चाहिए निर्यात प्रबन्धक को यदि आवश्यकता हो तो इसमें परिवर्तन कर देना चाहिए। उसके बाद विक्रयकर्ता को उसके आधार पर अपना यात्रा कार्यक्रम क्रियान्वित करना चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो इसमें परिवर्तन भी किया जा सकता है।

6. **निर्यात विक्रयकर्ताओं के रिकार्ड**—इसके साथ ही इस प्रकार की व्यवस्था की जानी चाहिए जिसमें एक निश्चित समय का विवरण भरना विक्रयकर्ताओं के लिए आवश्यक हो। इसमें उनके द्वारा कितने ग्राहकों तक, किन-किन स्थानों में पहुंच की गयी कितने आदेश प्राप्त हुए, ग्राहकों के विचार उनकी शिकायतें, उसका स्वयं का अनुभव निश्चित समय में उसके द्वारा किये गये विभिन्न व्ययों का पूरा ब्यौरा भेजना आवश्यक होना चाहिए।

7. **विक्रयकर्ताओं को प्रेरणात्मक पारिश्रमिक**—निर्यात विक्रयकर्ताओं को उचित पारिश्रमिक भी दिया जाना अति आवश्यक है। यह पारिश्रमिक निश्चित वेतन के आधार पर या बिक्री के प्रतिशत के रूप में दिया जा सकता है। अधिकांश कम्पनियां अपने निर्यात विक्रयकर्ताओं को निश्चित वेतन के आधार पर परिश्रमिक देती हैं। इसके साथ ही अतिरिक्त प्रयासों के लिए प्रेरणात्मक वेतन भी दिया जाना चाहिए। यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए, कि प्रतियोगी फर्में अपने विक्रयकर्ताओं को किस आधार पर पारिश्रमिक दे रही है।

8. **कार्य मूल्यांकन**–विक्रयकर्ता को दिए गए विक्रय लक्ष्यों की तुलना वास्तविक कार्य निष्पादन से की जानी चाहिए व विचलनों का पता लगाया जाना चाहिए, इसके लिए उपलब्ध रेकार्ड की सहायता ली जा सकती है। मूल्यांकन के पश्चात इस प्रकार के कदम उठाये जाने चाहिए जिससे भविष्य में वह ओर प्रभावी रूप से कार्य कर सके। विक्रयकर्ताओं के व्ययों को भी एक उचित सीमा से भी अधिक होने पर रोकने के कदम उठाये जाने चाहिए, जिससे लाभप्रद विक्रय परिणाम का लक्ष्य किया जा सके।

(ब) स्थायी-निवासी विक्रयकर्ता
(Resident Salesman)

जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, इस प्रकार के विक्रयकर्ता को निश्चित विक्रय क्षेत्र में भ्रमण नहीं करना होता है। यह विक्रयकर्ता केवल निश्चित स्थान पर स्थायी रूप से रहता है। इस प्रकार के विक्रयकर्ता के चयन में भ्रमणकारी विक्रयकर्ताओं की अपेक्षा कम कठिनाई होती है, एक स्थान पर रहने से जलवायु की अपेक्षित विषमताओं से इनकी रक्षा हो जाती है।

ऐसे विक्रयकर्ता का मुख्य कार्य एक निश्चिता विक्रय क्षेत्र में बाजारों का विकास करना है। इस कार्य के लिए वह बाजार की गतिविधियों पर सतत् रूप से पैनी निगाह रखता है। भ्रमणशील विक्रयकर्ताओं के साथ उत्तम स्तर का सामंजस्य रखता है, उनकी गतिविधियों को सहयोगपूर्ण ढ़ंग से संचालित करता है, बिक्री में व द्धि करने के लिए क्या-क्या किया जा सकता है, इस पर वह विचार करता है। आर्थिक स्थिति, प्रतियोगी, गतिविधियों, उपभोक्ताओं की रूचियों, व्यवहारों में होने वाले परिवर्तनों का बाजार की मांग पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इसका वहा विशलेषण करता है, इसके आधार पर एक ऐसे समयव द्ध विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रम की रचना वह करता है, जो विक्रय में व द्धि कर सके। ऐसे कार्यक्रम की योजना बनाकर परीक्षण के तौर पर एक विक्रय क्षेत्र में उसका परीक्षण करता है, यदि उसमें अपेक्षित सफलता मिलती है, तो इसका विस्तार कर अन्य बाजारों में भी उसे लागू करता है। योजना के क्रियान्वन के अन्त में उसका मूल्यांकन करता हैं, इस प्रकार अर्जित अनुभव का लाभ वह अगले कार्यक्रम के लिए तैयार करता है। इसके साथ ही वह निर्यातक फर्म के प्रति विदेशी बाजारों में अनुकूल जन-भावना का निर्माण करने का कार्य करता है, जिससे भ्रमणशील विक्रयकर्ताओं को अपने विक्रय-कार्य में परोक्ष रूप से सहायता मिले।

इस श्रेणी के विक्रयकर्ताओं के लिए प्रतिभा-सम्पन्न लोगों को आकर्षित किया जा सकता है। कई योग्य व निर्यात व्यापार को कुशलतापूर्वक सम्पादित करने में समर्थ विक्रयकर्ता भी जलवायु की प्रतिकूलताओं आदि का अपने स्वास्थय पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण इससे विमुख हो जाते हैं। शादी-शुदा, बाल-बच्चे वाले व्यक्ति भी रोज घर से बाहर रहने की आफत मोल लेने से घबराता हैं। इस प्रकार के योग्य व्यक्तियों की सेवाओं का उपयोग एक निर्यातक फर्म स्थायी निवासी विक्रयकर्ताओं के रूप में कर सकती हैं। निर्यातक फर्म के दीर्घकालीन बाजार हितों की पूर्ति में इस प्रकार के विक्रयकर्ता अपनी अहम् भूमिका का निर्वाह करते हैं।

इस प्रकार के विक्रयकर्ता समय-समय पर अपनी रिपोर्ट अपन मुख्यालय को भेजतें हैं व वहां से प्राप्त आदेशों व निर्देशों का पालन अपनी योजनाओं के क्रियान्वन में करता है। साथ ही यह बाल ध्यान रखने योग्य हैं, कि हालांकि इस प्रकार के विक्रयकर्ताओं द्वारा विक्रय-क्षेत्रों से प्राप्त सूचनाओं का परीक्षण के तौर पर सत्यापन करने के लिए अपवाद रूप से भ्रमण करना पड़ सकता हैं। निर्यात बाजार में विक्रय को विकसित करने या नये बाजारों में प्रवेश करने के लिए किसी संवर्द्धनात्मक, कार्यक्रम का क्रियान्वन कितना प्रभावी रहा है, इसका मौके पर मूल्याकंन करने के लिए भी कभी-कभी बाजारों का दौरा करना पड़ सकता है। लेकिन यह स्पष्ट है कि सामान्यतया यह एक ही स्थान पर रहता है।

VI. फुटकरक मध्यस्थ
(Retail Outlets)

फुटकर व्यापार ऐसे व्यापार को कहा गया है, जिसमें अन्तिम उपभोक्ता या प्रयोक्ता को माल बेचा जाता है, एक निर्यातक प्रत्यक्ष निर्यात करने की विधि में इस प्रकार के संगठन का प्रभावी रूप से उपयोग कर सकता है। ऐसा संगठन ऐसे उत्पादों के लिए उपयोगी रहता है, जहां विशाल मात्रा में उपभोक्ताओं से सम्पर्क करना हो। इसक लिए निम्नलिखित विधियों में से किसी भी उपयुक्त विधि का चयन किया जा सकता है–

1. **श्रंखलाबद्ध दुकानें** (Chains of Retail Stores)—इस प्रकार की विधि में निर्यातक कम्पनी को जिस विदेशी बाजार में

विक्रय कार्य करना हो, उसमें उपभोक्ताओं को माल का विक्रय करने के लिए दुकानों का जाल बिछा देती है। सभी-दुकानों की साज-सज्जा, नाम की लिखावट के लिए समान शैली का उपयोग किया जाता है। सभी दुकानों पर विक्रय की शर्ते व दशाओं में एकरूपता होती है। सभी दुकानों पर समान मूल्य होते हैं। प्रमाणित वस्तुओं जैसे जूते, कपड़े, आदि के विक्रय में इसका प्रभावी उपयोग किया जा सकता है। इन श्रंखला बद्ध दुकानों पर जो एक ही वस्तु में व्यवहार करती है, पर निर्यातक कम्पनी का नियन्त्रण होता है।

2. **विभागीय भण्डार** (Departmental Store)—विभागीय भण्डार अनेक प्रकार की वस्तुओं में व्यवहार करते हैं। विदेशों से अच्छे विभागीय भण्डारों से छोटी-छोटी कम मूल्यों वाली वस्तुओं से लेकर मूल्यवान वस्तुएं तक उपभोक्ता को प्राप्त हो सकती हैं, निर्यातक अपना माल सीधे ही इन विभागीय भण्डारों को भेज सकता हैं। विभागीय भण्डार विक्रय पर निश्चित कमीशन लेकर या खरीद कर इसका विक्रय निर्यात बाजार के क्रेताओं को कर देते हैं।

3. **व्यक्तिगत फुटकर व्यापारी** (Individual Retail Trader)—एक विकल्प निर्यातक के पास यह भी है, कि वह निर्यात बाजार में कार्यरत व्यक्तिगत फुटकर व्यापारियों को सीधे माल भेजे। इस प्रकार के फुटकर व्यापारियों पर उसका किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता हैं। ये फुटकर व्यापारी अपने नाम में निर्यातक से माल क्रय करते हैं, व स्वयं के द्वारा निर्धारित मूल्य व विक्रय शर्तो पर माल का विक्रय करते हैं। बाजारों में अधिकतम स्थानों तक पहुंचने के लिए यह उपयुक्त विधि हो सकती हैं,

4. **उपभोक्ताओं के संगठन** (Consumer's Organisations)—विदेशों में उपभोक्तावाद का आन्दोलन एक जाग्रत व सशक्त आन्दोलन के रूप में उभर कर आया है। उत्पादक से उपभोक्ता तक माल पहुंचाने वाले मध्यस्थों द्वारा बेशुमार लाभ लिये जाने व इससे होने वाली कीमतों में व द्धि की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप इस आन्दोलन का जन्म हुआ। उपभोक्तावाद की प्ररेणा से अनेक प्रकार के उपभोक्ता संगठन विकसित हो गये हैं। इन संगठनों के सदस्य किसी क्षेत्र विशेष के उपभोक्ता होते हैं। इन संगठनों को ये सभी मिलकर चलाते हैं।

   यह संगठन उत्पादकों व निर्माताओं से सीधे ही माल का क्रय करता है, उचित लाभ को शामिल कर उचित कीमत निर्धारित कर अपने सदस्यों को बेचता है। अन्त में बचे लाभ को संगठन से किये गये व्यवहारों के अनुपात में सदस्यों में विभाजन कर दिया जाता है।

   निर्यातक कम्पनी की विदेशी बाजारों में कार्यरत ऐसे उपभोक्ता संगठनों को सीधा माल का विक्रय कर सकती है।

VII. विशेष अधिकार-धारक (Franchise Holders)

यह एक विशेष प्रकार की व्यवस्था है। इसमें निर्यातक फर्म विदेशी बाजारों में कार्यरत फर्म को अपने उत्पादों में व्यवहार करने की अनुमति देती है। इस अनुबन्ध के अधीन विदेशी फर्मो का अपने बाजारों में निर्यातक के उत्पाद को विक्रय करने का अधिकार मिल जाता है। सामान्यतया इस प्रकार के अनुबन्ध के अधीन विदेशी फर्म एक निश्चित समय तक निर्यातक फर्म के उत्पादों को अपने विक्रय क्षेत्र में बेचने का अधिकार रखती है। यदि विदेशी फर्म अनुबन्ध की शर्तो का उल्लघंन करे तो इसे समाप्त भी किया जा सकता है, विदेशी फर्म निर्यातक कम्पनी के ब्राण्ड नाम का ही उपयोग करती है, विदेशी फर्म में, जैसा अनुबन्ध हुआ है, उन्हीं प्रमापों के अनुकूल उत्पादों का निर्माण करना होता है। निर्यातक फर्म इस बात का कड़ा ध्यान रखती है, कि शर्तो के अनुसार ही उत्पाद का निर्माण किया जा रहा है। इस प्रकार के विशेष अधिकार धारक को एक विक्रय क्षेत्र पूरा ही दे दिया जाता है, जिसमें वस्तुओं के उत्पादन व विक्रय का अधिकार केवल उसी से होता है। निर्यातक कम्पनी या ऐसा अधिकार प्रदान करने वाली कम्पनी, विदेशी कम्पनी से दी गई सुविधाओं के बदले में विदेशी बाजारों में बिकने वाले माल की कीमत का एक निश्चित प्रतिशत, जो भी अनुबन्ध में तय हो, प्राप्त करने का अधिकार रखती है। अनुबन्ध के अधीन प्राप्त अधिकारों का उपयोग करते हुए विदेशी कम्पनी समान डिजाइन, ब्राण्ड, किस्म, प्रमाप, रंग, पैकिंग, जो कि निर्यातक कम्पनी अपने उत्पादों के निर्माण में प्रयोग कर रही है, उसका ही पालन करना पड़ता है। कई बार ऐसे अनुबन्ध में निर्यातक फर्म वस्तु के उत्पादन के लिए कच्चा माल विदेशी कम्पनी को भेज देती है, उसके उत्पादन की प्रविधि की जानकारी दे देती है। विदेशी कम्पनी उसी के आधार पर उत्पाद को उत्पादित कर विक्रय करती है।

इस प्रकार की व्यवस्था तब अपनायी जाती है जबकि निर्यातक अपने उत्पाद का रहस्य विदेशी फर्म को नहीं देना चाहता।

इसका काफी अच्छा उदाहरण अमेरिका की कोका-कोला कम्पनी है, यह कम्पनी विशेष के अनेक देशों में इस प्रकार की व्यवस्था के अधीन विशेष अधिकार-धारक की नियुक्ति करती है, कोका-कोला कम्पनी पेय बनाने के लिए चूर्ण अपने देश से भेजती है, जिसे निश्चित विधि से पानी में मिलाकर विदेशी कम्पनियां बोतलों में पैक करती है, व उसका अपने क्षेत्रों में विक्रय करती है, पेय पद्रार्थ बनाने के लिये चूर्ण किस प्रकार बनाया जायेगा, इसकी जानकारी वे विदेशी कम्पनियों को नहीं देते।

होटलों के क्षेत्रों में विश्व प्रसिद्ध होटल श्रं खला 'Holiday Inn' ने इसी व्यवस्था को अपनाकर विश्व में 1600 होटलों की श्रं खला खड़ी कर, सेवा क्षेत्र में इसका कुशलतापूर्वक उपयोग किया है। अमेरिकी मेक डोनाल्ड रेस्टोरेन्टस श्रं खला भी इसी व्यवस्था के अन्तर्गत भारत में 300 रेस्टोरेन्ट देश भर में स्थापित करने, जा रही है।

"मेकडोनाल्ड रेस्टोरेन्ट" अमेरीकी रेस्तरा श्रं खला हैं। इसके विश्व के 100 ऊपर देशों में लगभग 23,000 रेस्तरां हैं, इनमें से लगभग 60 प्रतिशत रेस्तरा "विशेष अधिकार-धारकों द्वारा" संचालित है, इससे यह स्पष्ट है कि विधि अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में काफी लोकप्रिय है।

लाभ
(Advantages)

इस प्रकार की व्यवस्था को अपनाकर निर्यातक फर्म अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त कर सकती है। इससे ऊंची परिवहन लागातें की बचत होती है। विदेशी कम्पनी अपने देश में प्राप्त कच्चे माल का व अन्य साधनों का उपयोग कर वस्तुओं का उत्पादन करती है। निर्यातक कम्पनी अपने प्रतिष्ठापूर्ण ब्राण्ड के उपयोग का केवल अधिकार देती है, निर्यातक फर्म को इस प्रकार की व्यवस्था में कोई पूंजी विनियोजन नहीं करना पड़ता है। सारी पूंजी का निवेश विदेशी कम्पनी ही करती हैं। निर्यातक फर्म को काफी मितव्ययिता भी इसमें प्राप्त हो जाती है, उसे अपने विक्रय संगठन व कर्मचारी उन बाजारों में नियुक्त नहीं करने पड़ते है। इस प्रकार की व्यवस्था में विदेशी बाजारों में विक्रय का कार्य उसी देश के नागरिक करते है, जिन्हें वहां के उपभोक्ताओं की रूचियों, आदतों, व्यवहारों, बाजार की विशेषताओं उपभोक्ताओं की क्रय शक्ति आदि सभी की पर्याप्त जानकारी होती है, इस कारण विदेशी कम्पनी अपने बाजारों में विपणन-कार्य पूर्ण कुशलता से व प्रभावी रूप से सम्पन्न करने में सक्षम होती है। निर्यातक को इस प्रकार की व्यवस्था में न्यूनतम जोखिम का सामना करना पड़ता है।

हानियां
(Disadvantages)

उपरोक्त लाभों के साथ ही इस प्रकार की व्यवस्था में गम्भीर दोष भी हैं। राष्ट्रीय हितों की द ष्टि से यह व्यवस्था हानिप्रद है। निर्यातक कम्पनी इस व्यवस्था का लाभ उठाकर विदेशी बाजारों में एकाधिकार स्थापित कर लेती है, इस प्रकार की कम्पनियां अधिकांश विकसित देशों की होती हैं, जिनके पास विशाल पूंजीगत साधन होते हैं। व्यापक पैमानें पर विज्ञापन कार्यक्रम चलाकर ये अपने उत्पादों की ब्राण्ड निष्ठा उत्पन्न कर लेती है। विशाल पूंजीगत साधनों का अच्छा भाग ये उत्पाद अनुसन्धान व बाजार अनुसन्धान में लगाने में सफल होते हैं। विदेशी बाजारों में इनके उत्पाद चलने पर उन्हें हटाना बड़ा कठिन कार्य होता है। अपने उत्पाद के रहस्यों की जानकारी भी ये विदेशी कम्पनी को नहीं देती व उसके लाभ का अच्छा हिस्सा केवल अपने विश्वव्यापी ब्राण्ड की चमक के नाम पर ले जाती है।

उपयुक्तता
(Suitability)

यद्यपि इस प्रकार की व्यवस्था में अनेक दोष हैं, फिर भी इस प्रकार की व्यवस्था को निम्नलिखित परिस्थितियों में सफलता से अपनाया जा सकता हैं–

1. जब उत्पाद में पर्याप्त स्तर की भिन्नता हो व उस उत्पाद की विश्वव्यापी विज्ञापन होने से विश्व बाजारों में वह जाना-पहचाना उत्पाद बन गया हो।
2. जब निर्यातक कम्पनी देशी विपणन पर ध्यान देने के साथ-साथ विदेशों में भी अपने उत्पाद का विक्रय बिना स्वयं पूंजी विनियोजन के विदेशी बाजारों में करना चाहती हो।

3. विदेशी कम्पनी इस उत्पाद को अपने देश में उत्पादित कर सके, इसके लिए आवश्यक कच्चा माल वहां उपलब्ध हो,
4. जहां निर्यातक कम्पनी के लिए परिवहन लागत अत्याधिक आ रही हो। यदि निर्यातक कम्पनी उत्पाद को अपने यहां वस्तु बनाकर, उसका परिवहन कर विदेशी बाजारों में ले जावें, ऐसा करने से यदि परिवहन की लागत ही उत्पाद की लागत से अधिक आ जाती हैं, तो इस प्रकर की व्यवस्था अपनाना ही उत्तम विकल्प हैं।
5. स्थानीय विक्रय प्रयासों से यदि अच्छा, प्रत्युत्तर मिलने की सम्भावना हो तो भी इस प्रकार की व्यवस्था उचित होगी।
6. विदेशी कम्पनी भी यदि उन उत्पादों का निर्माण कर विक्रय करे तो पूंजीगत आवश्यता बहुत अधिक नहीं होगी।
7. जब निर्यातक फर्म के उत्पादों की मांग विदेशी बाजारों में बढ़ रही हो, ऐसी स्थिति में जब विदेशी कम्पनी उसकी आपत्ति निर्यातक कम्पनी की ख्याति, प्रतिष्ठा, एकरूप, तकनीकी जानकारी, व्यापारिक अनुभवों, व्यापक व गहन बाजार अनुसन्धानों का लाभ उठाना चाहती हो।

   अभी तक इस प्रकार की व्यवस्था का उपयोग अलकोहल-रहित पेय पदार्थो के विदेशी बाजारों में विक्रय के करने के लिए निर्यातक कम्पनियां व्यापक रूप से करती रही है। अब इसका उपयोग फसल को नुकसान पहुंचाने वाली कीडों आदि को मारने की कीटाणुनाशक पदार्थो के विदेशाी बाजारों में विक्रय के लिए भी हो रहा है। अन्य उत्पादों के विक्रय में भी उसका प्रभावी रूप से उपयोग किया जा सकता है।

VIII. विदेशी शाखाएं
(Foreign Branches)

प्रत्यक्ष व्यापार की यह विधि वास्तव में इस नाम के चरितार्थ करती है। इसके अन्तर्गत निर्यातक कम्पनी विदेशी बाजारों के विदोहन के लिए स्वयं विक्रय संगठन विदेशी बाजारों में स्थापित करती है। विदेशी बाजारों में विक्रय कार्य करने के लिए स्वयं के विक्रयकर्ताओं का चयन कर उनका प्रशिक्षण करती है, उसके पश्चात उन्हें निर्यात विपणन के लिए लगाया जाता है।

इस प्रकार के संगठन के द्वारा निर्यातक अपने विचारों को स्वयं के संगठन की सहायता से ले जाकर उनका विकास कर सकता है। इस प्रकार के संगठनों के संचालन के लिए निर्यातक देशी विक्रय संगठन द्वारा प्रशिक्षित विक्रयकर्ताओं का उपयोग करता है। निर्यातक इस प्रकार का संगठन बनाने पर विदेशी देश के उपयुक्त बन्दरगाह पर अपना गोदाम स्थापित करता है, जहां से अपने देश से भेजे गए माल का संग्रह किया जाता है। इसके अतिरिक्त भी गोदामों की उपयुक्त व्यवस्था की जाती है, विक्रय केन्द्रों, प्रदर्शन केन्द्रों के निर्यातक विदेशी बाजार में स्थापित करता है। ग्राहक को उपयुक्त सेवाएं प्रदान करने के लिए वह सेवा-केन्द्रों की भी व्यवस्था करता है।

लाभ
(Advantages)

इस प्रकार के संगठन का निर्यातक काफी लाभ उठा सकता है। वह स्वयं विदेशी बाजारों के क्रेताओं से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। उत्तम ग्राहक संवाएं प्रदान कर निर्यातक अपनी अच्छी छवि व प्रतिष्ठा विदेशी उपभोक्ताओं के मन में बना सकता है। शनैः शनैः विदेशी व्यापार में प्रवीणता भी निर्यातक प्राप्त कर सकता है। बाजार पर पैनी निगाह रखकर भावी परिवर्तनों का आकलन कर संस्था अपने बाजारों का अच्छा विकास पर सकती है। इसके साथ ही मध्यस्थों का निर्यात बाजार में उपयोग करने पर जो दोष होते हैं, उनका निराकरण भी किया जा सकता है। निर्यातकर्ता इस प्रकार का संगठन उपयोग में लाकर अपनी नीतियों को प्रभावी रूप से लागू कर सकता है। तथा वितरण व विक्रय संगठन पर प्रभावी रूप से नियन्त्रण रख सकता है। इस प्रकार के संगठन से निर्यातकर्ता में भी विक्रय बढ़ाने की काफी व्यक्तिगत प्रेरणा होती है, क्योंकि ऐसे व्यापार से होने वाले लाभों पर उसी का अधिकार होता है।

दोष
(Disadvantages)

इस संगठन के जहां उपरोक्त लाभ है वही इसकी हानियां भी कम नहीं हैं। इससे निर्यातक के उपरिव्ययों में काफी व द्धि हो जाती है। विदेशी बाजारों के प्रबन्ध के लिए योग्य विक्रयकर्ताओं का चयन करना पड़ता है। गोदामों, विक्रय केन्द्रों, सेवा-केन्द्रों आदि की व्यवस्था करने में जहां विशाल मात्रा में पूंजीगत साधनों की आवश्यकता होती है, वही व्ययों में भी व द्धि होती है,

विदेशी विक्रयकर्ताओं को फर्म के उत्पाद, विक्रय नीतियों को समझाने, उससे परिचित कराने में कठिनाई आती है, इसके साथ ही विदेशी व्यापार जिस देश में किया जा रहा है, उस देश की सरकार द्वारा घोषित विभिन्न वैधानिक प्रावधानों का भी पालन करना पड़ता है। इस कारण इस प्रकार के संगठनों के अपनाने में कई दोष भी हैं।

उपयुक्तता
(Suitability)

इस प्रकार का विक्रय संगठन उन निर्यातक कम्पनियों के लिए विशेष उपयोगी है, जिनके निर्यात की मात्रा काफी अच्छी गयी हो; जिनके उत्पादों के दीर्घकालीन बाजार उपलबध हो। उत्पाद ऐसे हो जिनकी प्रति इकाई लागत ऊंची हो, उत्पाद में तकनीकी जटिलता हो, जिसे उपभोक्ता या प्रयोक्ता लेने से पहले सन्तुष्टि होना आवश्यक समझता हो, इसके साथ ही यह आवश्यक है, कि निर्यातक कम्पनी के पास विशाल पूंजीगत साधन इस आशय के लिए हो व उसके पास योग्य निर्यात प्रबन्धक हो जो विदेशी बाजारों में विक्रय संगठनों को प्रभावी रूप से चला सके। निर्यातक फर्म को योग्य व अच्छी मात्रा में विदेशी बाजारों के लिए विक्रयकर्ता होना भी इसकी सफलता के लिए आवश्यक है, जहां उपभोक्ता या प्रयोक्ता से सीधा सम्बन्ध होना व्यापार की सफलता की आवश्यक शर्त हो वहां इस प्रकार का संगठन उपयोगी हो सकता है।

अप्रत्यक्ष व्यापार
(Indirect Trading)

अप्रत्यक्ष निर्यात व्यापार में निर्यातकर्ता स्वयं निर्यात विपणन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह नहीं करता। निर्यात विपणन की विभिन्न क्रियाओं में उसका सहभाग व्यापक नहीं होकर सीमित होता है। इस प्रकार के निर्यात में वह स्वयं निर्यात का कार्य नहीं करता वरन् इसके लिए उपयुक्त मध्यस्थों की सेवाओं को प्राप्त करता हैं। इन मध्यस्थों को निर्यात विपणन की गहनता से जानकारी होती है। एक नयी निर्यातक फर्म के लिए, जो निर्यात विपणन से अपरिचित है, उसके लिए इस प्रकार के व्यापार की विधि से उत्तम विकल्प और कोई हो नहीं सकता। ऐसी निर्यातक फर्मे जिनके पास पर्याप्त वित्तीय साधन आवश्यक प्रबन्धकीय योग्यता का अभाव हो, जो देशी विपणन के साथ-साथ निर्यात में भी कार्य विस्तार करना चाहती है, उन फर्मो के लिए इस प्रकार के व्यापार की विधि काफी उपयोगी हो सकती है। अप्रत्यक्ष व्यापार की विधि का उपयोग करते समय एक निर्यातक निम्नलिखित मध्यस्थों की सेवाओं को प्राप्त कर सकता है।

मध्यस्थों के प्रकार
(Types of Middlemen)

I. निर्यात कमीशन ग ह (Export Commissions House)

II. निर्यात व्यापारी या निर्यात ग ह (Export Merchant or Export House)

III. निर्माता का निर्यात एजेन्ट (Manufacturers Export Agent)

IV. निर्यात दलाल (Export Broker)

V. निर्यात के लिये निजी क्रेता (Private Byers for Export)

VI. निर्यातक देश में आयातक देश के द्वारा स्थापित सरकारी एजेन्सी (Buying Agency of the Govt. of the Importing Countries Stationed in Exporting countries)

VIII. निर्यात हेतु सरकारी क्रय एजेन्सी (Govt. Buying Agency for Export)

I. निर्यात कमीशन ग ह
(Export Commission House)

निर्यात कमीशन ग ह निर्यातक देश में विदेशी क्रेता के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं। विभिन्न क्रेताओं जिसमे वहां के रेल, खदान, सरकारी, औद्योगिक, मध्यस्थों आदि को शामिल किया जा सकता है, उनके आवश्यकता का माल निर्यातक देश से क्रय करने के लिए ये ग ह इनके एजेन्ट के रूप में कार्य करते हैं। इसके बाद इन्हें क्रय कमीशन (Buying Commission) विदेशी क्रेता से मिलता हैं। कभी-कभी ये निर्यातक के प्रतिनिधि के रूप में भी कार्य करते हैं, पर सामान्यतया विदेशी ग्राहकों के लिए ये कार्य करते हैं। निर्यातक के यहां से माल मंगाने के सभी व्यय जैसे जहाजी भाड़ा, बीमा, संग्रहण व्यय, आन्तिरक परिवहन व्यय, विभिन्न प्रपत्रों के व्यय, माल के लदान व उतारने का, सभी व्ययों को निर्यात कमीशन ग ह विदेशी क्रेता से ही वसूल करते हैं।

निर्यातक इन ग हों को एक निश्चित विक्रय करने के लिए पूरे अधिकार दे देती है। इसमें निर्यातक के देश से विदेशी बाजारों में उत्पाद को विक्रय करने का सभी कार्य ये निर्यात ग ह ही करते हैं। विदेशी क्रेताओं की मांग के आधार पर ये माल को भेजने के उचित प्रपत्र बनाते हैं, व माल को जहाजों से लदान कर भेजते हैं। निर्यातक को इस सम्बन्ध में थोड़ी सी चिन्ता नहीं करनी पड़ती। उसे निर्यात विक्रय की व द्धि के लिए भी प्रयास नहीं करना पड़ता।

निर्यात कमीशन ग ह को विदेशी क्रेता क्रय कमीशन देते हैं, व उससे यह अपेक्षा की जाती हैं कि वह उन्हें ईमानदानी से निष्पक्षतापूर्वक, योग्य व उत्तम क्रय सेवाएं प्रदान करेगा। लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं होता। ये कमीशन ग ह कई बार क्रेता व विक्रेता दोनों से ही कमीशन ले लेते हैं। यह एक अनुचित कार्य है। अपनी सेवाओं के बदले, ये कमीशन ग ह 2% से 6% तक कमीशन विदेशी क्रेता से लेते हैं। कमीशन की दर इससे अधिक भी हो सकती है, पर यह दर उसके द्वारा प्रदान की जा रही सेवाओं पर निर्भर करेगी।

लाभ
(Advantages)

निर्यातक इस प्रकार के निर्यात कमीशन ग हों की सेवाओं का अच्छा उपयोग कर सकते हैं। ये विदेशी क्रेता के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं, अतः कमीशन भी उन्हों से प्राप्त करते हैं। निर्यातक को इन्हें किसी भी प्रकार का कमीशन नहीं देना पड़ता हैं। मध्यस्थों को इस प्रकार दिया जाने वाला लाभ बच जाता है।

आदेश प्राप्त करने पर भी निर्यातक को कुछ भी व्यय नहीं करना पड़ता। निर्यात कमीशन ग ह विदेशी ग्राहकों के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करते हैं। ये कमीशन ग ह निर्यात बाजारों से विभिन्न निर्यातकों को टेण्डर भरने के लिए आमन्त्रित करते हैं। टेण्डर भरने के लिए जो विज्ञापन दिया जाता है, उसमें माल की किस्म, मात्रा व अनुदेशों का विस्तार से बता दिया जाता है। टेन्डर आने पर कमीशन ग ह द्वारा जो टेन्डर अधिक उपयोगी प्रतीत होता है, उसे स्वीकार कर लिया जाता है। इस प्रकार आदेश भी निर्यातक को स्वयं ही प्राप्त हो जाते हैं। उसे टेन्डर भरना होता हैं।

छोटे-छोटे निर्यातक भी जिन्हें निर्यातक विपणन का अनुभव नहीं है, इस प्रकार की व्यवस्था का लाभ उठाकर अपने उत्पादों को विदेशी बाजारों में जमा सकते हैं। उत्पाद के एक बार प्रचलित हो जाने पर वह अपना विक्रय संगठन वहां पर स्थापित कर सकते हैं। इससे प्रारम्भ में कम पूंजी विनियोजन से कार्य चल जाता है।

कई प्रकार के व्ययों की बचत होने के कारण निर्यातक कम मूल्यों पर भी निर्यात कमीशन ग हों को माल बेचकर अच्छा, लाभ कमा सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों की कीमत प्रतियोगिता का सामान भी छोटी संस्थाएं प्रभावी रूप से कर सकती हैं। इस प्रकार कई लाभ एक निर्यातक इनसे प्राप्त कर सकता है।

आलोचनाएं
(Criticisms)

उपरोक्त लाभों के होते हुए भी निर्यात कमीशन ग हों की भंयकर आलोचनाएं की गई हैं, एक समय ऐसा था जब अमेरिकी निर्यात व्यापार में निर्यात कमीशन ग हों का एक महत्वपूर्ण स्थान था, वह स्थान आज शनैः शनैः समाप्त होता जा रहा है। इन

पर यह आरोप लगाया जाता है कि सिद्धान्त रूप से इन्हें अपना कमीशन क्रेता से ही लेना चाहिए, पर व्यवहार में यह ग ह दोनों से ही कमीशन लेते हैं, यह अनैतिक व अनुचित है। यह तथाकथित निर्यात कमीशन ग ह वास्तव में अपने सही रूप में कार्य करने की अपेक्षा अन्य निर्यात मध्यस्थों के रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर देते हैं। इस कारण आज के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में आज इनका स्थान कम महत्वपूर्ण होता जा रहा है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, कि हो सकता है, कि आने वाले कुछ समय में ये पूर्ण रूप से विलुप्त हो जावें।

निर्यात कमीशन ग हों की प्रतिक्रिया
(Reactions of Export Commission House)

निर्यात कमीशन ग ह भी अपने ऊपर लगाये गये आरापों का द ढ़ता से खण्डन करते हैं। उनका कहना है कि वे कमीशन की इतनी कम दरे लेते हैं, जो सर्वथा न्यायसंगत हैं। उनका कहना है कि निर्माता या उत्पादक उनके कन्धे के सहारे ही चढ़ता है, व चढ़ने के बाद लात मारने को तैयार हो जाता है, प्रारम्भ में तो वे इन ग हों को सेवाओं का व्यापक उपयोग करते हैं, व ज्यों ही विदेशी बाजारों में उनका काम काज जम जाता है, वे स्वयं का विक्रय विदेशी बाजारों में स्थापित कर लेते हैं।

प्रथम विश्वयुद्ध के पहले अमेरिकी निर्यातकों ने इनकी सेवाओं का व्यापक उपयोग किया। प्रथम-विश्व युद्ध के समय व उसके बाद में अमेरिकी निर्माताओं ने अपने विक्रय संगठन उन विदेशी बाजारों में स्थापित कर लिये। इससे कई निर्यात कमीशन ग हों को मजबूर होकर अपने व्यवसाय से बाहर निकालना पड़ा। अमेरिकी निर्माताओं ने उन्हें बाहर धकेल दिया। पहले तो उन्होंने अर्थात अमेरिकी निर्माताओं ने उत्पादों को विदेशों में प्रचलित कराने जैसा कठिन कार्य हमसे करा लिया व बाद में गलत तरीके अपनाने लग गये। 1929 की विश्वव्यापी मन्दी के समय फिर इनका व्यापक उपयोग हुआ। मन्दी समाप्त होते ही फिर इनका पुराना हाल हो गया।

II. निर्यात व्यापारी या निर्यात ग ह
(Export Merchant or Export House)

निर्यात व्यापारी या निर्यात ग ह अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में सबसे पुराने मध्यस्थ हैं। इसमें निर्यात ग ह निर्यातक के देश में ही स्थित होता है। ये निर्यात ग ह विभिन्न वस्तुओं की विदेशी मांग के बारे में सूचनाएं प्राप्त करते हैं। बाजार अनुसन्धान करके उनका विशलेषण करते हैं। मांग के अनुसार के माल को विभिन्न निर्माताओं व उत्पादकों से अपने नाम में खरीदते हैं। इनका नाम ही निर्यात व्यापारी है, अतः ये कम से कम मूल्य पर जिन उत्पादकों या निर्माताआं से माल खरीद सकते हैं उसे खरीदने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार माल का क्रय करके उसे अच्छे से अच्छे मूल्यों पर निर्यात बाजार में बेचने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार वस्तुओं के विक्रय मूल्य का जो अन्तर होता है, वही इनका लाभ होता है। इससे स्पष्ट है कि जिस प्रकार वह इनका लाभ होता है। इससे स्पष्ट है कि जिस प्रकार वह क्रय करने में स्वतन्त्र होता है, उसी प्रकार विक्रय में भी वह स्वतन्त्र होता है।

इस प्रकार व्यापारी या निर्यात ग ह की आर्थिक स्थिति बहुत सुद ढ़ होती हैं। इसके कारण इसके अवसर काफी बढ़ जाते हैं। विदेशों में इसका स्वयं का विक्रय संगठन, शाखायें, गोदाम, परिवहन सुविधायें आदि भी होती हैं। उत्पादक को जिस क्रय मूल्य पर सहमति होती हैं, चुकाने के बाद के सभी व्यय जिसमें बीमा, परिवहन आदि के व्ययों को शामिल किया जा सकता है। वह स्वयं ही वहन करता है। निर्यात व्यापार की जोखिम भी वह अपने ऊपर ले लेता है। यदि उसे हानि होती हैं, तो उसे ही वहन करनी पड़ती है। उसी प्रकार सभी लाभों पर उसका अधिकार होता है। विदेशी बाजारों में माल के विक्रय करने हेतु वह अपने स्वयं के नाम से उसका विज्ञापन करता है। उसे अपने ब्राण्डों के उपयोग की आजादी होती है। विक्रय कहां, किसे, किन शर्तो पर, किस प्रकार से करना है, इसका निर्धारण वह स्वयं ही करता है। इससे यह बात साफ है कि जिस प्रकार एक देशी व्यापारी विपणन करता है, उसी प्रकार निर्यात व्यापारी विपणन का कार्य करता है।

निर्यात व्यापारियों के लाभ
(Advantages of Export Merchants)

निर्यातक इस प्रकार के निर्यात व्यापारियों या निर्यात ग हों की सेवाओं का व्यापक उपयोग कर निम्नलिखित लाभ उठा सकता है—

1. निर्यात व्यापारियों को माल बेचकर निर्यातक सभी प्रकार की निर्यात सम्बन्धी औपचारिकताओं की पूर्ति से बच जाता हैं।
2. निर्यातक को निर्यात व्यापारी की जोखिम से भी निर्यात ग ह मुक्ति दिला देते हैं, क्योंकि ये अपने नाम से माल का क्रय कर उसका विक्रय करते हैं।
3. निर्यात ग ह कभी-कभी आवश्यकता पड़ने पर निर्माता को वित्तीय सहायता भी उपलब्ध कराते हैं। ये प्रायः क्रय किये जाने वाले माल के मूल्य का कुछ हिस्सा निर्माताओं को पेशगी के रूप में दे देते हैं। इससे उसे कार्यशील पूंजी की व्यवस्था करने में सुविधा रहती है।
4. निर्यात सम्बन्धी सभी चिन्ताओं से मुक्ति मिलनें के कारण निर्माता अपना सारा ध्यान उत्पाद की किस्म व अन्य बातों के सुधार में व्यय करता है।
5. छोटे निर्यातकर्ता भी अपना माल सहजता से इन निर्यात ग हों को बेच सकते हैं।
6. निर्यातकों के अनेक प्रकार के व्यय इनकी सेवाओं से बच जाते हैं। इन्हें अपना निर्यात संगठन का निर्यात कर्मचारी विदेशी बाजारों के लिए नहीं रखने पड़ते। इस कारण इनके उत्पादों की कीमतें सामान्य स्तर पर रह सकती हैं। वे कुशलता से कीमत प्रतियोगिता का सामना कर सकती हैं।
7. निर्यातक निर्यात व्यापारियों के सतत सम्पर्क में रहकर विदेशी बाजार में होने वाले परिवर्तनों से अवगत रह सकता है, उन परिवर्तनों के अनुरूप अपने उत्पाद की शैली, मूल्य किस्म आदि में परिवर्तन कर वह हानि से बच सकता है।

दोष
(Disadvantages)

जहां निर्यातक निर्यात व्यापारी की सेवाओं का उपयोग कर अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त कर सकता हैं, वही उसके साथ व्यापार करने में दोष भी है, जो इस प्रकार हैं–

1. इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें निर्यात व्यापारी का ध्यान निर्यातक के निर्यात को अधिकाधिक बढ़ाने की बजाय इस बात पर लगा रहता है, कि कम से कम मूल्य पर किस निर्माता से वस्तुएं प्राप्त की जावें।
2. इनकी सेवाओं के उपयोग से निर्यातक निर्यात विपणन से अनभिज्ञ ही बना रहता है। उसे विदेशी बाजारों की जानकारी नहीं हो पाती।

यद्यपि निर्यात ग हों के उपरोक्त दोष हैं। फिर भी यह ग ह निर्यातक को ही सेवाएं उपलब्ध नहीं कराते, वरन् विदेशी ग्राहकों को अनेक प्रकार की सुविधाएं प्रदान करते हैं। ये निर्यात ग ह विदेशी ग्राहकों को साख सुविधाएं प्रदान करते हैं। विदेशी निर्यातकों से सम्बन्ध स्थापित करने की उनकी परेशानियां दूर कर देते हैं। इसके अतिरिक्त ये निर्यात ग ह विदेशी ग्राहकों को माल को छांटने, श्रेणीयन आदि की सुविधाएं प्रदान करते हैं।

III. निर्माता का निर्यात एजेन्ट
(Manufacturer's Export Agent)

निर्माता का निर्यात एजेन्ट निर्यात बाजारों में निर्माता या उत्पादक का प्रतिनिधित्व करता हैं। इसकी नियुक्ति उस प्रकार की नहीं की जाती जिस प्रकार अन्य व्यावसायिक एजेन्ट की नियुक्ति की जाती है। निर्माता का निर्यात एजेन्ट निर्यातक के विक्रय संगठन का पूर्वकालिक सदस्य नहीं होता हैं। उसकी अपनी स्वयं की स्वतन्त्र सत्ता होती हैं। ये एजेन्ट व्यक्तिगत रूप से, साझेदारी के रूप में या कम्पनी के रूप में कार्य करते हैं।

निर्यातक के विक्रय संगठन का भाग नहीं होते हुए भी यह विदेशी क्रेताओं की द ष्टि में निर्माता का निर्यात प्रबन्धक होता है। विदेशी क्रेता इससे व्यवहार करते समय यही मानते हैं कि वे सीधे निर्माता से व्यवहार कर रहे हैं। इस प्रकार यह एजेन्ट निर्माता के निर्यात विभाग का कार्य करता है। यह निर्यातक के देश में कार्य करता है।

ये एजेन्ट एक ही निर्माता के उत्पाद में व्यवहार नहीं करते, वरन् अनेक निर्माताओं व उत्पादकों के उत्पादों का विदेशों में विक्रय करते हैं। अपने कार्य में सहजता व स्वाभाविकता रखने के लिए वे ऐसे निर्माताओं के उत्पादों में व्यवहार करते हैं,

जिनमें आपस में प्रतिस्पर्द्धा नहीं होती। ये एजेन्ट एक विशेष प्रकार के उत्पादों में ही व्यवहार करते हैं। अतः इनमें विशिष्टीकरण होता है। इससे यह स्पष्ट होता है, कि ये एक ही उत्पाद पंक्ति के विभिन्न उत्पादों का उत्पादन कर रहे निर्माताओं के उत्पादन में व्यवहार करते हैं।

निर्माता से हुए अनुबन्ध के अनुसार ये एजेन्ट कार्य करते हैं। विदेशी क्रेताओं की मांग के आधार पर यह अपने विक्रय का प्रयास करता हैं। विदेशी क्रेताओं से आदेश प्राप्त करता है, व इसकी पूर्ति विदेशी क्रेताओं को करता है। आदेश प्राप्त करने से लेकर विदेशी ग्राहक तक माल पहुंचाने का कार्य इसका होता है। माल को भेजने के लिए विभिन्न प्रपत्र बनाना, अनुमति लेना, माल का बीमा करना, किराया देना, क्रेता को बीजक देना, उससे माल का विक्रय मूल्य वसूल करना व निर्माता को भेजना यही करता है। इसके प्रतिफल के रूप में वह निर्माता से स्थायी मासिक भत्ता या विक्रय पर कमीशन या दोनों ही प्राप्त रहता है।

निर्माता के निर्यात एजेन्ट के कार्य
(Functions of Manufacturer's Export Agent)

निर्माता के निर्यात एजेन्ट अपनी बहुमूल्य सेवाएं प्रदान करते है। डॉ. प्रेट के अनुसार ये एजेन्ट अग्रलिखित सेवाएं व कार्य प्रदान करते हैं–

1. ये एजेन्ट एक या अनेक निर्माताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।
2. देश एवं विदेश में विक्रय का विकास करना।
3. एक ही प्रकार के उत्पादों में ये व्यवहार करते हैं।
4. निर्माता के साख सम्बन्धी सूचनाएं प्राप्त कर, प्रदान कर।
5. ये एजेन्ट कुछ चयनित विदेशी संस्थाओं के क्रय एजेन्ट के रूप में भी कार्य करते हैं।
6. शिपिंग व फारवाडिंग एजेन्ट के रूप में कार्य करना।
7. केवल विशिष्ट बाजारों में प्रतिस्पर्द्धा रहित उत्पादों में व्यवहार करना।
8. निर्माता के लेटरहेड का उपयोग करना।
9. निर्माता को विदेशी बाजारों में विज्ञापन क्रियाओं के सम्बन्ध में सलाह देना।
10. निर्माता को विदेशी बाजारों में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी देना।
11. सेल्स मेन्यूअल का विकास करना।
12. विक्रय प्रशिक्षण की उपयुक्त विधियों का विकास करना।
13. विक्रय एवं उससे सम्बन्धित क्रियाओं का निष्पादन करना, जैसे विज्ञापन व विक्रय संवर्द्धन इत्यादि।
14. जन सम्बन्धों का विकास करना।

इस प्रकार निर्माता का निर्यात एजेन्ट निर्यात विपणन में अनेक प्रकार के कार्य करता है, व निर्माता की अनेक प्रकार से सेवा करता हैं।

लाभ
(Advantages)

निर्माता इस प्रकार के निर्यात एजेन्ट नियुक्त कर अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त कर सकता है। एजेन्ट निर्यात सम्बन्धी सभी औपचारिकता की पूर्ति का दायित्व ले लेता हैं। इससे इस सम्बन्धी सिर दर्द से निर्माता को मुक्ति मिल जाती है। विदेशी मांग के बारे में ये एजेन्ट सूचना देते रहते हैं, इसके आधार पर उत्पादन कर निर्माता हानि से बच सकते हैं। बाजार सूचनाओं का समय-समय पर निर्माता को सम्प्रेषण करने से वह अपने उत्पाद में भी उसी प्रकार से परिवर्तन कर लेता है, इसके उत्पादक परिवर्तित परिस्थितियों का सामना प्रभावी रूप से कर सकता है। विभिन्न विदेशी ग्राहकों व संस्थाओं के बारे में साख सूचना भी यह भेजता रहता है, इससे निर्माता अपनी वित्तीय जोखिम को न्यूनतम कर सकता है। विक्रय के अतिरिक्त भी अनेक प्रकार की सेवाएं ये एजेन्ट प्रदान करते हैं।

हानियां
(Disadvantages)

इन्हें अनेक उत्पादकों के उत्पादों में व्यवहार करने की स्वतन्त्रता होती है। इसका दोष यह होता है, जिसके अनुबन्ध की शर्ते व कमीशन इन्हें अनुकूल लगाता है, उसके विक्रय की व द्धि के लिए यह विशेष प्रयास करता हैं। इससे दूसरे उत्पादकों की उपेक्षा की सम्भावना रहती है। निर्माता का विदेशी ग्राहकों से सीधे सम्पर्क नहीं हो पाता।

उपरोक्त दोषों के होते हुए भी निर्यातक इनकी सेवाओं को अपने निर्यात विपणन के प्रारम्भिक काल में अच्छा उपयोग कर सकते हैं। अपने व्ययों की बचत कर वे इनके सहारे अपने निर्यात व्यापार का विकास कर सकते हैं।

IV. निर्यात दलाल
(Export Broker)

दलाल वह व्यक्ति होता है, जो विक्रेता व क्रेता के बीच कड़ी का कार्य करता है, यह विक्रेता के माल के लिए क्रेता की तलाश करता है। यह माल का स्वामित्व ग्रहण नहीं करता, न ही अपने नाम से उसे बेचता है विक्रेता दलाल को ऐसा न्यूनतम मूल्य बता देता हैं जिसके नीचे वह माल को बेचने को तैयार नहीं है। दलाल इसके आधार पर क्रेता से सौदे के बार में बातचीत करता है विक्रेता विक्रय के लिए जो शर्ते व दशाएं तय करें, दलाल को उसी के अनुसार विक्रय का सौदा करना होता है। प्रयत्न करके दलाल दोनों को स्वीकार योग्य मूल्य पर सौदा करा देता है, इसके बदले वह विक्रेता से विक्रय मूल्य पर कुछ प्रतिशत की दर से कमीशन प्राप्त करता हैं।

निर्यात विपणन में भी इन दलालों की सेवाओं का व्यापक उपयोग किया जा सकता हैं। विशेषकर खाद्यन्नों पैक की हुई खाद्य सामग्री, ताजे एवं सूखे हुए फल, मेवे, ऊन, कपास, चीनी व काफी, आदि के निर्यात में इनका विशेष उपयोग होता है। छोटी-छोटी फर्मो के लिए यह सम्भव नहीं होता कि वे स्वयं अपने साधनों से इनका निर्यात कर सके। उनके पास शिपिंग व अन्य निर्यात की सुविधाएं नहीं होती।

निर्यात दलाल विदेशी बाजारों में भेजी जाने वाली वस्तुओं का स्वामित्व ग्रहण भी कर सकता है और नहीं भी। यदि वह स्वयं स्वामित्व ग्रहण करने का निर्णय करता है, तो वह देशी उत्पादकों से माल खरीद कर उन्हें मूल्य का भुगतान कर देता है। उसके बाद उसका श्रेणीकरण व पैकिंग, ब्रान्डिंग, व ट्रेडमार्क का सभी कार्य स्वयं करता है। उसके बाद उसे विदेशी बाजारों में अच्छे से अच्छे मूल्य पर बेचने का प्रयास करता है। वास्तव में वह ऐसा करके अपने दलाल के स्वरूप को समाप्त कर देता हैं। ऐसी स्थिति में यह तथाकथित निर्यात दलाल एक निर्यात व्यापारी की भूमिका का निर्वाह करने लगा जाता है। लेकिन सामान्यतया दलाल अपने सीमित साधनों के कारण ऐसा नहीं करते।

लाभ
(Advantages)

निर्यात दलाल निर्यात विपणन में एक दक्ष व्यक्ति होता है। वह अपनी पैनी निगाह विभिन्न बाजारों पर रखता हैं। जिन उत्पादों में वह व्यवहार करता है, उन उत्पादों की विश्व में प्रमुख मण्डियों के सम्पर्क में रहता है, इससे छोटे-छोटे उत्पादक जिनके पूंजीगत साधन कम है, व जिनके लिए निर्यात विपणन करना अलाभप्रद है, वे इनकी सेवाओं का उपयोग कर अच्छे मूल्यों पर विदेशों में अपना माल बेच सकते हैं। यदि दलाल उत्पादकों से माल खरीदकर अपने नाम में उसका व्यवहार करता है, तो उत्पादकों को तुरन्त नकद भुगतान प्राप्त हो जाता हैं, इससे उनकी जोखिम भी समाप्त हो जाती है। कृषि उत्पादों के बड़े उत्पादक इन दलालों की सेवाओं का उपयोग कर अपनी शर्तो व दशाओं पर विदेशी क्रेताओं को माल का विक्रय प्रभावी रूप से कर सकते हैं, दलालों का विदेशी बाजार पर गहन अध्ययन होता हैं वे होने वाले परिवर्तनों का विभिन्न उत्पादों की भावी मांग पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इसकी जानकारी उत्पादकों को प्रदान करते हैं इससे उत्पादक जिन उत्पादों की मांग में कमी होने वाली है, उसके उत्पादक को अगली फसल में सीमित कर हानि से बच सकते हैं, जिन उत्पादों की मांग में व द्धि होने की सम्भावना है, उनके उत्पादन को बढ़ाकर अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं, छोटे उत्पादकों को अनेक प्रकार के व्ययों की बचत भी इनकी सेवाओं के उपयोग से मिल जाती है।

हानियां
(Disadvantages)

जहां एक ओर निर्यात दलालों की सेवाओं का उपयोग कर छोटे उत्पादक अनेक लाभ प्राप्त कर सकते हैं, वहीं इनकी कुछ गम्भीर हानियां भी हैं, यदि दलाल अपने नाम में माल का क्रय कर उसे विदेशों में बेचता है,तो वह उत्पादकों के सामने बाजारों का इस प्रकार चित्रण करता है, जिससे वह मान ले कि जो भाव दलाल बता रहा है, उस पर उसे नहीं बेचा तो भविष्य में इससे भी कम मूल्य प्राप्त होगा। इससे दलाल कम मूल्य पर उत्पादों को प्राप्त कर लेते हैं।

निर्यात दलाल अपनी सेवाओं के बदले कमीशन वसूल करते हैं, यह कमीशन वे विक्रेता से लेते हैं। दलाल उत्पादक से न्यूनतम मूल्य ले लेता है, जिस पर वह विक्रय को तैयार है। उसके बाद देखा जाता है कि वह उससे ऊंचे मूल्यों पर विदेशी क्रेता से सौदा तय कराकर बीच के अन्तर को खुद डकार जाता है।

V. निर्यात के लिए निजी क्रेता
(Private Buyers for Export)

ये वे व्यक्ति होते हैं, जो आयातक देश की संस्थाओं द्वारा निर्यातक देश से भेजे जाते हैं, या नियुक्त किए जाते हैं। आयातक देश की संस्था की जिस सीमा तक निर्यातक देश के बाजारों से सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा होती है, उसी मात्रा में व स्वरूप में इनको भेजा या नियुक्त किया जाता है। इस पकार के क्रेता आयातक द्वारा क्रय की जाने वाली वस्तु के विशेषज्ञ होते हैं। उस वस्तु के विभिन्न बाजारों का उन्हें विशेष ज्ञान व अनुभव होता है, इसका लाभ भी इन्हें क्रय करने का निर्णय लेते समय मिल जाता है।

आयातक देश की संस्था उन्हें क्रय की जाने वाली वस्तु में पूरी जानकारी भेजती है। वस्तु का मूल्य, उसकी किस्म, पेकिंग, अन्य विशेषताओं की जानकारी भेज दी जाती है। इसके साथ ही माल क्रय कर किस प्रकार पैक करके, किस मार्ग से आयातक के देश में भेजा जाना हैं, इसकी सूचना भी दे देते हैं। भुगतान की शर्ते क्या होगी व निर्यातक देश की संस्था से अनुबन्ध करते समय किन-किन बातों का समावेश किया जाना चाहिए उसकी जानकारी भी दी जाती हैं।

इसी के आधार पर ये व्यक्ति निर्यातक के देश में कार्यरत विभिन्न संस्थाओं व उत्पादकों से सम्पर्क करते हैं। उनके उत्पादों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। उसका विश्लेषण करते है। उत्पाद के बारे में अपेक्षाओं व अनुबन्ध की शर्तो व दशाओं की जानकारी उन्हें देते हैं। जब इन्हें पूर्ण सन्तुष्टि हो जाती है, तब वे आयातक की ओर से निर्यातकर्ता देश की संस्था को आदेश देते है, व माल को आयातक के देश में भिजवाने की व्यवस्था कराते है।

इस प्रकार के निजी क्रेता सभी प्रकार के उद्यमों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये आयातक के देश की रेलवे, कृषि उपकरण कम्पनियों, औद्योगिक निगमों, परिवहन कम्पनियों, राज्य व स्थानीय सहकारी समितियों आदि का निर्यातक के देश में प्रतिनिधित्व करते हैं। अपनी सेवाओं के बदले में ये आयातक संस्था जिसने इसे उनकी ओर से क्रय करने के लिए निर्यातक देश में भेजा है या नियुक्त किया है, उसी से वेतन प्राप्त करते हैं। इन्हें क्रय के ऊपर कमीशन नहीं दिया जाता। ये विवेकसम्मत क्रय कर सके, इसीलिए, पारिश्रमिक भुगतान की इस व्यवस्था को इनके लिए अपनाया जाता है।

स्वरूप के बारे में सन्देह
(Doubts about the Form)

आयातक के द्वारा निर्यातक के देश में नियुक्त किए गए व्यक्तियों की कार्य प्रणाली व कार्य इस प्रकार के हैं, जो यह आभास देते हैं कि यह प्रत्यक्ष व्यापार की विधि हैं, सरसरी द ष्टि से देखने पर ऐसा लगना बहुत स्वाभाविक है। इस प्रकार के क्रेता आयातक द्वारा नियुक्त किए गए कर्मचारी होते हैं, जो उससे की गई सेवाओं के बदले में मासिक वेतन प्राप्त करते हैं। इससे निर्यातकों व उत्पादकों अर्थात जो निर्यात कर रहे है, व आयातक संस्था के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित हो जाते हैं। इनके बीच में किसी प्रकार का मध्यस्थ नहीं होता। इससे ऐसा लगता है कि वास्तव में यह तो प्रत्यक्ष व्यापार की ही एक विधि है।

लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं होता। वास्तव में निर्यातक देश का निर्माता या उत्पादक विदेशी क्रेता के सम्पर्क में नहीं आता। आयातक द्वारा नियुक्त किए गए व्यक्ति के सम्पर्क में निर्यातक के देश के उत्पादक सम्पर्क में आते हैं। यदि उन्हें प्रस्ताव उपयुक्त व अनुकूल लगता है, तो वे उसे स्वीकार कर माल व सेवाओं की पूर्ति अनुबन्ध की शर्तो के अनुसार कर देते हैं।

विदेशी संस्था का प्रतिनिधि एक क्रेता के रूप में अधिक सक्रिय रहता है। उसका सारा ध्यान इसी बात पर केन्द्रित रहता है कि आयातक संस्था के लिए अच्छा माल अनुकूलतम मूल्य व शर्तो पर किस प्रकार क्रय किया जावे। इसी के लिए वह अपनी सारी शक्ति लगाता है। वह निर्यातक देश के उत्पादकों या निर्माताओं की ओर से उनके द्वारा उत्पादित माल को विदेशी क्रेता को बेचने के लिए कार्य नहीं करता। इससे निर्यातक व आयातक के बीच वास्तविक सम्पर्क नहीं हो पाता। इस कारण इसे अप्रत्यक्ष व्यापार की एक विधि मानना तर्कसंगत है।

लाभ
(Advantages)

आयातक संस्था निर्यातक के देश में इस प्रकार के व्यक्ति नियुक्त कर अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त कर सकती है। ये व्यक्ति उस वस्तु विशेष के विशेषज्ञ होते हैं, इस कारण इनका चुनाव वैज्ञानिक व लाभप्रद दोनों होता हैं, इन्हें अपनी सेवाओं के बदले मासिक वेतन मिलता है, इससे इनका ध्यान आयातक संस्था के लिए अधिकाधिक क्रय करने का नहीं होकर विवेकपूर्ण क्रय पर रहता है। इससे आयातक के व्ययों में काफी बचत हो जाती है, केवल एक व्यक्ति को इस बारे में पूर्व अधिकार देकर वह इसे सम्पन्न कर सकती हैं, ऐसे व्यक्तियों को उन्हीं देशों में नियुक्त किया जाता है। जो आयातक संस्था के द्वारा आयात की जाने वाली वस्तुओं के बड़े निर्यातक होते हैं। इस स्थिति में वहां स्वाभाविक रूप से निर्माताओं में प्रतियोगिता भी काफी होती है। इससे ये व्यक्ति अनुकूलतम शर्तो व मूल्यों पर माल प्राप्त करने में सफल होते हैं। यह व्यक्ति स्थायी रूप से निर्यातक के देश में रहता है, इससे एक बार वस्तु के क्रय का अनुबन्ध हो जाने पर निर्यातक द्वारा सही समय पर पूर्ति हो इस पर पूरा ध्यान दे सकता है। अवसरों का लाभ भी उठाया जा सकता है।

हानियां
(Disadvantages)

इस प्रकार की प्रणाली के आयातक जहां अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त कर सकता है वहीं इसके कुछ दोष भी हैं इस व्यवस्था में आयातक द्वारा नियुक्त व्यक्ति प्रति मास निश्चित वेतन प्राप्त करता है, इससे उसे प्रत्यक्ष प्रेरणा नहीं होती। वह कितना ही माल क्रय करे उसे निश्चित वेतन नहीं मिलता है। नियुक्त व्यक्ति यदि अवसरों का लाभ नहीं उठा पाता तो यह व्यवस्था खर्चीली भी सिद्ध हो सकती हैं।

VI. निर्यातक देश में आयातक देश के द्वारा स्थापित सरकारी एजेन्सी
(Buying Agency of the Government of the Importing Country Stationed in the Exporting Country)

जिस प्रकार ऊपर वर्णित स्वरूप में आयातक देश की संस्थाएं निर्यातक देश में अपने व्यक्ति उनके लिए क्रय करने हेतु नियुक्त करती हैं, ठीक इसी प्रकार की व्यवस्था इसमें की जाती है, केवल स्वरूप का अन्तर है। पूर्ववर्ती व्यवस्था में जहां इनकी नियुक्ति निजी क्रय संस्थाओं के द्वारा होती थी, वहीं इसमें इनकी नियुक्ति एक एजेन्सी के रूप में आयातक देश की सरकार द्वारा की जाती है।

इस प्रकार की एजेन्सी स्थापना आयातक देश की सरकार द्वारा निर्यातक देश में की जाती है। इस एजेन्सी में कार्य करने वाले व्यक्ति सरकारी कर्मचारी होते हैं। इसकी सेवा शर्तो में कोई मौलिक भिन्नता नहीं होती। जिन सेवा शर्तो पर उस देश के सरकारी कर्मचारी कार्य करते हैं, वैसे ही थोड़े सशोंधनों के साथ ये उस एजेन्सी में कार्य करते हैं। इन एजेन्सियों पर आयातक देश की सरकार औद्योगिक उत्पादनों के लिए आवश्यक कच्चा माल प्राप्त करने के लिए भी ऐसी व्यवस्था कर सकती है।

भारत में जब अनाज की काफी कमी 1967 के आसपास पड़ी थी, तब भारत सरकार ने इससे निपटने के लिए व देश की जनता को अनाज व खाद्यन्न शीघ्र उपलब्ध कराने के लिए अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में इण्डिया सप्लाई मिशन की स्थापना की थी। इसका कार्य अमेरिका में विद्यमान विभिन्न बाजारों का अध्ययन विश्लेषण कर अच्छे किस्म का अनाज उपयुक्त कीमतों पर क्रय उसे शीघ्र भेजने की व्यवस्था करना था। यह व्यवस्था उस समय काफी उपयुक्त रही थी। जापान

इस प्रकार की व्यवस्था को अपनाने वाला प्रमुख देश है। जापान आज विश्व बाजारें में कई विकसित देशों के लिए चुनौती बन कर खड़ा है। जापान के पास न कोयला है, न लोहा, अतः जापान ने अपनी सरकारी ऐजन्सियां अपने देश के लिए इन वस्तुओं के क्रय के लिए स्थापित की हैं।

इन एजेंसियों की कार्य-प्रणाली भी अन्य सरकारी विभागों जैसी होती है। आयातक देश की सरकार इस प्रकार की एजेन्सी को जिन-जिन वस्तुओं की आवश्यकता होती है, उसका पूरा ब्यौरा भेज देती है। इसके आधार पर ये एजेन्सियां निर्यातक के देश में टेण्डर आमन्त्रित करती हैं। प्राप्त टेण्डरों का ये एजेन्सियां अध्ययन करती हैं, पूरे विश्लेषण के पश्चात् जो टेण्डर अनुकूल व उपयुक्त होता है, उसे स्वीकार कर जिस संस्था का वह टेण्डर होता है, उसे आदेश आयातक देश की सरकार की ओर से देती हैं टेण्डर आमन्त्रित करते समय दिये गये विज्ञापन में वस्तु की किस्म, उसके गुण पूर्ति की शर्तो, परिवहन की व्यवस्था, भुगतान की शर्तो, पूर्ति करने का अनुबन्ध का पालन शर्तो के आधार पर नहीं करने पर होने वाले परिणामों व अन्य शर्तो की पूरी जानकारी दे देती है जिससे टेण्डर भरने वाले को इनकी पूरी जानकारी हो जावे।

लाभ
(Advantages)

सरकार के पास इस प्रकार की एजेन्सियां स्थापित करने के लिए पर्याप्त साधन व सामर्थ्य होता है इससे आवश्यकता के समय शीघ्र ही इन एजेन्सियों की तुरन्त स्थापना कर सरकार अपने देशवासियों की तीव्र गति से राहत प्रदान कर कष्ट से बचा सकती है। देश की आवश्यकताओं का सही मूल्यांकन प्राथमिकताओं के क्रम में करके सरकार इनकी उचित व्यवस्था विदेशी बाजारों से अनुकूलतम शर्तो पर कर सकती है। इस प्रकार की एजेन्सी स्थायी रूप से वहां कार्य करती है अतः उनका निर्यातक देश की उन वस्तुओं के विभिन्न बाजारों का व्यापक अध्ययन करने का अवसर मिलता है। इससे दीर्घकाल में पारस्परिक सहयोग की दोनों देशों में बढता है। आयातक देश की सरकारी एजेन्सी होने के नाते इसकी विश्वसनीयता भी अधिक होती हैं।

हानियां
(Disadvantages)

जहां इसका उपयोग कर आयातक देश की सरकार कई लाभ प्राप्त करती है, वहीं इस व्यवस्था के अनेक दोष भी हैं। यह एजेन्सियां आयातक देश की सरकार द्वारा अपने नियन्त्रण में स्थापित की जाती है इसके कर्मचारी भी सरकारी कर्मचारी होते हैं, इसके कारण जो दोष सरकारी प्रणाली में होते है, वे दोष इन एजेन्सियों में भी आ जाते हैं इनमें भी नौकरशाही व लाल फीतशाही का बोलबाला होता है। सरकार विभागों में कार्य करने से अपेक्षित प्रेरणा का अभाव होता है वे देश के लिए विभिन्न आवश्यकता की वस्तुएं भी समान्यतया टेण्डर से खरीदते हैं। इनके क्रय करने की एक निश्चित प्रणाली होती है, जिसका पालन सभी वस्तुओं के क्रय में किया जाता है। इससे निर्णय लेने व आदेश देने में देरी होती हैं व हो सकता है कि इस बीच भावों में व द्धि हो जावे। बाजार के अवसरों का भी ये लाभ नहीं उठा पातीं। क्योंकि इनका ध्यान तो केवल नियमों व व्यवस्थाओं में रहता है। व्यावसायिकता के सिद्धान्तों के आधार पर कार्य करने की बजाय ये तकनीकी पक्ष में उलझ कर रह जाती हैं। सरकारी नियन्त्रण के कारण कर्मचारियों को अपनी प्रतिभा को दिखाने का पूरा अवसर नहीं मिल पाता।

इसका एक अन्य सम्भावित दोष यह भी है, जिसकी ओर ध्यान नहीं जाता है। आयातक देश की सरकार द्वारा स्थापित होने के कारण उस देश के राजनेताओं का इन पर पूरा नियन्त्रण होती है। यदि किसी राजनेता का किसी सौंदे विशेष में हित अटका हुआ है। तो एक सम्भावना यह हो सकती है, कि वह सम्बन्धित अधिकारी को उसे स्वीकार करने को विवश कर दे। ऐसा करने से जहां देश का घोर अहित होता है, नहीं पर एजेन्सी के अधिकारी का मनोबल भी गिर जाता है। फिर वह जैसा राजनेता चाहे उसे मान लेता है। गलत काम की परम्परा पड़ने पर मौका पड़ते ही वह भी उसका लाभ उठाने व बहती गंगा में हाथ धोने से नहीं चूकता। इस प्रकार इसकी गम्भीर हानियां भी है। भारत द्वारा 1967 में इस प्रकार की एजेन्सी द्वारा क्रय किये गये सड़े-गले अनाज को लोग अभी भूले नहीं हैं। उसकी कड़वी स्म तियां ताजी हैं।

VII. निर्यात हेतु सरकारी क्रय एजेन्सी
(Government Buying Agency for Export)

अप्रत्यक्ष व्यापार की इस विधि में निर्यातक देश की सरकार अपने ही देश में एक ऐसी एजेन्सी की स्थापना कर देती है। यह एजेन्सी अपने देश के उत्पादकों से उचित मूल्यों पर माल का क्रय कर लेती है, व विदेशी बाजारों की आवश्यकता के अनुसार उनका निर्यात करती है। इस एजेन्सी पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण होता है, व इसमें कार्य करने वाले कर्मचारी भी सरकारी कर्मचारी होते हैं यह अपने नाम में ही वस्तुओं का क्रय करती है, व अपने नाम में ही उनका विक्रय करती है। क्रय मूल्य व विक्रय मूल्य में जो अन्तर होता है, वह इसका लाभ होता है। यह एजेन्सी इस प्रकार से उत्पादकों व विदेशी क्रेताओं के बीच कड़ी या मध्यस्थ का कार्य करती है।

भारत में भी इस प्रकार की सरकारी एजेन्सियों की स्थापना की गयी है। राजकीय व्यापार निगम उत्पादकों से चीनी, चमड़े का सामान, अफीम, नमक, चाय, कॉफी, चावल, तम्बाकू, पटसन आदि वस्तुएं क्रय कर अनेकों यूरोपीय देशों को विक्रय करता है। अब इसके कार्य में काफी विविधता आ गयी है। आजकल निगम विभिन्न औद्योगिक उत्पादन ग्रामोंफोन रिकार्ड, मछलियां, सूखी बैटरियां, सिलाई मशीनें, विविध विकास व निर्माण सामग्री का विदेशों को निर्यात करता है। 1978-79 में राजकीय व्यापार निगम ने 602 करोड़ रुपये की वस्तुओं का विदेशों को निर्यात किया, जो अपने आप में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

इसी प्रकार भारतीय हस्तशिल्प और हाथकरघा निर्यात निगम की स्थापना की गयी है, जो हस्तशिल्प व हाथकरघा के माल का विदेशों को निर्यात करता है। भारतीय केन्द्रीय कुटीर उद्योग निगम, कुटीर उद्योगों द्वारा निर्मित उत्पादों का विदेशों में विक्रय करता है। भारतीय काजू निगम काजू का निर्यात करता है। इस प्रकार अनेक प्रकार की सरकारी एजेन्सियां वर्तमान में कार्य कर रहीं है। जिनका कार्य उत्पादकों से माल क्रय कर उनका विदेशों में विक्रय कराना हैं।

लाभ
(Advantages)

इस प्रकार की एजेन्सियों की स्थापना से छोटी व मध्यम स्तर के उत्पादकों को बड़ी राहत मिलती। निर्यात विपणन में आने वाली कठिनाईयों व आर्थिक संसाधनों के अभाव में उनके लिए विदेशी क्रेताओं से सीधे सम्बन्ध स्थापित करना सम्भव नहीं होता। इसका लाभ उठाकर वे अपने प्रमाणित उत्पादों को उचित मूल्यों पर इन एजेन्सियों को बेच सकते हैं। उन्हें सभी प्रकार की निर्यात औपचारिकताओं से मुक्ति मिल जाती है। निर्यातक देश की सरकार के लिए भी इस प्रकार की एजेन्सियों में कार्यरत कर्मचारियों को प्रेरणा प्रदान कर सकती है। निर्यातों से प्राप्त विदेशी मुद्रा का उपयोग सरकार अपने भुगतान असन्तुलन को दूर करने या देश के विकास के लिए कर करती है। सरकार द्वारा स्थापित एजेन्सी होने के कारण इसके साधन विशाल होते हैं, इसका लाभ भी निर्यात विपणन में उठाया जा सकता है।

दोष
(Disadvantages)

सबसे बड़ा दोष उनका यही है, कि सरकार कर्मचारियों में पहलपन, प्रेरणा की उच्च भावनाएं सामान्यतया नहीं होती। वस्तुओं को क्रय करना आसान है पर उनको प्रतियोगी मूल्यों पर निर्यात बाजारों में बेचना ही कठिन है ऐसा नहीं होने पर सरकार के पूंजीगत साधन जाम हो जाते हैं, सही समय पर माल नहीं बिकने से वस्तु खराब हो जाती हैं, उसकी विक्रयशीलता में कमी हो जाती है।

अध्याय-12
अन्तर्राष्ट्रीय विपणन–नियोजन, संगठन एवं नियंत्रण
(International Marketing—Planning, Organisation and Control)

विपणन नियोजन से अर्थ
(Meaning of Marketing Planning)

फिलिप कोटलर के अनुसार, "भविष्य में क्या करना है इसको वर्तमान में तय करना ही नियोजन है। इसमें वांछित भविष्य का निर्धारण और उसकी प्राप्ति के लिए आवश्यक कदम दोनों ही सम्मिलित होते हैं। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा कम्पनियां अपने साधनों को अपने लक्ष्यों के अवसरों के साथ समायोजित करती है।'' ("Planning is deciding in the present what to do in the future. It comprises both the determination of a desired future and the steps necessary to bring it about. It is the process where by companies reconcile their objectives and opportunities."—Philip Kotler : Marketing Management. p. 362.)

लाजो एवं कोरबिन ने इस प्रकार कहा है कि ''नियोजन में भविष्य की ओर देखा जाता है कि हम कहां जाना चाहते हैं? हम क्या करना चाहते हैं? और ऐसा करने में क्या कठिनाइयां सामने आ सकती है।'' ("Planning—Looking ahead to where we want to go, what we want to do, and what obstacles we are likely to econouter in doing it."—Lazo & Corbin : Management in marketing, p. 32.)

एक व्यापारी भी अपनी वस्तुओं व सेवाओं के सम्बन्ध में पहले से एक योजना बनाता है कि वह किस प्रकार वस्तु को उत्पादित करेगा? उसको बेचने के लिए विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन व वैयक्तिक विक्रय, आदि का सहारा किस प्रकार लेगा? उसके वितरण की क्या व्यवस्था करेगा? इस सब कार्य के लिए किन-किन साधनों मशीनों व मानव शक्ति की आवश्यकता होगी? यह क्रियाएं नियोजन के अन्तर्गत आती हैं।

नियोजन का अर्थ समझने के बाद विपणन नियोजन का अर्थ आसानी से समझा जा सकता है। अमरीका मार्केटिंग एसोसिएशन के अनुसार, "विपणन क्रिया के लिए उद्देश्यों को निश्चित करना व उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक कदमों का निर्धारण एवं सूचियन ही विपणन नियोजन है।'' (Marketing Planning—"The work of setting up objectives for marketing activity and of determining and scheduling the steps necessary to achieve such objectives."—Committee on Definitions : American Marketing Association, 1960.)

स्टीफन मौरसे के अनुसार ''विपणन नियोजन से अर्थ उपलब्ध साधनों को पहचानने एवं उनका निर्दिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आबंटित करने से है।'' ("Marketing Planning is concerned with the identification of resources that are available, and their allocation to meet specified objectives."—Steplen Morse : The practical Approach to Marketing Management, p. 76.)

इन दोनों परिभाषाओं के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि (i) विपणन नियोजन में सबसे पहले उद्देश्य निश्चित किये जाते हैं। यह उद्देश्य उस सीमा को निश्चित करते हैं जहां तक कम्पनी विपणन क्रियाओं का विकास करना चाहती है। इसी बात को इस प्रकार भी कह सकते हैं कि यह वह लक्ष्य है जिसको संस्था प्राप्त करना चाहती है। (ii) विपणन नियोजन में उन उद्देश्यों या लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक साधनों को जुटाया जाता है एवं प्रयत्नों में उसका बंटवारा किया जाता है।

वास्तव में विपणन नियोजन एक संस्था के समग्र नियोजन (Overall Planning) का ही एक भाग है। इसमें विपणन साधनों का प्रयोग भविष्य में किस प्रकार किया जायेगा उसको वर्तमान में ही निश्चित कर दिया जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन नियोजन में मुख्य रूप से निम्न को शामिल किया जाता है–

– **वस्तु नीति नियोजन** (Product Power, Planning)

– **मूल्य नीति नियोजन** (Price Policy Planning)

– **भौतिक वितरण नीति नियोजन** (Physical Distribution Policy Planning)

– **संवर्द्धन नीति नियोजन** (Promotion Policy Planning)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन नियोजन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। इसका कोई अन्त नहीं है। जिस व्यवसाय में इसका अन्त हो जायेगा अर्थात जो व्यवसाय इसका अनुसरण करना बन्द कर देगा वह व्यवसाय अपने आपको अधिक समय तक जीवित नहीं रख सकेगा।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय विपणन नियोजन वह प्रक्रिया है जो निर्यात व्यापार में निरन्तर होती रहती है तथा इसमें भावी अन्तर्राष्ट्रीय विपणन लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं और उन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु आवश्यक साधनों को जुटाकर विभिन्न प्रयत्नों मे बंटावारा किया जाता है।

प्रारम्भ में विपणन नियोजन की इतनी आवश्यकता नहीं थी। इसका कारण था कि बाजार निर्माता के नियन्त्रण में था। निर्माता के द्वारा जो भी वस्तु जिस भी रूप में तैयार कर दी जाती थी उपभोक्ता उसको सहज रूप से स्वीकार कर लिया करता था। विपणन के क्षेत्र में आयी व्यापकता, उसके अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा निगमों के आने से स्थिति एक दम बदल गयी है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में निम्न कारणों से आज नियोजन की आवश्यकता पहले से भी कही ज्यादा हो गयी है–

i. **बाजारों में विस्तार** (Expention in Markets)

ii. **व हत उत्पादन** (Large Scale Production)

iii. **उपभोक्ता की शीघ्र बदलती हुई क्रय आदतें** (Fast Changing Purchasing Habits of the Consumers)

iv. **गला काट प्रतियोगिता** (Throat cut Competition)

v. **भारी जोखिम** (To much Risk)

सिद्धान्त एवं व्यवहार में विपणन नियोजन
(Marketing Planning in Theory and Practice)

विपणन नियोजन विश्लेषण एवं दूर द ष्टि का अभ्यास है जिसको एक निर्यातक संस्था अपनी विपणन क्रियाओं को प्रभावी बनाने के लिये करती है। वास्तव में यह एक चतुर निर्यात प्रबन्धक का महत्वपूर्ण कार्य है। विपणन नियोजन विपणन लक्ष्य निर्धारित करने से प्रारम्भ होता है। इसके बाद इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए साधनों को नियोजित किया जाता है। इस प्रक्रियाओं में प्रबन्धक के सामने बहुत से विकल्प (Alternatives) होते हैं, जिनमें से सबसे उत्तम विकल्प को चुनने के लिए नियोजन की प्रक्रिया करनी पड़ती है। इसके लिए मूल नीतियों एवं चालों को चुना जाता है जिससे कि संस्था अपने लक्ष्य प्राप्त करने में सफल हो सके।

हारवर्ड विश्वविद्यालय के प्रो. वासिली लिथोण्टिक को मतानुसार विपणन नियोजन आन्तरिक एवं बाह्य साधन सिद्धान्त का विस्तार है। (Marketing Planning is the expention of input and output Theory) इसमें पहले बाह्य साधनों (Out put) को निर्धारित करते हैं और फिर उसके अनुसार आन्तरिक साधनों (In put) को इस प्रकार जुटाते हैं कि उनका अधिकतम कुशलता के साथ उपयोग हो सके। इसको इस प्रकार भी कह सकते है कि इसमें बाह्य साधन अर्थात संस्था के लक्ष्य पहले निर्धारित किये जाते हैं, फिर इन लक्ष्यों के अनुसार आन्तरिक साधनों को जुटाते हैं जिससे लक्ष्य प्राप्त हो सके। इसे एक उदाहरण के द्वारा और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। मान ले किसी निर्माता का लक्ष्य 10 नये देशों में 10 लाख इकाईयों के विक्रय का है। यह उस संस्था का Out put है। इसको प्राप्त करने के लिये उस संस्था को अपने आन्तरिक साधन जैसे विक्रयकर्ता,

विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, उत्पादन एवं वित्तीय साधन इस प्रकार जुटाने होगे जिससे कि 10 नये देशों में 10 लाख इकाइयों के विक्रय का लक्ष्य प्राप्त हो सके। यह तो सैद्धान्तिक विवेचना है, यदि संस्था के साधन सीमित व कम मात्रा में हैं तो फिर प्रश्न यह उठता है कि अब क्या किया जाय? व्यवहार में यह पाया जाता है। कि लक्षणों को आन्तरिक साधनों (Input) के अनुसार परिवर्तित कर लिया जाता है। अतः इसका अर्थ है कि यदि संस्था के साधन सीमित हैं तो लक्षणों को छोटा किया जा सकता है। इस प्रकार संस्था के आन्तरिक लक्षणों की सीमा को निर्धारित कर सकते हैं। यह सर्वथा न्यायोचित भी है कि आन्तरिक साधनों के अनुसार ही विपणन लक्ष्य निर्धारित किये जाये।

स्टाण्टन (Stanton) ने ठीक ही लिखा है कि ''साधनों में लक्षणों या आन्तरिक व बाह्य साधनों को मिलाना ही विपणन नियोजन है।'' (Planning involves matching of means and ends or inputs and outputs)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन नियोजन का क्षेत्र
(Scope of International Marketing Planning)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन का क्षेत्र बहुत ही व्यापक हैं इसमें उत्पादन सम्बन्धी विचार से लेकर वस्तु को उपभोक्ता तक पहुंचाने की क्रियाएं ही नहीं आती बल्कि विक्रय के बाद सेवा इसके अन्तर्गत आती है। इसीलिए **स्काट व वार्सा** ने अपनी पुस्तक 'Introduction to Marketing Management : Text and Law' में लिखा है कि "विपणन नियोजन प्रक्रिया ग्राहक से प्रारम्भ होकर ग्राहक पर ही समाप्त होता है।'' वास्तव में, इसमें चार P की क्रियाओं का समावेश होता है–वस्तु नीति (Product Policy), मूल्य नीति (Price Policy), भौतिक वितरण नीति (Physicial Distribution Policy), व संवर्द्धन नीति (Promotional Policy)। इसका अर्थ यह है कि विपणन नियोजन में इन चारों का विस्त त अध्ययन कर एक ऐसा सर्वोत्तम हल निकाला जाता है कि लक्ष्यों को पूर्ण कुशलता के साथ प्राप्त किया जा सके। इसके लिए इन चारों P का नियोजन किया जाता है।

विपणन नियोजन में वस्तु के उत्पादन के सम्बन्ध में योजना बनायी जाती है कि वस्तु किस प्रकार की होगी व उसका समय-समय पर कितना उत्पादन होगा जिससे कि उसका विक्रय योजना के साथ तालमेल बना रहे।

मूल्य नीति का नियोजन भी विपणन नियोजन का अंग है। इसके लिए जो मूल्य नीति एक निर्माता अपनाता है उसको भी पहले से नियोजित कर लेता है। ऐसा करते समय प्रतियोगिता एवं उपभोक्ता का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है।

विपणन नियोजन के क्षेत्र में वितरण बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसमें वस्तु को उपभोक्ता तक पहुंचाने के लिए कार्यक्रम बनाया जाता है जिसमें विक्रेताओं की नियुक्ति, भौतिक वितरण साधन आदि का नियोजन किया जाता है।

आज के युग में विक्रय के लिए संवर्द्धन आवश्यक है। विपणन नियोजन में संवर्द्धन क्रियाओं को भी ध्यान में रखकर योजनाएं सम्मिलित करते हैं। इसमें विज्ञापन, वैयक्तिक विक्रय व विक्रय संवर्द्धन की क्रियाओं का नियोजन किया जाता है।

इस प्रकार विपणन नियोजन के क्षेत्र में परिधि में वस्तु नीति नियोजन, मूल्य नीति नियोजन, वितरण नीति नियोजन एवं संवर्द्धन नीति नियोजन चारों ही आते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन नियोजन का क्षेत्र घरेलू विपणन नियोजन की तुलना में अधिक व्यापक, जटिल एवं पेचीदा है। इसमें विदेशी बाजारों की परिस्थितियों, उपभोक्ताओं की मनोव द्धि जीवनस्तर, प्रतियोगिता का स्तर देश की राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक अवस्थाओं का विशेष महत्व होता है।

विपणन नियोजन का महत्व एवं लाभ
(Importance and Benefits of Marketing Planning)

विपणन नियोजन के महत्व को बताते हुए **प्रो. स्टाण्टन** ने लिखा है कि "नियोजन के बिना कम्पनी के कार्यकलापों एवं संचालन का कोई अर्थ नहीं है तथा लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रबन्ध का कोई व्यवस्थित तरीका उपलब्ध नहीं हो सकता है।''

विपणन में नियोजन का बहुत महत्व है। यही कारण है कि नियोजन किसी न किसी रूप में अवश्य ही किया जाता है। कुछ संस्थाएं यह नियोजन औपचारिक (Formal) रूप से करती हैं जबकि कुछ अनौपचारिक (Informal) रूप से। कुछ वैज्ञानिक ढंगों का उपयोग करती हैं तो कुछ साधारण ढंगों का, लेकिन एक बात तो अवश्य है कि जहां कई विकल्प सामने हों वहां नियोजन अवश्य ही किया जाना चाहिए।

विपणन के क्षेत्र में नियोजन कोई नया यन्त्र नहीं है, लेकिन औद्योगिक उन्नति व बढ़ते हुए रहन-सहन के स्तर ने इस विपणन नियोजन के महत्व को बहुत बढ़ दिया है। यदि कोई संस्था अपने को प्रभावी बनाना चाहती है और अधिक लाभ कमाना चाहती है तो उसके लिए विपणन नियोजन ही एक ऐसा रास्ता है जो उसको अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सहायक हो सकता है। यहीं नहीं, यह एक प्रकार का उपकरण है जिसका उपयोग प्रबन्धक के द्वारा जोखिम को कम करने के लिए किया जा सकता है।

अमरीका जैसे देश में जहा व्यापारिक प्रतियोगिता चरम सीमा पर है तथा जहां इसके कारण लाभों में कटौती होती है वहां विपणन नियोजन ही एक सहारे के रूप में अपनाया गया है। आज के इस युग में जहां कम्प्यूटर का सहारा लिया जा रहा है व्यापार क्रिया शोध (Operation Research) की जा रही है, प्रेरणा अनुसन्धान (Motivation Research) हो रहा है वहां पर तो विपणन नियोजन परमावाश्यक है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में साधारण नियोजन नहीं बल्कि वैज्ञानिक नियोजन की आवश्यकता है।

एक संस्था को औपचारिक या अनऔपचारिक नियोजन करने से निम्नलिखित लाभ मिलते हैं–

1. **पूर्व चिन्तन को प्रोत्सहन** (Incentive to Pre-Thinking)–विपणन नियोजन प्रबन्धकों को पूर्व-चिन्तन के लिए प्रोत्साहित करता है। इससे आन्तरिक सहयोग व संचार की उन्नति होती है तथा दिन-प्रतिदिन के निर्णय लेने के लिए एक ढांचा-कार्य पहले से ही तैयार हो जाता है।
2. **शीघ्र निर्णय** (Quick Decision)–चिन्तन के बाद विचारों को कार्य रूप में परिणित करने से पूर्व लिखा जाता है जो भावी योजनाओं को लिखित रूप में रखने के लिए बाध्य करता है। ऐसे करने से निर्णय शीघ्र हो जाते हैं और अल्पकालिक असुविधाओं को ठीक रूप में सुलझाया जा सकता है।
3. **निष्पादन प्रमाणों का विकास** (Development of Performance Standards)–विपणन नियोजन निष्पादन प्रमापों (Performance Standards) का विकास करता है जिससे कि व्यावसायिक क्रियाओं के नियन्त्रण में आसानी रहती है।
4. **प्रबन्धकों को अन्य कार्यों के लिए मौका** (Opportinuty to Managers for Other Works)–विपणन नियोजन प्रबन्धकों व अन्य लाइन स्टाफ को सोचने, निर्णय लेने व अन्य महत्वपूर्ण कार्य के लिए मौका देता है इसका कारण यह है कि नियोजन सम्बन्ध कार्य नियोजन विभाग के द्वारा किया जाता है जबकि उस नियोजन को प्रबन्धकों व लाइन स्टाफ के द्वारा कार्यरूप में परिर्णित किया जाता है।
5. **नीतियों को निखारने की प्रेरणा** (Incentive to Polish Policies)–विपणन नियोजन संस्था को मार्गदर्शक उद्देश्यों एवं नीतियों को निखारने की प्रेरणा देता है तथा प्रबन्धक को नये-नये बाजार व नयी-नयी वस्तुओं की सम्भावनाओं से अवगत कराता है जिससे कि ऐसे अवसरों का लाभ प्राप्त किया जा सके।
6. **प्रयासों में समन्वय** (Co ordination among Efforts)–विपणन नियोजन से भावी क्रियाओं में होता है।
7. **अचानक आपत्तियों से बचाव** (Saves from Accidential Hardships)–विपणन नियोजन अचानक आने वाली आपत्तियों से बचाता है।

विपणन नियोजन के प्रकार या वर्गीकरण
(Kinds or Classifiation of Marketing Planning)

विपणन नियोजन का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया जा सकता है, लेकिन हम यहां सिर्फ समय अवधि के आधार पर ही वर्गीकरण कर रहे हैं। समय के आधार पर यह नियोजन तीन प्रकार का होता है–

1. **दीर्घकालीन नियोजन** (Long-Range Planning)–दीर्घ या लम्बे काल के लिए होता है; जैसे तीन वर्ष, पांच वर्ष, दस वर्ष, पच्चीस वर्ष, आदि। यह विपणन नियोजन बहुत ही महत्व का है। साधारणतया यह नियोजन वस्तु विस्तार, बाजार विस्तार के लिए होता है, तथा यह कार्य नियोजन विभाग व उच्च प्रबन्ध के द्वारा किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय विपणन में दीर्घकालीन नियोजन ही कारगर होता है।
2. **अल्पकालीन नियोजन** (Short Range Planning)–साधारणतया कुछ महीने या एक वर्ष के लिए होता है। इसके नियोजन का कार्य मध्यम श्रेणी प्रबन्धकों (Middle-class Executives) के द्वारा अपने स्तर पर किया जाता है। इसमें मूल्यों में समायोजन, मौसमी क्रय, चालू विज्ञापन, आदि आते हैं।

3. **एडॉक नियोजन** (Adhoc Planning)–यह विशेष नियोजन है, जो विशेष परिस्थिति के अनुसार नियोजित किया गया है जैसे जब किसी पेटेण्ट का समय पूरा हो गया है तो आगामी काल के लिए एडहॉक नियोजन कर लेना। एडहॉक का अर्थ है कि यह नियोजन थोड़े समय के लिए किया गया है और कुछ समय के बाद इसका पुनः निरीक्षण करके उचित निर्णय लिया जायेगा।

दीर्घकालीन विपणन नियोजन के कारण
(Reasons for long Range Marketing Planning)

अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के कार्य में लगी हुई सभी बड़ी बड़ी कम्पनी दीर्घकालीन विपणन नियोजन करती हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि वे ऐसा क्यों करती हैं? इसके लिए निम्न कारण बताये जाते हैं–

1. **पूंजीगत सम्पत्ति के नियमित प्रतिस्थापन** (Capital nature asset replacement) के लिए पहले से प्रबन्ध करने के उद्देश्य से।
2. यह निश्चित करने के लिये कि विदेशी बाजार के लिये उचित एवं पर्याप्त मात्रा में प्रतिनिधि एवं योग्य विपणनकर्ता मिल सकेंगे।
3. विदेश व्यापार के द ष्टिकोण से वस्तु पंक्ति में सुधार, संशोधन एव परिवर्तन के लिये।
4. नयी योजनाओं के लिये सभी प्रयत्नों में उचित तालमेल के लिये।
5. जल्दबाजी वाले निर्णयों (Hasty Decisions) को रोकने के लिये।
6. प्रतियोगिता में बराबर रहने के लिये।
7. पूर्वानुमान क्रियाओं को मजबूत करने एवं उन्हें मूल्य प्रदान करने के लिये।
8. संस्था के कुल कार्य सम्पादन को मापने के उद्देश्य से एक पैमाना देने के लिए।
9. बदली हुई परिस्थितियों में स्वयं सामन्जस्य, स्थापित करने की क्षमता प्राप्त करने के लिये।
10. विक्रय एवं विज्ञापन कार्यक्रमों की सफलता के लिये।
12. लाभ नियोजन के लिये।
13. व्यवसाय एवं बाजार के विस्तार के लिये।
14. भौतिक वितरण के विस्तार एवं फैलाव के लिए।
15. बहुराष्ट्रीय कम्पनी का स्वरूप तथा उसे विकास एवं विस्तार को प्राप्त करने के लिये।

उन्नत देशों में तो संस्थाएं बिना विपणन नियोजन के जीवित ही नहीं रह सकती हैं। जो संस्थायें ऐसा नहीं करती हैं वे अधिक काल तक अपना अस्तित्व बनाये नहीं रह पाती हैं। आज विपणन नियोजन एक आवश्यकता है। अब तो यह प्रश्न पूछा जाता है कि क्या हम बिना विपणन नियोजन के जीवित नहीं रह सकते हैं? अब यह नहीं पूछा जाता है कि क्या हम विपणन नियोजन के व्यय को सहन पर सकते हैं? Can we afford it? आज के युग में अटकलों से काम नहीं चलता है।

दीर्घकालीन विपणन नियोजन को प्रमाणित करने वाले घटक
(Factors Affecting Long-Range Marketing Planning)

यदि कोई संस्था दीर्घकालीन विपणन नियोजन करना चाहती है तो उसके समझ बहुत से घटक होते हैं जो उसके इस प्रकार के नियोजन को प्रभावित करते हैं। यह घटक विभिन्न प्रकार के होते हैं लेकिन अध्ययन की सुविधा के लिए इनको निम्न चार भागों में बांट सकते हैंः–

1. **आन्तरिक घटक** (Internal Factors)–यह वह घटक हैं जो स्वयं संस्था से सम्बन्धित हैं; जैसे संस्था का प्रबन्धक, संगठन ढांचा, कच्चे माल की स्थिति विक्रय क्षमता एवं चतुराई, उत्पादन ज्ञान, पूंजी उपलब्धता भौतिक सुविधाएं वस्तु पंक्ति, आदि। यह सभी घटक एक संस्था के दीर्घकालीन नियोजन को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए हम प्रबन्ध को लेते हैं। यदि प्रबन्धक के पास अनुभव कम है व जोखिम सहने की क्षमता अधिक नहीं है तो ऐसा प्रबन्ध भावी नियोजन नहीं कर पायेगा। इसी प्रकार यदि उत्पादन ज्ञान (Production know-how) सीमित है तो भावी नियोजन में बाधा आयेगी।

2. **उद्योग घटक** (Industry Factors)—कुछ घटक ऐसे हैं जो उद्योग से सम्बन्ध रखते हैं। वे भी दीर्घकालीन नियोजन को प्रभावित करते हैं। इन घटकों में उद्योग में प्रतियोगिता की गम्भीरता उद्योग में प्रचलन, उद्योग का अन्य उद्योगों से सम्बन्ध आदि प्रमुख है। यदि उद्योग में प्रतियोगिता गम्भीर रूप से है तो दीर्घकालीन नियोजन सम्भव नहीं होगा, क्योंकि पहले तो जीवित रहने का तरीका ढूढ़ना होगा।

3. **बाह्य घटक** (External Factors)—यह वह घटक हैं जो राष्ट्रीय हैं तथा जिनका प्रभाव उद्योग विशेष पर पड़ता है। इन घटकों में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की प्रव त्ति, राष्ट्रीय उत्पादन, आय, जनसंख्या अर्थव्यवस्था की प्रव त्ति, राष्ट्रीय उत्पादन, आय, जनसंख्या मूल्य प्रव त्ति, क्षेत्रीय विकास आदि आते हैं। यह सभी घटक दीर्घकालीन नियोजन को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिये, जनसंख्या को लेते हैं। यदि जनसंख्या बढ़ रही हैं तो नियोजन इस द ष्टि को ध्यान में रखकर किया जायेगा कि वस्तु की मांग बढ़ सकती हैं, लेकिन इसके विपरीत यदि जनसंख्या घट रही है तो इसका अर्थ यह हो सकता है कि वस्तु की मांग घट जायेगी। अतः मांग के घटने को ध्यान में रखकर नियोजन किया जायेगा।

4. **अन्तर्राष्ट्रीय घटक** (International Factors)—अन्तर्राष्ट्रीय घटक किसी भी वस्तु के दीर्घकालीन नियोजन को प्रभावित करते हैं। यह घटक विश्वयुद्ध, अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक नीति, रहन सहन का स्तर वैज्ञानिक एवं तान्त्रिक विकास आदि है। यदि विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो जाता है तो दीर्घकालीन नियोजन नहीं हो सकता है। उसका कारण यह है कि युद्ध के कारण प्रत्येक देश की स्थिति बदलती रहती है। इस प्रकार यह सभी घटक नियोजन को प्रभावित करते हैं।

वैज्ञानिक विपणन नियोजन में रुकावटें या कठिनाइयां
(Obstacles or Difficulties in Scientific Marketing Planning)

वैज्ञानिक आधार पर विपणन नियोजन आधुनिक काल में एक आवश्यकता बन गयी है, लेकिन कुछ व्यवसायी अभी इसको उचित नहीं मानते हैं और वे अपने अनुमान को ही सही मानकर नियोजन करते हैं। वास्तव में, यह उचित नहीं है। इसके अतिरिक्त, कुछ अन्य बाधाएं या कठिनाइयां या रुकावटें भी वैज्ञानिक विपणन नियोजन में आती हैं जो निम्नलिखित हैं—

1. **सर्वोच्च अधिकारियों के पास समय का अभाव** (Lack of Time with Top Executives)—सबसे बड़ी बाधा प्रबन्ध के सर्वोच्च अधिकारियों के पास समय का अभाव है। सर्वोच्च अधिकारियों के पास समय के अभाव की समस्या को अधीनस्थ अधिकारियों को अधिकार सौंपकर हल किया जा सकता है।

2. **व्यवसायों में भिन्नता** (Differentiation in Business)—बहुत से अधिकारी यह कहते हैं कि उनका व्यवसाय अन्य व्यवसायों से भिन्न है (This business is different)। उनका यह तर्क गलत सिद्ध हो चुका है। अधिकांश संस्थाओं की समस्याएं समान होती हैं। वास्तविकता यह है कि व्यवसायों में उनके अनुभवों, कर्मचारियों, उद्देश्यों, प्रबन्धों, आदि की द ष्टि से तो अन्तर होता है, लेकिन जब सभी प्रकार के अधिकारी यह कहते हैं तो इसमें अधिक सार नहीं होता है। वे यह भूल जाते हैं कि नियोजन का कार्य भावी प्रव त्ति (Future Trend) का पता लगाना है न कि चक्र की स्थिति का (Position of the Cycle)।

3. **उपभोक्ता** (Consumer)—तीसरे यह कहा जाता है कि विक्रय एंव लाभ उपभोक्ता की आवश्यकता एवं मन (Whims and Wants) पर आधारित है। चूंकि उपभोक्ता अपनी इन दोनों बातों के बारे में अगले 5 या 10 वर्षों के लिए व्यक्त करने में असमर्थ रहता है तो फिर किस प्रकार नियोजन किया जा सकता है? इसके लिए यह कहा जाता है कि प्रेरणा अनुसन्धान (Motivational Research) व अन्य सांख्यिकीय तरीकों से इसको मापा जा सकता है।

4. **कुल उत्पादन का नियोजन** (Planning of Total Production)—विपणन नियोजन में एक बाधा कुल उत्पादन के हिस्से को नियोजित करने की है। यदि किसी वस्तु का कुल उत्पादन प्रभावित होता है तो उसका प्रभाव दूसरे उद्योगों पर पड़ता है जैसे स्टील की कमी बिजली व मोटरकार उद्योग को प्रभावित करती है। वास्तव में, यह कठिनाई उचित प्रतीत होती है।

5. **व्यवसाय का पेचीदा होना** (Complexity in Business)—व्यवसाय स्वयं पेचीदा (Complex) है और स्वयं भी बाधाएं उत्पन्न कर देता है। वस्तुओं में विभिन्नीकरण दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इस कारण विपणन नियोजन में कठिनाई है। उदाहरण के लिए, पहले एल्यूमीनियम वस्तुएं बहुत थोड़ी ही बनती थीं, लेकिन आज इनका उपयोग तांबा व पीतल के स्थान पर भी हो रहा है।

6. **विकल्पों की अनेकता** (Multiplicity of Options)–वैज्ञानिक विपणन नियोजन में विकल्पों की अनेकता भी बाधा उत्पन्न करती है कि किस विकल्प को चुना जाय। उदाहरण के लिए, विक्रय संवर्द्धन कई साधनों से अपनाया जा सकता है, लेकिन समस्या यह आती है कि किस विकल्प को चुना जाय।

7. **सरकारी नीति में स्थायित्व का अभाव** (Lack of Stability in Government Policy)–यदि सरकारी नीति में स्थायित्व नहीं है तो वह भी नियोजन में बाधा उत्पन्न करती है।

8. **सामान्य आर्थिक स्थिति** (General Economic Condition)–सामान्य आर्थिक स्थिति भी विपणन नियोजन में बाधा उत्पन्न करती है। इसका प्रभाव दोनों प्रकार के उद्योगों (औद्योगिक एवं उपभोक्ता) पर पड़ता है। यह आर्थिक स्थिति स्टॉक, वित्त, उपकरण व अन्य बातों पर भी प्रभाव डालती हैं।

9. **नियोजन व्यय** (Planning Expenditure)–नियोजन पर किया जाने वाला व्यय भी रुकावट पैदा करता है। बहुत सी संस्थाएं ऐसी हैं जो नियोजन के व्यय को सहन नहीं कर सकती हैं और इसको विलासिता बताती हैं। इसके लिए सुझाव दिया जाता है कि नियोजन कार्य के व्यवसायिक संघों द्वारा किया जाना चाहिए।

यदि किसी संस्था ने विपणन नियोजन किसी प्रकार कर भी लिया है तो यह पाया जाता है कि इस सम्बन्ध की रिपोर्ट संस्था में पड़ी रहती है और उस पर धूल जमती रहती है। उच्च प्रबन्धकों के पास इतना समय नहीं होता है कि वे उसको देख सकें। वे उस पर विश्वास नहीं करते हैं और इस प्रकार अनुसन्धानकर्ता का परिश्रम व संस्था का धन व्यर्थ ही चला जाता है।

विपणन नियोजन की प्रक्रिया
(Process of Marketing Planning)

विपणन नियोजन की प्रक्रिया में सबसे पहले संस्था अपनी वर्तमान स्थिति का पता लगाती है और इसके साथ-साथ इस बात का भी पता लगाती है कि ऐसी स्थिति किन कारणों से हुई है। इसी बात को हम रोग का पता लगाना (Diagnosis) कहते हैं। यदि यह स्थिति चालू बनी रही तो संस्था किस ओर जा सकती है इसका अनुमान लगाते हैं। यह विपणन नियोजन प्रक्रिया की दूसरी सीढ़ी है। इसको पूर्व-सूचना (Prognosis) कहते हैं। यदि संस्था इस ओर, जहां वह स्वतः ही जा रही है, न ले जाना चाहे तो अब वह किस ओर आनी चाहिए इसको निर्धारित करना ही लक्ष्य निर्धारित करना (Setting Objectives) कहते हैं। यह लक्ष्य बिना रीति-नीतियों के प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं। रीति-नीतियों को निर्धारित करना (Deciding Strategy) विपणन क्रिया का चौथा चरण है। अकेली नीतियां अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकती हैं जब तक कि दांव-पेच (Tactics) से काम न लिया जाय। अतः इनका निर्धारण प्रक्रिया का पांचवां कदम है। यदि सभी कुछ खूब सोच विचार कर तय किया जाय तो भी निर्धारित लक्ष्यों को तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता है जब तक कि विपणन क्रियाओं पर उचित नियन्त्रण (Control) न रखा जाय। यह विपणन नियोजन प्रक्रिया का अन्तिम चरण है। अब हम इन्हीं का विस्त त विवरण निम्न पंक्तियों में दे रहे हैं:–

1. **रोग का पता लगाना** (Diagnosis)–विपणन नियोजन प्रक्रिया इस बात का पता लगाने से शुरू होती है कि संस्था की वर्तमान स्थिति क्या है और इस स्थिति में पहुंचने के लिए कौन-कौन से घटक उत्तरदायी हैं? जिस प्रकार इलाज तभी सम्भव है, जब रोग की सही जानकारी हो जाय, उसी प्रकार विपणन नियोजन कार्य तभी सम्भव है जबकि वर्तमान स्थिति को स्पष्ट रूप से समझ लिया जाय। वर्तमान स्थिति का स्पष्ट रूप से समझना ही रोग का पता लगाना कहलाता है। वर्तमान स्थिति का पता लगाने के लिए संस्था की बिक्री व उसका कुल बाजार में क्या अंश है इसका पता लगाना होगा? इसके लिए वस्तु, क्षेत्र व अन्य बातों के आंकड़े एकत्रित करने होंगे। इन आंकड़ों को अनुसन्धान विभाग द्वारा एकत्रित किया जा सकता है।

2. **पूर्व-सूचना** (Prognosis)–जब एक संस्था रोग का पता लगा चुकती है तो उसको इस बात का भी पता लगाना चाहिए कि यदि यही वर्तमान में स्थिति चलती रही तो संस्था किस ओर जा सकती है? क्या लाभ या बिक्री बढ़ेगी? ऐसी जानकारी के आधार पर ही यह निर्णय लिया जायेगा कि वर्तमान में क्या कार्यवाही आवश्यक है? यदि ऐसा प्रतीत हो कि भविष्य उज्जवल है तो संस्था को अपनी नीतियों में भारी परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन इसके विपरीत यदि भविष्य धुंधला दिखायी दे तो अवश्य ही कुछ कार्यवाही करने की आवश्यकता होती है।

3. **लक्ष्य निर्धारित करना** (Setting Objectives)—जब कोई संस्था ऐसा महसूस करती है कि भावी रुख उचित दिखायी नहीं देता तो उस संस्था को स्वयं तय करना होगा कि वह कहां जाना चाहती है तथा वह उस स्थान तक किसी प्रकार पहुंचेगी? इसके लिए उसको लक्ष्य निर्धारित करने होंगे। यह लक्ष्य (i) विशेष बाजारों के चुनाव के रूप में हो सकते हैं, या ii. बाजारों के लिए विक्रय लक्ष्य भी निर्धारित करने के रूप में सकते हैं। यह लक्ष्य भावी वातावरणात्मक दशाओं के साथ-साथ वैकल्पिक कार्यक्रमों पर विचार करने के बाद ही निश्चित करने चाहिए।

4. **रीति-नीतियों को निर्धारित करना** (Deciding Strategy)—रीति-नीति से अर्थ उन व्यापक सिद्धान्तों से है जिनको एक संस्था अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए काम में लाती है। यदि सिद्धान्त एक संस्था को दूसरी प्रतियोगी संस्था से लाभप्रद स्थिति में ला देते हैं, ग्राहकों को आकर्षित कर देते हैं और संस्था के आन्तरिक साधनों का भरपूर उपयोग करने में सहायक होते हैं। विपणन नियोजन की प्रक्रिया में यह चौथा कदम है। इसमें एक संस्था अपनी रीति-नीतियों का निर्धारित करती है। अब प्रश्न यह उठता है कि रीति-नीतियां किस प्रकार निर्धारित की जाय? वास्तव में, रीति-नीतियां प्रतिस्पर्द्धा को देखकर अपना लेनी चाहिए, लेकिन इसके साथ-साथ अन्य बातों का भी ध्यान रखना चाहिए। वैकल्पिक नीतियों को चुनकर उनके गुण व अवगुण, व्यावहारिक व अव्यावहारिक, आदि को ध्यान में रखकर सर्वोत्तम रण-नीति को चुन लेना चाहिए।

5. **दाव-पेंच लगाना** (Tactics)—जब रोग का पता लग गया है और पूर्व-सूचना मिल गयी है कि यदि इसी रास्ते को अपनाया गया तो कहां पर पहुंच जायेंगे तो फिर लक्ष्यों को निर्धारित किया जाता है और लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु नीतियां तय की जाती हैं, लेकिन अब प्रश्न यह उठता है कि इन सबको कार्य रूप में परिणित करने के लिए कौन-कौन से दांव पेंच लगाये जाऐं जिससे कि लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें। वास्तव में, ''किसी कम्पनी के लक्ष्य यह सूचित करते हैं कि वह कहां पहुंचना चाहती है; रण-नीति उसके प्रस्तावित मार्ग की सूचना देती हे; जबकि दांव-पेंच उन विशेष वाहनों को प्रकट करते हैं जिनका उपयोग किया जायेगा।'' दांव-पेंच को और अधिक स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए विक्रय के लक्ष्य निर्धारित कर लिये गये हैं। रीति-नीतियों भी निर्धारित कर ली गयी हैं कि विक्रय स्टॉकिस्ट व फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से होगा, लेकिन अब वास्तविक रूप में स्टॉकिस्टों की व फुटकर विक्रेताओं की नियुक्ति करना ही दांव-पेंच तय करना है अर्थात् किन व्यक्तियों को नियुक्त करना है यह तय करना ही दांव-पेंच तय करना है अर्थात् किन व्यक्तियों को नियुक्त करना है।

(6) **नियन्त्रण** (Control)—विपणन नियोजन प्रक्रिया में अन्तिम चरण नियन्त्रण का है। बिना नियन्त्रण की व्यवस्था किये यह पता नहीं लग सकता है कि संस्था की रण-नीति एवं दांव-पेंच नीति संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति में योग दे रही है या नहीं। इसके लिए एक योजना बनानी होगी जिसमें प्रमाप दिये होंगे तभी प्रमापों से वास्तविक उपलब्धि की तुलना कर लक्ष्यों की प्राप्ति का पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी नियोजन में बाजार भाग की प्राप्ति इस प्रकार लक्षित की गयी हैः प्रथम वर्ष में बाजार भाग का 2 प्रतिशत; द्वितीय वर्ष में 5 प्रतिशतः त तीय वर्ष में 9 प्रतिशतः चतुर्थ वर्ष में 14 प्रतिशत व पंचम वर्ष में 20 प्रतिशत।

पहली वर्ष के अन्त में बाजार का 2% भाग प्राप्त होना था, लेकिन यदि 1% ही प्राप्त हुआ है तो इसका पता लगाना चाहिए कि ऐसा क्योंकि हुआ? क्या हमारी नीतियां व चालें अपर्याप्त हैं? या हमारे प्रमाप ऊंचे हैं। यह तभी हो सकता है जबकि समय-समय पर कार्यक्रम की समीक्षा होती रहे और यदि उनमें कोई कमियां हैं तो आवश्यकतानुसार संशोधन होते रहें।

[विपणन नियोजन प्रक्रिया में प्रथम एवं त तीय चरणों : 1. रोग का पता लगाना एवं 2. पूर्व सूचना—को मिलाकर स्थिति विश्लेषण (Situation Analysis) की संज्ञा दी जा सकती है। इसी प्रकार चौथे एवं पांचवें चरण—3. रण-नीति का निर्धारण एवं 4. दांव-पेंच तय करना—को मिलाकर कार्यक्रम (Programming) का नाम दिया जा सकता है। अतः इस प्रकार विपणन नियोजन में केवल चार चरण ही रह जाते हैं : 1. स्थिति विश्लेषण, 2. उद्देश्य निर्धारण, 3. कार्यक्रम तैयार करना, 4. नियन्त्रण करना।]

विपणन नियोजन के लिए संगठन
(Organization for Marketing Planning)

प्रत्येक संस्था, जो कि प्रभावी ढंग से विपणन नियोजन करना चाहती है, अपने यहां विपणन नियोजन समिति बनाती है। इस समिति में सभी मुख्य अधिकारी सम्मिलित किये जाते हैं। वास्तव में, यही वह समिति है जो कि एक अवधि के लिए विपणन

लक्ष्य निर्धारित करती है, मार्ग-दर्शक सिद्धान्तों को तय करती है तथा किसी भी विपणन योजना को अन्तिम स्वीकृति देती है। इस समिति की बैठकें समय-समय पर ही होती हैं। दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए एक अधिकारी नियोजन उपाध्यक्ष बना दिया जाता है। यह नियोजन कार्य के प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी होता है तथा अध्यक्ष एवं अन्य उच्च अधिकारियों के सहयोग से कार्य करता है।

विपणन नियोजन उपाध्यक्ष के अन्तर्गत नियोजन स्टाफ होता है तथा एक अधिकारी समन्वयकर्ता के रूप में कार्य करता है जिसका कार्य यह देखना है कि (i) आवश्यक अनुसन्धान संस्था के द्वारा किया जाय, (ii) संस्था के विभिन्न विभागों से आवश्यक प्रस्ताव प्राप्त होते रहे, एवं (iii) सभी विभागों की योजनाओं में समन्वय बिठाया जाय।

वास्तव में, योजनाएं विभिन्न विभागों के अध्यक्षों द्वारा अपने-अपने विभाग के लिए बनायी जाती हैं, लेकिन यह सभी योजनाएं उन लक्ष्यों व मार्गदर्शक सिद्धान्तों के अनुरूप होती हैं जिनका निर्धारण विपणन नियोजन समिति ने किया है। प्रत्येक विभाग का अध्यक्ष अपने अन्तर्गत कार्य कर रहे अधिकारियों से योजनाएं मांगकर उनको एकीकृत कर देता है तथा अपने उच्च अधिकारियों को भेज देता है। संस्था का नियोजन स्टाफ उनकी जांच-पड़ताल कर उपाध्यक्ष को भेज देता है जो उसको विपणन समिति के समक्ष रखती है। यह समिति उसका मूल्यांकन करती है और उसकी स्वीकृति देती है। यदि समिति यह आवश्यक समझती है कि योजनाओं में फेर-बदल अनिवार्य है तो वह योजनाओं को विभागों के अध्ययक्षों को लौटा देती है जो उसको समिति के निर्देशों के अनुसार परिवर्तित करते हैं और फिर स्वीकार हेतु पुनः भेजते हैं। योजनाएं सुधारने हेतु समिति द्वारा एक बार ही नहीं कभी-कभी तो कई बार लौटायी जाती है और जब तक यह योजनाएं स्वीकार नहीं हो जातीं तब तक उनमें निर्देशों के अनुसार सुधार करना अनिवार्य होता है।

लेकिन जब योजना विपणन समिति स्वीकार कर लेती है तो फिर वह संस्था के लिए एक मार्गदर्शक योजना बन जाती है और उसमें लिये हुए लक्ष्यों को प्राप्त करने का उत्तरदायित्व प्रत्येक विभाग का बन जाता है। इस प्रकार आधुनिक संस्थाएं निम्न प्रकार विपणन नियोजन संगठन बनाती हैं:

वास्तव में, उपर्युक्त संगठन आधुनिक व हत्त् आकार वाली संस्थाओं का है। छोटी संस्थाएं विपणन नियोजन के लिए अलग से कोई संगठन नहीं बनाती है बल्कि संस्था का प्रमुख ही इस कार्य को करता है। यदि वह चाहे तो विक्रय, उत्पादन व अन्य विभागों से सहयोग ले सकता है।

यदि अच्छी योजनाएं बनानी हैं तो निम्न स्तर के अधिकारियों का भी नियोजन में सहयोग अवश्य ही लिया जाना चाहिए। योजनाएं अध्यक्ष के दिमाग से टपक नहीं पड़ती हैं या नियोजन समिति की एक-दो बैठकों से प्रकट नहीं होती हैं बल्कि विस्त त विचार-विमर्श से निकलकर ही आती हैं।

विभिन्न विपणन संगठनों के अन्तर्गत विपणन नियोजन
(Marketing Planning Under Various Marketing Organisations)

भिन्न-भिन्न संस्थाओं के विपणन संगठन भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं, लेकिन इन सभी को अग्रांकित चार मदों में रखा जा सकता है:

1. **उत्पादोन्मुख विपणन संगठन में नियोजन** (Marketing Planning in the product-oriented Organisation)—उत्पादोन्मुख विपणन संगठन का उपयोग करने वाली संस्थाएं प्रत्येक वस्तु (Product) के लिए अलग-अलग योजनाएं बनाती हैं। इन योजनाओं में उनके दीर्घकालीन लक्ष्य एवं उनको प्राप्त करने के लिए विस्त त कार्यक्रम होते हैं। इन योजनाओं में विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, वस्तु सुधार, विपणन अनुसन्धान, आदि पर कितना व्यय किया जाना है इसका भी उल्लेख होता है।
2. **ग्राहकोन्मुख विपणन संगठन में नियोजन** (Marketing Planning in Customer Oriented Organisation)—जब संस्था का विपणन संगठन क्षेत्र के आधार पर बंटा रहता है तो वह अपने ग्राहकों को विभिन्न श्रेणियों में बांट लेती हैं और फिर प्रत्येक श्रेणी के ग्राहकों के लिए विपणन योजना बनाती है। इस योजना में विक्रय लक्ष्य, सुधार एवं उन्नत सेवाओं को पहुंचाने का कार्यक्रम होता है। इसमें यह भी निश्चय किया जाता है कि प्रत्येक श्रेणी के ग्राहकों के लिए विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन एवं अन्य साधनों पर कितना एवं किस प्रकार किया जाना है।
3. **क्षेत्रोन्मुख विपणन संगठन में नियोजन** (Marketing Planning in Regionilly Oriented Organisation)—वे संस्थाएं, जो अपना संगठन ग्राहकों के आधार पर बनाती हैं, तो ऐसी संस्था प्रत्येक क्षेत्र के लिए अलग-अलग विपणन नियोजन बनाती है। इस योजनाओं में उस क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित लक्ष्य नियत किये जाते हैं तथा उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कार्यक्रम बनाये जाते हैं। ऐसा करते समय क्षेत्रीय प्रतियोगिता को प्राथमिकता दी जाती है और उसका ध्यान रखकर ही नियोजन किया जाता है।
4. **कार्योन्मुख विपणन संगठन में नियोजन** (Marketing Planning in Function Oriented Organisation)—ऐसे संगठन में विपणन के प्रत्येक कार्य के लिए अलग-अलग योजनाएं बनायी जाती हैं जैसे-मिश्रण योजना, मूल्य-निर्धारण योजना, वैयक्ति विक्रया योजना, विज्ञापन योजना, विक्रय-संवर्द्धन योजना, वितरण योजना, विपणन, अनुसन्धान योजना, आदि। प्रत्येक योजना में उससे सम्बन्धित बातों का पूर्ण उल्लेख होता है; जैसे विज्ञापन योजना में विज्ञापन, प्रति, सन्देश, विज्ञापन माध्यम, विज्ञापन नीति एवं दांव-पेंच का पूर्ण उल्लेख होता है तथा उस धन का भी ब्यौरा दिया हेाता है जिसको उस अवधि में विज्ञापन पर व्यय किया जाता है।

प्रभावी विपणन नियोजन के लिए सुझाव
(Suggestions for Effective Marketing Planning)

यदि विपणन नियोजन प्रक्रिया उचित रूप से अपनायी जाय तो विपणन नियोजन स्वतः ही प्रभावी हो जाता है और उसके लिए अलग से कोई सुझाव देने की आवश्यकता नहीं रहती है, लेकिन फिर भी विपणन नियोजन को प्रभावी बनाने का विपणन नियोजन की सफलता के लिए निम्न सुझाव दिये जाते हैं:

1. विपणन नियोजन स्पष्ट रूप से परिभाषित लक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए।
2. नियोजन के लिए आवश्यक तथ्यों एवं सूचनाओं का संग्रह सावधानी से किया जाना चाहिए।
3. बाजार के अध्ययन के लिए मनोवैज्ञानिक रीतियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
4. अभिप्रेरणा अनुसन्धान का कार्य विश्लेषणात्मक व द्धि, अनुभव एवं योग्य व्यक्तियों को दिया जाना चाहिए।
5. लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सर्वोत्तम विकल्प को चुनना चाहिए, लेकिन ऐसा करते समय तर्कपूर्ण प्रणाली को अपनाया जाना चाहिए।
6. विपणन नियोजन करते समय प्रतिस्पर्द्धा को ध्यान में रखकर संस्था के साधनों एवं उद्देश्यों से उसका मिलान करना चाहिए।
7. विपणन नियोजन में सभी विभागों का सहयोग लिया जाना चाहिए जिससे कि उनका इस बात को कहने का अवसर न मिले कि उनको पूछा भी नहीं गया है।
8. विपणन नियोजन में लोच भी होनी चाहिए जिससे कि वास्तविक भावी परिवर्तनों के अनुसार उस नियोजन में आवश्यक हेर-फेर किये जा सकें।
9. यदि विपणन नियोजन से आंकड़ों (Satistics) का उपयोग पर्याप्त मात्रा में किया गया है तो उनके प्राप्त करने एवं विश्लेषण करने के लिए कम्प्यूटर की सहायता, यदि मिल सके, तो अवश्यक ही लेनी चाहिए।

विपणन योजना
(Marketing Plan)

एक संस्था की विपणन क्रियाएं जैसे वस्तु नियोजन एवं विकास, विपणन, अनुसन्धान, परिवहन व भण्डार, वित्त संवर्द्धन, विक्रय, ग्राहक सेवाएं आदि स्वतंत्रता से कार्य से नहीं करती हैं बल्कि इन सभी क्रियाओं को पहले से नियोजित किया जाता है तथा उन सब में सामंजस्य बिठाया जाता है।

''एक विपणन योजना विपणन मार्ग-दर्शक पंक्तियों का एक सेट है जिसको एक व्यावसायिक फर्म के सर्वोच्च प्रबन्ध के द्वारा तैयार किया जाता है, इसमें उन लक्ष्यों का उल्लेख होता है जिनको वह कम्पनी एक निश्चित समय में प्राप्त करना चाहती है तथा उन साधनों का उल्लेख होता है जिनको द्वारा उन लक्ष्यों तक कम्पनी पहुंचना चाहती है।'' वास्तव में यह संस्था का काम करने की एक **समय-सारणी** (Time-table) है जिसमें यह बताया जाता है कि कौन कार्य कब पूर्ण किया जाना है? इसी बात को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि **विपणन योजना एक योजना है जिसमें यह बताया जाता है कि एक निश्चित समय में एक संस्था का कितना विकास होना है?**

एक विपणन योजना उसी प्रकार बनायी जाती है जिस प्रकार एक व्यक्ति कार, स्कूटर, रेडियों, टेलीविजन, आदि खरीदने की योजना बनाता है। ऐसा व्यक्ति पहले यह निश्चित करता है कि इनमें से क्या क्रय करना है तो कब क्रय करना है फिर उसको क्रय करने के लिए धन जुटाने का प्रयत्न करता है जिसके लिए उसके द्वारा अपन विभिन्न साधनों को लगाया जाता है। विपणन योजना में 1. पहले लक्ष्य निर्धारित किया जाता है। इसको इस प्रकार भी कह सकते हैं कि संस्था कितना कमाना चाहती है यह निश्चित करती है। 2. फिर यह तय किया जाता है कि यह किस प्रकार कमाया जा सकता है? इसके लिए विभिन्न साधनों को जुटाया जाता है और 3. अन्त में समय भी निश्चित किया जाता है जिसके अन्दर इन लक्ष्यों को प्राप्त करना है। एक व्यक्ति की योजना समिति होती है, लेकिन विपणन योजना विस्त त होती है। इसमें विभिन्न साधनों, व्यक्तियों, समुदायों, आदि को साथ लेकर चला जाता है।

एक विपणन योजना औपचारिक रूप से लिखित होनी चाहिए। यदि यह योजना अनौपचारिक रहती है तो इस बात की सम्भावना है कि योजना को ठीक प्रकार से न समझ सकें या संस्था के कुछ विभाग व कर्मचारी उस योजना की ओर उचित ध्यान न दें। विपणन योजना लिखित होने से लाभ यह है प्रबन्धकों को सोचने के लिए विवश कर देती है। यह योजना संस्था से सम्बन्धित सभी व्यक्तियों के दे दी जाती है जिससे कि वे अपने उत्तरदायित्व को ठीक रूप से निभाते हैं और यदि वे उसको पूरा करने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं तो उनके विरुद्ध कार्यवाही भी की जा सकती है। योजना के लिखित होने से क्रियाओं की सफलता को भी आंका जा सकता है।

एक विपणन योजना के बहुत से तत्व होते हैं, लेकिन निम्न तीन प्रमुख हैं जो प्रत्येक विपणन योजना में पाये जाते हैं:

1. **लक्ष्यों का विवरण** (Statement of Goals)—एक विपणन योजना का यह बहुत ही महत्वपूर्ण तत्त्व है। इसमें उन लक्ष्यों का विवरण तैयार किया जाता है जिनको संस्था प्राप्त करना चाहती है। ये लक्ष्य उस वस्तु की मांग पर आधारित होते हैं और इस मांग को अनुमान विक्रय अनुसन्धान के द्वारा लगाया जाता है। कभी-कभी प्रबन्धक के द्वारा तथ्यों के ज्ञान के आधार पर भी लक्ष्य निर्धारित कर लिये जाते हैं।

   विपणन लक्ष्य संस्था के लक्ष्यों की सीमा के अन्दर होने चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि किसी संस्था का लक्ष्य उत्तर प्रदेश में वस्तुओं का विक्रय करना है और यदि वह संस्था अपना विपणन लक्ष्य सम्पूर्ण भारत में उस वस्तु की बिक्री का 20 प्रतिशत निर्धारित करती है तो इसका अर्थ यह है कि यह विपणन लक्ष्य संस्था के लक्ष्यों के अनुरूप नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक संस्था की कुछ कमियां होती हैं। लक्ष्यों का निर्धारित करते समय उनका भी ध्यान रखना चाहिए।

   लक्ष्यों का निर्धारण बहुत से रूपों में किया जा सकता है जो असंख्य हैं, लेकिन मुख्य रूप से यह लक्ष्य तीन प्रकार से निर्धारित किये जाते हैं: i. विक्रय पूर्वानुमान (Sales Forecast), (ii) बाजार अंश (Share of Market) व (iii) लाभ व व्यय (Profits and Expenses)। वास्तव में, प्रत्येक व्यावसायिक संगठन का लक्ष्य सिर्फ एक होता है जिस पर बातें आधारित होती हैं और वह है शुद्ध लाभ में व द्धि। इसको ध्यान में रखते हुए संस्थाएं कुछ विशिष्ट लक्ष्यों का विवरण तैयार कर लेती हैं जिनको एक निश्चित अवधि में प्राप्त किया जाना है। यह लक्ष्य निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

.....बाजार अंश (Market Share) जो अब 15 प्रतिशत है उसको 20 प्रतिशत करना,

.....वस्तुओं की वर्तमान बिक्री में 10 प्रतिशत व द्धि करना,

.....5,00,000 रुपये इस वर्ष विशेष में लाभ प्राप्त करना।

इन लक्ष्यों का विवरण संस्था के प्रमुख कार्यकारी अधिकारियों के द्वारा तैयार किया जाता है, लेकिन इसका आधार संस्था के विपणन कर्मचारियों की सलाह एवं सुझाव होता है।

2. **विपणन कार्यक्रम** (Marketing Programme)—विपणन नियोजन का दूसरा तत्व विपणन कार्यक्रम हैं यह विपणन कार्यक्रम वह तरीका या रास्ता है जिसके द्वारा उन लक्ष्यों को प्राप्त किया जाना है जिसका निर्धारण प्रबन्ध के द्वारा किया गया है। यह विपणन योजना विस्त त होती है। इसमें उन नीतियों व साधनों का उल्लेख होता है जिसके माध्यम से लक्ष्य प्राप्त किये जाते हैं। इन नीतियों व साधनों में उत्पादन, वितरण, कर्मचारी, मूल्य, विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, नियनत्रण, आदि बातें आती हैं।

   विपणन कार्यक्रम संस्था के प्रत्येक विभाग को यह बताता है कि उनका क्या कार्य एवं उत्तरदायित्व है जिससे कि लक्ष्य प्राप्त किये जा सकें।

3. **समापन समय-तालिका** (Completion Schedule)—विपणन योजना का तीसरा तत्व समापन समय-तालिका है इसके समय निर्धारित किया जाता है जिसके अन्तर्गत इस योजना के लक्ष्य प्राप्त किये जाते हैं। यह एक प्रकार का टाइम-टेबिल है जिसके अनुसार सारा कार्य पूरा किया है। यह योजनाएं अल्पकालीन व दीर्घकालीन (Short-range and Long- range) दोनों प्राकर की होती हैं। साधारणतया, एक वर्ष या इससे कम समय की योजना को अल्पकालीन योजना कहते हैं। दीर्घकालीन योजनाएं 3 वर्ष, 5 वर्ष, 10 वर्ष, आदि की होती हैं। इसका विस्त त इसी अध्याय में पहले दिया जा चुका है।

निर्यात संगठन
(Export Organisation)

संगठन का सामान्य सा अर्थ व्यक्तियों के उस समूह से है जो कुछ उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर कार्य करते हैं संगठन में सामूहिक क्रिया एवं निश्चित उद्देश्य का तत्व अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। संगठन के अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए कार्य का वर्गीकरण व्यक्तियों के मध्य किया जाता है, उन्हें अधिकार प्रदान किये जाते हैं व उत्तरदायित्व निर्धारित किया जाता है।

इसी प्रकार ऐसी संस्थाओं जो विदेशी बाजारों की विपणन सम्भवनाओं का विद्रोहन करने के लिए निर्यात की आंकाक्षा रखती हैं, उन्हें भी एक ऐसे संगठन की आवश्यकता होती है जो उनके निर्यात के लक्ष्य को प्राप्त कर सके, नये नये बाजारों को खोज सके। इस प्रकार निर्यात संगठन किसी उपक्रम तथा संस्था का ऐसा संगठन है, जो उस संस्था के लिए विदेशी बाजारों को खोजता है एवं सम्पूर्ण निर्यात कार्यक्रम का उद्देश्यपूर्ण निष्पादन करता हैं।

निर्यात बाजारों व देशी बाजरों की प्रकृति, प्राथमिकताओं के क्रमों आदि में आधारभूत अन्तर होता है। देशी विपणन के लिए उपयुक्त संगठन, विदेशी बाजारों में विपणन के लिए उतना कारगर साबित नहीं हो सकता। विदेशी बाजरों में गतिशीलता, प्रतिस्पर्धा आदि इतनी व्यापक है कि उसे संभालने के लिए एक प थक संगठन की नितांत आवश्यकता होती है। जिस प्रकार देशी विपणन की अपनी समस्याएं है उसी प्रकार निर्यात विपणन में भी पग-पग पर समस्यायें मुंह बाये खड़ी हैं, उनका द ढ़ता से सामना निर्यात संगठन ही कर सकता है। फैशन, अभिरूचियों आदि में होने वाले परिवर्तन भी देशी बाजारों की तुलना में विदेशी बाजारों में अधिक होते हैं उन पर पैनी द ष्टि रखना आवश्यक होता है। उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि लाभदायक परिणाम बढ़ाने प्रभावपूर्ण एवं कुशलतापूर्वक निर्यात व्यापार को बढ़ाने के लिए निर्यात संगठन की आवश्यकता अपरिहार्य है।

निर्यात संग्ठन का प्रभावित करने वाले तत्व
(Factors affecting the Export Organisation)

निर्यात संगठन पर अनेक प्रकार के घटक अपना प्रभाव डालते हैं। **केन्फील्ड** ने विक्रय संगठनों पर प्रभाव वाले तत्व इस प्रकार बताये हैं— (i) कम्पनी का आकार, (ii) उत्पादित वस्तुओं का स्वभाव व प्रकृति, (iii) प्रबन्धकों की क्षमता, (iv) वितरण की

पद्धतियां (v) कम्पनी की वित्तीय व आर्थिक स्थिति, (vi) कम्पनी द्वारा अपनायी गयी विक्रय-नीतियां उपरोक्त वर्णित घटकों के अलावा भी अनेक प्रकार के तत्व निर्यात संगठन को प्रभावित करते हैं, जैसे–राजनैतिक स्थिति, प्रतिस्पर्धा परम्पराए एवं प्रबन्धकीय विचारधाराएं।

निर्यात संगठन को प्रभावित करने वाले तत्वों का संक्षेप में वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है–

1. **प्रबन्धकों की क्षमताएं व योग्यता**–संगठन के पास कितने योग्य व प्रतिभावना प्रबन्धक हैं, इसका सीधा प्रभाव निर्यात संगठन पर भी पड़ता है। यदि संस्था के पास क्षमता युक्त व योग्य प्रबन्धक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं, तो संस्था प थक से निर्यात विभाग खोलकर उसे योग्य प्रबन्धक को सौंदे सकती है। इसके अभाव में प थक विभाग बनाना संभव नहीं होगा। उच्चस्तरीय क्षमताओं व योग्यताओं से युक्त प्रबन्धक रेखा संगठन को अपनाकर अपने विपणन कार्यक्रम का प्रभावी क्रियान्वयन कर सकते हैं।
2. **वित्तीय स्थिति एवं संसाधन**–ऐसी संस्थाएं जिनके वित्तीय साधन असीमित हैं, व आर्थिक स्थिति सुद ढ़ है। वे अपने निर्यात संगठन को विस्त त बना सकती हैं; जिससे अधिकाधिक बाजरों में प्रवेश कर वह संस्था अपना आधिपत्य स्थापित कर सके। ऐसी संस्थायें जिनके वित्तीय साधन सीमित हैं; उनके लिए छोटा निर्यात संगठन अधिक उपयोगी होता है।
3. **निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का स्वभाव एवं प्रकृति**–वस्तुओं की प्रकृति व स्वभाव निर्यात संगठन पर काफी प्रभाव डालती है जैसे जो संस्थायें मुम्बई से खाड़ी के देशों को साग-सब्जी निर्यात करती हैं उनका वस्तुओं का विक्रय करती है मोटर कार, टेलीविजन, रेफ्रीजरेटर, रेडियों आदि वस्तुओं का निर्यात करने वाली सस्थाओं के निर्यात संगठन अपेक्षतया सरल एवं लघु होंगे इसके विपरीत ऐसी वस्तुएं जो बार-बार क्रय की जाती है, जैसे सौन्दर्य प्रसाधन, तेल, वनस्पती घी, साबुन, कपड़ा आदि का निर्यात करने वाली संस्थायें अपेक्षाकृत बड़ा व जटिल निर्यात संगठन अपनाती है।
4. **वितरण की विधियां**–संस्था वितरण के लिए अर्थात माल को निर्यात बाजारों तक पहुंचाने के लिए वितरण के किस माध्यम को अपनाती है। इससे भी निर्यात संगठन का आकार काफी सीमा तक प्रभावित होता है। यदि संस्था वितरण के लिए प्रत्यक्ष विधि को अपनाती है। जिसमें संस्था स्वयं ही अपने संगठन से माल व सेवाएं निर्यात बाजार के ग्राहकों को उपलब्ध का निर्णय लेती हैं; तो उसे काफी विस्त त व बड़े निर्यात संगठन की आवश्यकता होगी जबकि वितरण की अप्रत्यक्ष विधि या मध्यस्थों के द्वारा वितरण को चुनने पर निर्यात संगठन का आकार लघु व सरल होगा। इस प्रकार वितरण की विधियां भी निर्यात संगठन पर अपना प्रभाव डालती हैं।
5. **संस्था का आकार**–संस्था का स्वयं का आकार भी निर्यात संगठन पर अपना प्रभाव डालता है। यदि संस्था का स्वयं का आकार काफी बड़ा है, तो यह निश्चित है कि संस्था उत्पादन भी पर्याप्त कर रही होगी। बड़े आकार की कम्पनियां देशी बाजारों में अपनी प्रतिष्ठा पूर्ण स्थिति का निर्माण कर लेती हैं। उसकी सहज इच्छा यह होती है कि विदेशी बाजारों में भी उनकी वही छवि प्रदर्शित हो जो देशी बाजारों में है। अतः बड़े आकार वाली संस्थाएं बड़ा व विस्त त निर्यात संगठन स्थापित करती है।
6. **प्रबन्धकीय द ष्टिकोण**–प्रबन्धकीय द ष्टिकोण भी दो प्रकार से निर्यात संगठन को प्रभावित करता है। प्रथम केन्द्रित प्रबन्ध व एकाकी नियन्त्रण में विश्वास रखने वाले प्रबन्धकों का निर्यात संगठन छोटा होगा, जिससे वह सभी पर प्रभावकारी नियन्त्रण कर सके, तो विकेन्द्रीकरण को महत्व देने वाले प्रबन्धक अधिकारों का भार्रापण करना चाहते हैं उनका निर्यात संगठन बड़ा होगा। द्वितीय यदि प्रबन्धक देशी बाजारों का विपणन से ही सन्तुष्ट हों व उसका ही अधिकाधिक विद्रोहन करना अपना लक्ष्य मान लेते हैं। तो उसका निर्यात संगठन भी छोटा होगा। लेकिन ऐसे प्रबन्धक जो कम्पनी के लिए अतिरिक्त संसाधन जुटने के लिए देशी बाजारों को ही पर्याप्त नहीं समझते हैं वे निर्यात संगठन की प्रभावकारी भूमिका को भी स्वीकार करते हैं, अतः ऐसे प्रबन्धक बड़े निर्यात संगठन की स्थापना पर पूरा ध्यान देते हैं।
7. **प्रतिस्पर्धा**–जिन वस्तुओं की विदेशी बाजारों में तीव्र प्रतियोगिता होती है। उसका कुशलतापूर्वक व प्रभावशाली तरीके से सामना करने के लिए बड़े निर्यात संगठन की स्थापना की जाती है। प्रतियोगिता के तीव्र होने पर यह आवश्यक होता है कि बाजार में होने वाले वर्तमान व भावी परिवर्तनों, की जानकारी शीघ्र मिल जावे, प्रतियोगी संस्थाएं किस प्रकार की नीति अपना रही है; इसकी जानकारी भी समय पर मिलना आवश्यक होता है। अतः ऐसे बाजरों में निर्यात करने वाली संस्थाओं के निर्यात संगठन अपेक्षतया बड़े होते हैं। जबकि ऐसे निर्यात बाजार जिनमें प्रतियोगिता नगण्य है या सीमित है, उनमें विपणन कर रही संस्थाएं छोटे निर्यात संगठनों से प्रभावकारी कार्य कर सकती हैं।

8. **संस्था की विक्रय नीतियां**—ऐसी संस्थाएं जो रक्षात्मक विक्रय नीति (Defensive Sales Policy) अपनाती है; उनका निर्यात संगठन भी अपेक्षातया छोटा होता है। उनका तो लक्ष्य ही प्रतियोगियों से अपनी रक्षा करना होता है। लेकिन जो कम्पनियां आक्रामक विक्रय नीति (Aggressive Sales Policy) अपनाती है; उनके लक्ष्य व उद्देश्य भी भिन्न होते हैं। अधिक से अधिक बाजार के भाग पर झपट्टा मारकर अपने कब्जे में करना इन कम्पनियों का उद्देश्य होता है। ये कम्पनियां बाजार अनुसन्धान पर भी व्यापक द ष्टिकोण अपनाती हैं लीवर ब्रादर्स, सोनी, यूनियन कारबाइड, आई. बी. एम. बेइंग कॉरपोरेशन एयर बस इण्डस्ट्रीज आदि अनुसन्धान करने की भावना इस नीति को अपनाने वाली कम्पनियों में रहती है। इसलिए इन कम्पनियों का निर्यात संगठन भी काफी बड़ा व विस्त त होता है। उसमें कई प्रकार के विशेषज्ञों की सेवाओं का उपयोग भी किया जाता है।

9. **लाभतत्व**—विदेशों बाजरों में विभिन्न वस्तुओं के विपणन में जिन वस्तुओं में लाभ के अधिक अवसर विद्यमान हैं उनका भी व्यापक रूप से असर निर्यात संगठन पर पड़ता हैं जिन वस्तुओं के निर्यात में लाभ आकर्षक रूप से विद्यमान है, व्यवसायी उन्हें निर्यात कर अधिकाधिक धन अर्जित करना चाहत हैं फलतः इन वस्तुओं के निर्यात संगठन भी बड़े व विशाल होते हैं। इसके विपरीत कम लाभप्रद वस्तुओं का निर्यात करने वाली संस्थाएं अपेक्षातया छोटा निर्यात संगठन रखती हैं।

10. **मांग की प्रकृति**—निर्यात बाजारों में यदि किसी वस्तु की मांग अल्पकालिक है, तो उसके लिए छोटे निर्यात संगठन को स्थापित करना उपयुक्त रहता है, जबकि मांग दीर्घकालीक व स्थायी हो तो कम्पनियों के लिए बड़े निर्यात संगठन की स्थापना करना उपयोगी रहता है।

11. **उपलब्ध सरकारी सहायता व प्रोत्साहन**—जिन वस्तुओं के निर्यात का सर्वद्धन करने के लिए सरकार ने निगमों या परिषदों की स्थापना कर रखी है, उससे उन वस्तुओं के अन्तर्राष्ट्रीय बाजार के बारे में पूरी सूचनाएं व जानकारी थे संस्थाएं उपलब्ध कराती रहती है। इससे बड़े निर्यात संगठन स्थापित करना आसान हो जाता है। सरकार अनेक वस्तुओं के निर्यात को बढ़ाने के लिए करों में छूट व अनुदान देती है, इससे निर्यातक संस्थाओं के लिए निर्यात बाजारों में कीमत प्रतियोगिता का सामना करने में आसानी हो जाती है उपलब्ध प्रोत्साहनों का प्रयोग करने के लिए भी सस्थाएं बड़े निर्यात संगठनों की स्थापना करना उपयुक्त समझाती हैं।

12. **अपेक्षित मात्रा**—बाजार का आकार एवं संभाविता भी निर्यात संगठन के आकार के निर्धारित करने वाला तत्व होगी। यदि बड़ी मात्रा में विभिन्न बाजारों में वस्तुएं बिकने की सम्भावना है, तो विशिष्टीकरण से युक्त बड़े निर्यात संगठन की आवश्यकता होगी। मात्रा का छोटे होने पर निर्यातक के लिए छोटा निर्यात संगठन ही उपयोगी होगा।

13. **व्यापार की परम्परायें**—व्यापार की परम्परायें भी निर्यात संगठन पर अपना प्रभाव डालती हैं यदि किसी व्यापार विशेष की परम्परा के अनुसार आयातक सीधे थोक व्यापारी माल खरीदते हैं। तो निर्यातक छोटा निर्यात संगठन का अच्छा उपयोग कर सकता है विपरीत स्थिति में बड़ा निर्यात संगठन ही उपयोगी होगा।

14. **विदेशी देशों के नियम**—निर्यातक संस्था निर्यात संगठन के बारे में निर्णय लेते समय विदेशी देशों के अधिनियमों का भी व्यापक व सूक्ष्म अध्ययन करती है। प्रत्येक देश वितरण, ट्रेडमार्क, पेटेन्ट, विदेशी निगमों, करों की संरचना आदि का नियमन व नियंत्रण करने के लिए अलग-अलग अधिनियम बनाता है। जिस देश के कानून अनुकूल हों उन्हें ही निर्यात कर लाभ कमाने की निर्यातक सोचता है। अनूकूलता पर बड़े व प्रतिकूलता की स्थिति में छोटे निर्यात संगठन अधिक उपयोगी होते हैं।

इस प्रकार ऊपर वर्णित तत्व व घटक इस बात का निर्धारण करते हैं, कि निर्यात संगठन का आकार क्या हो।

विदेशी विक्रय संगठनों के प्रकार
(Types of Foreign Sales Organisation)

प्रत्येक निर्यातक संस्था के निर्यात के उद्देश्य भिन्न-भिन्न होते हैं। कई संस्थाएं जो मुख्य ध्यान देशी विपणन पर देती हैं के केवल प्रतिष्ठा के लिए निर्यात करती हैं। दूसरी ओर ठीक इसके विपरीत ऐसी संस्थाएं भी हैं जो अपने सम्पूर्ण उत्पादन या उसके महत्वपूर्ण भाग को केवल निर्यात ही करती हैं इस प्रकार उद्देश्यों व प्राथमिकताओं की विभिन्नता के कारण प्रत्येक संस्था को इस प्रकार के संगठन की आवश्यकता होती है जो उद्देश्यों के अनुकूल हों। इसके अतिरिक्त प्रबन्धकों की उपलब्धता,

उनकी योग्यता व क्षमता, वर्तमान व भावी वित्तीय संसाधन विदेशी बाजारों में विक्रयशीलता, बाजार की प्रव त्ति, प्रतिस्पर्धा आदि अनेक घटक ऐसे हैं, जो विभिन्न संस्थाओं के लिए प थक्-प थक् निर्यात संगठन की प्रसंगिकता की ओर इंगित करते हैं। **बी. आर. केन फील्ड** ने अपनी पुस्तक Sales Administration में निर्यात विक्रय संगठनों के निम्नलिखित प्रकार बताये हैं—

I. एकीकृत निर्यात विभाग
(Integrated Export Department)

एकीकृत निर्यात विभाग या जिसे 'Builtin Export Department' भी कहते हैं। सबसे मितव्ययी व सरलतम निर्यात विक्रय संगठन है। इस प्रकार के निर्यात संगठन में एक ही विभाग की व्यवस्था की जाती है। देशी व निर्यात बाजारों में लाभपूर्ण बिक्री को बढ़ाने के लिए व दोनों पर प्रभावीकारी नियंत्रण रखने के लिए देशी व निर्यात विपणन अलग-अलग प्रबन्धकों के नियंत्रण में कर दिया जाता है। दोनों के नियन्त्रण में सामान्यता एक ही कर्मचारी होते हैं। अतः यह तो पूर्णतया स्पष्ट है कि इसमें एक ही विभाग दोनों विपणन को सम्पन्न करता है।

सामान्यतया निर्यात विपणन एक प थक-प्रबन्धक के नियन्त्रण में कर दिया जाता है। उसके नियन्त्रण में एक या दो कलर्क होते हैं। निर्यात प्रबन्धक विदेशी विक्रय कार्यों का केवल निर्देशन मात्र करता है। समस्त विपणन कार्यों विक्रय विभाग ही सम्पादित करता है, जिस पर मूल रूप से देशी विपणन का उत्तरदायित्व होता है। जैसे बाजार अनुसन्धान विभाग विदेशी बाजारों के बारे में भी सूचना प्राप्त करता है, विज्ञापन विभाग देशी बाजारों के साथ-साथ निर्यात बाजारों में वस्तुओं व सेवाओं के विक्रय के लिए विज्ञापन सन्देश व विज्ञापन कार्यक्रम तैयार करता है। वित्त विभाग निर्यात विक्रय के लिए विज्ञापन सन्देश व विज्ञापन कार्यक्रम तैयार करता है। वित्त विभाग निर्यात विक्रय के बीजक बनाता है, उन्हें भेजता है। एवं धनराशि एकात्रित करता हैं।

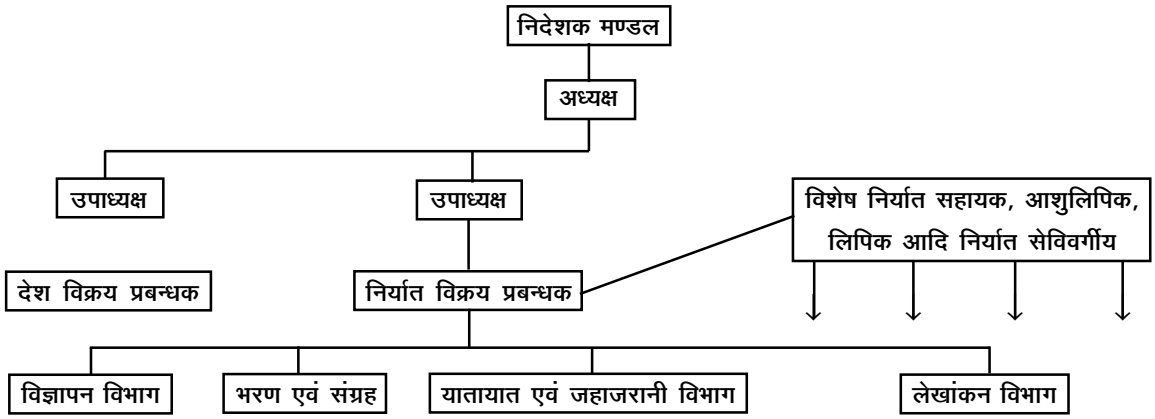

स्वर्गीय वाल्टर एफ. वाइमैन प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने सर्वप्रथम इस प्रकार के निर्यात संगठन को Built-in का नाम दिया था, मास्टर्स ट्रक कम्पनी मैं इस प्रकार के निर्यात संगठन का उपयोग किया गया था। वाइमेन की सम्भावना इस प्रकार के निर्यात विक्रय संगठन को मान्यता देने वाले व व्याख्या करने वाले प्रथम व्यक्ति थे।

इस प्रकार का निर्यात संगठन उन कम्पनियों के लिए बहुत प्रासंगिकता रखता है। जिनकी कुल बिक्री में निर्यात बिक्री का भाग बहुत कम है। ये कम्पनियों इस प्रकार का विभाग स्थायी रूप से रखती हैं। इसमें निर्यात विपणन की सफलता निर्यात प्रबन्धक पर बहुत निर्भर करती है। उसको अलग से कर्मचारी इस आशय के लिए संस्था की ओर से प्रदान नहीं किये जाते, अतः उसकी जिम्मेदारी बहुत बढ जाती है।

लाभ (Merits)—

1. **सरलता**—इस प्रकार के विक्रय संगठन में किसी प्रकार की जटिलता नहीं होती। केवल दो प्रबन्धकों की नियुक्ति निर्यातक को करनी होती है। अतः सभी प्रकार के व्यवसायी आसानी से अपना सकते हैं।
2. **लागतों में कमी**—इस प्रकार के विक्रय संगठन को अपनाने से लागतों में भी भारी कमी होती है अलग से निर्यात विभाग स्थापित करने पर प थक् कर्मचारियों की, प्रबन्धकों की नियुक्ति, कार्यालय व साधनों आदि की व्यवस्था संस्था को नहीं करनी पड़ती। इससे संस्था की विक्रय लागतों में कमी होती है एवं विक्रय पर लाभ बढ़ाने में मदद् मिलती है।

3. **प्रबन्धकों की सेवाओं का अनुकूलतम उपयोग**—जों प्रबन्धक देशी विपणन अपनी सेवाएं दे रहे हैं, उनका ही उपयोग निर्यात विपणन में किया जा सकता है। इससे उनकी क्षमताओं व योग्यताओं का अधिकतम उपयोग संस्था कर सकती है। साथ ही प्रबन्ध की लागतों में भी इससे कमी होगी। जो प्रबन्धक देशी विपणन में योग्य साबित हुए हैं, उनकी योग्यता का उपयोग निर्यात विपणन में भी किया जा सकता है।

4. **लोचशीलता**—इस प्रकार का विक्रय संगठन अपनाने पर लोचशीलता का लाभ भली प्रकार से उठाया जा सकता है। जिस प्रकार आवश्यकता हो, कर्मचारियों का उसी प्रकार उपयोग किया जा सकता है। यदि निर्यात बाजार, देशी बाजारों की तुलना में आकर्षक हो तों विक्रय विभाग के अधिसंख्य कर्मचारियों का निर्यात विपणन में लगाया जा सकता है, व निर्यात बाजारों के मन्दा चलने पर उन्हीं कर्मचारियों की क्षमताओं व योग्यताओं का उपयोग देशी बाजारों के अवसरों के विवेचन के लिए किया जा सकता है।

5. **समन्वय**—इसमें एक ही विभाग के कर्मचारी देशी व निर्यात बाजारों में विपणन का कार्य करते हैं, अतः दोनों की क्रियाओं में जहां आवश्यक हो उचित प्रकार से प्रभावी समन्वय किया जा सकता है जिससे क्रियाओं में होने वाले आवश्यक दोहराव को रोक सके।

6. **छोटी संस्थाओं को अनेक लाभ**—ऐसी संस्थाएं जिनके वित्तीय साधन सीमित है, उनके लिए यह उपयोगी रहता है साधनों के सीमित होने के कारण प थक विभाग स्थापित करना उनकी क्षमता की बात नहीं होती।

7. **प्रशासनिक सुविधा**—इस प्रकार के विक्रय संगठन में कर्मचारियों की संख्या कम होती है। इससे उनके प्रशासन में सुविधा रहती है। प्रत्येक कर्मचारी को प थक्-प थक् रूप से यह बताना आसान रहता है कि उसे क्या करना है, संगठन की उससे क्या अपेक्षा है।

8. **नियन्त्रण में सुविधा**—कम संख्या में कर्मचारियों के कारण अधीनस्थ कर्मचारियों की क्रियाओं पर प्रभावी नियन्त्रण प्रबन्धक स्थापित कर सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का संगठन के लाभों में योगदान के सन्दर्भ में कार्य-मूल्यांकन इसमें आसान रहता है।

दोष (Demerits)—

1. **विशिष्टीकरण का अभाव**—इस प्रकार के संगठन की सबसे बड़ी कमी विशिष्टीकरण का अभाव है। देशी विपणन व निर्यात विपणन दोनों के लिए एक ही कर्मचारी होते हैं। देशी विपणन व निर्यात विपणन की प्रकृति भिन्न-भिन्न है। इस विशिष्टीकरण के अभाव में निर्यात व्यापार को बढ़ाने की कल्पना दुखद स्वप्न से अधिक नहीं हो सकती।

2. **निर्यात विपणन के प्रति उदासीनता**—देशी विपणन की तुलना में निर्यात विपणन को अधिक चुनौती पूर्ण जोखिम भरा माना गया है। यह सामान्य मानवीय प्रव त्ति है कि चुनौतियों व जोखिमों का टाल जावे। इससे इस प्रकार के संगठन में निर्यात विपणन के प्रति उदासीनता उत्पन्न होती है।

3. **प थक् उत्तरदायित्व का अभाव**—इसमें विक्रय विभाग के कर्मचारियों को प थक रूप से निर्यात विपणन का उत्तरदायित्व नही होता इससे निर्यात विपणन के लिए उद्देश्य पूर्ण गतिविधि व क्रियाशीलता उत्पन्न नहीं होती व जागरूकता की भावना का उदय नहीं होता।

4. **असफलता को छिपाने का प्रयास**—असफलता को छिपाने के लिए यह संगठन छाता प्रदान कर देता है यदि विक्रय प्रबन्धक निर्यात विपणन में असफल रहता है तो वह इसका दोष देशी विक्रय पर, व देशी विक्रय में असफल रहने पर उसका दोष विदेशी विपणन पर मढ़ कर, अपनी असफलता को साफ छिपा जाता है।

5. **सरलता केवल सैद्धान्तिक**—हालांकि प्रकटतया तो इस प्रकार का संगठन सरलतम लगाता है, लेकिन यह केवल पल भर के छलावे के समान है। प्रारम्भ में तो यह प्रारूप बड़ा सरल प्रतीत होता है लेकिन ज्यों-ज्यों विक्रय विभाग अपनी गतिविधियों को कार्यरूप में परिणित करता है, त्यों-त्यों इसमें जटिलताएं उत्पन्न होने लग जाती है। संस्था का विक्रय विभाग ही निर्यात विपणन के लिए विज्ञापन आदि करता है, जबकि विदेशी विपणन की विज्ञापन व्यूह-रचना सर्वथा भिन्न होती है। इसलिए जटिलताएं उत्पन्न होने लग जाती हैं।

उपयुक्तता—प्रेट ने अपनी पुस्तक में इसी प्रारूप को Built-in Export Department के नाम से वर्णित किया है वाइमेन (Wyman) प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने सर्वप्रथम इस प्रकार के निर्यात संगठन को मान्यता दी। इस प्रकार का निर्यात उन

निर्यातकों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं, जिनकी निर्यात सम्भावनाएं बहुत अधिक उज्जवल नहीं हैं। इससे जहां एक ओर उनका देशी विपणन पर पूरा ध्यान रहता है वहीं निर्यात विपणन भी अपेक्षित नहीं होता है। ऐसी संस्थाए जिनके वित्तीय संसाधन सीमित हैं। उनके लिए यह संगठन अनेक रूपों में मितव्ययी है। जो संस्थाएं निर्यात विपणन में लचीलापन अपनाना चाहती है। उनके लिए भी इस प्रकार का संगठन अधिक उपयोगी है इस प्रकार के संगठन को, जैसी आवश्यकता हो, उसी के अनुरूप घटाया-बढ़ाया जा सकता है।

II. प थक् निर्यात विभाग
(Separate Export Department)

कम्पनी द्वारा किये जाने वाले कुल विक्रय में जब निर्यात विपणन की मात्रा बढ़ जाती है, तब ऐसी स्थिति में कम्पनी के लिए प थक निर्यात विभाग खोलना सुविधाकारी व लाभदायक रहता है। निर्यात संगठन के इस प्रकार में देशी व निर्यात विपणन के लिए प थक्-प थक विभाग बना दिये जाते हैं इन विभागों के कर्मचारी दो स्वतन्त्र प्रबन्धकों के अधीन कार्य करते हैं। विपणन की विभिन्न क्रियाएं जैसे विज्ञापन, पैकिंग बीजक बनाना लेखा, साख संग्रहन का कार्य निर्यात विभाग प थक रूप से करता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है, कि प थक् निर्यात विभाग स्वयं में एक परिपूर्ण इकाई के रूप में कार्य करता है, जिसका किसी भी प्रकार से सम्बन्ध देशी विपणन से नहीं होता है।

प थक निर्यात विभाग का स्थानीयकरण—यदि कोई कम्पनी प थक निर्यात विभाग स्थापित करने का निर्णय लेती है, तो उसके सामने एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण प्रश्न यह होता है कि इस प्रकार के विभाग को कहां पर स्थापित किया जावे। हिक ने अपनी पुस्तक में इस प्रकार के स्थानीयकरण के लिए दो स्थान बताये है; जो इस प्रकार हैं—

अ. **कारखाने के पास निर्यात विभाग की स्थापना**—इस प्रकार के स्थानीयकरण में निर्यात विभाग के कारखाने के पास ही स्थपित किया जाता है। इसमें सामान्यतया देशी व निर्यात बिक्री विभाग एक ही स्थान पर प थक्-प थक् रूप से स्थापित किये जाते हैं। इस प्रकार के स्थानीयकरण के गुण-दोष इस प्रकार हैं—

इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि निर्यात प्रबन्धक निर्यात के आदेशों पर बड़े निकट से पर्यवेक्षण कर सकता है, व इस बात को सुनिश्चित कर सकता है कि निर्यात के लिए निर्मित किये जा रहे उत्पाद किस्म सम्बन्धी व अन्य प्रतिमानों के निकट हैं। इसके अतिरिक्त ऐसी स्थिति में जबकि कम्पनी द्वारा उत्पादित उत्पादों की भारी देशी मांग के कारण निर्यात विपणन के लिए उपलब्धता का संकट उत्पन्न हो गया है, तो ऐसे समय में निर्यात प्रबन्धक चूंकि वह मौके पर उपस्थित रहता है। अतः वह अपने प्रभाव का उपयोग कर उचित मात्रा में पर्याप्त माल विपणन के लिए भी प्राप्त कर सकता है वह माल की उपलब्धता के कारण होने वाले नुकसान से निर्यात विपणन को अप्रभावित भी रख सकता है।

उपरोक्त लाभों के अलावा कारखाने के पास प थक्-प थक् निर्यात विभाग स्थापित करने से अनेक प्रकार के व्ययों की बचत की सम्भव होती है।

ब. **बन्दरगाह के पास प थक् निर्यात विभाग**—इस प्रकार के स्थानीयकरण में निर्यात कम्पनी उस बन्दरगाह के निकट अपना निर्यात विभाग स्थापित करती है, जहां से उसके माल को जहाजों में लदान होना हो। इसके प थक निर्यात विभाग का कार्यालय बन्दरगाह के पास स्थापित कर दिया जाता है।

इसका सबसे बड़ा लाभ तो यह है, कि निर्यात प्रबन्ध अन्य कम्पनियों के निर्यात प्रबन्धकों के सजीव सम्पर्क में रहता है। इससे विदेशी बाजारों व ग्राहकों के बारे में सूचनाएं प्राप्त होती रहती हैं। बन्दरगाह पर कार्यरत बैंकों से भी अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं प्राप्त होती रहती हैं।

द्वितीय, इस प्रकार के स्थानीयकरण से जहाज से भेजे जाने वाले माल के सम्बन्धों में प्रलेखों आदि की पूर्ति, अनेक प्रकार की अनुममियों व पत्र-व्यवहार में काफी सुविधा रहती है।

त तीय, विदेशी ग्राहकों व क्रेताओं से जो समय-समय पर उस बन्दरगाह पर आते रहते हैं उनसे आसानी से व प्रभावी रूप से सम्पर्क किया जा सकता है व निर्यातक संस्था बाजारों के विस्तार में इसका कुशलता से उपयोग कर सकती है।

इसके अलावा इस प्रकार के निर्यात विभाग से अनेक प्रकार की मितव्ययिता भी प्राप्त की जा सकती है। कई प्रकार के कार्य जो इस प्रकार के निर्यात विभाग के अभाव में कम्पनी को प्रेषक एजेन्ट के मार्फत करने होते हैं, वे सभी कार्य कम्पनी कम्पनी का कार्यालय स्वयं वहीं सम्पादित करने लगात है। इससे व्ययों में काफी बचत होती है।

पंचम, व्ययों में बचत के अतिरिक्त कम्पनी शीघ्र व कुशलतम सेवाए प्राप्त कर सकती है। प्रेषक एजेन्ट के पास काफी कार्य रहने से ऐसा कुशलतम स्तर स्थापित नहीं हो पाता।

तुलनात्मक उपयोग—ऐसी कम्पनी जिसके कुल विक्रय में निर्यात विक्रय की मात्रा बहुत अधिक नहीं है, उसके लिए कारखाने के पास ही निर्यात विभाग महत्वपूर्ण है एवं एवं कम्पनी की वित्तीय क्षमता बन्दागाह पर कार्यालय स्थापित करने पर होने वाले व्ययों को वहन करने जैसी है, तो उसके लिए बन्दरगाह के पास निर्यात विभाग का कार्यालय स्थापित करना उपयोगी होगा।

गुण (Merits)—इस प्रकार के निर्यात विभाग को स्थापित कर संस्था निम्नलिखित लाभ प्राप्त कर सकती है—

1. **विशिष्टीकरण**—प थक निर्यातक विभाग स्थापित करके संस्था, विशिष्टीकरण के लाभों को ऐसे कर्मचारियों का चयन कर प्राप्त कर सकती है, जिन्हें निर्यात बाजार, उनकी क्रय प्राथमिकताओं व समस्याओं की पूरी जानकारी हो निर्यात विभाग में भी अलग-अलग विपणन क्रिया के लिए प थक से विशिष्ट योग्यताओं वाले व्यक्तियों का उपयोग किया जा सकता है। निर्यात विपणन के लिए विज्ञापन बाजार अनुसन्धान लेखा, कार्मिक प्रबन्ध, भौतिक वितरण आदि के लिए विशेषज्ञों की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है।
2. **आक्रात्मक विपणन नीति का अपनाया जाना सम्भव**—इस विधि में निर्यात विपणन पर विचार व क्रियान्वयन के लिए सर्वथा अलग विभाग होने से वह विभाग निर्यात विपणन की चिन्ता करता है। विशेषज्ञों व योग्य स्टाफ की उपलब्धता व स्वयं की नीति निर्धारण में स्वतन्त्रता के कारण निर्यात विभाग आक्रात्मक विपणन नीतियां अपना कर प्रतियोगियों के बाजार भाग को हथिया सकता है।
3. **संस्था की बिक्री व लाभ में व द्धि**—आक्रात्मक विपणन नीतियों को अपनाये जाने से संस्था की बिक्री में व द्धि होती है, उससे फलतः लाभों में व द्धि होती है। इससे संस्था अतिरिक्त संसाधनों की व्यवस्था कर सकती है तथा इसका उपयोग अपने भावी विकास में कुशलता से कर सकती है।
4. **कर्मचारियों का सहयोग**—इसमें एक ही कर्मचारी पर दोहरा कार्यभार नहीं होता। इस कारण, निर्यात विभाग में कर्मचारी अपना पूरा सहयोग निर्यात प्रबन्धक को निर्यात विपणन के कार्य-निष्पादन में देते हैं।
5. **सम्भावित हानियों से रक्षा**—निर्यात विभाग का प थक रूप से गठन किये जाने पर यह विभाग विदेशी बाजारों के बारे में पूरी जानकारी रखता है। अभिरूचियों, फैशन, ब्राण्ड-निष्ठा आदि में किस प्रकार का परिवर्तन हो रहा है। उसी के अनुरूप उत्पाद व विपणन कार्यक्रम में परिवर्तन कर सम्भावित हानियों से संस्था अपनी रक्षा कर सकती है।
6. **उत्तम ग्राहक सेवाएं**—इस विधि में निर्यात प्रबन्धक विदेशी ग्राहकों से समय-समय पर मिलने पर कार्यक्रम आयोजित कर सकता है, उनकी कठिनाइयों व परेशानियों को मौके पर दूर कर सकता है। इस प्रकार से उत्तम ग्राहक सेवाएं भी इस विधि से प्रदान की जा सकती है।
7. **बहाने बाजी का अवसर नहीं**—इस विधि में कर्मचारियों देशी व निर्यात विपणन के लए प थक होने से उन्हें यह बहाना बना लेने का अवसर ही नहीं मिलता कि वे तो देशी विपणन में व्यस्त थे अतः निर्यात विपणन में ध्यान नहीं दे सके। देशी व्यापार सम्भालें या निर्यात व्यापार, किस-किस को सम्भालें ऐसा कहकर कोई भी कार्य प्रभावशाली तरीके से नहीं करने की मनोव त्ति पर इससे रोक लग जाती है।
8. **प्रबन्धकीय स्वायत्ता**—निर्यात विपणन के लिए क्या नीतियाँ हो, क्या कार्यक्रम हों, इसे तय करने की स्वतन्त्रता पूर्ण रूप से निर्यात प्रबन्धक को इस प्रकार के संगठन में प्राप्त होती है। यह आवश्यक नहीं है कि उन नीतियों का मेल देशी विपणन की नीतियों व कार्यक्रमों से हो ही।
9. **पूर्ण नियन्त्रण**—निर्यात प्रबन्धक निर्यात के लक्ष्य कर्मचारियों को दे सकता है, क्रियाविधि की रचना का सकता है। समय-समय पर कर्मचारियों के कार्य निष्पादन की तुलना लक्ष्यों से कर विचलनों का पता लगा सकता है। ऐसी व्यवस्था कर सकता है कि जिससे नियत समय पर इन विचलनों का प्रभाव समाप्त होकर लक्ष्य प्राप्त हो जावे।
10. **उच्च मनोबल**—अपने क्षेत्र के स्वयं मास्टर होने के कारण विशेषज्ञों की सेवाओं के कारण विशिष्टीकरण के लाभ आदि से कर्मचारियों का मनोबल काफी ऊंचा हो जाता है।

दोष (Demerits)—प थक् निर्यात विभाग के जहां उपरोक्त लाभ हैं वहीं उसकी हानियां भी कम नहीं हैं। मुख्य-मुख्य हानियां संक्षेप में इस प्रकार से है—

1. **व्ययों में व द्धि**–प थक से निर्यात विभाग खोलने का पहला सबसे बड़ा पहार वित्तीय भार का बढ़ना हैं सभी कार्यों के लिए प्रथम कर्मचारियों का चयन किया जाता है, जबकि एकीकृत निर्यात विभाग में एक ही कर्मचारी दोनों कार्य कर देते थे। उनके वैतन, भतों व अनुलाभों से संस्था के वित्तीय भार में व द्धि होती है। इसके अलावा यदि आयातक देश में निर्यात विभाग का कार्यलय खोला जाता है तो वहां कार्यालय का किराय या भवन निर्माण का व्यय, कार्यालय सुविधाओं की व्यवस्था में भी अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है।

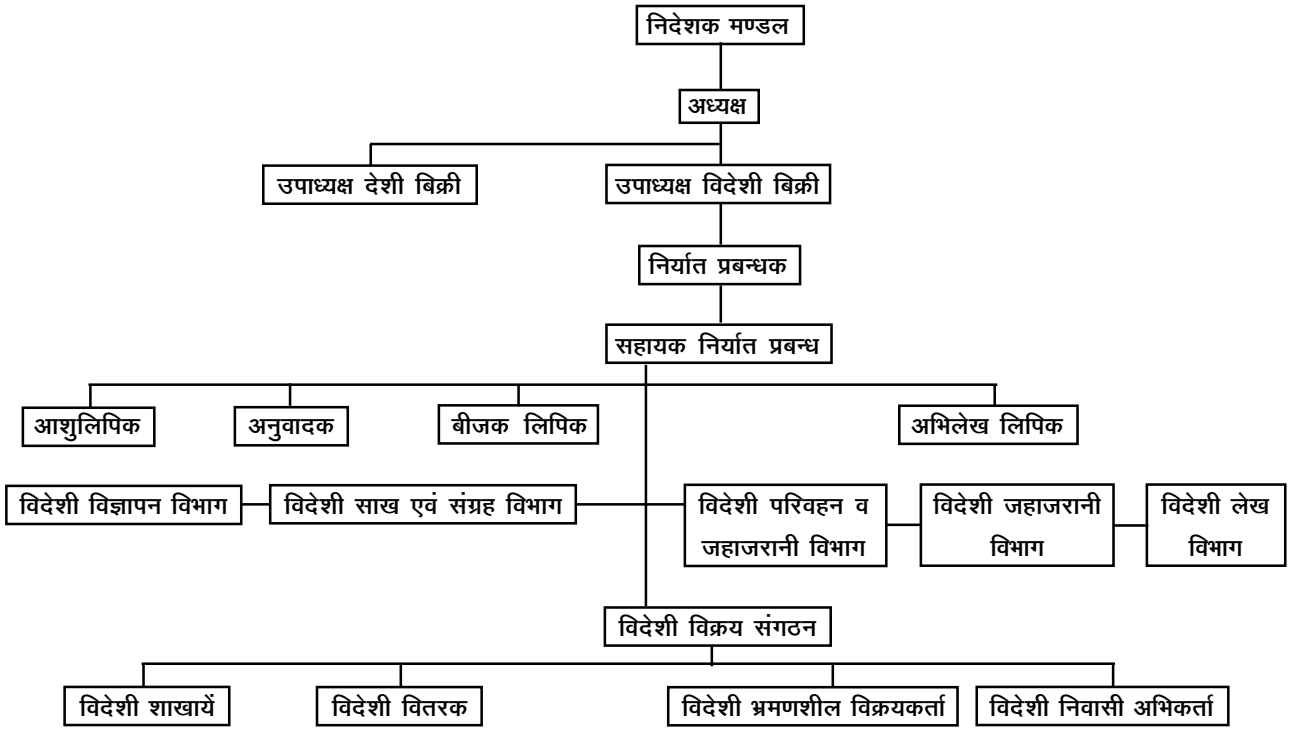

2. **नीतियों में एकरूपता का अभाव**–एकीकृत निर्यात विभाग में चूंकि देशी व विपणन का कार्य एक ही विभाग करता है, इस कारण विक्रय विभाग की नीतियों में जहां तक सम्भव होता है, एकरूपता का पालन किया जाता है जबकि प थक् निर्यात विभाग में निर्यात प्रबन्धक को अपने निर्यात बाजार के लिए अलग नीतियों बनाने का पूर्ण अधिकारी होता है। इससे देशी विपणन एवं निर्यात विपणन की नीतियों की एकरूपता समाप्त हो जाती है।

3. **अर्न्त विभागीय द्वन्द्व**–जब कभी उत्पादों की पूर्ति मांग से कम होती है, तब देशी विपणन विभाग तो यह चाहता है कि अधिकाधिक माल उसे मिले। प थक् विभाग भी उसी कार्यालय में हो तब तो दोनों विभागों की खींचातानी अपनी चरम सीमा तक पहुंच जाती है। दोनों विभाग के प्रबन्धक यही चाहते हैं कि पहले उन्हें उनकी आवश्यकता के अनुसार उत्पादन विभाग माल की सुपुदर्गी दे। इससे दोनों विभागों के कर्मचारियों के मध्य सहयोग, प्रेम की भावना का स्थान कटुता ले लेती है। इसका अन्ततोगत्वा प्रभाव संगठन की एकात्मकता पर पड़ता है।

4. **असन्तोष**–यदि प थक् निर्यात विभाग का कार्यालय आयातक देश में है, तो निर्यात प्रबन्धक कम उत्पादन की स्थिति में निर्यात विपणन के लिए आवश्यकतानुसार वांछित माल प्राप्त करने में मजबूत स्थिति में नहीं होते। जब उन्हें माल पूरा नहीं मिला तो स्वाभाविक रूप से उनके मन में असन्तोष होता है।

5. **क्रियाओं का अनावश्यक दोहराव**–यदपि निर्यात विपणन का सम्पूर्ण कार्यक्रम प थक रूप से संचालित होता है। अनेक क्रियाएं फिर ऐसी हैं जिनका अनावश्यक दोहराव होता है विज्ञापन, बाजार अनुसन्धान आदि कुछ ऐसी क्रियाएं हैं जिनका दोहराव होता है।

उपयुक्तता–इस प्रकार का निर्यात संगठन उन कम्पनियों के लिए अधिक उपयुक्त रहता है जिनकी निर्यात बिक्री पर्याप्त रूप से बढ़ चुकी हो, व उसमें व द्धि का क्रम बने रहने की सम्भावना है, जिनके वित्तीय संसाधन इतने पर्याप्त हैं, जिससे होने वाले अतिरिक्त व्यय को वहन किया जा सके।

III. निर्यातक के देश में प थक् से समामेलित निर्यात कम्पनी (Export Sales Company Separately Incorporated in the Exporter's Country)

इस प्रकार के निर्यात संगठन में निर्यात करने वाली संस्था निर्यात विपणन के लिए प थक् से कम्पनी स्थापित है। पूर्ववर्ती संगठनों के प्रकारों में निर्यात विभाग या तो विपणन विभाग के अंग के रूप में था, या इसके लिए अलग विभाग का प्रावधान था। उत्पाद विकास, नियोजन, पैकेजिंग, ब्रान्डिंग आदि कार्य देशी व निर्यात विपणन के लिए एक ही संस्था करती थी।

निर्यातक के देश में प थक् से समामेलित कम्पनी बिल्कुल भिन्न प्रकार का निर्यात संगठन है। इसमें निर्यात बाजारों के लिए बाजार अनुसंधान, उत्पाद नियोजन, उत्पाद विकास, उत्पादन, विज्ञापन व प्रचार, भौतिक वितरण आदि सभी प्रकार के कार्य इसी कम्पनी द्वारा किये जाते हैं इससे यह स्पष्ट है कि यह कम्पनी केवल निर्यात विपणन का सम्पूर्ण कार्य करने के लिए निर्यात करने वाली संस्था अपने यहां स्थापित करती हैं।

लाभ
(Advantages)

1. **सही लागत की जानकारी**—एकीकृत निर्यात संगठन में वस्तुओं की लागत का ज्ञात करते समय विभिन्न व्ययों का वैज्ञानिक रूप से आबंटन देशी विक्रय के लिए उत्पादों व निर्यात विपणन के उत्पादों में नहीं हो पाता। इस दोष का निवारण इसमें हो जाता है क्योंकि निर्यात विपणन के लिए उत्पाद या उत्पादों का यह कम्पनी स्वयं ही निर्माण करती है, अतः सही लागत की जानकारी इस विधि में हो जाती है।
2. **प्रतिस्पर्धात्मक कीमतों का निर्धारण**—इस विधि से सही लागतों की जानकारी निर्यात विपणन की वस्तुओं के बारे में प्राप्त हो जाती है यदि यह लागतें अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिमानों के समकक्ष हैं, तो संस्था के लिए संतोष का विषय होता है। अधिक होने पर कम्पनी कमी के प्रयास करती है। सही लागतों का पता होने पर यदि आवश्यक हो तो संस्था लाभ की कुछ समय तक तिलांजलि भी दे सकती है। इससे संस्था हानि से अपनी सुरक्षा अवश्य कर सकती है।
3. **योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों द्वारा कार्य निष्पादन**—यह कम्पनी केवल निर्यात विपणन ही करती है। निर्यात विपणन की आवश्यकता के अनुसार योग्य, सक्षम, प्रतिभावान व अनुभवी प्रबंधकों व कर्मचारियों की सेवाओं को इसमें प्राप्त किया जा सकता है। ऊंचे वेतनमानों व सुविधाओं के कारण ऐसे व्यक्ति इस प्रकार के संगठन में आने को लालायित रहते हैं।
4. **प्रतिस्पर्धा का बेहतर तरीके से मुकाबला**—इस प्रकार की कम्पनी की चिन्ता का एकमात्र विषय निर्यात विपणन होता है। इसके प्रबन्धकों व कर्मचारियों का ध्यान सदैव प्रतियोगियों के व्यवहार, विक्रय कार्यक्रमों आदि पर रहता है। प्रतियोगी के भावी व्यवहार का पूर्वानुमान लगाकर आक्रामक विक्रय नीतियों के द्वारा इस प्रकार की कम्पनी प्रतियोगिता की अच्छी प्रकार से सामना कर सकती है।
5. **बाजार के सुअवसरों का लाभ**—इस प्रकार की कम्पनी को स्थापित करके बाजार के सुअवसरों को जो कि प्रायः अल्पकालिक व अपवादजनक स्थिति में मध्यमकालिक होते हैं, का लाभ भली प्रकार से उठाया जा सकता है। सुअवसरों के लाभ के लिए शीघ्र निर्णय व त्वरित क्रियान्वयन आवश्यक होता है, जोकि इनमें पूर्णतया संभव है। कभी-कभी संस्था ऐसे शीघ्र निर्णय से बाजार की नेता बन जाती है व असीमित लाभ कमा लेती है।
6. **निर्यात व द्धि संभव**—प्रबंधकों व कर्मचारियों का पूरा ध्यान उत्पादित माल को विदेशी बाजारों में विक्रय करने का रहता है। इस आशय के लिए वे निर्यात व द्धि के लिए अल्पकालीन व दीर्घकालीन योजनाएं बना कर उनका प्रभावी क्रियान्वयन करती हैं। इससे निर्यात में आशातीत व द्धि होती है।
7. **उच्च मनोबल**—प्रबंधकों को सभी प्रकार के अधिकार रहने से उन्हें बार-बार अपने निर्णय का अनुमोदन मुख्य कार्यकारी अधिशासी से नहीं कराना पड़ता है। इससे उनके मनोबल का विकास होता है।
8. **प्रबंधकीय सुविधा**—केवल निर्यात विपणन के लिए प थक् कम्पनी होने पर प्रबंधकों को उनके प्रशासन में सुविधा रहती है। कार्य निष्पादन पर पैनी निगाह रहने से उन्हें नियंत्रण में भी सुविधा रहती है।

9. **प्रबंधकीय विकास**—निर्यात विपणन देशी विपणन को चुनौतीपूर्ण होता है जिन वस्तुओं के निर्यात विपणन में समस्याएं आ रही हैं, उनके विक्रय के लिए चुनौती स्वीकार करने वाले, प्रतिभाशाली युवा प्रबंधकों की नियुक्ति से यह प्रबंधकीय योग्यता के विकास का माध्यम बन सकती है।

10. **करों की छूट की सुविधा**—प्रत्येक देश की सरकार की यह सहज इच्छा ही नहीं वरन् प्रयास होता है कि निर्यातों को अधिकाधिक बढ़ाया जावे। इससे एक तो प्रतिकूल संतुलन को अनुकूल बनाने में मदद मिलती है, तो दूसरी ओर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का अर्जन भी संभव होता है। निर्यात संवर्द्धन के लिए सरकार कई प्रकार के करों की छूट देती है, इसका लाभ इस प्रकार के निर्यात संगठन से उठाया जा सकता है। करों में छूट केवल उन्हीं निर्यातकों को मिलती है, जो लगभग पूरा या उत्पादन का महत्वपूर्ण विभाग निर्यात करते हैं, यही इस प्रकार के संगठन की विशेषता है। इससे करों के निर्धारण में भी सुविधा रहती है।

दोष
(Demerits)

1. **व्ययों में भारी व द्धि**—इस प्रकार के प्रारूप को अपनाने का सबसे बड़ा दोष यह हे कि इसमें व्ययों में भारी व द्धि होती है। उत्पादन से लेकर विक्रय तक का कार्य पूर्णतया प थक् कम्पनी के द्वारा किया जाता है, इसलिए व्यय काफी बढ़ जाता है। इसके साथ ही निर्यात विपणन के लिए देशी विपणन की अपेक्षा अधिक योग्य व प्रतिभाशाली व्यक्तियों को कार्य पर लगाया जाता है, इससे भी अतिरिक्त वित्तीय भार कम्पनी पर पड़ता है।

2. **बाजार सूचनाओं का विलम्ब से मिलना**—निर्यातक देश में निर्यात के लिए कम्पनी बनाने का एक दोष यह है कि विदेशी बाजार के बारे में पूरी सूचनाएं समय पर नहीं मिलती। विदेशी बाजारों की गतिशीलता के संदर्भ में इन सूचनाओं का शीघ्र मिलना आवश्यक होता है।

3. **स्थापना में विलम्ब**—कम्पनी के रूप में स्थापित होने के कारण यह समय-साध्य भी है। कम्पनी को अपनी स्थापना के लिए अनेक औपचारिकताएं पूरी करनी पड़ती है। विशेषकर हमारे देश में तो यह अत्यन्त ही कठिन कार्य है। हमारा कम्पनी अधिनियम विश्व के कम्पनी अधिनियमों में सर्वाधिक व्यापक है, जटिलतम है। इसलिए इसकी स्थापना में काफी समय लगता है।

4. **मांग में कमी होने पर हानि**—अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में पर्याप्त गतिशीलता होती है यदि किसी भी कारण से जो वस्तुएं कम्पनी उत्पादित करके निर्यात कर रही है, उसकी मांग में गिरावट आ जाती है, तो कम्पनी को काफी हानि वहन करनी पड़ती है।

5. **लचीलेपन का अभाव**—एकीकृत निर्यात विभाग एवं प थक् निर्यात विभाग वाले प्रारूपों में काफी लचीलपन है। उत्पादक देशी बाजारों में मांग की कमी होने पर उत्पादन अतिरेक को निर्यात बाजारों में व निर्यात बाजारों में मांग की कमी होने पर देशी बाजारों में खपा सकता है। इस कारण इन प्रारूपों में पूरा लचीलापन रहता है।

इस प्रकार के लचीलेपन का पूरा अभाव इस प्रकार के निर्यात संगठन में होता है क्योंकि इसमें निर्यात संगठन को अपना समस्त उत्पादित माल विदेशी बाजारों में ही विक्रय करना होता है। देशी बाजारों की विक्रय अनुकूलताओं का उपयोग इसमें नहीं किया जा सकता।

उपयुक्तता—हालांकि उपरोक्त प्रकार के निर्यात संगठन में कई कमियां व दोष हैं। इस प्रकार का निर्यात संगठन उन संस्थाओं के लिए बहुत उपयोगी है जिनकी वस्तुओं का निर्यात बाजारों में उचित सीमा तक स्थायित्व है। भारतीय संदर्भ में भी कुछ वस्तुएं ऐसी है जिनमें विदेशी बाजार निश्चित व स्थायी प्रकृति के हैं। ये वस्तुएं अधिकतम परम्परागत वस्तुएं हैं जैसे चाय, जूट, सिले-सिलाये कपड़े आदि का बाजार लगभग स्थायी प्रकृति के ही हैं। निर्यातक देश की सरकार निर्यातों को बढ़ावा देने के लिए अनेक प्रकार के करों की छूट भी देती हैं। इन करों आदि में वस्तुओं की कीमत प्रतियोगिता का सामना आसानी से प्रभावशाली रूप से कर सकती है। लाभों को बढ़ाकर अतिरिक्त संसाधन की सहजता से जुटा कर अपना विकास कर सकती है। इसके लिए कम्पनी की अच्छी वित्तीय क्षमता व योग्य प्रतिभावन, विदेशी विपणन के जानकर व अनुभवी प्रबंधकों की सेवाओं को प्राप्त करना, नितान्त आवश्यक है।

IV. विदेश में समामेलित विदेशी सहायक विक्रय निगम (Foreign Subsidiary Sales Corporation Incorporated in a Foreign Country)

निर्यात संगठन के इस प्रकार में संरक्षक कम्पनी (Parent Company) अपनी एक सहायक कम्पनी की स्थापना उस देश में करती हैं, जिस देश को वस्तुओं का निर्यात करना हो। इसकी स्थापना उसी देश के वैधानिक प्रावधानों के अनुसार की जाती है, जिस देश में संरक्षक कम्पनी इसे स्थापित कर रही है। इस प्रकार से स्थापित सहायक सहायक विक्रय निगम या तो स्वयं ही उसी देश में वस्तुओं का प थक्-प थक् रूप में उत्पादन करता है या संरक्षक कम्पनी से बड़ी मात्रा में माल खरीद कर उसका वहां विक्रय करता है। इस प्रकार के विक्रय संगठन एवं पूर्ववर्ती निर्यात संगठन, जिसे प्रेट ने सहायक विक्रय कम्पनी का नाम दिया है, में स्वरूप का अन्तर नहीं है, वरन् यह अन्तर संरक्षक कम्पनी के साथ संबंधों व नियंत्रण का है। सहायक कम्पनी पर संरक्षक कम्पनी का व्यापक नियंत्रण होता है, जबकि इस प्रकार के निर्यात संगठन में सहायक कम्पनी का नियंत्रण होते हुए भी स्वामित्व एवं निगम संरचना, दोनों में अन्तर होता है।

इस प्रकार की कम्पनी उसी देश के नागरिकों से प्रविवरण जारी कर पूंजी प्राप्त करती है, जहां उसकी स्थापना की गयी है। कम्पनी की प्रबंध व्यवस्था के लिए प्रबंधकों का चयन भी स्थानीय तौर पर किया जाता है। अपवाद रूप में बाहरी व्यक्ति भी रखे जा सकते हैं इस प्रकार वहीं के नागरिक, पूंजी व प्रबंधकीय दायित्वों का निर्वाह करते हैं। संरक्षक कम्पनी अपने गहन व व्यापक प्रबंधकीय अनुभव का लाभ इसे प्रदान करती है। तकनीकी जानकारी (Technical know-how) भी संरक्षक कम्पनी प्रदान करती है। वित्तीय दायित्वों का विभाजन होने से जोखिम का विभाजन भी स्वतः ही हो जाता है।

अमेरिका की फोर्ड मोटर कम्पनी ने इस प्रकार के निर्यात संगठन का उपयोग किया है। फोर्ड मोटर कम्पनी ने इंग्लैण्ड, कनाडा आदि देशों में इसी प्रकार के निर्यात संगठन स्थापित किये हैं। विश्व प्रसिद्ध लीवर ब्रदर्स ने भी इसी प्रकार के निर्यात संगठनों का व्यापक उपयोग किया है, दूसरे देश में भी इस संरक्षक कम्पनी ने हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड की स्थापना की है विश्व के अनेक देशों में लीवर ब्रदर्स ने इस प्रकार के निर्यात संगठनों को स्थापित किया है। एक से अधिक देशों में जैसे ही संरक्षक कम्पनी इस प्रकार का संगठन बनाती है, तो यही बहुर्राष्ट्रीय निगम (Multinational Corporation) बन जाता है।

गुण (Merits)—इस प्रकार के निर्यात संगठन से संस्था निम्नलिखित लाभ प्राप्त कर सकती हैं—

1. **स्थानीय पूंजी का उपयोग**—संरक्षक कम्पनी को इस प्रकार का संगठन होने से इस बात की चिन्ता नहीं रहती कि पूंजी किस प्रकार से कहां से प्राप्त की जावे। इस प्रकार की कम्पनियां प्रतिष्ठित होती है, इस कारण इन्हें पूंजी के एकत्रीकरण में कोई दिक्कत नहीं होती है।
2. **कर सुविधाओं का लाभ**—वस्तुओं का वहीं पर निर्माण कर विक्रय करने से आयात पर लगने वाले करों में कटौती हो जाती है, व अनेक प्रकार के करों का लाभ संस्था को प्राप्त होता है। यदि संस्था कच्चे माल को और किसी देश के आयात कर उसका निर्माण करती है, तो कच्चे माल पर भी उसे कम दरों पर शुल्क देना पड़ता है। कर सुविधाओं का लागत संरचना पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।
3. **व्यापार प्रतिबन्धों में केवल एकमात्र विकल्प**—आज लगभग सारे विश्व में व्यापार की संरक्षण नीति किसी न किसी रूप में प्रचलित है। प्रत्येक देश अपने आयातों का कठोरता से नियमन एवं नियंत्रण करना चाहता है, ऐसी स्थिति में इस प्रकार संगठन सर्वोत्तम विकल्प का कार्य करता है। वस्तुएं यदि उसी देश में उत्पादित कर वहीं विक्रय की जाती हैं, तो किसी भी देश को इस आपत्ति नहीं होती।
4. **राजस्व मैं व द्धि**—यदि इस प्रकार का संगठन उसी देश में वस्तुओं का निर्माण करता है, तो अनेक प्रकार के कर जैसे उत्पादन कर आदि उसी देश की सरकार को प्राप्त होते हैं इससे सरकारी राजस्व में भी व द्धि होती है।
5. **व्यापक रोजगार के अवसर**—उत्पादन कार्य को जिस देश में ऐसी कम्पनी स्थापित करने का निर्णय किया गया है, यदि नहीं किया जाता है तो उत्पादन कार्यों के लिए श्रमिकों, पर्यवेक्षकों, कार्यालय-कार्यों के लिए कर्मचारियों व प्रबंधकीय कार्यों के लिए प्रबंधकों आदि को उसी देश से लिया जाता है। इस प्रकार हजारों लोगों को रोजगार के अवसर मिलते हैं।
6. **प्रभावी विपणन**—कम्पनी को उस देश की आवश्यकता के अनुरूप विपणन कार्यक्रम बनाने व उसके क्रियान्वयन में सुविधा

रहती है। विपणन विभाग के कर्मचारी उसी देश के होते हैं, उन्हें वहां की प्राथमिकताओं, ग्राहक पसन्दगियों, रुचियों, परम्परा व संस्कारों की पूरी जानकारी होती है। इस सब के कारण समयबद्ध, उद्देश्यपूर्ण विपणन कार्यक्रम बनाया जा सकता है व स्थानीय लोग ही इसे मूर्त रूप देते हैं, अतः सर्वाधिक प्रभावशीलता से उसका क्रियान्वयन हो सकता है।

7. **लाभों का देश में रहना**—इस प्रकार की कम्पनियों की स्थापना उस देश के वैधानिक प्रावधानों के नियमन व नियंत्रण के लिए अधिनियम बनाता है।

8. **अधिकतम उपभोक्ता सेवाएं**—स्थानीय लोग ही इस कम्पनी के उत्पादों का विक्रय करते हैं वे उनकी भावनाओं व विचारों को अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं। उन्हीं के अनुरूप कम्पनी अपने विपणन कार्यक्रम में परिवर्तन कर अच्छी ग्राहक सेवाएं प्रदान कर सकती है।

9. **उच्च कर्मचारी अभिप्रेरण**—इस प्रकार की संरक्षण कम्पनी के नियंत्रण में अनेक देशों में कम्पनियां कार्य करती हैं। इसका रूप बहुर्राष्ट्रीय निगमों के रूप में कार्य करना है। जब कर्मचारियों को उस बहुर्राष्ट्रीय निगम के विराट स्वरूप का पता लगता है, तब उसे इस बात से ही काफी अभिप्रेरणा मिलती है, कि वे एक विश्व प्रसिद्ध, विशाल, प्रतिष्ठापूर्ण कम्पनी में कार्य कर रहे हैं। दूसरी ओर अपने विशाल वित्तीय साधनों के कारण ये कम्पनियां अपने कर्मचारियों को अच्छे स्तर का वेतन व अन्य अनुलाभ प्रदान करती हैं। इससे भी मनोबल ऊंचा रहता है।

10. **अनुभव व तकनीकी जानकारी का लाभ**—इस प्रकार की कम्पनी को अपनी संरक्षक कम्पनी के प्रबंधकीय व व्यापारिक अनुभवों का लाभ मिल जाता है। साथ ही किसी सेवा के या वस्तु के उत्पादन के बारे में आवश्यक तकनीकी जानकारी भी प्राप्त हो जाती है।

11. **स्थानीय व राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों से मुक्ति**—इस शताब्दी में विश्व के अनेक देशों में गुलामी से आजादी प्राप्त की है। नव स्वतंत्रता में उनमें राष्ट्रीयता की भावना भी हिलौरें ले रही हैं। कई देशों में सरकारें लगातार अपने प्रचार माध्यमों से विदेशी सामानों के बहिष्कार का अभियान चलाती हैं। इस प्रकार की कम्पनियां स्थापित करने से इस प्रकार की उग्र भावनाओं पर भी विजय प्राप्त की सकती है।

12. **परिवहन लागतों में कमी**—किसी भी वस्तु की कुल लागत में सामग्री व श्रम की लागत वहां उपयोगता का स जन करने वाली होती है, वहीं पर परिवहन लागत अनुत्पादक होती है। जिस देश में वस्तुओं का निर्यात करना हों वहीं उत्पादन होने के कारण कच्चे माल को भी उसी देश से प्राप्त किया जाता है, अतः परिवहन लागतों में काफी कमी हो जाती है।

13. **सस्ते व कुशल श्रमिकों की उपलब्धता**—इस प्रकार की संरक्षक कम्पनियां अधिकतर बड़े विकसित देशों की हैं उन देशों की तुलना में जब विकासशील देशों में ऐसी कम्पनियां स्थापित की जाती हैं तो तुलनात्मक रूप से सस्ते व कुशल श्रमिक भी प्राप्त हो जाते हैं।

14. **कुशलतम वितरण सेवा**—उत्पादन के पश्चात् प्रभावी विपणन के लिए मूलभूत आवश्यकता प्रभावी वितरण व्यवस्था की है। संस्था अपने मूलभूत आवश्यकता प्रभावी वितरण व्यवस्था की है। संस्था अपने विशाल वित्तीय साधनों से वितरण की अच्छी वाहिका का चयन कर सकती है, जिससे उत्पादित माल व सेवाओं को शीघ्र उपभोक्ताओं व प्रयोक्ताओं तक पहुंचाया जा सकें।

इस प्रकार से यह निर्यात संगठन उपरोक्त लाभों को प्राप्त कर सकता है। इस सबके अतिरिक्त वह ऐसे विशेषाधिकारों को भी प्राप्त कर सकता है, जोकि सामान्यतया किसी विदेशी कम्पनी को मना कर दिये जाते है। इस प्रकार निर्यात संगठन पेटेण्ट अधिकारों का भी प्रयोग कर सकता है।

दोष (Demerits)—यद्यपि इस प्रकार के निर्यात संगठन के अनेक लाभ हैं, पर इससे कई प्रकार के नुकसान भी हैं इनका वर्गीकरण हम तीन भागों में कर सकते हैं—

अ. **संरक्षक कम्पनी के देश को हानियां**

1. **पूंजी विनियोग के अवसरों का धूमिल होना**—संरक्षक कम्पनी जिस देश में ऐसी कम्पनी स्थापित करती है, वहीं के नागरिकों से उसकी पूंजीगत आवश्यकता को पूरा किया जाता है। इससे उस देश के नागरिकों के लिए पूंजी विनियोग के अवसर कम हो जाते हैं।

2. **रोजगार के अवसरों की कमी**—यदि संरक्षक कम्पनी यह निर्णय लेती है कि वस्तुओं का उत्पादन भी उसी देश

में किया जावेगा, जहां इस प्रकार के निर्यात संगठन को स्थापित किया जा रहा है, तो उसमें उत्पादन, कार्यालय व प्रबंधकीय कार्यों के लिए व्यक्तियों का चयन भी स्थानीय रूप से किया जाता है। इससे संरक्षक कम्पनी के देश में लोगों के लिए रोजगार के अवसर कम हो जाते हैं।

3. **राजस्व में हानि**—इससे एक हानि और भी है, यदि उत्पादन संरक्षक कम्पनी के देश में किया जाता है तो अनेक प्रकार के कर जो उत्पादन आदि पर लगाये जाते हैं, वे भी उसी देश को प्राप्त होते, लेकिन इसके अभाव में संरक्षक का देश उन करों से भी वंचित रह जाता है। इससे राजस्व में हानि होती है।

4. **राजनैतिक कारणों से हानियां**—आज विश्व का राजनैतिक रंगमंच बड़ा ही अस्पष्ट व अस्थिर हो गया है। आन्तरिक व बाह्य कारणों से अनेक देशों में राजनैतिक उथल-पुथल होती रहती है। कई बार तो यह इतनी अप्रत्याशित होती है कि संरक्षक कम्पनी को उचित कदम उठाने का अवसर भी नहीं मिलता। इसमें राष्ट्रीयकरण व अन्य प्रकार का भय निहित रहता है, जिसमें कई बार संरक्षक कम्पनी के देश को व्यापक हानि सहन करनी पड़ती है।

ब. **स्वयं कम्पनी को हानियां**—संरक्षक कम्पनी के नियंत्रण में किसी अन्य देश में स्थापित होने वाली कम्पनी को भी अनेक प्रकार की हानियां वहन करनी पड़ती है, जो इस प्रकार से हैं—

1. **वित्तीय असुविधाएं**—संरक्षक कम्पनी के समकक्ष यदि किसी प्रकार का वित्तीय संकट चल रहा हो, तो संरक्षक कम्पनी अपने नियंत्रण में कार्य कर रही कम्पनियों के उपलब्ध वित्तीय संसाधनों का पूरा उपयोग करती है, इससे उस कम्पनी को कई बार वित्तीय असुविधाओं का सामना करना पड़ता है।

2. **सहयोग की समस्या**—इस प्रकार के निर्यात संगठनों का स्वरूप बहुर्राष्ट्रीय निगमों के रूप में होता है। संरक्षक कम्पनी के निदेशक मण्डल पर अत्यधिक कार्य-भार होता है, इससे वे वांछित सहयोग उस कम्पनी को नहीं कर पाते।

3. **नीतियों में परिवर्तन हानियां**—जिस देश में इस प्रकार की कम्पनियां स्थापित की जाती हैं, उस देश की सरकार कई बार विदेशी पूंजी निवेश को आकर्षित करने के लिए अनेक प्रकार की घोषणाएं कर देती हैं। कई बार यह केवल अल्पकालिक होती हैं। इनके वापस लेते ही मिलने वाला लाभ भी समाप्त हो जाती है।

4. **बहुर्राष्ट्रीय निगमों के बारे में कड़ा रुख**—संरक्षक कम्पनियां इस प्रकार के निर्यात संगठन को सामान्यतया विकासशील देशों में स्थापित करती हैं। विकासशील देश प्रारम्भ में जब उनकी अर्थव्यवस्था को सुद ढ़ आधार प्रदान करना होता है, तब तो उन्हें प्रोत्साहन व प्रलोभन देकर आमंत्रित कर लेते हैं, बाद में ज्यों ही उनकी अर्थव्यवस्था पटरी पर आकर गति पकड़ लेती है, त्यों ही उनका इन निगमों के बारे में रूख कठोर हो जाता है। अनेक प्रकार के नियंत्रण इन कम्पनियों पर लगाये जाते हैं। समय-समय पर उन्हें अनेक सूचनाएं उस देश की सरकार को भेजनी होती हैं। इससे कई बार उनके कार्य संचालन में बड़ी परेशानियां पैदा हो जाती हैं।

स. **अन्य हानियां**—उपरोक्त दोषों के अतिरिक्त अनेक प्रकार अन्य दोष भी इसमें निहित हैं। संरक्षक कम्पनी कभी भी अपने उत्पाद रहस्य को उस कम्पनी को नहीं देती। जैसे विश्व-प्रसिद्ध कोका कोला पेय कम्पनी के विश्व के 204 देशों में अपने उत्पाद की बिक्री हेतु इस प्रकार का निर्यात संगठन पर जाल विरद में फैला रखा है। अन्य देशों में स्थापित इसकी कम्पनियों को जो पाउडर कम्पनी भेजती थी, उसे बोतलों में पैक करना होता था। बस इतना सा काम उस कम्पनी का होता था। कोका कोला ने आज तक अपने उत्पाद के संघटक तत्वों के बारे में किसी को जानकारी नहीं दी है।

उपयुक्तता—इस प्रकार का निर्यात संगठन छोटे निर्माताओं के लिए तनिक भी उपयुक्त नहीं है यह ऐसे विशालतम संगठनों के लिए उपयोगी है जिनकी वित्तीय व प्रबंधकीय क्षमताएं सुद ढ़ एवं उच्च कोटि की हो इस प्रकार के संगठन में वित्तीय क्षमता तो गौण बात है। लेकिन प्रबंधकीय क्षमता प्रमुख बात है। वित्तीय संसाधन तो उसे देश के नागरिक ही जुटा देते हैं, लेकिन संरक्षक कम्पनी की प्रबंधकीय क्षमता ऐसी होनी चाहिए जिससे वह इस प्रकार के विभिन्न देशों में स्थापित की गई कम्पनियों पर प्रभावी नियंत्रण रख सकें।

अनेक देशों की सरकारें इन कम्पनियों के लिए अनेक प्रोत्साहनों व विशेषाधिकारों की घोषणाएं करती है, उसका लाभ इससे उठाया जा सकता है। व्यापार प्रतिबन्धों के इस परिवेश में भी इस प्रकार का संगठन अत्यन्त ही कारगर हो सकता है। स्थानीय व राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों से मुक्ति भी इस प्रकार के संगठन से प्राप्त हो सकती हैं। ऐसे देशों में जहां राष्ट्रीयता की भावना ज्वलन्त हैं व इस बारे में उग्रवादी विचारधारा व्याप्त है। उन देशों में इस प्रकार के निर्यात संगठनों की महती उपयोगिता है।

V. संयोजन निर्यात संगठन
(Combination Export Association)

सामान्य अर्थों में संयोग से अभिप्राय प्रतिस्पर्धा से दुष्परिणामों से बचने अथवा बड़े संगठन की मितव्ययिता प्राप्त करने हेतु दो या दो से अधिक व्यावसायिक इकाइयों का मिलन है। संयोजन निर्यात संगठन भी व्यावसायिक संयोगों का ही रूप है। निर्यात विपणन का कार्य जहां एक ओर जोखिमपूर्ण है, वहीं यह चुनौती पूर्ण भी है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रतियोगिता अत्यन्त ही कड़ी है इससे सीमान्त इकाइयों को, जोकि केवल निर्यात पर ही निर्भर हों, उन्हें तो शीघ्र ही ताले लगाने को बाधा होना पड़ता है। प्रतियोगिता के कड़े होने से सामान्य लाभ की दर भी कम हो जाती है।

इस प्रकार के संगठन में अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में वस्तुओं का विक्रय एक केन्द्रीय एजेंसी द्वारा किया जाता है, जिसके सदस्य अनेक देशों के निर्यातक होते हैं। यह केन्द्रीय एजेंसी एक या मिलती-जुलती अन्य वस्तुओं का अन्तर्राष्ट्रीय विपणन करती है। अनावश्यक प्रतियोगिता के कारण लाभों पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों को रोकना व प्रभावपूर्ण तरीके से विपणन ही इसके उद्‌गम के कारणों में से एक रहे हैं। सर्वप्रथम जर्मनी में इस प्रकार के संयोजनों का उपयोग किया गया, इसके बाद यह विश्व के अनेक देशों में अपनाया जाने लगा।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यह संगठन सहकारिता के आधार पर प्रतियोगिता का सामना करने व उसका उन्मूलन करने, पारस्परिक लाभ के लिए, उत्तम स्तर की प्रबंधकीय कुशलता प्राप्त करने व लाभों का एक उचित स्तर प्राप्त करने के लिए विभिन्न निर्यातक आपस में संगठन बना लेते हैं, यहीं संयोजन निर्यात संगठन है। इसमें या तो संयोजन निर्यात संगठन ही समस्त अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में माल का एक विक्रय करता है या अलग-अलग विक्रय क्षेत्रों का निर्धारण कर दिया जाता है। संस्था विशेष फिर उसी क्षेत्र तक अपनी विपणन क्रियाओं को संचालित करती है। इसके प्रतियोगिता-जनित हानियों पर अंकुश लग जाता है। मध्यम स्तर के निर्यातकों को भी फलने-फूलने के अवसर इससे मिल जाता है।

गुण (Merits)—संयोजन निर्यात संगठनों में से अनेक प्रकार के लाभों को विभिन्न निर्यातक संस्थाएं प्राप्त कर सकती है। जो इस प्रकार हैं:—

1. **निर्यात कीमतों में स्थिरीकरण**—संयोजन निर्यात संगठनों में यह संगठन ही सभी निर्यातकों के लिए विक्रय मूल्य तय करते हैं, सभी को संगठन द्वारा तय किये गये मूल्य पर ही माल का विक्रय करना होता है। इसके कारण निर्यात कीमतों में स्थिरीकरण रहता है।
2. **विक्रय लागतों में कमी**—इसके द्वारा विक्रय लागतों में भी कमी की जा सकती है। विपणन अनुसंधान का कार्यक्रम जो कि इसके अभाव में प्रत्येक फर्म प थक् रूप से करती, उसकी अब आवश्यकता नहीं रहती वरन् यह संगठन सभी निर्यातकों की ओर से जो इसके सदस्य हैं विपणन-अनुसंधान करता है। विपणन अनुसंधान पर जो भी व्यय आता है। उसे आपस में भी विभाजन कर व्ययों में कमी की जा सकती है।
3. **विक्रय शर्तों का प्रमापीकरण**—विक्रय शर्तों का मुख्य भाग साख की शर्तों, ब्याज की शर्तों, बट्‌टा आदि के रूप में होता हैं संगठन के अभाव में जहां प्रत्येक व्यापारी अपनी स्थिति व क्षमता के अनुसार इन शर्तों को तय करना है उसका अन्त इस प्रकार का संगठन बनते ही हो जाता है। संयोजन निर्यात संगठन जो शर्तें एवं दशाएं तय करें, उसे मानने के लिए सभी सदस्यगण बाध्य होते हैं। इन शर्तों की एकरूपता से क्रेताओं के अनेक संदेहों का निवारण स्वतः ही हो जाता है।
4. **परिवहन लागतों में कमी**—विदेशी व्यापार के अधिकांश माल जहाजों के द्वारा भेजा जाता है। यदि किसी बड़े देश को किसी आदेश की पूर्ति के अन्तर्गत विशाल परिमाण में माल भेजना हो, तो संगठन के अनेक सदस्य निर्यातक मिल सके उसे एक ही जहाज से उस देश को भेज सकते हैं। इससे परिवहन लागतों में भी कमी होती है।

5. **संग्रहण लागतों में कमी**—संयोजन निर्यात संगठन विदेशी बाजारों में वस्तुओं के बिक्री हेतु उचित संग्रहण की व्यवस्था भी करता है। यह संगठन जहां बिक्री की मात्रा अधिक हो, वहां ऐसी सुविधाएं निर्यातकों को प्रदान करता है। इससे संग्रहण लागतों में भी पर्याप्त रूप से कमी होती हैं।

6. **निश्चित विक्रय क्षेत्रों में कार्य**—संयोजन निर्यात संगठन के अन्तर्गत अर्न्राष्ट्रीय बाजार को अनेक खंडों में विभाजित कर लिया जाता है। उसके पश्चात् उस खण्ड विशेष की आवश्यकताओं व निर्यातक की स्थिति व क्षमता के आधार पर प्रत्येक निर्यातक को प थक-प थक क्षेत्र बांट दिये जाते हैं, इससे अनावश्यक आपा-धापी समाप्त हो जाती है।

7. **उद्देश्यपूर्ण विपणन कार्यक्रम की रचना व उसका प्रभावी क्रियान्वयन**—प्रत्येक निर्यातक को प थक् रूप से विक्रय-क्षेत्र निर्धारित करने का एक बड़ा लाभ यह होता है कि प्रत्येक निर्यातक उद्देश्यपूर्ण विक्रय कार्यक्रम का निर्माण कर सकता है। प्रत्येक विपणन क्षेत्र की अपनी कुछ मौलिक व सामान्य विशेषताएं होती हैं इन्हीं विशेषताओं से उस क्षेत्र के क्रेताओं का व्यवहार संचालित होता है। क्षेत्र निश्चित होने से प्रत्येक फर्म उस क्षेत्र के अनुरूप ही उद्देश्यपूर्ण विपणन कार्यक्रम बनाकर उसका क्रियान्वयन कर सकती है।

8. **मोल-भाव करने की शक्ति में व द्धि**—एक व्यक्तिगत इकाई की अपेक्षा अनेक इकाइयों के मिलकर संगठन के रूप में कार्य करने पर उनके मोल-भाव करने की शक्ति में भी व द्धि हो जाती है। जो मूल्य संगठन तय करता है, उसी पर सदस्यगण वस्तुओं का विक्रय करते हैं, यह सामूहिक शक्ति ही उनकी सामूहिक सौदेबाजी की क्षमता बढ़ा देती है।

9. **गलत व्यापारिक प्रव त्तियों की समाप्ति**—इस प्रकार के संगठन के अभाव में जहां गलाकाट प्रतियोगिता आपस में विद्यमान है, उसका स्थान पारस्परिक सहयोग व प्रेम की भावनाएं ले लेती हैं। ''जो सक्षम व योग्य है वही जिन्दा रहेगा'', इसका स्थान 'जीओ और जीने दो' की भावना ले लेती है। विशेषकर छोटे निर्यातकों को जिन्हें, वास्तव में कण्ठछेदी प्रतियोगिता के दुष्परिणामों को भोगना पड़ता है, वे सुरक्षा का आवरण प्राप्त कर लेते हैं। छोटी-छोटी सीमान्त इकाइयों को भी इस प्रकार के संगठन के कारण निर्यात विपणन में भाग लेने का सुअवसर मिल जाता है।

10. **संयुक्त संवर्द्धन**—उद्योग विशेष की आम बिक्री को बढ़ाने के लिए यह संगठन विदेशी बाजारों में सभी की ओर से संयुक्त संवर्द्धन कार्यक्रम की रचना कर उसका क्रियान्वयन कर सकता है। संयुक्त विज्ञापन कार्यक्रम से जहां क्रेताओं में विश्वसनीयता उत्पन्न होती है। वहीं विज्ञापन व्ययों में प्रति फर्म के हिसाब से काफी कमी हो जाती है। कई प्रकार के संवर्द्धन कार्यक्रमों को भी यह संगठन आयोजित करता है। विशेष रूप से प्रदर्शनियां आदि, इससे बिक्री बढ़ाने में काफी सहायता मिलती है।

11. **नियमित बाजार सूचनाओं की प्राप्ति**—इस प्रकार का संगठन निर्यात बाजारों के बारे में पूरी सूचनाएं व्यवस्थित तरीके से एकत्रित करता हैं उनका संकलन कर वर्गीकरण करता है व वांछित सूचनाएं अपने सदस्यों को समय-समय पर भेजता रहता है। इससे सदस्यों को सही व प्राथमिक सूचनाएं एक तो समय पर मिल जाती हैं, दूसरी ओर इसके लिए अन्य एजेंसी पर निर्भरता समाप्त हो जाती है।

12. **विक्रय में व द्धि**—नये-नये बाजार क्षेत्रों को यह संगठन खोजता रहता है। विद्यमान बाजारों में वस्तुओं की बिक्री और बढ़ाने के लिए विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रम संचालित करता है। इससे पूरे उद्योग विशेष की बिक्री बढ़ती है, व उसका लाभ सभी को मिलता है।

13. **मांग एवं पूर्ति में संतुलन**—वर्तमान मांग व विभिन्न घटकों का जो आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक आदि हो सकते हैं, उनका वस्तुओं की भावी मांग पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इसका पूर्वानुमान यह संगठन करता है अपने पूर्वानुमानों में सदस्यों को सूचित करता हैं इसके फलस्वरूप वे मांग बढ़ने पर उत्पादन बढ़ाकर व घटने पर घटाकर अपने लाभों का उचित स्तर बनाये रख सकते हैं मांग व पूर्ति में संतुलन होने से व्यापारिक चक्रों से भी फर्मों की रक्षा हो जाती है।

दोष (Demerits)—संयोगिक निर्यात संगठन में जहां लाभ काफी है, वही पर अन्य सदंर्भों मे इसकी व्यापक हानियां भी हैं, जो इस प्रकार हैं—

1. **एकाधिकार स्थिति के दोष**—जो दोष एकाधिकार में हैं, उनमें से कुछ दोष इस प्रकार के संगठन में भी आ जाते हैं अपनी सामूहिक शक्ति का उपयोग कर इसके सदस्यगण मिलकर पूर्ति की मात्रा व मूल्यों के स्तर को निर्धारित कर

लेते हैं। घटिया किस्म का माल ऊंची कीमतों पर बेचना आदि दोष इससे निर्मित हो जाते हैं इसकी बहुत बड़ी कीमत उपभोक्ताओं की ही चुकानी पड़ती है, उनके शोषण के लिए इस प्रकार के संगठन एक अस्त्र का कार्य करते हैं।

2. **व्यक्तिगत प्रेरणा का अभाव**—विक्रय संवर्द्धन के लिए सभी संगठनों के प्रयासों पर निर्भर करते हैं, इससे इस क्षेत्र में व्यक्तिगत प्रेरणा व अभिरुचि समाप्त हो जाती है।

3. **सहयोग की भावना अल्पकालिक**—प्रारम्भ में विदेशी बाजारों में जमने के लिए व पांव जमाने के लिए तो मजबूरी वश सभी इस संगठन रूपी झुण्ड के नीचे एकत्रित हो जाते हैं विभिन्न निर्यातकों के लिए संगठन अलग-अलग विक्रय क्षेत्र निर्धारित कर देता है, प्रारम्भ में तो वे इसे स्वीकार कर लेते हैं, पर उस निश्चित विक्रय क्षेत्र की जड़े मजबूत होते ही उन्हें यही व्यवस्था पावों में पड़ी बेड़ियों की तरह लगती हैं व धीरे-धीरे इसका उल्लंघन प्रारम्भ हो जाता है।

4. **प्रबंधकीय शिथिलता**—सांयोगिक निर्यात संगठन के लिए भी योग्य प्रबंधकों की सेवाएं वाछनीय होती हैं ये संगठन तभी प्रभावी रूप से चल सकते हैं, जबकि निर्यातक फर्में अपने कुछ प्रबंधकों को इस आशय के लिए मुक्त करें। इसके अभाव में इन संगठनों में प्रबंधकीय शिथिलता आ जाती हैं।

5. **लाभ अवास्तविक**—इस प्रकार के संगठन के लाभ वास्तव में अवास्तविक भी है। देशी बाजारों में से फर्में आपस में कड़ी प्रतियोगिता करती हैं, वे फर्में विदेशी बाजारों में सहयोग करने को मानसिक रूप से तैयार नहीं होती। निर्यातक यह भी सोचते हैं, कि यदि व्यक्तिगत रूप से वह स्वयं ही निर्यात बाजारों में प्रयास करे तो उसे अधिक सफलता मिल सकती है। उनकी यह सहज इच्छा नहीं होती कि वे अपने इस अधिकार का प्रत्यायोजन किसी अन्य को कर दें।

उपयुक्तता—बड़े निर्यातक तो वास्तव में इसके सदस्य तो बनना ही नहीं चाहते, वे स्वयं व्यक्तिगत प्रयत्न ही करना चाहते हैं लेकिन मध्यम स्तर के व लघु स्तर के निर्यातकों के लिए इस प्रकार संगठन अपनी विशेष उपयोगिता रखता है। इस श्रेणी के निर्यातक संघर्ष से तो मिल जावेंगे, पर सहयोग से न केवल खड़े रहेंगे। वरन् सतत् विकास भी कर सकेंगे। इस प्रकार के संगठन के सहयोग की भावना ही आधार होती है।

VI. संयोग निर्यात प्रबंधक
(Combination Export Manager)

इसमें रत्ती भर भी संदेह नहीं है, कि यदि संस्था के पास ऐसा निर्यात विभाग जिसकी विदेशी बजाारों पर पकड़ है, एक बहुमूल्य सम्पत्ति है। यह बात सच है, कि निर्यात बाजारों का विकास करने व उन पर अपनी पकड़ बनाने के लिए काफी समय लगता है जब तक निर्यात की मात्रा ठीक नहीं है तब तक प थक् से निर्यात विभाग को रखना अनार्थिक भी होता है। ऐसी स्थिति में छोटे-छोटे निर्यातकर्ता जो अधिक ध्यान देशी बाजारों पर देने के साथ-साथ निर्यात भी करना चाहते हैं, उनके लिए इस प्रकार की विधि उपयुक्त हो सकती है।

इस विधि में, एक ऐसा व्यक्ति जो निर्यात कार्य में दक्ष होता है, जिसे विदेशी बाजारों की गहनता से जानकारी होती है, वह व्यक्ति अनेक निर्यातकों की ओर से विदेशी बाजारों के निर्यात का कार्य करता है। अपने कार्य की सहजता से पूरा करने व प्रभावी रूप से सम्पन्न करने के लिए यह एक ही प्रकार की वस्तुओं को निर्यात करने वाले निर्यातकों की ओर से वस्तुओं का विक्रय करता है। अपनी सेवाओं के प्रतिफल के रूप में वह निर्यातक से कमीशन प्राप्त करता है। कमीशन की कोई भी एक दर सभी पर समान रूप से लागू नहीं होती वरन् यह जिस बाजार में वस्तुओं का निर्यात करना है वहां पर उपस्थित चुनौतियां, प्रतियोगिता के स्तर, उस देश की सरकारों के वैधानिक प्रावधान आदि अनेक तत्वों पर निर्भर करती है इन तत्वों के प्रभाव से ही विक्रय में सहजता या जटिलता का निर्धारण होगा। इससे यह स्पष्ट है, कि यदि निर्यात के कार्य में जिन बाजारों में सहजता है, उनमें विक्रय करने की संयोग निर्यात प्रबंधक को कम कमीशन व दूसरी स्थिति में ऐसे बाजार जहां वस्तुओं का निर्यात करना कठिन व चुनौतीपूर्ण हैं। वहां कमीशन की दरें भी ऊंची होगी। इस प्रकार के निर्यात प्रबंधक 2 से लेकर 15 प्रतिशत तक कमीशन निर्यातकर्ताओं से वसूल करते हैं। संयोग निर्यात प्रबंधक उत्पादकों के नाम का प्रयोग करते हुए अपने लेटरहेड पर व्यवसाय कर सकते हैं यदि निर्यातकर्त्ता को आपत्ति नहीं है, तो वे अपने नाम से भी निर्यात व्यापार कर सकता है। संयोग निर्यात प्रबंधक कुछ निश्चित उत्पादों में कुछ निश्चित भौगोलिक क्षेत्रों में ही अपने व्यापारिक गतिविधियां करते हैं।

गुण (Merits)—निर्यात की इस विधि को अपनाने पर निम्नलिखित लाभ निर्यातकर्ता प्राप्त कर सकते हैं—

1. **मितव्ययिता**—संयोग निर्यात प्रबंधक के द्वारा निर्यात करने का सबसे बड़ा लाभ यह प्राप्त होता है, कि निर्यातकर्ता को निर्यात कार्य के लिए न तो अलग से विभाग बनाना पड़ता है, न ही उसके संचालन के लिए प थक् से कर्मचारियों की व्यवस्था करनी पड़ती हैं, इससे व्ययों की काफी बचत होती हैं
2. **नौसिखिये निर्यातकों के लिए वरदान**—ऐसे निर्यातक जिन्हें निर्यात कार्य का विशेष अनुभव नहीं है, नये-नये इस क्षेत्र में प्रवेश करने वाले निर्यातकों की समस्याओं को प्रारम्भिक तौर पर इसके द्वारा दूर किया जा सकता है। उनके लिए यह बहुत उपयोगी विधि साबित हो सकती है।
3. **विशेषज्ञ सेवाओं की प्राप्ति**—इस काय में लगे संयोग निर्यात प्रबंधकों को निर्यात के क्षेत्र में व्यापक अनुभव होता हैं वे लोग इस कार्य में अत्यन्त ही प्रवीण होते हैं। इसके द्वारा निर्यातक उन्हें कमीशन देकर उनके अनुभव व योग्यता का जमकर फायदा उठा सकते हैं।
4. **निर्यात की औचारिकताओं से मुक्ति**—विदेशी व्यापार की प्रक्रिया काफी जटिल है, व उसमें अनेक प्रकार के प्रलेखों का प्रयोग होता है। इस प्रक्रिया के अनुसार ही निर्यात व्यापार होता है। संयोग निर्यात प्रबंधक के द्वारा निर्यात को चुनने पर निर्यातकर्ता इन सभी झंझटों से मुक्त हो जाता है। इसमें ये सभी औपचारिकताएं संयोग प्रबंधक ही पूरी करता है।
5. **नवीनतम बाजार सूचनाओं की प्राप्ति**—संयोग निर्यात प्रबंधक कुछ ही उत्पादों में भौगोलिक रूप से सीमित क्षेत्रों में ही निर्यात का कार्य करता है। इससे उस बाजार विशेष में होने वाले परिवर्तनों पर उसकी पैनी निगाह होती है। कई प्रकार की बाजार सूचनाएं वह अपने विक्रयकर्ताओं के माध्यम से प्राप्त करता है। निर्यातकर्ता निःशुल्क नवीनतम बाजार सूचनाओं का संयोग निर्यात प्रबंधक से प्राप्त कर सकते हैं।

दोष (Demerits)

1. **व्यवहार में विभेदीकरण**—संयोग निर्यात प्रबंधक अनेक निर्यातकों की वस्तुओं को विदेशी बाजारों में निर्यात करता हैं सभी से उसे समान कमीशन नहीं मिलता, ऐसी स्थिति में एक प्रबल संभावना यह रहती है, कि निर्यात प्रबंधक ऐसे निर्यातक जो उसे ज्यादा कमीशन दे रहे हैं, या जिनके माल को बेचना ज्यादा लाभप्रद है। उन पर अधिक ध्यान दे। यह स्वाभाविक भी है। इससे अन्य निर्यातकों को असंतोष होता है।
2. **निर्यातकों की बिक्री में अप्रत्याशित व द्धि की संभावना क्षीण**—इस विधि का एक बड़ा दोष यह भी है, कि इसमें किसी भी एक फर्म की निर्यात बिक्री में आमूल-चूल व द्धि नहीं होती है। संयोग निर्यात प्रबंधक हालांकि अपनी क्षमता के अनुरूप वस्तुओं को विदेशी बाजारों में अधिकाधिक बेचने का प्रयास करता है, लेकिन वह अनेकों फर्मों के माल को बेचने का प्रयास करता है। इससे बिक्री तो होती हैं, पर कुल बिक्री में प्रत्येक फर्म की बिक्री सीमित ही होती हैं।

उपयुक्तता (Suitability)—इस प्रकार के निर्यात की विधि ऐसे निर्यातकों के लिए बहुत उपयोगी है। जो निर्यात के क्षेत्र में अनुभवहीन व सर्वथा नये हैं। जिनको निर्यात की प्रक्रिया व निर्यात विपणन का गहन ज्ञान व अनुभव नहीं है तथा जिनके वित्तीय संसाधन सीमित है, उनके लिए इस प्रकार की विधि अधिक उपयुक्त, तर्कसंगत व आर्थिक रूप से मितव्ययी है।

विपणन नियंत्रण
(Marketing Control)

विपणन नियंत्रण का अर्थ एवं उसकी आवश्यकता (Meaning of Marketing Control and It's Need)—''विपणन नियंत्रण से अर्थ ऐसे कदमों से है जिनके द्वारा विपणन प्रयासों (Marketing Efforts) की सफलता आंकी जाती है।'' दूसरे शब्दों में, ''विपणन नियंत्रण विपणन क्रियाओं का नियंत्रण हैं जिसमें विपणन प्रयासों का निरीक्षण, अवलोकन, नियंत्रण एवं नियमन शामिल हैं।'' विपणन नियंत्रण को ही विपणन क्रियाओं का नियंत्रण भी कहते हैं।

विपणन नियंत्रण के अन्तर्गत ही विपणन कार्यक्रम बनाये जाते हैं। विपणन प्रमाप (Marketing Standard) निर्धारित किये जाते हैं मार्ग दर्शक (Guide Lines) स्थापित किये जाते हैं तथा निष्पादन (Performance) का मूल्यांकन करने के लिए विपणन अंकेक्षण (Marketing Audit) किया जाता है जिससे कि विचलनों व उनके कारणों का पता लगाया जा सके तथा उनमें सुधार हेतु निदान क्रियाएं की जा सकें। यह सभी तत्व विपणन नियंत्रण के मुख्य तत्व हैं।

आज के प्रतियोगी व शीघ्र बदलते रहने वाले वातावरण में यह आवश्यक नहीं है कि विपणन लक्ष्य प्राप्ति हेतु केवल सुद ढ़ विपणन नियोजन किया जाय जिसके लिए उचित विपणन कार्यक्रम बनाया जाय बल्कि इस बात की आवश्यकता है कि विपणन प्रयासों की सफलता अवश्य ही आंकी जाय। वर्तमान कमियों का पता लगाया जाय व उनके निवारण हेतु आवश्यक व समयानुसार कदम उठाये जाए जिससे कि बदलते हुए आर्थिक वातावरण में विपणन लक्ष्यों (Marketing Goal) को प्रापत किया जा सके जिसके लिए पुनः नियोजन की आवश्यकता होती है।

विपणन नियंत्रण इसलिए भी आवश्यक माना जाता है जिससे कि विपणन व्ययों के औचित्य व लाभदेयता संबंधी प्रभावशीलता का पता लगाया जा सके व उनमें आवश्यक संशोधन, सुधार व कमी कर व्यवसाय की लाभदेयता बनायी रखी जा सके। कभी-कभी सरकार मूल्य नियंत्रण करती है। अतः निर्माता के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने विपणन व्ययों को एक सीमा में रखे जिससे कि लाभों को बनाये रखा जा सके।

विपणन नियंत्रण एक बहुमुखी कार्य है। इसकी आवश्यकता अनेक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए होती है। विलियम लेजर के अनुसार, विपणन नियोजन के उद्देश्य है। *(1)* संस्था के आन्तरिक व बाहरी संतुलन की स्थापना में सहायता करने के लिए, *(2)* संस्था के विपणन प्रयत्नों की अनुकूलता का पता लगाना और यह देखना कि फर्म के प्रयास विपणन लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर बढ़ रहे हैं या नहीं इस प्रयास में क्या बाधाएं आ रही हैं? उन्हें किस प्रकार दूर किया जा सकता? *(3)* विपणन साधनों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना। *(4)* प्रमापों का वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखकर पुनः निर्धारण करना व *(5)* विभिन्न विभागीय क्रियाओं, विपणन शक्तियों व प्रयासों में संतुलन निकलना।

विपणन नियंत्रण की प्रक्रिया
(Process of Marketing Control)

विपणन नियंत्रण प्रक्रिया में तीन बातें या चरण आते हैं:–*(I)* निष्पादन प्रमापों की स्थापना, *(II)* निष्पादन की प्रमापों से तुलना व *(III)* वास्तविक निष्पादों की कमियों को दूर करना व निष्पादन प्रमापों को सुधारना।

I. **निष्पादन प्रमापों की स्थापना** (Establishment of Performance Standards)–निष्पादन प्रमापों की स्थापना विपणन नियंत्रण कार्य का प्रथम कदम है। इसमें प्रमापों का निर्धारण करते समय दो बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है–एक तो फर्म के विपणन उद्देश्य क्या हैं व दूसरे किन परिस्थितियों में फर्म का विपणन कार्य किया जायेगा। निष्पादन प्रमापों की स्थापना इन तथ्यों के आधार पर की जा सकती है:–

1. **फर्म की विपणन योजना**–एक संस्था की विपणन योजना निष्पादन प्रमापों के निर्धारण में अच्छा आधार बन सकती है, लेकिन यह आवश्यक है कि विपणन योजना खूब सोच-विचार कर बनायी गयी हो जिसमें वस्तुओं, ग्राहकों व बाजारों का साफ-साफ उल्लेख हो।
2. **विपणन बजट**–विपणन बजट विपणन लक्ष्यों का संख्यात्मक रूप है जिससे प्रत्येक विभाग का बजट तैयार किया जाता है।
3. **पिछली बिक्री**–प्रमापों की स्थापना में पिछली बिक्री को भी ध्यान में रखा जाता है जिससे कि पिछली व वर्तमान की तुलना की जा सके।
4. **बाजार संभाव्यता**–बाजार संभाव्यता के अर्थ अनुमानित भावी बिक्री से है जिसे एक संस्था एक निश्चित समय में कर सकती है। एक संस्था वास्तविक बिक्री व बिक्री संभाव्य से अनुपात निकाल कर विपणन सफलता का मूल्यांकन कर सकती हैं।
5. **क्रियाएं**–प्रमापों की स्थापना करते समय क्रियाओं को भी ध्यान में रखना पड़ता है। जैसे विक्रयकर्ता का प्रतिदिन कितना समय मुकालातों में निकल जाता है।
6. **विपणन लागत विश्लेषण**–प्रमापों की स्थापना विपणन लागत विश्लेषण व बिक्री के अनुपात के आधार पर भी की जा सकती है।

II. **निष्पादन की प्रमापों से तुलना** (Comparison of Performance with Standards)–विपणन क्रियाओं को नियंत्रित करने में दूसरा चरण निष्पादनों की प्रमापों से तुलना करना है जिसके लिए अनेकों प्रतिवेदनों को मांगा जाता है। जिसमें

अनेकों महत्वपूर्ण बातें होती हैं। यह प्रतिवेदन दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक व वार्षिक हो सकती हैं। निष्पादनों की प्रमापों से तुलना करने में सूचनाओं का विश्लेषण किया जाता है फिर वास्तविक निष्पादन की निर्धारित प्रमापों से तुलना की जाती है।

III. **वास्तविक निष्पादों की कमियों को दूर करना व निष्पादन प्रमापों को सुधारना** (Removal of Actual Performance Deficiencies and Revision of Standards of Performance)—यह विपणन नियंत्रण प्रक्रिया का तीसरा चरण है इसमें वास्तविक निष्पादन की प्रमापों से तुलना के आधार पर प्राप्त सूचनाओं पर विचार किया जाता है और यह पता लगाया जाता है कि प्रमापों को प्राप्त न करने के क्या कारण रहे हैं? उन्हें किस प्रकार दूर किया जा सकता है जिससे कि उनकी पुनराव त्ति न हो। इन सूचनाओं व अनुभवों के आधार पर पुराने निष्पादन प्रमापों में आवश्यक सुधारकर नवीन प्रमाण निर्धारित कर देते हैं।

विपणन नियंत्रण की तकनीकें
(Techniques of Marketing Control)

विपणन नियंत्रण की तीन तकनीकें बतायी जाती हैं:—*(I)* सामरिक नियंत्रण तकनीक, *(II)* वार्षिक योजना नियंत्रण तकनीक, *(III)* लाभदेयता नियंत्रण तकनीकें। अब हम इन तकनीकों को विस्त त व्याख्या करेंगे:

I. **सामरिक नियंत्रण तकनीक** (Strategic Control Technique)—विपणन नियंत्रण एक उच्चस्तरीय उत्तरदायित्व है जिसे संस्था के उच्च प्रबंध द्वारा निभाया जाता है। यह नियंत्रण विपणन अकेंक्षण तकनीक द्वारा लागू किया जाता है। **फिलिप कोटलर** के मत में, ''विपणन अंकेक्षण एक संस्था के विपणन वातावरण आन्तरिक विपणन व्यवस्था और विशिष्ट विपणन कार्यवाही का एक निश्चितकालीन, विस्त त व्यवस्थित और निष्पक्ष परीक्षण है जिसके द्वारा समस्त क्षेत्रों का निर्धारण किया जाता है और संगठन की कुल मिलाकर विपणन प्रभावशीलता को बढ़ाने हेतु सुधारात्मक कार्य-योजना की सिफारिश की जाती है।''

इस प्रकार विपणन अकेंक्षण तकनीक का सामरिक नियंत्रण तकनीक, एक *(1)* निश्चितकालीन क्रिया है जिसमें फर्म की एक निश्चित अवधि के उपरान्त जांच की जाती है। *(2)* यह जांच विस्त त होती है *(3)* इसमें फर्म के सभी विपणन कार्यों का अंकेक्षण किया जाता है। *(3)* इसमें विपणन कार्यवाही के प्रमापों को आंका जाता है। और सुधारात्मक कार्य योजनाएं लागू की जाती हैं। *(4)* यह अंकेक्षण निष्पक्ष व स्वतंत्र संस्था द्वारा किया जाता हैं जो पेशेवर होती हैं।

फिलिप कोटलर ने विपणन अंकेक्षण को स्पष्ट करते हुए एक अन्य स्थान पर लिखा है कि ''विपणन अंकेक्षण एक कम्पनी के सम्पूर्ण विपणन प्रयत्न या किसी विपणन गतिविधि विशेष से संबंधित उद्देश्यों, कार्यक्रमों, निष्पादन एवं संगठन का ऐसा स्वतंत्र परीक्षण है जिसमें तीन उद्देश्य है: *(i)* यह निश्चित करना कि क्या हो रहा है? *(ii)* जो हो रहा है उसका मूल्यांकन करना, व *(iii)* इसकी सिफारिश की भविष्य में क्या होनी चाहिए।''

II. **वार्षिक योजना नियंत्रण तकनीक** (Annual Plan Control Technique)—यह तकनीक शीर्ष व मध्य प्रबंधकों द्वारा अपनायी जाती है जो संस्था की वार्षिक योजना की प्रगति की जांच करते हैं यदि किसी अधिकारी का कार्य प्रगति कम होता हैं तो उसके कारण ढूंढ़े जाते हैं तथा सुधार हेतु कार्य किये जाते हैं। इस प्रकार के नियंत्रण में निम्न चार तकनीकें काम में लायी जाती हैं:—

1. **विक्रय विश्लेषण** (Sales Analysis)—इसमें अपेक्षित बिक्री की वास्तविक बिक्री से तुलना की जाती हैं उनके अन्तरों का पता लगाया जाता है व सुधार हेतु उपाय किये जाते हैं इसके लिए दो तरीकें काम में लाये जाते हैं: *(i)* विक्रय अन्तर विश्लेषण (Sales Varience Analysis) व *(ii)* सूक्ष्म विक्रय विश्लेषण (Micro Sales Analysis)। विक्रय अन्तर विश्लेषण विक्रय विश्लेषण में विशिष्ट वस्तुओं, क्षेत्रों व विक्रयकताओं। आदि की कुल बिक्री में जो कमी आयी है उसके कारणों का पता लगाया जाता है जिसके लिए प्रतिवेदनों का गहन अध्ययन किया जाता है। सूचनाएं एकत्रित की जाती है व उनका विश्लेषण किया जाता है। तत्पश्चात भावी सुधार हेतु उपाय सुझाये जाते हैं।

2. **बाजार अंश विश्लेषण** (Market Share Analysis)—बाजार अंश विश्लेषण से अर्थ इस बात का पता लगाने से है

कि वस्तु के पूरे बाजार में संस्था का क्या हिस्सा है, यह बढ़ रहा है या घट रहा है। यदि घट रहा है तो क्यों घट रहा है? इसके कारण कौन-कौन से हैं? इन कारणों का पता लगाकर सुधार हेतु प्रयास किये जा सकते हैं।

3. **विक्रय-व्यय अनुपात** (Sales Expense Ratio)—इसमें विक्रय व व्ययों के अनुपात की जांच की जाती है और पता लगाया जाता है कि इसमें क्या कमियां है। इसके लिए *(i)* सकल लाभ व बिक्री का अनुपात, *(ii)* विज्ञापन व्यय व बिक्री का अनुपात व, *(iii)* विक्रय शक्ति व्यय व बिक्री का अनुपात का मालूम किया जाता है। यदि कहीं व्यय अत्यधिक हैं तो उन्हें कम करने का प्रयास करते हैं।

4. **रुख अध्ययन** (Attitude Study)—विपणन नियंत्रण करने का एक तरीका ग्राहकों के रुख का समय-समय पर अध्ययन करते रहना है। जिससे कि ग्राहकों के बारे में पहले ही पता चल जाय कि वे क्या चाहते हैं। यदि बिक्री में गिरावट आने का आभास होता है तो उसे रोकने के लिए तत्काल कदम उठाये जाने चाहिए।

III. **लाभदेयता नियंत्रण तकनीक** (Profitability Control Technique)—इसमें लाभदेयता संबंध जानकारी प्राप्त की जाती है और जहां कमी है उसे दूर कर लाभ बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है इसके लिए निम्न दो रास्ते अपनाये जा सकते हैं।

1. **विपणन लागत विश्लेषण** (Marketing Cost Analysis)—विपणन लागत विश्लेषण से अर्थ बिक्री प्राप्त करने की लागतें (Sales-getting Costs) आदेशों की पूर्ति लागतें (Order-filling Cost) व विक्रय को बनाये रखने की लागतें (Sales Maintenance Cost) के जोड़ से है। विपणन नियन्त्रण में इन लागातें का विश्लेषण किया जाता है। जिसके लिए अग्र तरीका अपनाया जाता है—

   पहले लाभ-हानि विवरण में शामिल विपणन लागतों का पता लगाया जाता हैं जिससे विपणन की पहचान (Identifiying Marketing Cost) कहते हैं। इसके लिए वस्तुओं को बेचने, उनका विज्ञापन करने, उनका पैंकिग व वितरण करने में जो व्यय होते हैं उनका पता लगाया जाता है और फिर उनके ऊपर होने वाले प्रशासनिक व्ययों की गणना की जाती है। इसके बाद यदि संस्था कई वस्तुओं का निर्माण व विक्रय कर रही है तो फिर उन व्ययों को उन वस्तुओं में बांटा जाता है। जिसे विपणन इकाईयों में व्ययों का आबंटन (Allocation of Functional Expenses to Marketing Units) कहते हैं। जैसे यदि कोई संस्था तीन वस्तुओं का निर्माण व विक्रय करती है। तो उन व्ययों को इन तीन वस्तुओं में बांट दिया जाता है।

   इसके बाद तीसरा कदम उठाया जाता है। जिसमें वस्तुओं के अनुसार लाभ-हानि विवरण तैयार किये जाते है जिसे वस्तु के अनुसार लाभ हानि विवरण तैयार करना कहते हैं।

   इस प्रकार उपरोक्त तरीकों से विपणन लागतों का पता लगा देते हैं। जिसे वस्तु के बारे में विपणन लागत अधिक आती है इसे लिए काम करने का प्रयास करते हैं इससे विपणन व्ययों पर नियंत्रण बना रहता है।

2. **लागत एवं लाभ विश्लेषण** (Cost and Profit Analysis)—विपणन प्रयत्नों का लाभदेयता का पता लागत एवं लाभ विश्लेषण से लगा सकते हैं। इसमें प्रत्येक वस्तु के लाभ व उस पर होने वाले व्ययों का पता लगाते हैं। जिसके लिए एक चार्ट बना लेते है जिसमें एक ओर वस्तु, दूसरी ओर उसका कुल लाभ में हिस्सा व तीसरी ओर कुल व्ययों में उसका हिस्सा लिख लेते हैं इसका उदाहरण निम्न हैं—

वस्तु *(Product)*	*लाभ में हिस्सा* *(Share in Profit)*	*कुल व्ययों में हिस्सा* *(Share in Total Exp.)*
A	65%	35%
B	20%	30%
C	10%	25%
D	5%	10%
	100%	100%

उपरोक्त तालिका यह दर्शाती है कि A वस्तु 65% लाभ कमाती है, लेकिन उस पर कुल व्ययों का 35% ही व्यय होता है जबकि शेष तीनों BCD के द्वारा 35% ही लाभ कमाये जाते हैं पर उन पर व्यय 65% होते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि प्रथम वस्तु पर अधिक ध्यान दिया जाय व शेष की लाभप्रदता को बढ़ाया जाये।

विपणन लागत विश्लेषण में समस्याएं
(Problems in Marketing Cost Analysis)

विपणन लागत के विश्लेषण में सबसे प्रमुख समस्या लागत के विभाजन (Cost Allocation) की है। जो दो रूपों में सामने आती है प्रथम तो यह है कि खर्चों को मदों में लिखने या बांटने की समस्या है। दूसरे इन मदों को क्षेत्रों, वस्तुओं व अन्य बाजार विभक्तों के अनुसार बांटने की समस्या है।

वे व्यय जो प्रत्यक्ष हैं उनको तो उनके क्षेत्रों व वस्तुओं आदि में विभाजित किया जा सकता है। लेकिन प्रत्यक्ष व्यय या ऐसे व्यय जो कई मदों से सम्बन्ध रखते हैं। उन्हें किस आधार पर विभिन्न मदों में बांटा जाय? फिर एक व्यय प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष दोनों में ही आ सकता है। इसका निवारण इस प्रकार होगा कि संस्था किस प्रकार का लागत विश्लेषण कर रही है यदि संस्था क्षेत्रों के लिए लागत का पता लगा रही है तो इस क्षेत्र के विक्रयकर्ताओं का वेतन प्रत्यक्ष व्यय होगा, लेकिन यदि संस्था वस्तु के आधार पर विश्लेषण कर रही है तो उनका वेतन विभिन्न वस्तुओं में बांटना होगा। अब यह समस्या है कि किस आधार पर इनको बांटेंगे। वास्तव में जितना समय उन वस्तुओं के सम्बन्ध में विक्रयकर्ता ने व्यय किया है उसको उनके समय (व्यतीत) के आधार पर बांटना होगा।

अप्रत्यक्ष व्ययों को विभाजित करने की भी एक समस्या है जैसे प्रशासनिक व्यय। कुछ संस्थाएं इन प्रशासनिक व्ययों को सभी क्षेत्रों व वस्तुओं में समान मात्रा में बांट देती हैं। जो वास्तव में वास्तविकता से परे है। चूंकि यह तरीका आसान है अतः अपना लिया जाता है। वैसे इन व्ययों को क्षेत्रों की कुल बिक्री के अनुपात में भी बांटा जा सकता है।

अध्याय-13
निर्यात आयात–कार्यविधि एवं प्रलेख
(Export Import—Procedure and Documents)

निर्यात कार्यविधि
(Export Procedure)

जब माल अपने देश से दूसरे देशों को भेजा जाता है तो उसे निर्यात व्यापार कहते हैं और इस कार्य को करने वाले व्यक्तियों को निर्यातकर्त्ता व्यापारी (Exporters) कहते हैं। ये अपने ही नाम से तथा अपनी ही जोखिम पर माल का निर्यात करते हैं। निर्यातकर्ता व्यापारी दो प्रकार के होते हैं–

क. **व्यापारी निर्यातकर्त्ता**–ये वे व्यापारी होते हैं, जिनका कारोबार ही स्वदेशी उत्पादकों या निर्माताओं से माल क्रय कर उसे विदेशी व्यापारियों को बेचना होता है।

ख. **उत्पादक या निर्माता निर्यातकर्त्ता**–ये निर्यातकर्त्ता वे होते है, जो वस्तुओं का उत्पादन या निर्माण भी करते हैं और निर्यात भी।

निर्यातकर्त्ता व्यापारी अपने मुख्य कार्यालय प्रायः देश के प्रमुख केन्द्रों या उत्पादन-स्थलों पर रखते हैं और बन्दरगाहों पर निर्यात सम्बन्धी औपचारिकताओं को पूरा कर शीघ्र माल रवाना करने के उद्देश्य से शाखा-कार्यालय भी स्थापित करते हैं। किन्तु विदेशों में माल भेजने में भी कई औपचारिकताओं को पूरा करना पड़ता है, जिसके लिए निश्चित क्रियाविधि अपनानी होती है।

निर्यात व्यापार की क्रियाविधि (Procedure of Export Trade)–निर्यात क्रिया एक विशिष्टता प्राप्त कार्य है। इसके बहुत से कार्य करने पड़ते हैं जिनके लिए विभिन्न प्रकार के नियमों व अधिनियमों के बारे में सम्पूर्ण जानकारी व सूचनाओं के ज्ञान की आवश्यकता होती है।

मौटे तौर पर एक निर्यात आदेश को कार्यरूप में परिणित करने के लिए जिन अवस्थाओं से गुजरना होता है वे हैं–व्यापारिक शर्तों की जांच-पड़ताल, प्रलेखीय आवश्यकताओं के बारे में निश्चय करना, जहाज पर लदान, प्रलेखों का परक्रामण (Negotition of Documents) और पंजीकृत निर्यातक द्वारा निर्यात लाभ का दावा।

एक भारतीय निर्यातकर्त्ता (Exporter) को विदेशों में माल भेजने के लिए निम्नलिखित क्रियाविधि (Procedure) का अनुसरण अपेक्षित है–

1. **सांकेतिक संख्या** (Code Number)–निर्यात से सम्बन्धित सर्वाधिक आवश्यक औपचारिकता सांकेतिक संख्या प्राप्त करने से है जिसकी आवश्यकता विदेशी विनियम नियंत्रण (Foreign Exchange Regulation) अन्तर्गत होती है। इस संख्या को, घोषणा-पत्र (Form of Declaration) कहते है। GRII EP, और UP, COD के नाम से जाना जाता है और जो अन्य प्रलेखों के साथ बन्दरगाह, लदान स्थान या भेजने के स्थान से प्रपत्रों के साथ डाक अधिकारियों को जमा किये जाते है, में उल्लेख किया जाता है। इस संख्या को प्राप्त करने के लिए एक निर्धारित फार्म पर (दो प्रतियां) रिजर्व बैंक आफ इण्डिया के उस दफ्तर को आवेदन पत्र भेजना पड़ता है जिसकी सीमा में प्रार्थी का मुख्य या बड़ा दफ्तर आता है। सांकेतिक संख्या के लिए आवेदन पत्र देने से पूर्व निर्यातक के लिए यह आवश्यक होगा कि वह ऐसे व्यापारिक बैंक में अपनी फर्म का चालू खाता खोले जो विदेशी विनिमय में लेन-देन करने के लिए अधिकृत हों। साथ ही उसे आयकर निकासी के लिए भी प्रार्थना पत्र देना होगा।

   भारत में निर्यातकर्ता व्यापारी को विदेशी मुद्रा (नियमन) अधिनियम, 1947 के अन्तर्गत अपने निर्यात का पूर्ण विवरण बैंक

को भेजना अनिवार्य होता है। साथ ही वह एक लिखित घोषणा-पत्र रिजर्व बैंक को देता है कि मैं सारा विदेशी विनिमय रिजर्व बैंक में जमा कराकर स्वदेशी मुद्रा प्राप्त कर लूंगा। अतः निर्याकर्ता कराकर स्वदेशी मुद्रा प्राप्त कर लूंगा। अतः निर्यातकर्ता के लिए विदेशी मुद्रा विनिमय सम्बन्धी कार्यवाही रिजर्व बैंक के साथ करना आवश्यक है।

2. **निर्यात लाइसेन्स प्राप्त करना** (Obtaining Export Licence)—निर्यातकर्ता को भारत सरकार के आयात व निर्यात नियत्रंक कार्यालय में एक आवेदन-पत्र देना चाहिए। आयात व निर्यात नियन्त्रक द्वारा आवेदन पत्र की जांच पड़ताल की जाती है और सन्तुष्ट हो जाने पर उसे आवश्यक लाइसेन्स जारी कर दिया जाता है।

   लाइसेन्स प्राप्त करने की द ष्टि से भारत में आयात तथा निर्यात (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 [Import and Export (Control) Act, 1947] के अन्तर्गत निर्यातकर्त्ताओं को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है—

   क. **सुस्थापित निर्यातकर्त्ता** (Established Exporters)—ये वे निर्यातकर्त्ता होते हैं जिन्हें निर्यात करने के लिए निर्यात कोटा (Quota) दिया जाता है, जिसका निर्धारण उनके द्वारा मूल अवधि में चुने गए किसी भी वर्ष के निर्यात के अनुसार होता है। इस श्रेणी में आने के लिए इन्हें नियन्त्रक अधिकारियों को निर्यात वस्तु के सम्बन्ध में निश्चित अवधि के अन्तर्गत एक वर्ष या आधे वर्ष में निर्यात सम्बन्धी प्रपत्र प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत करने होते हैं।

   ख. **उत्पादक निर्यातकर्त्ता** (Producer Exporters)—ये वे निर्यातकर्ता होते हैं जो निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का स्वयं उत्पादन या निर्माण करना होता है। इनका प्रमुख कारोबार वस्तुओं का उत्पादन या निर्माण करना होता है और कभी-कभी ये निर्यात भी करते है। ये निर्यात तब ही करते हैं जब उनके उत्पादन की मुख्य मांग विदेशों में हो—जैसे जूट, चाय, खनिज, लोहा आदि। इनके द्वारा सीधा निर्यात होने के कारण, निर्यातकर्त्ता को सन्तोषजनक सेवा और कम लागत का लाभ पहुंच सकता है।

   ग. **नव-आगन्तुक निर्यातक** (New-Comer Exporter)—ये वे निर्यातकर्त्ता होते हैं, जो मूल अवधि में किसी एक या आधे वर्ष में सम्बन्धित वस्तुओं के निर्यात का प्रर्याप्त अनुभव नहीं होते हुए भी आयात-निर्यात नियंत्रक से लाइसेंस प्राप्त कर सकते हैं। इन्हें लाइसेन्स प्राप्त करने के लिए निर्धारित विधि के अनुसार आवश्यक प्रमाण पत्र आदि प्रस्तुत करने होते हैं।

3. **निर्यात प्रोत्साहन समिति के साथ पंजीयन** (Registration with Export Promotion Council)—निर्यात व्यापार से सम्बन्धित अगला कदम है, सम्बन्धित निर्यात प्रोत्साहन समिति व अन्य अधिकारी के साथ पंजीयन जिनके द्वारा निर्यातक को सुविधाओं व सेवायें प्राप्त होती हैं।

   i. जो निर्माणकर्त्ता लघु पैमाने की इकाई के रूप में पंजीकृत है अथवा डायरेक्टर जनरल तकनीकी विकास (O.G.T.D.) से सूचीबद्ध हैं, उन्हें पंजीयन में किसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता।

   ii. लेकिन अन्य व्यापारियों को या तो दूसरे पंजीकृत निर्यातकर्त्ता या निर्यातक से अपने प्रार्थना-पत्र पर सिफारिश (Recommendation) करानी पड़ती है या लघु (Small), मध्यम (Medium) अथवा बड़े पैमाने (Large Scale Units) की इकाई के पंजीकृत निर्माणकर्त्ता से एक पत्र इस आशय का नत्थी कराना पड़ता है कि वह प्रार्थी के द्वारा निर्यात किये जाने वाले माल की पूर्ति का जिम्मा लेने के लिए तैयार है।

   iii. अतः यदि कोई व्यक्ति व्यापारी निर्यातक (Merchant Exporter) के रूप में निर्यात करना चाहता है जिसकी स्वयं की निर्माण इकाई (Manufacturing unit) नहीं है तो उसे उन वस्तुओं के पंजीकृत निर्माणकर्ता के साथ पक्के अनुबन्ध करने पड़ेंगे जिसका वह निर्यात करना चाहता है।

4. **प्रस्ताव तथा आदेश** (Offer and Orders)—निर्यात व्यापार में सौदे का प्रारम्भ निर्यातकर्ता द्वारा विदेशी क्रेत्ता को लिखे गये पत्र अथवा मूल्य उद्धरण पत्र (Quotation) से होता है। जिसे 'offer' कहते हैं। जब यह प्रस्ताव विदेशी क्रेता द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो इसे 'order' कहा जाता है।

   अतः निर्यात आदेश प्राप्त करने के पश्चात् निर्यातक को इसकी विषय वस्तु को निम्नलिखित के सन्दर्भ में सूक्ष्म परीक्षण (Scrutiny of order) कर लेना चाहिए।

   i. **भुगतान की शर्तें** (Terms of Payment)—क्रेता, निर्यातक द्वारा भेजी गई भुगतान की शर्तों को स्वीकार करता

है। यदि निर्यात साख-पत्र (Letter of Credit) के आधार पर किया जाता है तो इसकी शर्तें, बिक्री अनुबन्ध की प्रमुख शर्तों पर प्रकाश डालने वाली होनी चाहिए। साख-पत्रों में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए—

अ. भुगतान भारत में मिलेगा। इसका वस्तुतः तात्पर्य होता है कि विदेशी बैंक द्वारा जारी किये गये साख-पत्रों की सहमति किसी भारतीय बैंक के द्वारा होनी चाहिए।

ब. साख-पत्र में वर्णित सभी प्रलेख भारत में किसी भारतीय बैंक में जमा किये जाने चाहिए।

निर्यातक को यह भी जांच करनी चाहिए कि—

i. लिखा जाने वाला ड्राफ्ट दर्शनी (अर्थात तत्काल भुगतान) होगा अथवा मुद्दती और वह व्यक्ति अथवा बैंक पर लिखा जायेगा।

ii. साख वैधता अवधि भारतीय विदेशी विनिमय नियन्त्रण अधिनियम द्वारा अनुज्ञेय (Permissible) है।

iii. **साख-पत्र मांगना** (Demanding Letter of Credit)—इसके अन्तर्गत निर्यातकर्त्ता विदेशी आयातकर्ता से साख-पत्र की मांग करता है। यह साख-पत्र विदेशी विनिमय का कार्य करने वाले बैंक से निर्यातकर्ता के नाम से आयात मूल्य के बराबर रकम जमा कर प्राप्त कर लिया जाता है। इस साख-पत्र के आधार पर निर्यातकर्त्ता को अपनी राशि के लिए निर्दिष्ट बैंक पर विनिमय पत्र (Bill of Exchange) लिखने का अधिकार प्राप्त हो जाता है, और निर्यातकर्त्ता भुगतान के बारे में निश्चित हो जाता है।

iii. **प्रलेख** (Documents)—निर्यातक को खासकर विनिमय विपत्र (Bill of Exchange) के साथ के आवश्यक प्रलेखों को अवश्य देख लेना चाहिए जैसे—

i. व्यापारिक अथवा चुंगी बीजक,

ii. जहाज पर लदे माल से सम्बन्धित जहाजी बिल्टी,

iii. उद्‌गम का प्रमाणपत्र,

iv. पैकिंग सूची,

v. जहाजी बीमा प्रमाण पत्र अथवा पॉलिसी।

iv. **सुपुर्दगी सारणी** (Delivery Schedule)—एक निर्यातकर्ता को यह भी देख लेना चाहिए कि या तो सुपुदर्गी सारणी उसके उत्पादन कार्यक्रम से मेल खाती हो अथवा उसके पूर्तिकर्त्ता के।

v. **निरीक्षण एजेन्सी**—निर्यातक को यह भी देख लेना चाहिए कि चाही गई निरीक्षण एजेन्सी निर्यात निरीक्षण एजेन्सी है अथवा कोई अन्य संस्था।

vi. **अन्य** (Others)—इस शीर्षक के अन्तर्गत अन्य आवश्यक देखभाल की जो चीजें हैं, वे पैंकिंग, लेबल लगाना व मार्किंग करना।

5. **आदेश की पुष्टि** (Confirmation of order)—यदि निर्यातक निर्यात आदेश की विषयवस्तु से सन्तुष्ट है तो उसे एक औपचारिक पुष्टि-पत्र भेज देना चाहिए। यदि उसे कुछ संशय है तो उसे उसी समय इस सम्बन्ध में स्पष्ट्रीकरण मांग लेना चाहिए।

इसी समय निर्यातक को निर्यात आदेश निम्न के साथ पंजीकृत कर लेना चाहिए—

i. इंजीनियरिंग निर्यात प्रोत्साहन समिति (क्षेत्रीय कार्यालय) से ताकि आन्तरिक स्त्रोतों से स्टील, ढला हुआ लोहा प्राप्त हो सके और SAIL International से आयातित माल की पुर्ति हो सके। समिति द्वारा प्रत्येक दो महीने से घोषित किये जाने वाले अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य की घोषणा बन्द होने के दस दिनों के भीतर ही पंजीकरण हो जाना चाहिए।

ii. व्यापारिक बैंक के साथ जो विदेशी विनिमय में लेनदेन के लिए अधिकृत हैं ताकि अनुबन्ध वाली तारीख पर उपलब्ध निर्यात सहायता उसी स्तर पर उपलब्ध हो सके।

6. **माल एकत्रित करना अथवा सुपुर्दगी नोट** (Collecting Goods or Delivery Note)—इस सम्बन्ध में दो बातें हैं—

अ. यदि निर्यातक निर्माणकर्ता है अथवा उत्पादक है तो उसे अपने उत्पादन विभाग या फैक्टरी में सुपुदर्गी नोट भेजना चाहिए, जिसमें निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में जानकारी दी गई हो—

i. उत्पाद का विशेष विवरण

ii. अपेक्षित मात्रा, डिजाईन, रंग

iii. सुपुर्दगी सारणी, और

iv. पैकिंग, मार्किंग व लेबल लगाने सम्बन्धी अपेक्षायें। निर्यातकर्त्ता को उत्पादन विभाग को यह निर्देश भी देना चाहिए कि वह एक प्रति अपने पास रख ले तथा प्रतिलिपि पर सुपुर्दगी की पुष्टि करें।

ब. यदि माल अन्य निर्माणकर्ताओं से क्रय किया जाना है तो उसे अपने पूर्तिकर्ता को क्रय आदेश देना चाहिए जिसमें सुपुर्दगी नोट की भांति ही समस्त विवरण दिये गये हों।

7. **लदान से पूर्व निरीक्षण** (Pre-Shipment Inspection)—जैसे ही प्रेषण के लिए माल तैयार हो जाये, निर्यातक को निर्यात निरीक्षण एजेन्सी से निरीक्षण प्रमाण-पत्र के लिए सम्पर्क स्थापित करना चाहिए यदि उसका माल किस्म नियन्त्रण और लदान से पूर्व निरीक्षण नियमों के अन्तर्गत आता है। प्रमाण-पत्र प्राप्ति के लिए निर्धारित फार्म के साथ निम्नलिखित भी होने चाहिंए—

i. व्यापारिक बीजक,

ii. निरीक्षण फीस की आवश्यक जमा दिखाने के लिए एक रेखांकित चैक/पोस्ट ऑर्डर/बैंक पास बुक, और

iii. निर्यात आदेश/अनुबन्ध की एक प्रति।

निर्यातक को चाहिए कि वह लदान की तारीख से काफी पहले निरीक्षण के लिए प्रार्थना पत्र भेज दे। यदि माल को उपयुक्त नहीं पाया गया तो निरीक्षण एजेन्सी निर्यातक को 'रिजेक्शन नोट' की मूल प्रति देगी। ऐसी स्थिति में नोट प्राप्ति के दस दिन की भीतर ही निर्यातक को निर्यात निरीक्षण एजेन्सी (Export Inspection Agency—E.I.A.) के उपनिदेशक के यहां अपील दायर करनी चाहिए। इसके विपरीत यदि माल स्वीकृत कर लिया गया है, तो माल को पुनः पैक कर दिया जायेगा। निरीक्षण प्रमाण-पत्र पांच प्रतियों में जारी किया जाता है जिसकी तीन प्रतियां निर्यातक को दे दी जाती हैं।

8. **माल का पैकिंग आदि** (Packing etc.)—माल जब आदेशानुसार इकट्ठा हो जाता एवं निर्यात निरीक्षण एजेन्सी की स्वीकृति प्रमाण-पत्र मिल जाता है तो माल का पैकिंग तथा मार्किंग करते है। पैकिंग के सम्बन्ध में यदि आयातकर्ता का विशेष आदेश है तो माल का पैकिंग उसके आदेशानुसार किया जाना चाहिए। माल का जहाज पर चढ़ाने तथा उतारने में सुविधा की द ष्टि से इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सारे नग, अथवा गांठें एक सी हों और माप व वजन में अत्यधिक बड़े न हों।

माल की पहचान को सुविधजनक बनाने के उद्देश्य से प्रत्येक नग अथवा गांठ पर अमिट स्याही के चिह्न डाल दिये जाने चाहिए। चिह्न में आयातकर्ता का सक्षिप्त नाम, निर्दिष्ट बन्दरगाह का नाम तथा पैकिंग की इकाइयों की संख्या लिखी जाती हैं। इससे आयातकर्ता को माल की पहचान करने में भारी सुविधा रहती है। जैसे—

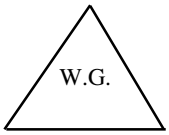

New York 1/150

या

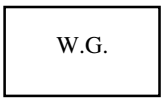

New York 1/500

9. **निकासी एवं प्रेषक एजेन्ट की नियुक्ति** (Appointment of Clearing and Forwarding Agent)—माल की पैंकिंग आदि से निव त हो जाने पर माल को विदेशी बाजारों में भेजने व जहाज पर लदाने के उद्देश्य से निर्यातक को किसी ख्याति प्राप्त निकासी और प्रेषक या शिपिंग एजेन्ट की नियुक्ति करनी चाहिए। भारतीय निर्यात संगठन संघ (Federation of Indian Export Organisaton—FIED), नई दिल्ली से इन एजेन्टों की सूची प्राप्त की जा सकती है और एक अच्छे एजेन्ट के चयन के लिए निर्यात प्रोत्साहन समिति से भी सलाह ली जा सकती है। प्रेषक एजेन्ट का कार्य रेल से माल की सुपर्दगी लेना, जहाजी कम्पनी से किराया तय करना, निर्यात-कर चुकाना, माल का बीमा करवाना तथा माल को

सुरक्षित रूप से जहाज पर लदवाना होता है।

10. **बन्दरगाह को माल भेजना** (Despatching Goods to the Port)–प्रेषक एजेन्ट की नियुक्ति के पश्चात् माल रेल द्वारा, प्रेषक एजेन्ट के पास भेज दिया जाता है। निर्यातकर्ता रेल की बिल्टी (R/R) का बेचान प्रेषक एजेन्ट माल को रेलवे स्टेशन से छुड़वाकर उसे जहाज से भेजने का प्रबन्ध करता है। माल भेजने हेतु जहाज में आवश्यक स्थान के आरक्षण के लिए निर्यातक द्वारा प्रेषक एजेन्ट को निम्नलिखित सूचना भीी देनी चाहिए।

   i निर्यात माल का विवरण (वजन/आयतन),

   ii. माल चढ़ाने और उतारन के बन्दरगाह, और

   iii. वह तारीख जिस पर माल का लदान चाहा गया है।

इस कार्य में कठिनाई आने पर निर्यातक को या प्रेषक एजेन्ट को निर्यात प्रोत्साहन अधिकारियों से, जो कलकता, मुम्बई, कोचीन व चैन्नई में उपलब्ध हैं, से सहायता लेनी चाहिए। निदेशक (परिवहन), वाणिज्य मन्त्रालय, नई दिल्ली से भी सहायता ली जा सकती है।

11. **विदेशी चुंगीकर व निर्यात अनुपति पत्र** (Obtaining Custom Permit)–रेल से माल की सुपुर्दगी ले लेने के पश्चात् प्रेषक एजेन्ट सीमा शुल्क कार्यालय के अधिकारियों से माल को निर्यात करने की आज्ञा प्राप्त करने के लिए आवेदन पत्र देता है। इस आवेदन पत्र में माल का पूर्ण विवरण, मूल्य, मात्रा व देश, जहां निर्यात किया जायेगा, का स्पष्ट उल्लेख होता है। इस प्रकार की अनुमति प्राप्त करना इसलिए अनिवार्य होता है कि यह ध्यान रखा जा सके कि जिस माल के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगा हो वह बाहर न जा सके। इसके अतिरिक्त माल के निर्यात पर प्रायः सीमा-शुल्क भी देना पड़ता है, अतः इस अनुमति को ही ''कस्टम परमिट'' या 'विदेशी चुंगीघर आज्ञा कहकर पुकारते है।

12. **जहाजी आज्ञा प्राप्त करना (Obtaining the Shipping Order)**–विदेशी चुंगीघर की आज्ञा मिल जाने पर प्रेषक एजेन्ट जहाज का प्रबन्ध करता है। यदि निर्यातकर्ता ने किसी विशेष जहाजी कम्पनी द्वारा माल भेजने के लिए सूचित किया है तो उसे उस जहाज द्वारा माल भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। इस सम्बन्ध में परस्पर उल्लेख नहीं होने पर प्रेषक एजेन्ट किसी भी सस्ते और सुरक्षित जहाज द्वारा माल भेज सकता है। इस कार्य के लिए जहाजी दलालों की सेवाएं भी ली जा सकती हैं। परस्पर शर्तें तय हो जाने पर जहाजी कम्पनी जहाज के कप्तान के नाम एक आदेश देती है जिसमें उक्त माल को लादने की आज्ञा लिखी रहती है। इसी को जहाजी आज्ञा (shipping order) कहते हैं। जहाज का कप्तान जहाजी आज्ञा देखकर ही माल को जहाज में लादने देता है। जहाजी आज्ञा जहाजी कम्पनी तथा माल लादने वाले के बीच एक प्रकार का प्रसंविदा है। जिसके अनुसार दोनों पत्र प्रतिबन्धित होते हैं। यह जहाजी आज्ञा पत्र दो प्रकार का होता है। तैयार (Ready) और अग्रिम (Forward)। तैयार आज्ञा पत्र व होता है जिसमें माल ले जाने वाले जहाज का नाम नहीं लिखा रहता है। बल्कि जहाज का नाम बाद में सुचित किया जाता है। किन्तु अग्रिम आज्ञा-पत्र में यह स्पष्ट कर दिया जाता है कि माल किस तारीख तक रवाना कर दिया जायेगा।

जहाजी आज्ञा-पत्र मिल जाने पर माल का भेजा जाना आवश्यक होता है। यदि किसी कारणवश माल न भेजा जाये तब भी जहाजी कम्पनी किराया वसूल कर लेती है। इस प्रकार व्यर्थ में जाने वाले भाड़े को म तः भाडा (Dead Freight) की संज्ञा दी जाती है।

13. **निर्यात शुल्क व जहाजी बिल** (Export Duty and Shipping Bill)–माल लदाने का प्रबन्ध हो जाने पर निर्यात शुल्क चुकाने आवश्यक हो जाता है। इसके लिए लिए प्रेषक एजेन्ट को जहाजी बिल या विदेशी चुंगीघर के चालान की तीन प्रतियां जो विभिन्न रंग की होती है, भरनी पड़ती हैं। इनमें माल के सम्बन्ध में समस्त विवरण जैसे माल की किस्म, जहाज का नाम, निर्यातकर्ता व्यापारी का नाम व पता, निर्दिष्ट बन्दरगाह का नाम आदि लिखा जाता है। इसी को माल भेजने की अनुमति समझा जाता है। इसी के आधार पर निर्यात कर लगाया जाता है। तीन प्रतियों में से एक प्रति कस्टम ग्रह (Custom House) में आंकड़े (Statistics) इकट्ठे करने के लिए रख ली जाती है और शेष दो प्रतियां प्रेषक एजेन्ट को दे दी जाती है।

निर्यात किया जाने वाला माल, कर मुक्त, कर देय तथा तटीय हो सकता है। कर मुक्त माल (Duty free) वह होता है,

जिस पर कोई कर नहीं लगाया जाता है। तटीय माल (Coastal) वह होता है जो उसी देश के एक बन्दरगाह से दूसरे बन्दरगाह को भेजा जाता है।

14. **डॉक चालान** (Dock Challan)—निर्यात-कर चुकने के पश्चात प्रेषक एजेन्ट माल को डॉक (समुद्रीय प्लेटफार्म) पर भिजवाने की व्यवस्था करता है। इसके लिए डॉक अधिकारियों की आज्ञा लेनी पड़ती है। प्रेषक एजेन्ट को डॉक चालान की दो प्रतियां भर कर, जहाजी आर्डर और जहाजी बिल की एक-एक प्रति के साथ डॉक अधिकारियों को प्रस्तुत करनी पड़ती है। इनके प्रस्तुत करने पर डॉक अधिकारी अपना चार्ज वसूल कर लेते हैं और फिर प्रेषक एजेन्ट को चालान की एक प्रति लौटा देते हैं तथा एक प्रति अपने रिकार्ड के लिए रख लेते है। तत्पश्चात् डॉक अधिकारी माल डॉक पर रख लेते हैं और उसको जहाज पर लदाने की व्यवस्था करते हैं।

15. **माल लदान** (Shipment of Goods)—जब वास्तव में माल जहाज में लदाया जाता है तब चुंगीघर के अधिकारी उपस्थित रहते हैं और इस बात का निरीक्षण करते हैं कि जहाज पर लादा जाने वाला माल जहाजी बिल के अनुसार ही है। माल लादते समय जहाज के कप्तान को जहाजी आज्ञापत्र भी दिखाना पड़ता है। अतः चुंगीकर के अधिकारी केवल वे ही माल लादने देते हैं जिनका उल्लेख जहाजी बिल तथा जहाजी आज्ञा-पत्र में होता है।

16. **कप्तान अथवा मेट की रसीद** (Mate's Receipts)—माल के जहाज पर लद जाने पर जहाज का कप्तान माल की दशा देखकर माल प्राप्ति की एक रसीद देता है जो कप्तान की रसीद या मेट की रसीद कहलाती है। पक्की रसीद जो जहाजी बिल्टी (Bill of Lading) के रूप में होती है वह बाद में कप्तान की रसीद के बदले में जहाजी कम्पनी के कार्यालय से मिलती है। यदि माल का पैकिंग ठीक होता है तो कप्तान शुद्ध रसीद (Clean Receipt) देता है और यदि पैंकिंग आदि की दशा असंतोषजनक है तो वह दूषित रसीद (Foul Receipt) देता है।

17. **जहाजी बिल्टी** (Bill of Lading)—प्रेषक एजेन्ट कप्तान की रसीद डॉक अधिकारी से लेकर जहाजी कम्पनी के कार्यालय में जाता है वहां से जहाजी बिल्टी के छपे हुए फार्म लेकर (जो वहां से निशुल्क प्राप्त होते हैं) तथा उनको भर कर मेट की रसीद के साथ वहां के अधिकरियों को दे देता है। यदि किराया पेशगी देना तय होता है तो वह भी यहीं पर चुकाना पड़ता है। जहाजी कम्पनी के कार्यालय वाले कप्तान की रसीद तो स्वयं रख लेते हैं और जहाजी बिल्टियों की सब प्रतियों पर उपयुक्त अधिकारी के हस्ताक्षर करवा कर प्रेषक एजेन्ट को दे देते हैं। माल के विषय में इन जहाजी बिल्टी की प्रतियों पर ठीक वही उल्लेख रहता है। जो कि कप्तान की रसीद पर होता है। यदि कोई व्यक्ति किसी कारणवश दूषित (Foul) कप्तान की रसीद के बदले में शुद्ध (Clean) जहाजी रसीद लेना चाहे, तो जहाजी कम्पनी को उसके लिए, 'क्षतिपूरक बन्धन पत्र' (Indemnity Bond) लिख कर प्राप्त कर सकता है।

18. **चार्टर पार्टी** (Charter Party)—यदि अधिक मात्रा में माल भेजना होता है तब सुविधा एवं मितव्ययिता की द ष्टि से सम्पूर्ण जहाज को किराये पर कर लिया जाता है ओर ऐसी दशा में पूरे जहाज के ठेके के लिए जो प्रतिज्ञा पत्र देना होता है, उसे जहाजी प्रसंविदा चार्टर पार्टी (Charter Party) कहते हैं।

19. **माल का बीमा** (Insurance)—जहाजी बिल्टी मिल जाने के बाद प्रेषक एजेन्ट को माल का बीमा कराने की व्यवस्था करनी चाहिए, क्योंकि निर्यात किया जाने वाला माल अधिकांशतः समुद्रीय मार्ग से गुजरने के कारण सदैव जोखिम-पूर्ण होता है। अतएव यदि निर्यातकर्ता ने किसी विशिष्ट बीमा कम्पनी द्वारा माल का बीमा कराने का आदेश दिया है तो उसे उसी बीमा कम्पनी से माल का बीमा कराना चाहिए, अन्यथा प्रेषक एजेन्ट पूछताछ करके उपयुक्त बीमा कम्पनी से माल का बीमा कराकर बीमा-पत्र प्राप्त कर लेता है। इस सम्बन्ध में प्रेषक एजेन्ट को माल के मूल्य में 10 या 15 प्रतिशत और जोड़कर उस राशि का बीमा कराना चाहिए जिससे संभावित माल की भी क्षतिपूर्ति हो सके, क्योंकि माल की आकिस्मक हानि के साथ-साथ भावी लाभ की भी क्षति होती है।

20. **प्रेषक एजेन्ट द्वारा सूचना** (Advice by the Forwarding Agent)—सब कार्य सम्पन्न हो जाने पर प्रेषक एजेन्ट अपने द्वारा किए गए खर्चों का एक बिल तैयार करता है और उसमें अपना कमीशन भी जोड़ देता है। इस बिल को जहाजी बिल्टी की प्रतियों, जहाजी बिल की दो प्रतियों, डाक चालान, तथा बीमा पत्र के साथ निर्यातकर्ता को भेजता है। निर्यातकर्ता इन सब कागज पत्रों को प्राप्त करने पर प्रेषक एजेन्ट को बिल चुका देता है।

21. **निर्यात बीजक** (Export Invoice)—अब निर्यातकर्ता भेजे गए माल का बीजक तैयार करता है। बीजक में जहाज का

नाम, माल के मार्के और उनकी संख्या, माल का मूल्य, पैकिंग व्यय, ढलाई, जहाज का किराया, जहाजी बिल का व्यय, डाक व्यय, बीमा कमीशन आदि का उल्लेख होता है। साधारणतया बीजक की दो तीन प्रतियां तैयार की जाती हैं।

व्यापारिक दूत द्वारा प्रमाणित बीजक (Trade Counsellor Invoice)–कुछ देशों के चुकाने में सुविधा रहे, इसके लिए क्रेता पहिले से विक्रेता को लिख भेजता है व्यापारिक दूत विदेश में रहने वाला अफसर होता है, जो अपने देश के व्यापारिक हितों की रक्षक करता है। प्रमाणित करने का कार्य इसी व्यापारिक दूत का होता है। उदाहरण के लिए लन्दन की किसी कम्पनी को यदि प्रमाणित बीजक भेजना अनिवार्य है, तो भारतीय निर्यातकर्ता भारत में रहने वाले इंग्लैण्ड के व्यापारिक दूत से प्रमाणित कराकर बीजक भेजता है। इसके द्वारा प्रमाणित बीजक बनाने के लिए निर्यातकर्ता को व्यापारिक दूत के कार्यालय से तीन छपे हुए फार्म लेकर माल सम्बन्धी सारा विवरण उसमें लिखकर देना पड़ता है। साथ ही इस बात की घोषणा करनी पड़ती है कि फार्म में लिखी हुई सारी बातें सच हैं फिर इन तीनों फार्मों पर व्यापारिक दूत हस्ताक्षर कर देता है। व्यापारिक दूत इसमें से दो फार्म तो स्वयं रख लेता है, और एक फार्म निर्यातकर्ता को दे देता है। यही प्रति (फार्म) प्रमाणित बीजक कहलाती है। इधर व्यापारिक दूत का कार्यालय एक प्रति अपने देश के विदेशी चूंगीघर को प्रेषित कर देता है, जिसके आधार कर उस माल के वहां पहुंचने पर आयात कर (सीमा शुल्क) लगने में बड़ी सुविधा हो जाती है।

मूल स्थान का प्रमाण पत्र (Certificate of Origin)–कुछ देश आपसी व्यापारिक समझौते के आधार पर माल पर आयात कर रियायती दर से लेते हैं। आयातकर्ता को यह तभी मिल सकता है जबकि वह अपने चुंगी अधिकारियों के समक्ष मूल स्थान का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करे। अतः बीजक के साथ निर्यातकर्ता को यह प्रमाण पत्र भी अवश्य भेजना चाहिए। मूल स्थान के प्रमाण-पत्र को प्रायः उद्‌गम का प्रमाण पत्र कहते हैं क्योंकि इसमें निर्यात किए जाने वाले माल का मूल अथवा उद्‌गम स्थान दिया होता है। अतः निर्यातकर्ता ऐसे प्रमाण पत्र को तैयार करके किसी अधिकृत चैम्बर ऑफ कॉमर्स के प्रतिनिधि मन्त्री के अलावा किसी अन्य अधिकारी के हस्ताक्षर कराके आयातकर्ता के पास भेज देता है।

22. **भुगतान** (Payment)–विदेशी व्यापार में माल के मूल्य का भुगतान करने के कई ढंग है, जैसे सामान्य विदेशी विनिमय बिल, स्वीकृति पर प्रलेखों की सुपुर्दगी वाला बिल (D/A), भुगतान पर प्रलेख वाला बिल (D/P), बैंक के नाम बिल, नगद भुगतान पर प्रलेख (C/D)। विदेशी बैंक ड्राफ्ट, बन्धक पत्र (Letter of Hypothecation) आदि। अतएव भुगतान कौन से ढंग से किया जाए यह दोनों पक्षों के आपसी समझौतों पर निर्भर करता है। अतः विदेशी बीजक व अन्य प्रलेखों की प्राप्ति पर आयातकर्ता उसका भुगतान कर देता है।

23. **आयातकर्ता को सूचना** (Advice of Importer)–निर्यातकर्ता बैंक को सम्बन्धित प्रलेख सौंपने के साथ-साथ तुरन्त आयातकर्ता को इस बात की सूचना दे देता हैं कि माल रवाना कर दिया गया है और अधिकार सम्बन्धी प्रलेख अमुक बैंक द्वारा भेजे जा रहे हैं। साथ ही जानकारी के लिए बीजक की एक प्रति भी भेज दी जाती है। सूचना प्राप्त करते ही आयातकर्ता बैंक से माल सम्बन्धी प्रलेख आदि छुड़ाकर माल प्राप्त करने की व्यवस्था करता है।

आयात क्रियाविधि
(Import Procedure)

जब एक देश दूसरे देश में बने हुए माल को अपने यहां उपभोग अथवा अन्य पुनः निर्यात के उद्देश्य से मंगवाता है तो यह आयात व्यापार कहलाता है। अर्थात एक देश का व्यापारी किसी दूसरे देश के व्यापारी से माल मंगवाता है। इन्हें आयातकर्ता व्यापारी (Importers) कहते हैं। आयातकर्ता व्यापारी दो प्रकार के होते हैं।

क. **व्यापारी आयातकर्ता**–यह वे व्यापारी होते हें जिनका प्रमुख कारोबार विदेशों से माल मंगवाकर बेचना होता है। ये दो प्रकार के होते हैं–

i. वे व्यापारी जो आयात किए हुए माल को अपने देश में ही बेच देते हैं।

ii. दूसरे प्रकार के व्यापार वे होते हैं, जो आयात किए हुए माल के उसी रूप में उसमें कुछ परिवर्तन कर के अन्य देशों को बेचते हैं।

ख. **निर्माता तथा संस्थागत उपभोक्ता**–ये वे व्यापारी होते हैं, जो विदेशों से माल अपने उपयोग या उपभोग के लिए

मगांते हैं।

आयात व्यापार की क्रियाविधि
(Procedure of Import Trade)

विदेश से माल मंगाना कोई सरल कार्य नहीं है; क्योंकि इसमें कई औपचारिकताओं को पूरा करना होता है। अतः एक भारतीय आयातकर्ता को विदेशों से माल मंगाने के लिए निम्नलिखित क्रियाविधि अपनानी पड़ती है–

1. **व्यापारिक पूछताछ** (Trade Inquiries)–सर्वप्रथम आयातकर्ता इस बात की छानबीन करता है, कि उसे अपनी आवश्यकता की वस्तुएं किस देश से और किस माध्यम से प्राप्त करना श्रेयस्कर होगा। फिर उसे माल का मूल्य तथा उसके भुगतान आदि की शर्तें भी मालूम कर लेनी चाहिए। इन सभी जानकारियों के लिए वह अपने देश में स्थित निर्यातकर्ताओं के एजेन्टों, आयातकर्ता व्यापारियों तथा विदेशी सरकारों के भारत में स्थित व्यापार उच्चायुक्तों तथा इस दिशा में कार्यरत विभिन्न व्यापार संघों से सम्पर्क कर सकता है।

2. **आयात लाइसेन्स प्राप्त करना** (Obtaining Import Licene)–प्रतिकूल व्यापार सन्तुलन विदेशी मुद्रा की कमी और देश के उद्योग धन्धों के प्रोत्साहन को ध्यान में रखते हुए आजकल हमारे देश में आयात स्वतन्त्र रूप से न होकर पूर्णतया नियमित व नियत्रित ढंग से होता है। अतः वर्तमान समय में आज लाइसेन्स प्रदान करने की द ष्टि से हमारे देश में आयातकर्ताओं को निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभाजित किया गया है–

   1. वास्तविकता उपयोगकर्ता (Actual Users),
   2. पंजीकृत आयातकर्ता (Registered Importer),
   3. लघु उद्योग, तथा
   4. आयात ग्रह (Import House)।

क्षेत्रीय प्रकार के अनुसार लाइसेन्स दो प्रकार के होते है:–

1. **सामान्य क्षेत्र लाइसेन्स** (General Area Licence)–यह लाइसेन्स सभी देशों से आयात करने का अधिकार देता है।
2. **विशिष्ट लाइसेन्स** (Specific Licence)–जो कि केवल निश्चित देश अथवा देशों से ही माल मंगाने का अधिकार देता है।

   इसके अलावा सरकार ने आयात सुविधा के लिए खुले सामान्य लाइसेन्स (Open General Licence or O.G.L.) की भी व्यवस्था कर रखी है, खुले सामान्य लाइसेन्स की सूची में सम्मिलित वस्तुओं का कोई भी आयातकर्ता बिना लाइसेन्स लिये आयात कर सकता है।

   अतः दूसरी कार्यवाही जो आयातकर्ता को करनी होती हैं, वह है आयात लाइसेन्स प्राप्त करने के लिए आयात (नियन्त्रण) आदेश, 1955 के अन्तर्गत निम्न कार्य करना–

   1. आयात व्यापार नियंत्रक अधिकारी को आवेदन पत्र प्रस्तुत करना।
   2. इस आवेदन पत्र के साथ कोषागार प्राप्त आयात लाइसेन्स शुल्क जमा की रसीद सलंग्न करना।
   3. आयकर विभाग का प्रमाण पत्र आयकर अधिकारी से प्राप्त करना होता है।
   4. चार्टर्ड एकाउन्टेण्ट द्वारा परीक्षित हिसाब का प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना होता है।

   आयात नियन्त्रण अधिकारी इस कार्यवाही से सन्तुष्ट हो जाने पर आयातकर्ता को लाइसेन्स दो प्रतियों में जारी कर देता है।

3. **विदेशी मुद्रा प्राप्त करना** (Obtaining Foreign Exchange)–आयात लाइसेन्स प्राप्त करने के बाद आयातकर्ता उस देश की मुद्रा की व्यवस्था करता हैं जहां से उसे माल मगांना है। प्रत्येक देश में विदेशी मुद्रा का कार्य वहां के केन्द्रीय बैंक के द्वारा सम्पन्न किया जाता है। भारतीय आयातकर्ता को इसके लिए रिजर्व बैंक या उससे अधिकृत बैंक जैसे सैन्ट्रल बैंक, पंजाब नेशनल बैंक आदि से सम्पर्क स्थापित करना होता है। विदेशी मुद्रा प्राप्ति के लिए आयातकर्ता को

एक प्रार्थना पत्र भरकर रिजर्व बैंक या अधिकृत बैंक को देना पड़ता है। प्रार्थना पत्र के साथ लाइसेन्स की प्रति भी भेजना आवयश्कता होता है। सारी जांच पड़ताल के बाद अनुमति मिलने पर आयातकर्ता विदेशी मुद्रा प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार भारतीय आयातकर्ता को रिजर्व बैंक या उसके द्वारा किसी अधिकृत बैंक से विदेशी मुद्रा की व्यवस्था करनी होगी।

4. **इण्डैण्ट देना** (Placing the Indent)—आयात लाइसेन्स प्राप्त हो जाने तथा विदेशी मुद्रा की व्यवस्था हो जाने पर, आयातकर्ता अपनी वस्तुओं का आदेश, विदेशी व्यापारी (जिस व्यापारी से माल मंगाता है) के पास भेज देता है। यह आदेश दो प्रकार से दिया जा सकता है—

   i. **विदेशी व्यापारी को प्रत्यक्ष आदेश**—अर्थात जिस पक्ष से आयातकर्ता माल मंगा रहा है उसको सीधा (Direct) ही आदेश भेज देता है।

   ii. **इन्डैन्ट ग्रहों** (Indent Houses) **को आदेश**—आयात करने के लिए हर देश में कुछ प्रतिष्ठान होते हैं, ये आयातकर्ता व्यापारी के आदेश अनुसार माल खरीद कर आयातकर्ता व्यापारी को भेज देते है। ये अपने कार्यालय आयातकर्ता तथा निर्यातकर्ता दोनों देशों में रखते हैं।

   इन इन्डैन्ट-ग हों का, निर्यातकर्ता देश में व्यापारियों से घनिष्ट सम्पर्क होने के कारण आयातकर्ता व्यापारी को ठीक माल ठीक कीमत पर दिला सकते हैं। इनके अलावा ये आयातकर्ता को, निर्यातकर्ता देश में उपलब्ध विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की भी जानकारी दे सकते हैं तथा आयातकर्ता व्यापारी की शिकायतों व विवादों को निपटाने में भी सहायता कर सकते हैं। इन कार्यों के लिए इन्हें माल के क्रय मूल्य पर एक से पांच प्रतिशत तक कमीशन मिलता है।

   इण्डैण्ट दो प्रकार का होता है—(क) खुला इन्डैण्ड तथा (ख) बन्द इन्डैण्ड। खुले इन्डैण्ट (Open Indent) में केवल माल के परिमाण तथा गुणात्मक विशेषताओं के विषय में ही उल्लेख होता है, अन्य बातें निर्यात एजेन्ट पर छोड़ दी जाती है। बन्द इन्डैण्ट (Closed Indent) में माल के सम्बन्ध में सम्पूर्ण बातों का उल्लेख होता है—जैसे माल की मात्रा, किस्म, पैकिंग, बीमा, जहाज से माल प्राप्त करने का ढंग, भुगतान आदि। बन्द इन्डैण्ट का भेजा जाना सदैव हितकर रहता है।

5. **साख का प्रमाण-पत्र भेजना** (Sending Letter of Credit)—यदि विदेशी निर्याकर्ता आयातकर्ता से परिचित नहीं है, तो वह निर्यातकर्ता की स्थिति से अवगत होने के लिए उससे साख का प्रमाण पत्र मांगता है। इसके लिए आयातकर्ता अपने बैंक से एक साख पत्र (Letter of Credit) जारी करता है जिससे बैंक की ओर से यह लिखित आश्वासन होता है कि आयातकर्ता का बैंक निर्यातकर्ता द्वारा लिखे गये एक निश्चित राशि के विनिमय-पत्र (Bills of Exchange) को स्वीकार कर लेगा।

6. **निर्यात एजेन्ट द्वारा माल भेजना** (Shipment by Export Agent)—आयातकर्त्ता से इण्डैण्ट प्राप्त होते ही निर्यात एजेन्ट उसमें निर्देशानुसार माल खरीदता है और उसका पैकिंग तथा चिंह्नाकन करता है, इसके पश्चात निर्यात एजेन्ट माल को प्रेषक एजेन्ट द्वारा जहाज से भेजकर जहाजी बिल्टी (B/L) तथा समुद्री बीमा-पत्र प्राप्त करता है। इसके बाद निर्यात एजेन्ट बीजक तैयार करता है। जिसमें माल के मूल्य के अतिरिक्त अन्य खर्चो का लिखना स्वाभाविक है। अब निर्यातकर्ता माल से सम्बन्धित प्रलेख, जैसे जहाज की बिल्टी, बीमा पत्र, बीजक, मूल स्थान का प्रमाण पत्र आदि बैंक के द्वारा आयातकर्ता के पास भेज देता है निर्यातकर्ता सूचना पत्र (Advice-Note) द्वारा आयातकर्ता को भी सूचित कर देता है कि अधिकार-पत्र आदि अमुक बैंक से भेज दिये गये है। बीजक की एक प्रति इस पत्र के साथ भी सलंग्न कर दी जाती है।

7. **माल के अधिकार-पत्र प्राप्त करना** (Obtaining Documents of Title)— निर्यातकर्ता आयातकर्त्ता पर बीजक के मूल्य के बराबर राशि का विनिमय पत्र (Bills of Exchange) लिखता है जिससे अन्य प्रपत्रों के साथ ही भेज दिया जाता है। जब निर्यातकर्ता द्वारा लिखा गया विनिमय पत्र सुपुर्दगी के प्रलेखों के साथ भेजा जाता है तो उसे प्रलेखीय विनिमय पत्र (Documenary Bill of Exchange) कहते है। यदि प्रलेख बिल भुगतान पर देय है। (Documents Against Payment—D/P), तो आयातकर्ता बिल का भुगतान करके प्रलेख (जहाजी बिल्टी, बीमा पत्र, बीजक) प्राप्त कर लेता है,

और यदि प्रलेख, बिल की स्वीकृति पर देय है (Documents against Acceptance—D/A) तो बिल को स्वीकृत कर आयातकर्ता द्वारा प्रलेख प्राप्त कर लिये जाते है। ये अधिकार पत्र आयातकर्ता बैंक के द्वारा प्राप्त करता है।

8. **निकासी एजेन्ट की नियुक्ति** (Appointment of Clearing Agent)—माल के अधिकार पत्रों के प्राप्त करने के पश्चात आयातकर्ता माल की सुपुर्दगी लेने की व्यवस्था करता है। यदि आयातकर्ता सुपुर्दगी के बन्दरगाह से दूर स्थित है, तो वह इस कार्य के लिए एक निकासी एजेन्ट या माल उतारने वाले प्रतिनिधि को, जो कि इस कार्य में दक्ष होता है, अथवा बन्दरगाह पर इसका कार्यालय होता है, नियुक्त करता है। बाद में वह अपने माल सम्बन्धी समस्त कागजात निकासी एजेन्ट के पास भेज देता है, जिससे वह माल की सुपुर्दगी शीघ्र लेकर माल आयातकर्ता के पास भेज सके। इस कार्य के लिए निकासी एजेन्ट कुछ कमीशन देता है।

9. **जहाजी कम्पनी से प्रलेखों को बेचान कराना** (Endorsement of Documents from the Shipping Company)—आयातकर्ता द्वारा पहले से ही निकासी एजेन्ट के पास माल से सम्बन्धित प्रलेख—जैसे जहाजी बिल्टी, बीजक आदि भेज दिये जाते हैं। जहाजी बिल्टी माल का अधिकार पत्र होता है, जिससे निकासी एजेण्ट माल प्राप्त करने के लिए जहाजी कम्पनी के कार्यालय में जाकर उस पर अपने पक्ष में ब्यान लिखाता है। इससे उसे बाद में माल की सुपुर्दगी लेने में कठिनाई नहीं होती है। यदि जहाज का किराया बकाया है तो वह जहाजी कम्पनी के कार्यालय में जाकर किराया भी चुकाता है। इस प्रकार निकासी एजेन्ट विभिन्न प्रपत्रों को प्राप्त करने के पश्चात् उनका बेचान कर किराये की बकाया राशि को चुकाकर माल अपने अधिकार में करता है।

10. **आयात शुल्क चुकाना** (Payment of Duty or Custom Duties)—इसके पश्चात् निकासी एजेण्ट आयात शुल्क कार्यालय में जाता है और आयात शुल्क फार्म की तीन प्रतियां भरता है। इस फार्म को प्रवेश बिल (Bill of Entry) कहते हैं। प्रवेश बिल तीन प्रकार के होते हैं, एक तो कर देय (Dutiable), दूसरे कर-मुक्त (Duty Free) तथा तीसरे पुनः बाहर जाने वाले माल के लिए। ये तीनों प्रकार के प्रवेश बिल भिन्न-भिन्न प्रकार के रंगीन कागज में छपे होते हैं ताकि एक दूसरे से प थक दीखें। निकासी एजेण्ट उचित फॉर्म लेकर उसकी तीन प्रतियां तैयार करता है। इनमें जहाज का नाम, निर्यात बन्दरगाह का नाम, आयातकर्ता का नाम व पता, पेटियों तथा बण्डलों की संख्या और माल का संक्षिप्त विवरण सुन्दरता से भर देना चाहिए। प्रवेश बिल प्राप्त करने के पश्चात् चुंगीघर के अधिकारी, उसमें दिये गये विवरण को जहाजी कम्पनी द्वारा दिये गये माल के विवरण से मिलाते हैं और फिर यह निश्चित करते है कि माल पर कितना आयात कर लिया जाए। आयात कर चुकाने के बाद इन तीन प्रतियों में से एक प्रति चुंगीघर विभाग अपने पास रख लेता है और शेष दो प्रतियां निकासी एजेन्ट को लौटा दी जाती हैं जिनमें से एक आयात कर चुकाने की रसीद होती है।

दर्शनी बिल (Bill of Sight)—कभी-कभी निकासी एजेन्ट को छुड़वाये जाने वाले माल के सम्बन्ध में पूरी जानकारी नहीं होती ऐसी दशा में वह प्रवेश बिल के स्थान पर दर्शनी बिल भरता है जिनमें वह चुंगी अधिकारियों को इस बात का आश्वासन देता है कि जहां तक उसकी जानकारी है, आयात किया गया माल बिल में दिये गये माल के अनुसार ही है। ऐसी दशा में चुंगी अधिकारी माल को खुलवाकर देखते हैं और फिर आयात शुल्क निर्धारित करते हैं।

11. **डॉक चालान** (Dock Challan)—आयात कर का भुगतान करने के पश्चात निकासी एजेन्ट को चाहिए कि डॉक व्यय अदा करे दे। जहाज से माल उतारने व चढ़ाने का कार्य डॉक अधिकारियों का है। वह कार्य के बदले में वे कुछ फीस वसूल करते हैं। जिसको डॉक व्यय (Dock Charges) कहते है। इसके लिए डॉक चालान (Dock Challan) की दो प्रतियां भर कर देनी होनी पड़ती है। इनके प्रस्तुत करने पर डॉक अधिकारी अपना चार्ज वसूल कर लेंगे और फिर निकासी एजेन्ट को चालान की एक प्रति लौटा देंगे ओर दूसरी प्रति अपने पास रख लेते हैं। अतः यह कार्य भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि डॉक व्यय अदा किये बिना माल अधिकार में नहीं आ सकता।

12. **बन्दरगाह पर माल की सुपुर्दगी** (Taking Delivery of the Goods at the Port)—बन्दरगाह के डॉक में जब जहाज प्रवेश कर जाता हैं तो जहाज से माल उतारकर अलग-अलग चिह्नों के अनुसार छांट लिया जाता है। निकासी एजेन्ट अपने चिन्ह रखकर माल पहचान लेता है और यह देखता है कि माल रास्ते में कम, टूट-फूट अथवा खराब तो नहीं हो गया है। माल के खराब हो जाने अथवा टूट-फूट हो जाने पर निकासी एजेन्ट जहाजी कम्पनी के प्रतिनिधि से माल की परीक्षा कराता है। जो क्षति होती है उसकी पूर्ति या तो जहाजी कम्पनी से, या बीमा कम्पनी से करा ली जाती है। इसके बाद वह प्रवेश बिल, डॉक चालान तथा बेचान की हुई जहाजी बिल्टी देकर शीघ्र ही माल की सुपुर्दगी ले लेता

है, क्योंकि एक निश्चित समय के बाद विलम्ब शुल्क (Demurrage) देना पड़ता है।

13. **माल को बन्धक गोदाम में रखना** (Bended Warehouse)—यदि किसी कारणवश निकासी एजेन्ट (अथवा स्वयं आयातकर्ता) तुरन्त आयात शुल्क अदा नहीं कर सकता तो अदा करने के समय तक माल को प्रमाणित अथवा प्रतिबन्धित गोदाम में रखना होगा। इसके लिए उसे एक विशेष बिल भर कर विदेशी चुंगीघर में देना पड़ता है। गोदाम में माल के आ जाने पर गोदाम वाला एक रसीद देता है जिसे डॉक वारन्ट (Dock warrant) कहते हैं इस पर नियमित रूप से रेवेन्यू टिकट लगा रहता है। डॉक वारन्ट का बेचान भी किया जा सकता है। डॉक वारन्ट देने पर माल की सुपुर्दगी कर दी जाती है।

14. **माल को रेल द्वारा भेजना** (Despatch of Goods by Train)—निकासी एजेन्ट, बन्दरगाह से माल की सुपुर्दगी लेने के पश्चात उचित कार्यवाही करके माल रेल द्वारा आयातकर्ता के पास भेज देता है।

15. **आयातकर्ता को सूचना भेजना** (Sending Advice Note to the Importers)—माल को रेल द्वारा रवाना करने के पश्चात् निकासी एजेन्ट, आयातकर्ता को सूचना देता है कि उसने जहाजी कम्पनी से माल की सुपुर्दगी लेकर, माल उसको रेल द्वारा भेज दिया गया है। सूचना के साथ रेलवे रसीद (Railway Receipt - R/R) अपने खर्चे व कमीशन का लेखा तथा अन्य प्रलेख भी भेज देता है।

16. **रेल से माल छुड़ाना** (Delivery of Goods by Train)—माल स्टेशन पर पहुंचते ही आयातकर्ता स्वयं अथवा अपने प्रतिनिधि द्वारा रेलवे स्टेशन से माल की सुपुर्दगी लेने की व्यवस्था करता है। रेलवे अधिकारी रेलवे की रसीद (R/R) प्रस्तुत करने पर माल की सुपुर्दगी कर देता है। माल की सुपुर्दगी लेकर आयातकर्ता माल को अपने गोदाम पर पहुंचाने की व्यवस्था करता है।

17. **प्रतिनिधियों का भुगतान** (Payment)—निकासी एजेन्ट के बिलों को देखकर अब आयातकर्ता भुगतान कर देगा और इस प्रकार आयात का सौदा सम्पन्न हो जायेगा।

Check List for an Export Order

1. Scrutiny of the Export Order :
    1. Terms of payment-cash-credit-sight.
    2. Delivery Schedule
    3. Documentation
    4. Packing
    5. Inspection
    6. Marking
2. Confirmation of the Order:
    1. Export Licence, if necessary
    2. Availability of Supplies
    3. Delivery Schedule—Check with Production/Purchase
3. Arrangements Regarding:
    1. Production
    2. Procurement of Supplies
    3. Railway Booking
    4. Supply of Packing Material

5. Pre-shipment Finance

4. Booking of Shipping Space:

5. Instruction to Clearing and Forwarding Agents Regarding:

    1. Date of Shipment
    2. Requirement arising out of the terms of sales
    3. Contract with the overseas buyer
    4. List of Documents and the number of copies of each needed
    5. Requirements if Exports are being made under claims for Drawback/Rebate of Central Excise duty.

6. Quality Control Requirements and Pre-Shipment Inspection Act and Other Inspection Formalities.

7. Inland and Marine Insurance : Extent of Risks Covered.

8. Insurance with E.C.G.C.

9. Packing, Marking & Forwarding Goods for Despatch.

10. Transmission of R.R. and other Documents to Clearing and Forwarding Agents.

11. List of Documents to be prepared and presented to Bank for Negotiation of Collection:

    1. Commercial Invoice
    2. Counsellor Invoice where necessary
    3. Bill of Lading
    4. Packing List
    5. Insurance Policy
    6. GRI Form
    7. Bill of Exchange
    8. Certificate of Origin

12. List of Documents to be prepared for claiming Export Assistance:

    1. Import Replenishment Licence and Cash Assistance
    2. Indigenous raw material at International price
    3. Drawback of Customs and Excise Duty
    4. Rebate of excise duties—Drawaback system or Ressed System.

13. To the Export Promotion Council :

    1. Application for registration
    2. Bank Certificate Regarding financial soundness
    3. Registration Certficate Form
    4. Membership Form

14. To the maritime Collector of Central Excise :

    1. Application Form 'C'

2. Duplicate copy of the AR 4 Form
3. Copy of the B/L or the Shipping Bill

15. To the Joint Plant Committee

(For Engineering Goods) :

1. Application Form for priority allotment
2. Bill of Lading
3. Bank Attested Invoice
4. Copy of the Purchaser's Invoice
5. Manufacturers Certificate
6. Certificate from Works Manager

16. To the Export Inspection Council:

1. Application in a prescribed Form
2. Copy of L/C
3. Copy of the Export Contract
4. Commercial Invoice

17. To the Reserve Bank of India :

1. For Remittance of Commission
2. Application for Registration of the agency agreement for remittance of commission
3. Copy of the agency agreement

18. For Remittance of Foreign Exchange for Payment of Claims:

1. Application Form
2. Copy of the Invoice
3. Sales Contract
4. B/L Copy
5. Inspection/Analysis Report
6. Brief history of the case

19. To the IDBI (Industrial Development Bank of India):

(For direct financial assitance to exporters)

1. Export contract
2. L/C or Letter of Guarantee from the Importer
3. Balance sheet of the exporter
4. Statement of profit and loss in the transaction covered by the export contract
5. Statement regarding the projections of the credit requirements

20. To the Bank (for Packing Credit)

1. Proforma Invoice

2. Original RR endorsed to the Bank
3. Copy of despatch advice
4. Copy of order of L/C
5. Application form

21. For Medium Term Credit:
    1. Export Contract
    2. L/C or Guarantee from the importer
    3. Statement giving reasons why exports are made on deferred payment arrangements.
22. To the ECGC (For Export Risk Insurance) Export Credit and Guarantee Corporation:
    1. Proposal form
    2. Bank Certificate about Financial Position
    3. Application form for fixing the credit limit
23. Documents Required by the Importing Countries:
    1. Coulsellor Invoice (Mainly required by Latin American Countries)
    2. Certificate of value
    3. Combined Certificate of oirgin and value (Mainly required by Commonwealth countries)
    4. Customs Invoice (for USA and Canada)
    5. Health Certificate for export of food products, seeds, vegetables, fish etc.
    6. Invoice & Contract Abstract (in case exports are financed under USAID funds)
    7. Certificate of Origin.

प्रमुख प्रलेख
(Main Docuemnts)

विदेशी व्यापार में अनेक प्रलेख (Documents) प्रयुक्त किये जाते हैं। इन प्रलेखों में से कुछ आयात क्रियाविधि में और कुछ निर्यात क्रियाविधि में प्रयुक्त किये जाते हैं। इन प्रलेखों में से कुछ तो इस बात के प्रमाण होते हैं कि माल रवाना कर दिया गया है और कुछ इस बात के कि भेजा गया माल उसी किस्म व मात्रा में है जिसके लिए इन्डैण्ट या आदेश दिया गया था। कुछ प्रलेख मार्ग में उत्पन्न हो सकने वाली जोखिम से की गयी सुरक्षा सम्बन्धी व्यवस्था के होते हैं और कुछ प्रलेख निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के निर्माण करने सम्बन्धी स्थान के प्रमाण होते हैं। कुछ आयात या निर्यात माल की सुपुर्दगी से सम्बन्धित होते हैं और कुछ आयात या निर्यात कर चुकाने के प्रमाण-पत्र। कुछ प्रलेख विदेशी भुगतान में प्रयुक्त किये जाते हैं इन सभी प्रकार के प्रलेखों का विस्त त विवरण निम्नलिखित हैं–

1. इन्डैण्ट या आदेश
(Indent or Order)

विदेशी व्यापार में सौदे का प्रारम्भ आयातकर्ता द्वारा विभिन्न विदेशी उत्पादकों या निर्माताओं , एजेन्टों को लिखे गए पूछताछ के पत्र से होता है। इस पत्र के उत्तर में 'मूल्य उद्धरण पत्र' (Quotation) प्राप्त होता है इस पत्र में लिखी माल की दरों व अन्य शर्तों की स्वीकृति ही आदेश या इन्डैंट का रूप ग्रहण करती है। जब आयातकर्ता माल का आदेश सीधा उत्पादक के पास न भेजकर किसी निर्यात एजेन्ट के पास भेजता है तो वह इन्डैण्ट (Indent) कहलाता है इसके विपरीत जब माल का आदेश

सीधा उत्पादक के पास भेज दिया जाता है तो यह आदेश कहलता है। इन्डैण्ट अथवा आदेश दोनों में ही निम्नलिखित निर्देश होते हैं—

1. **माल की किस्म** (Quality)—मंगाए जाने वाले माल की किस्म का पूर्ण व स्पष्ट ब्यौरा देना आवश्यक है। किस्म का स्पष्ट विवरण देने हेतु बानगी या नमूना (Sample) भी भेजा जा सकता है अथवा सूचीपत्र, संख्या, ग्रेड, ट्रेडमार्क, पेटन्ट की ओर संकेत किया जा सकता है।

2. **माल की मात्रा** (Quantity)—माल की मात्रा का भी स्पष्ट रूप से उल्लेख कर देना चाहिए क्योंकि भिन्न-भिन्न वस्तुओं की मात्रा भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रदर्शित की जाती है जैसे कपड़ा मीटरों में, अनाज क्विन्टलों में और पैन्सिले दर्जनों में अर्थात् नाप, तोल और संख्या में संख्या तो सर्वत्र एक ही है, किन्तु नाप और तोल में भेद पाया जाता है। अतएव एक देश विशेष के लिए नाप-तौल के उन्हीं चिन्हों का प्रयोग करना चाहिए जो वहां प्रचलित हों।

3. **मूल्य** (Price)—आदेश देते समय माल के आगे माल की कीमत (जिस प्रकार से तय हुई हो) दे देना, हितकर हैं। इससे भविष्य में किसी प्रकार के झंझट की संभावना नहीं रहती। कभी-कभी क्रेता माल के मूल्य का प्रश्न अपने निर्यात-प्रतिनिधि के विवेक पर छोड़ देता है किन्तु यह उसी दशा में सम्भव है, जबकि आयातकर्ता को अपने निर्यात प्रतिनिधि पर पूर्ण विश्वास हो।

4. **दिखावट, पैकिंग एवं चिन्ह** (Make-up, Packing and Marketing)—दिखावट से तात्पर्य यह है कि माल को भेजने के पूर्व उसको बड़ी सुन्दरता से तैयार कर दिया जाये। माल की भली प्रकार तह बनाइ जाये, सुविधा से मोड़ा जाये, मोहर तथा नाम आदि छापा जाये। माल की तैयारी क्रेता के आदेशानुसार अथवा इसके अभाव में विक्रेता की स्वयं की बुद्धि और अनुभव के अनुसार होनी चाहिए।

   वस्तुओं का पैकिंग उनके आकार-प्रकार के अनुसार होना चाहिए। पैकिंग के सम्बन्ध में यदि माल मंगाने वाले के कुछ निर्देश हैं तो उनका पूर्णतया पालन होना चाहिए और यदि नहीं है, तो विक्रेता को स्वयं अपने विवेकानुसार कार्य करना चाहिए।

   पैकिंग के पश्चात् पेटियों अथवा गाठों के ऊपर माल पाने वाले का नाम और पता एवं कोई ऐसा विशिष्ट चिह्न जिससे क्रेता को अपनी पेटी तुरन्त मिल जाय, लिख देना चाहिए। यह विशिष्ट चिह्न, साधारणतया त्रिभुज (Triangle), चर्तुभुज (Rectangle) अथवा गोला (Circle) के अन्दर माल पाने वाले के नाम का प्रारम्भिक अक्षर लिखकर बनाया जाता है। इसमें निर्दिष्ट बन्दरगाह का नाम भी लिखा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त माल उठाने-धरने में सावधानी रखी जाय, इस हेतु कभी-कभी निम्नलिखित वाक्याशों का प्रयोग किया जाता है—(i) सावधान! कांच है (Glass with care); (ii) टूटने योग्य (Fragile); (iii) यह दिशा ऊपर (This side up); (iv) अत्यधिक ज्वलनशील (Highly Inflammable)।

5. **माल को जहाज में लादना** (Shipment of Goods)—प्रायः क्रेता अपने आदेश या इन्डैण्ट में यह स्पष्ट कर देता है कि माल कब तक और किस जहाज द्वारा रवाना हो जाना चाहिए। विक्रेता को इनका पालन करना चाहिए। आदेश या इन्डैण्ट में कुछ भी न दिया रहने पर भी विक्रेता का कर्तव्य है कि वह अच्छे और सुरक्षित जहाज द्वारा माल शीघ्रतिशीघ्र रवाना कर दे।

6. **बीमा** (Insurance)—समुद्र पार भेजे हुए माल का प्रायः बीमा करा लिया जाता है। इससे माल पूर्णतः सुरक्षित हो जाता है। यदि इन्डैण्ट में बीमा कम्पनी का नाम दिया गया है तो माल का सामुद्रिक बीमा उसी कम्पनी से कराया जाना चाहिए, अन्यथा निर्यात एजेण्ट को अपने विवेक से काम लेकर किसी अच्छी कम्पनी द्वारा बीमा कराने की व्यवस्था करनी चाहिए। बीमा खर्च किस पर पड़ेगा, यह मूल्य (Price) पर निर्भर करता है। यदि मूल्य बीमा व्यय मुक्त मूल्य (Cost Insurance and Freights—C.I.F.) अथवा सर्व-व्यय-मुक्त-मूल्य (Franco or, Rendu or Fru) है तो विक्रेता बीमा व्यय चुकाएगा अन्यथा क्रेता।

7. **भुगतान** (Payment)—विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार की मुद्राओं का प्रचलन है। अतएव इन्डैण्ट में यह स्पष्ट रूप से लिखा जाना चाहिए कि भुगतान किस मुद्रा में होगा। इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि जिस देश से माल खरीदा जाये, उस देश की मुद्रा में ही भुगतान किया जाये, जैसे भारत और अमेरिका के सौदों में भुगतान डॉलर में किया जाता है। विनिमय दर सम्बन्धी निर्देश इन्डैण्ट में पहिले से स्पष्ट लिख देना चाहिए।

8. **पंचायत** (Arbitration)—दोनों पक्षों के सम्भावित माल सम्बन्धी आपसी झगड़ों को निबटाने के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि इन्डैण्ट में पंचायत का विवरण दे दिया जाए जिससे विवादों को सफलता से निपटाया जा सके। एक सामान्य इन्डैण्ट का उदाहरण इस प्रकार है।

इन्डैण्ट का नमूना
(Specimen Indent)

Indent No. A. 15 London

Dated July 15, 1999

M/S. Rathore Brothers,

Fort, Mumbani

Please purchase and ship to us an early steamer of the Indian Steamship Co. line the goods named below. You will insure them for the amount to your invoice, adding 10% for imaginary Profit, and for your reimbursement, please draw on us in favour of the Mercantile Bank Ltd., with which we have arranged that your draft on us, with documents attached, shall be accepted as cash, discount and premium being placed to our account.

John Abbort & Sons

Quantity	*Description of goods*	*Marks*	*Quality*	*Remarks*
1000 Bales	Cotton at Lowest possible price	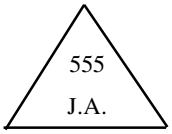 London		To be Carefully Packed and Supplied

2. जहाजी आज्ञा
(Shipping Order)

यह निर्यात व्यापार में काम आने वाला प्रमुख प्रलेख है। 'जहाजी आज्ञा' जहाजी कम्पनी तथा माल लादने वाले के बीच एक प्रकार की प्रसंविदा है जिसमें परस्पर शर्तें तय हो जाने पर जहाजी कम्पनी जहाज के कप्तान के नाम एक आदेश देती है जिसमें माल को लादने की आज्ञा लिखी रहती है। इसी को जहाजी आज्ञा (Shipping Order) **कहते हैं। जहाज का कप्तान जहाजी आज्ञा देकर ही माल को जहाज में लादने देता है। जहाजी आज्ञा का नमूना नीचे है।**

Shipping Order

The Indian Steamship Co. Ltd.

No. 175 B

To,

The Commanding Officer, S.S. Delhi
Voyage Mumbai-London

Please note that the following cargo for the undermentioned ports will be sent along side your steamer on 8-10-1999 subjet to the condition printed on the back hereof :

Shipper's Name	*Quantity*	*Packages*	*Description Ports of Goods*	*Rates of Freight*
Rathore Bros.	1000	Bales	Cotton	London

Dates 8-10-1999 XYZ

Agents

जहाजी बिल
(Shipping Bill)

जहाजी बिल का प्रयोग निर्यात शुल्क चुकाने के लिए किया जाता है। यह एक छपा हुआ फॉर्म होता है जिसमें माल के सम्बन्ध में समस्त विवरण जैसे माल की किस्म, मूल्य, जहाजी का नाम, निर्यातकर्ता का नाम व पता, निर्दिष्ट बन्दरगाह का नाम आदि लिखा जाता है। इस जहाजी बिल पर चुंगीकर के अधिकारी के हस्ताक्षर होते हैं, इसी को माल भेजने की अनुमति समझा जाता है। इसी के आधार पर निर्यात कर लगाया जाता है। जहाजी बिल की तीन प्रतियां जो विभिन्न रंग की होती हैं, भरनी पड़ती हैं जहाजी बिल का प्रारूप इस तरह का होता है।

Shipping Bill

No..... Date.....

Shipping Bill for dutiable goods **Original**

Port of Mumbai Exporter's.....Address.....

Name of Vessel	*Master or Agent*	*Colours*	*Port at which Goods to be*

Package		*Details of Goods to be given separately for each class or description*							
Number & Description	*Mark & Number*	*Quantity*		*Description*	*Value*		*Duty*		
		Unit	*Amount*		*Rate*	*Amount*	*Rate*	*Amount*	*Country of Destination*
						Rs. np		Rs. np	

Entered....No.....199.....I/We hereby declare the particulars given above to the true.

Assistant CollectorMumbai... 19...

of Custom Signature of Exporter or

his Authorized Agent

4. डॉक रसीद या चालान
(Dock Receipt or Challan)

डॉक चालान एक ऐसा प्रलेख है। जिसका प्रयोग माल को डॉक (समुद्रीय प्लेटफार्म) पर रखने के लिए किया जाता है। बिना डॉक चार्ज चुकाए माल को डॉक पर नहीं रखा जा सकता। अतः इसके लिए डॉक चालान की दो प्रतियां भरकर जहाजी आज्ञा और जहाजी बिल एक-एक प्रति के साथ डॉक अधिकारियों को प्रस्तुत करनी पड़ती हैं उनके प्रस्तुत करने पर डॉक अधिकारी चार्ज वसूल करके माल को जहाज पर लादने की व्यवस्थ करते हैं। डॉक चालान का प्रारूप अग्र प्रकार है–

Dock Challan

MUMBAI PORT TRUST — Original Receipt

The Manager, Mumbai Port Trust Docks — Dated ..... 199....

Please receive payment of charges leviable under Act VI of 1879 on the under mentioned goods for shipment per.....to London per attached Customs Shipping Bill.

No.....dated.....199

Mark	*Desecription of goods*	*No. of packages*	*Weight or measurement*	*Rate of charges*	*Amount of wharfage fees*	*Other unloading charges*	*Extra fees*	*Total*

No receipt should be accepted as genuine except when stamped with Port Trust's Stamp issued by

I or We.....declare that the contents of the above are truly stated

Signature.....

Address.....

5. कप्तान की रसीद
(Mate's Receipt)

यह प्रलेख जहाज के कप्तान से मिलता है जो इस बात का प्रमाण है कि माल जहाज पर लाद दिया गया है अर्थात जहाज का कप्तान माल की दशा देख कर माल प्राप्ति की एक रसीद देता है जो कप्तान की रसीद कहलाती है। इसके बदले में बाद में जहाजी बिल्टी प्राप्त की जाती है। यदि माल का पैकिंग ठीक होता है तो कप्तान शुद्ध रसीद देता है और यदि पैकिंग आदि की दशा असन्तोषजक है तो वह दूषित रसीद देता है। मेट की रसीद का नमूना आगे दिया गया है।

Mate's Receipt

The Indian Steamship Co. Ltd.

No..... Port of Mumbai

Voy..... Date October 28, 1999

Order No. .....

Ref. No. .....

Received in apparent good order and condition on board the S.S. Jalusha for delivery at London the undermentioned goods from M/s.....

Marks	*Quantity*	*Goods are said to be*	*Details Measurement*	*Remarks*
555 J.A. London	1000 Bales	Cotton		

This receipt is to be exchanged for the company's bill of lading and in the meantime the goods for which the receipt is issued are held, and will be carried by the company subject to the conditions set forth on the back hereof.

Signature

Captain of the Ship

6. जहाजी बिल्टी
(Bill of Lading or B/L)

जहाजी बिल्टी विदेशी व्यापार में प्रयोग किया जाने वाले प्रमुख प्रलेख है। जिस प्रकार रेल द्वारा माल भेजने पर हमारे लिए रेल की बिल्टी (R/R) प्राप्त करना आवश्यक है उसी प्रकार जहाज द्वारा माल भेजने पर हमको जहाजी बिल्टी (Bill of Lading) प्राप्त करनी होती है। अतः जहाजी कम्पनी द्वारा माल भेजने के प्रमाणस्वरूप जो रसीद दी जाती है उसे पोतलदान बिल अथवा जहाजी बिल्टी कहते हैं। जहाजी बिल्टी माल के जहाज पर रखे जाने के उपरान्त कप्तान द्वारा दी जाने वाली रसीद (Mate's receipt) के आधार पर तैयारी की जाती है। वस्तुतः जहाजी बिल्टी जहाजी कम्पनी के अधिकृत अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किया हुआ एक प्रलेख होता है जो इस बात को प्रमाणित करता है कि उसमें उल्लिखित माल जहाजी कम्पनी द्वारा एक बन्दरगाह से दूसरे बन्दरगाह तक किराए के प्रतिफलस्वरूप, ले जाने के लिए जहाज पर रख दिया गया है। इसमें निम्नलिखित बातों का उल्लेख होता है–

1. माल भेजने वाले का नाम, 2. माल की मात्रा, किस्म, माल का पैकिंग एवं पहचान का चिह्न, 3. माल पाने वाले का नाम, 4. जहाज और उसके कप्तान का नाम, 5. माल का नाप-तौल, 6. बन्दरगाह जिससे माल भेजा गया, 7. निर्दिष्ट बन्दरगाह का नाम, 8. किराए की राशि, और 9. तारीख।

जहाजी बिल्टी माल के पैकिंग की द ष्टि से दो प्रकार की होती है–1. यदि माल का पैंकिंग ठीक होता है तो जहाजी कम्पनी शुद्ध या निर्दोष बिल्टी (Clean B/L) देती है। 2. यदि पैकिंग आदि की दशा असन्तोषजनक है तो ऐसी जहाजी बिल्टी को दूषित जहाजी बिल्टी (Foul B/L) कहते हैं।

जहाजी बिल्टी की प्रायः चार प्रतिया तैयार की जाती हैं जिनमें से प्रथम तीन प्रतियां माल भेजने वाले को दे दी जाती हैं और चौथी प्रति जहाज के कप्तान के पास रहती है। माल भेजने वाला एक प्रति अपने पास रख लेता है और शेष दो प्रतियों में से एक हवाई डाक द्वारा तथा एक साधारण डाक द्वारा माल प्राप्त कर लेता है। और बची हुई दो प्रतियां बेकार (Void) समझी

जाती हैं। परन्तु व्यवहार में जहाजी बिल्टी को निर्यातकर्ता सीधे आयातकर्ता को न भेजकर बैंक द्वारा भेजता है। बैंक को भुगतान कर अथवा बिल स्वीकार करके आयातकर्ता जहाजी बिल्टी प्राप्त कर सकता है।

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर जहाजी बिल्टी के लक्षण निम्नलिखित हैं–

1. यह जहाजी कम्पनी द्वारा माल की प्राप्ति की एक रसीद होती है।
2. जहाजी बिल्टी माल भिजवाने हेतु जहाजी कम्पनी और माल भेजने वाले के बीच किराये के प्रसंविदे का कार्य करती है।
3. जहाजी बिल्टी को गिरवी रखकर इसकी जमानत पर ऋण लिया जा सकता है।
4. जहाजी बिल्टी माल के अधिकार पत्र के रूप में कार्य करती है और वह एक व्यक्ति से दूसरे के लिए हस्तान्तरित भी की जा सकती है। यह दो प्रकार की होती है 1. वाहक (Bearer) और 2. आदिष्ट (Order)। वाहक से तात्पर्य ऐसी बिल्टी से है और आदिष्ट ये तात्पर्य ऐसी बिल्टी से है जिसमें किसी विशेष व्यक्ति का नाम दिया होता है और माल की सुपुर्दगी उसी विशेष व्यक्ति को अथवा उसके द्वारा किसी आदेशित व्यक्ति को ही हो सकती है। वाहक बिल्टी का हस्तांतरण केवल सुपुर्दगी देकर ही किया जा सकता है, किन्तु आदिष्ट बिल्टी के हस्तांतरण के लिए सुपुर्दगी एवं प ष्ठांकन (Endorsement) दोनों ही आवश्यक हैं लेकिन इसका आशय यह नहीं है कि जहाजी बिल्टी एक विनिमय साध्य विलेख (Negotiable Instrument) है। इन दोनों में बड़ा आधारभूत अन्तर है। जहाजी बिल्टी के धारक (Holder) का माल पर अधिकार हस्तान्तरक (Transferer) के अधिकार से श्रेष्ठ नहीं हो सकता अर्थात् यदि हस्तान्तरण करने वाले का अधिकार दूषित होगा, तो जिस व्यक्ति को बिल्टी हस्तान्तरित की गई है, उसका अधिकार भी दूषित होगा, चाहे उसने बिल्टी प्रतिफलस्वरूप तथा सद्भावनापूर्ण ढंग से प्राप्त क्यों न की हो। लेकिन विनिमय-साध्य विलेख (जैसे बिल ऑफ एक्सचेन्ज या प्रॉमिसरी नोट) का नियामानुसार धारक (Holder in due course) हस्तांतरक के अधिकर में दोष होने पर भी उस पर निर्दोष अधिकार प्राप्त कर सकता है। अतएव जहाजी बिल्टी को विनिमय-साध्य विलेख न कहकर, अर्द्ध-विनिमय साध्य विलेख (Semi-Negotiable Instrument) कहते हैं।

Bill of Lading

Shipped on good order and condition by M/s Rathore Brothers & Co. Ltd. in and upon the goods "Steamship Jalusha" whereof is Master Jalusha" where of is Master for Present voyage Mr. Black and riding at anchor in Mumbai and bound for London, 1000 Bales of Cotton Marks,

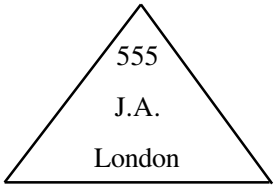

being marked and numbered as staed to be delivered in the like good order and well conditioned at the aforesaid Port of London (the Act of God, the Enmies of the Country, Fire, Machinery, Boilers, Steam and all and and every other Dangers and Accidents of the Seas, Rivers and steam Navigation of whatever nature and kind expected) into John Abbot & Sons; or to their Assigns, Lading Charges an Freight for the said goods paid, with Average as per York, Antewerp Rules, 1924 and charges as accustomed.

In Witness where of the Master of the said ship hath arrimed to three bills of Lading all of this Tenor and Date, the one of which three Bills being accomplished, the other two are to void.

Dated At Mumbai 30th October, 1999 J. Black

Value and contents unknown Master

This bill is issued subject to the contents of 14 and 15 Geo. V. C. 22

7. व्यापारिक बीजक या निर्यात बीजक (Commercial Invoice or Export Invoice)

व्यापारिक बीजक विदेशी व्यापार में प्रयुक्त किया जाने वाला महत्वपूर्ण प्रलेख है यह प्रलेख निर्यातकर्ता (विक्रेता) द्वारा तैयार किया जाता है। बीजक में भेजे गये माल की मात्रा, उसकी किस्म व कीमत लिखी जाती है। इसके साथ ही एक प्रमाण-पत्र भी होता है जिसमें यह प्रभाणित किया जाता है कि माल इस विवरण के अनुसार ही भेजा गया है। इसमें निम्नलिखित बातें लिखी जाती हैं–

1. बीजक संख्या। 2. भेजने की तिथि या तारीख। 3. विक्रेता का नाम और उसका पूर्णपता। 4. माल मंगाने वाले का नाम व देश। 5. बन्दरगाह का नाम जहा तक माल भेजा गया है। 6. बन्दरगाह जिससे माल भेजा गया है। 7. जहाज का नाम जिसके द्वारा माल भेजा जा रहा है, 8. विविध व्यय जो निर्यातकर्ता ने माल भेजने के सम्बन्ध में किये हैं। 9. भुगतान की शर्तें तथा विधि। 10. माल का विस्त त वर्णन, जैसे माल की मात्रा, किस्म आदि। 11. जहाजी बिल्टी सम्बन्धी सूचना जैसे जहाजी बिल्टी का नम्बर, दिनांक, जहाजी कम्पनी का नाम। 12. कस्टम अधिकारियों द्वारा चाही गयी कोई विशेष सूचना। 13. माल की प्रति इकाई व कुल मूल्य तथा मूल्य का प्रकार जैसे f.o.b., c.i.f., आदि।

निर्यात बीजक या व्यापारिक बीजक किस प्रकार बनाया जाये, यह निर्यातकर्ता तथा आयातकर्ता में हुए आपसी समझौते पर निर्भर करता है। मूल्य के अनुसार बीजक कई प्रकार का हो सकता है। जैसे–

1. **जहाजी-लदाई मुक्त बीजक** (Free on Board or F.O.B. Invioce)–इससे अभिप्राय यह है कि इस मूल्य में माल को जहाज पर लदाने तक समस्त खर्चे शामिल होते हैं जैसे माल के निर्माता द्वारा निश्चित मूल्य, पैंकिंग व्यय, बन्दरगाह तक ढुलाई का व्यय, निर्यात कर, डॉक व्यय और जहाज पर लदाई का खर्चा। अतः इस मूल्य में जहाजी भाड़ा और बीमा प्रीमियम की राशि सम्मिलित नहीं की जाती।
2. **जहाजी भाड़ा-मुक्त बीजक** (Cost and Freight or C.F. Invoice)–इसमें जहाज लदाई-मुक्त-मूल्य के अतिरिक्त जहाजी भाड़ा भी शामिल होता है। इस मूल्य में बीमा प्रीमियम तथा कमीशन को छोड़कर शेष सभी व्यय इसमें सम्मिलित होते हैं। अर्थात लागत मूल्य, पैकिंग मूल्य, ढुलाई व्यय, निर्यात कर, डॉक व्यय, जहाज पर माल लदाई व्यय तथा जहाजी किराया।
3. **बीमा व्यय-मुक्त बीजक** (Cost, Insurance and Fright or C.I.F.)–इसमें माल का लागत मूल्य, पैकिंग व्यय, ढुलाई व्यय, निर्यातकर, जहाज पर माल लदाई व्यय, जहाजी भाड़ा तथा बीमा व्यय तक के समस्त खर्चे शामिल होते हैं। दूसरे शब्दों में इसमें भाड़ा-मुक्त मूल्य के अतिरिक्त बीमा व्यय भी शामिल होता है।
4. **सर्व-व्यय मुक्त बीजक** (Franco Invoice)–इस मूल्य में आयातकर्ता के दरवाजे तक माल को पहुंचने में जितने भी (कमीशन सहित) खर्चे होते हैं उन सभी को सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार के बीजक का प्रयोग केवल निकटवर्ती देशों के व्यापार में ही किया जाता है।

बीजक की तीन प्रतियां बनाई जाती हैं प्रथम प्रति माल सम्बन्धी अन्य प्रलेखों के साथ बैंक द्वारा भेजी जाती है, दूसरी प्रति आयातकर्ता के पास भेजने की सूचना के रूप में डाक से भेजी जाती है। तीसरी प्रतिलिपी निर्यातकर्ता अपने पास रख लेता है।

निर्यात बीजक में साख द्वारा चाहे गये विवरण व घोषणाएं होनी चाहिए। बीजक में क्रेता का आयात लाइसेन्स नम्बर, यदि हो और निर्यात आदेश नम्बर वर्णित होनी चाहिए। इसी प्रकार माल का वजन, अन्य प्रलेखों में दिखाए गये वजन से भिन्न नहीं होना चाहिए। शुद्ध वजन की जगह कुल वजन नहीं दिखाया जाना चाहिए।

8. मूल स्थान का प्रमाण-पत्र (Certificate of Origin)

जब एक देश किसी खास देश से आए हुए माल पर कर नीची दर से वसूल करता है तो आयात को निर्याकर्ता देश के किसी मान्य अधिकारी से एक प्रमाण-पत्र, जिसमें यह प्रमाणित किया गया हो कि वह माल उस देश में ही बना है, प्राप्त करना होता है। यह प्रमाण-पत्र मूल-स्थान का प्रमाण-पत्र कहलाता है। यह प्रमाण-पत्र बीजक के साथ भेजा जाता है। इसका नमूना यहां प्रस्तुत है–

Certificate of Origin

The Undersigned dully authorised by the London Chamber of Commerce hereby verifies the declaration made below by....of....in respect of the undermentioned goods, consigned to....at.....via.....and certifies

Number of Pakages	*Marks Numbers*	*Gross Weight*	*Net Weight*	*Description of Goods*

that the goods specified in the schedule above are of British original production or manufacture.

No. of certificate.....

.....

Seal

Signature of Declarer Secretary

9. बीमा पॉलिसी या पत्र
(Insurance Policy)

निर्यात या आयात किया जाने वाला माल अधिकांशतः समुद्रीय मार्ग से गुजरने के कारण सदैव जोखिम पूर्ण होता है। अतएव इस जोखिम से बचने के लिए माल का सामुद्रिक बीमा करना अनिवार्य होता है। इसके अलावा बैंक भी तब तक साख प्रदान नहीं करता, जब तक माल का सामुद्रिक बीमा न करा लिया गया हो। अतः बीमा पॉलिसी लेनी होती है। बीमा पॉलिसी बीमा कम्पनी द्वारा जारी किया जाने वाला वह प्रलेख होता है जिसमें बीमा कम्पनी एक निश्चित प्रीमियम के बदले, समुद्री मार्ग में किसी प्रकार की हानि की पूर्ति करने का वादा करती है। बीमा पॉलिसी में निम्न विवरण होना आवश्यक है–

1. बीमा करने वाले का नाम।
2. बीमा किये जाने वाले का वर्णन अर्थात् माल की समुचित व्याख्या की जाती है और यह व्याख्या बीजक अथवा जहाजी बिल्टी की व्याख्या से मेल खानी चाहिए।
3. जोखिमों का नाम जिनके लिए बीमा कराया गया है।
4. बीमा कराए गए माल की राशि।
5. बीमा सम्बन्धी समय।
6. उस बैंक का नाम जिसके नाम में बीमा पॉलिसी ली गयी है।
7. इसमें माल ले जाने वाले जहाज का नाम दिखाया जाता है, जैसा उल्लेख जहाजी बिल्टी में होता है।
8. हर्जाने के भुगतान का स्थान वही माना जाना चाहिए जो साख पत्र में दिया हुआ हो।
9. सुधार और संशोधन यथेष्ट रूप से प्रमाणित होने चाहिए।

भेजे गये माल के लिए बीमा कराने की जिम्मेदारी किसकी है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि संविदा किस प्रकृति की है, जैसे यदि संविदा (contract) जहाजी लदाई-मुक्त बीजक (F.O.B) वाली है, जिसका अर्थ है कि बीजक मूल्य में जहाजी भाड़ा और बीमा प्रीमियम की राशि सम्मिलित नहीं है तब माल का बीमा कराने का दायित्व आयातकर्ता का होता है। परन्तु

यदि संविदा बीमा-व्यय मुक्त बीजक (C.I.F.) वाली है। जिसका अर्थ है कि बीजक मूल्य में माल का लागत मूल्य, पैकिंग व्यय, ढुलाई व्यय, निर्यात कर, जहाज पर लदाई व्यय, जहाजी भाड़ा तथा बीमा व्यय तक के समस्त खर्चे शामिल हैं। बीमा कराने का दायित्व निर्यातकर्ता का होता है।

बीमा पॉलिसी सामान्यता अभिकर्ता बैंक के नाम में बनायी जाती है, जिसके माध्यम से सम्बन्धित प्रलेख भेजे जा रहे हैं। यदि यह निर्यातकर्ता के पक्ष में बनाई गयी है, तो इसे निर्यातकर्ता केवल हस्ताक्षर करके बैंक के नाम प ष्ठांकित कर देता है। जहाजी बिल्टी की तरह बीमा पॉलिसी भी बेचान और सुपुर्दगी द्वारा हस्तान्तरित की जा सकती है।

10. आयात लाइसेन्स (Import Licence)

आजकल हमारे देश में आयात स्वतंत्र रूप से न होकर पूर्णतया नियमित व नियन्त्रित ढंग से होता है। कुछ वस्तुओं के लिए खुले तौर पर लाइसेन्स दिये जाते हैं; कुछ के लिए उदार लाइसेन्स के प्रावधान लागू होते हैं, तथा कुछ के लिए विशेष प्रकार के आयात लाइसेन्स दिये जाते हैं।

क्षेत्रीय विस्तार के अनुसार लाइसेन्स दो प्रकार के होते हैं–

1. **सामान्य क्षेत्र लाइसेन्स**–यह लाइसेन्स सभी देशों से आयात करने का अधिकार देता है, लेकिन सरकारी नीतियों के आधार पर ही।
2. **विशिष्ट लाइसेन्स**–यह लाइसेन्स केवल निश्चित देश अथवा देशों से ही माल मंगाने का अधिकार देता है।

   आयात सुविधा के अनुसार वर्तमान समय में भारत में निम्न प्रकार के लाइसेन्स चालू हैं–

   1. **खुला सामान्य लाइसेन्स** (Open General Licences of O.G.L.)–खुले सामान्य लाइसेन्स की सूची में सम्मिलित वस्तुओं का कोई भी आयातकर्ता बिना लाइसेन्स लिये आयात कर सकता है।
   2. **स्वचल लाइसेन्स** (Automatic Licences)–विगत वर्षों से उपभोग के आधार पर वास्तविक उपयोग कर्ता (Actual User Importers) के लिए स्वचल लाइसेन्स व्यवस्था की गई है गत वर्ष के उपभोग से इसमें 10% वद्धि की अनुमति दी जा सकती है।
   3. **पुनः पूर्ति लाइसेन्स** (Replenishment Licence)–पंजीकृत निर्यातकर्ताओं अथवा निर्यातग हों को अपनी आवश्यकता की सामग्री पुनपूर्ति लाइसेन्स द्वारा मंगाने की सुविधा दी गई है।
   4. **अनुपूरक लाइसेन्स** (Supplementary Licence)–वास्तविक उपयोगकर्ता उद्योगपति अपनी अतिरिक्त आवश्यकता पूर्ति के लिए कच्चा माल, कल-पुर्जे उपभोग्य भण्डार आदि आयात करने के लिए अनुपूरक लाइसेन्स ले सकते हैं।

हमारे देश में आयात तथा निर्यात (नियन्त्रण) अधिनियम, 1947 के अन्तर्गत आयातकर्ताओं के तीन वर्ग किये जाते थे–1. सुस्थापित आयातकर्ता (Established Importer) ये वे व्यक्ति, साझेदार, कम्पनी अथवा अन्य संगठन थे जो आधारभूत अवधि में कम से कम एक वित्तीय वर्ष (1 अप्रैल से 31 मार्च) में आयातकर्ता रहे थे। आधारभूत अवधि अप्रैल 1951 से मानी जाती थी। 2. वास्तविक उपयोग कर्ता (Actual Users)। 3. पंजीकृत निर्यातकर्ता (Registered Exporters)। लेकिन सन् 1978-79 वर्ष की नीति घोषणा के अन्तर्गत सुस्थापित आयातकर्ता को समाप्त कर दिया गया शेष वर्गों का अधिकार क्षेत्र बढ़ा दिया गया है। अब आयातकर्ता चार प्रकार के माने जाते हैं–

1. **वास्तविक उपयोगकर्ता** (Actual Users)–उन्हें दो श्रेणियों में रखा गया है–
   क. **औद्योगिक वास्तविक उपयोग कर्ता**–ये आयातकर्ता तीन प्रकार के हैं–
      i. वे अनुसूचित उद्योग जिनके नाम तकनीकी विकास महानिदेशालय में पंजीकृत नहीं है। तथा सभी गैर-अनुसूचित उद्योग;
      ii. वे अनुसूचित उद्योग जिनके नाम तकनीकी विकास महानिदेशालय में पंजीकृत हैं;
      iii. लघु उद्योग।

ख. **गैर-औद्योगिक वास्तविक उपभोक्ता**—ये सस्थाएं उद्योग नहीं चलाती किन्तु समाज को सेवा प्रदान करने के लिए उपकरण, औजार, मशीन कलपुर्जे अथवा अन्य माल आयात करती हैं। इस श्रेणी में प्रकाशक, छापेखाने, समाचारपत्र, प्रयोगशालाएं, कार्यशालाएं (Workshop), शिक्षण संस्थाएं, तकनीकी संस्थाएं, अनुसन्धान अध्यापन संस्थाएं एवं अस्पताल सम्मिलित हैं।

वास्तविक उपयोगकर्ताओं को कलपुर्जे, कच्चा माल उपभोग्य भण्डार आदि खुले सामान्य लाइसेन्स, स्वचल अनुपूरक लाइसेन्स के अन्तर्गत आयात करने की छूट है।

2. **पंजीकृत निर्यातकर्ता** (Registered Exporters)—जो व्यक्ति अथवा संस्थाएं अपने यहां से उत्पादित माल का निर्यात करते हैं, उन्हें यंत्र-उपकरण, कच्चा माल, मशीनें आदि आयात करने की विशेष सुविधाएं दी जाती हैं। इन्हें पुनपूर्ति लाइसेन्स (Replerishment Licence) दिये जाते हैं।

3. **लघु उद्योग**—भारत सरकार ने उन वस्तुओं का आयात बन्द कर दिया है जिनका उत्पादन लघु उद्योग, नन्हीं (Tiny) इकाई और कुटीर उद्योग करते है। इस क्षेत्र के उद्योग अपनी आवश्यकता को मशीन एवं पूंजीगत पदार्थ पूर्णतः स्वतंत्र (Free) विदेशी विनिमय नियम के अन्तर्गत आयात करते हैं। अपनी आवश्यकता का विदेशी कच्चा माल इन्हें सरकारी संस्थाओं से प्राप्त होता रहता है, लघु उद्योगपतियों को 3 लाख रुपये तक के आयात लाइसेन्स दिए जाते है, लेकिन जो उद्योगपति अपने लघु उद्योग पिछड़े क्षेत्र में करते है उन्हें 5 लाख रुपये तक के आयात लाइसेन्स लेने का अधिकार है।

4. **निर्यात ग ह** (Export House)—सामान्यतः निर्यात ग्रहों को पुनः पूर्ति (Replenishment) लाइसेन्स दिये जाते हैं। इसके अलावा बड़े उद्योग द्वारा बनायी हुई निश्चित वस्तुओं के लिए निर्यात के 5% और लघु उद्योगों के माल के निर्यात के 33.3% के बराबर उन्हें और आयात लाइसेन्स दिये जाते हैं। वे संस्थाऐं जिनका वर्ष भर न्यूनतम निर्यात विशेष वस्तुओं के लिए एक करोड़ रुपये तथा अन्य वस्तुओं के लिए 5 करोड़ रुपये है तो उन्हें निर्यात ग ह प्रमाण पत्र दे दिया जाता है। किन्तु इसके लिए उन्हें 10 लाख रुपये की आधाभूत सीमा के ऊपर प्रतिवर्ष 5 लाख रुपये से निर्यात बढ़ाते रहने होता है।

अतः आयात क्रियाविधि (Import Procedure) में लाइसेन्स भी एक महत्वपूर्ण प्रलेख है।

11. विदेशी विनिमय-पत्र या बिल
(Foreign Bill of Exchange)

विदेशी व्यापार में काम में आने वाले यह एक महत्वपूर्ण प्रलेख है इसका प्रयोग भुगतान (Payment) के लिए किया जाता है। ये विनिमय-बिल निम्नलिखित प्रकार के होते है—

1. **सामान्य विदेशी विनिमय बिल** (Clean Bills)—इसे अप्रलेखनीय विनिमय बिल या साफ बिल भी कहते हैं। सामान्य विदेशी बिल वह बिल है जिसके साथ कोई प्रलेख नहीं होते है बिल पर स्वीकृति प्राप्त हो जाने पर निर्याकर्ता सग्रंहण (Collection) हेतु उसे अपने बैंक को दे देता है, अर्थात् उसकी कटौती करवा लेता है। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि निर्याकर्ता, आयातकर्ता के पास, विनिमय बिल एवं अधिकार पत्र दोनों ही भेज देता है। आयातकर्ता बिल को स्वीकार करके निर्यातकर्ता के पास भेज देता है और यदि इस विनिमय बिल के साथ अधिकार-पत्र संलग्न नहीं किये जाते हैं तो इसे खुला या साफ बिल (Clean Bill) कहते हैं। इस बिल का प्रयोग तभी किया जाता है जब निर्यातकर्ता का आयातकर्ता पर पूर्ण विश्वास हों। यहां इसका नमूना दिया गया है—

£ 1550

Stamp

Park Street

London

July 15,1999

Sixty (60) days after sight of this First Bill of Exchange (Second and third of this same tenor and date unpaid), pay to the Punjab National Bank or order the sum of one thousand five hundred Pounds Sterling only, value received.

To

Messers Hiralal Motital

81, Kalba Devi Road,

Mumbai.

Martin & Co.

2. **प्रलेखीय बिल** (Documentary Bill of Exchange)–विदेशी भुगतान करने के लिए विभिन्न तरीकों में प्रलेखीय बिल सबसे लोकप्रिय साधन है विदेशी बिल के साथ माल के अधिकार-पत्र जैसे जहाजी बिल्टी (B/L), बीजक, बीमा-पत्र आदि प्रलेख दिये जाते है इसलिए इनको प्रलेखीय बिल कहकर पुकारते हैं। यह बिल आयातकर्ता के पास उसकी स्वीकृति अथवा भुगतान के लिए सीधा भेजा जा सकता है, किन्तु यह तरीका जोखिम पूर्ण होने से इसको प्रायः बैंक के मार्फत ही भेजते है और आयातकर्ता द्वारा बिल स्वीकार करने या भुगतान करने पर उसे माल के अधिकार पत्र दे दिये जाते हैं यह प्रलेखीय बिल दो प्रकार का होता है। जब बिल मे यह स्पष्ट लिख दिया जाये कि इस बिल की स्वीकृति पर ही ग्राहक के माल के प्रलेख (जहाजी बिल्टी, बीजक बीमा पॉलिसी) आदि सौंप दिए जाएं तो इसे स्वीकृति पर प्रलेख वाला बिल (D/A or Documents against Acceptance Bill) कहा जाता है। इसका नमूना यहां दिया जा रहा है–

प्रलेख बिल (D/P Bill)

Exchange for — Park Street

£ 1500 — London

July 15,1999

Stamp

Sixty (60) days after sight of this First Bill of Exchange (Second and third of the same tenor and date unpaid), pay to us or our order the sum of one thousand five hundred Pounds Sterling only, shipping documents attached to be surrendered against acceptance.

To

Messers Ramlal Kishanlal

Chandni Chowk — Martin & Co.

Delhi-6

उपरोक्त बिल आयातकर्ता अथवा बैंक के स्वीकार करने पर सभी प्रलेख उन्हें दे दिये जाते हैं व बिल निर्यातकर्ता अथवा उसके बैंक को लौटा जाता है।

आयात कर्ता द्वारा भुगतान किये जाने पर यदि प्रलेख उसको दिये जाते हैं, तो बिल भुगतान पर प्रलेख बिल (Documents against Payment or D/P) कहलाता है इसका नमूना अंग्रकित प्रकार है–

प्रलेख बिल
(D/P Bill)

£ 1500 — Park Street

London

Stamp

July 15,1999

On demand please pay the First State Bank of India a sum of one thousand five hundred Pounds Sterling only against Invoice No. A. 15 and shipping documents enclosed.

To

Messers Ramlal Kishanlal

Chandni Chowk — Martin & Co.

Delhi-6

12. साख-पत्र
(Letter of Credit)

बिल की भांति ही विदेशी व्यापार में काम में आने वाला एक प्रलेख साख-पत्र है, जिसके माध्यम से विदेशी भुगतान किये जाते हैं साख-पत्र से आशय एक ऐसे प्रमाण-पत्र से होता है जो किसी व्यक्ति, संस्था अथवा बैंक द्वारा लिखा जाता है। इस प्रमाण पत्र में लेखक किसी अन्य व्यक्ति, संस्था अथवा बैंक से यह प्रार्थना करता है कि वह प्रमाण पत्र में अंकित व्यक्ति को एक निश्चित सीमा के भीतर किसी अंश तक साख प्रदान करे। , के अनुसार, ''साख-पत्र वह पत्र है जिसमें एक व्यक्ति (साधारणतः बैंक अथवा व्यापारी) दूसरे व्यक्ति (जिसका नाम उसमें लिखा है अथवा जिससे यह पत्र लिखाया गया) से वादा करता है कि वह तीसरे पक्ष (वह ग्राहक जिसे वह साख-पत्र दिया गया है) को माल के जहाज में भेजने या किसी व्यापारिक सौदे का भुगतान करने के लिए दी गई साख का पुनर्भुगतान कर देगा''। साख-पत्र निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं–

1. **व्यक्तिगत साख-पत्र**–व्यक्ति साख-पत्र को व्यक्तिगत साख (Personal Credit) के नाम से सम्बोन्धित किया जाता है व्यक्तिगत साख एक देश के बैंक द्वारा किसी विदेश में कार्य करने वाले बैंक के नाम लिखित प्रार्थना होती है कि वह साख के धारक (Holder of this Credit) की साख में उल्लेखित राशि, साख-पत्र के प्रस्तुत करने पर अपने देश की मुद्रा में दे दे। जिस विदेशी बैंक के नाम में व्यक्तिगत साख-पत्र लिखा जाता है उसे साख धारक के नमूने के हस्ताक्षर भेज दिये जाते हैं ताकि भुगतान करते समय उन्हें साख-पत्र में उसके द्वारा किये जाने वाले हस्ताक्षर से मिलाया जा सके।

2. **वाणिज्यिक साख-पत्र**–वाणिज्यिक साख पत्र के वाणिज्यिक साख (Commercial Credit) के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इसका आशय ऐसे साख-पत्र से होता है जो एक बैंक द्वारा लाभ प्राप्तकर्ता (जो सामान्यतः माल का विक्रेता होता है) के नाम में इस आश्वासन के साथ लिखा जाता है कि लाभ प्राप्तकर्ता को यदि साख-पत्र में उल्लिखित सभी शर्तों को उसने पूरा कर दिया है तो तत्काल अथवा निर्धारित अवधि में सम्बन्धित राशि का भुगतान कर दिया जाएगा।

साख सम्बन्धी शर्तों के अनुसार लाभ प्राप्तकर्ता को भुगतान करते समय अथवा अपने द्वारा लिखित बिल पर स्वीकृति प्राप्त करते समय माल से सम्बन्धित विशिष्ट प्रलेखों को प्रस्तुत नहीं करना होता है तो साख को अप्रलेखीय साख (Clean Credit or Non-documentary Credit) कहते है। परन्तु प्रलेखों (जहाजी बिल्टी, बीजक बीमा पॉलिसी) के प्रस्तुत किए जाने की स्थिति में साख को प्रलेखीय साख (Documentary Credit) कहते है। व्यवहार में प्रलेखीय साख को बहुधा साख-पत्र (Letter of Credit) के नाम से ही जाना जाता है। प्रलेखीय साख से सम्बन्धित साख-पत्र लाभ प्राप्तकर्ता के नाम में लिखा जाता है। साख प्रदान करने वाला बैंक इसे अभिकर्ता बैंक के पास भेज देता है। यदि साख प्रदान करने वाला बैंक अभिकर्ता बैंक को केवल यह निर्देश देता है कि वह साख (L/C) को उसकी पुष्टि करे बिना लाभ प्राप्तकर्ता को भेज दे तब साख अपुष्टिकृत साख (Unconfirmed Credit) कहलाती है। ऐसी स्थिति में अभिकर्ता बैंक मात्र परामर्श देने वाला बैंक ही रहा है अर्थात उसे केवल एजेन्ट के रूप में ही कार्य करना होता है। परन्तु यदि साख प्रदान करने वाला बैंक अभिकर्ता बैंक को लाभ प्राप्तकर्ता को साख भेजे जाने से पूर्व साख की पुष्टि करने के लिए निर्देश देता है। तो अभिकर्ता बैंक साख की पुष्टि करता है। पुष्टि करने के लिए अभिकर्ता बैंक कुछ कमीशन लेता है। ऐसी साख पुष्टिकृत साख (Confirmed Credit) कहलाती है। प्रलेखनीय साख खण्डनीय (Revocable) अथवा अखण्डनीय (Irrevocable) हो सकती है। खण्डनीय साख में बैक बिना लाभ प्राप्तकर्ता को सूचना दिये, साख का अधिकार निरस्त कर सकता है अथवा शर्तों में परिवर्तन कर सकता है। ऐसे खण्डन या परिवर्तन से उस पर कोई कानूनी बन्धन नहीं होता। अखण्डनीय साख में बिना सभी पक्षों (आयातकर्ता, निर्यातकर्ता, बैक) की सहमति के परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इसमें बैंक को भुगतान करने या बिल स्वीकार करने की कानूनी बाध्यता है।

इसी प्रकार यदि साख-पत्र में लाभ प्राप्तकर्ता को तत्काल भुगतान प्राप्त हो जाने की व्यवस्था की जाती है तो साख की दर्शनीय साख (Sight Credit) कहते हैं। इसके अन्तर्गत निर्यातकर्ता माल सम्बन्धी प्रलेखों के साथ दर्शनी बिल अभिकर्ता बैंक को प्रस्तुत करता हे। बैंक शर्तों की पूर्ति होने पर तत्काल भुगतान कर देता है। यदि साख सम्बन्धी शर्तों के अन्तर्गत लिखा जाने वाला विनिमय बिल (ड्राफ्ट) की परिपक्वता तिथि पर निर्यातकर्ता को भुगतान करने की व्यवस्था की जाती है तो ऐसी साख को सावधि साख (Term Credit) कहते हैं।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर साख-पत्र की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. यह एक प्रमाण-पत्र है जो आयातकर्ता के बैंक द्वारा निर्यातकर्ता के बैंक अथवा अपनी ही शाखा को लिखा जाता है।
2. साख-पत्र में आयातकर्ता को बेचे गए माल की रकम के भुगतान का वचन दिया जाता है।
3. साख-पत्र में विक्रय की शर्तें लिखी रहती हैं, जिनका पालन आवश्यक है।
4. इन समस्त शर्तों के पालन पर ही रकम का भुगतान संभव होता है।

साख-पत्र में निम्न बातें सम्मिलित की जाती हैं–

1. आयातकर्ता (क्रेता) का नाम।
2. निर्यातकर्ता (विक्रेता) का नाम।
3. साख की राशि एवं अवधि।
4. व्यापार की शर्तें।
5. माल का विवरण।
6. महत्वपूर्ण प्रलेख, जिनमें साधारणतः जहाजी बिल्टी, बीजक, बीमा पॉलिसी आदि होते हैं।

13. बन्धक-पत्र
(Letter of Hypothecation)

जब विदेशी भुगतान मुद्दती बिल (Time Bill) द्वारा होता है, तो निर्यातकर्ता को उतने समय तक भुगतान के लिए प्रतिक्षा करनी पड़ती है। अतः यदि निर्यातकर्ता यह चाहता है कि माल के साथ ही साथ बिल का भुगतान हो जाए, तो ऐसी दशा में वह अपने देश की एक्सचेज बैंक से बिल को भुनाकर रुपया वसूल कर सकता है। ऐसी दशा में बैंक निर्यातकर्ता से प्रलेखीय बिल एक बन्धक पत्र के साथ ले लेता है। बन्धक पत्र बैंक को यह अधिकार देता है कि यदि बिल अप्रतिष्ठित (Dishonour) हो जाए तो वह माल को वहीं बेचकर अपनी रकम वसूल कर सकता है। यदि निर्यातकर्ता बार-बार निर्यात करता रहता है और उसको बार-बार ही बैंक से रुपया लेने की आवश्यकता पड़ती हो तो ऐसी दशा में वह एक सामान्य बन्धक पत्र (General Letter of Hypothecation) दे देता है, जिससे हर बार बन्धक-पत्र नहीं देना पड़ता है। बन्धकपत्र का नमूना निम्न प्रकार है–

Letter of Hypothecation

London

July 15, 1999

To

The Director of the Llyod's Bank Ltd.

London.

Dear Sir

We enclose herewith a 60 days's sight bill drawn by us on Messers Mafat Lal Gangal Bhai & Sons, Mumbai for £ 800 and forward the following shipping documents as security:

1. Invoice for 10 bales of cotton piece, Goods valued at £ 800.
2. Marine Insurance Policy for 850.
3. Bill of Lading for 10 bales marked @ Mumbai 1/10 per S.S. Pratap from London to Mumbai. Freight has been paid by us.

If the said bill is dishnoured, we authorize you to sell the said goods for our account and at our risk and to charge us with the usual expenses and commission.

Yours faithfully

.....

14. प्रवेश बिल
(Bill of Entry)

प्रवेश बिल, आयात कार्यविधि में काम में आने वाला प्रमुख प्रलेख है आयात शुल्क चुकाने के लिए जिस फार्म को काम में लाया जाता है, उसे ही प्रवेश बिल कहते हैं। प्रवेश बिल तीन प्रकार के होते हैं एक तो कर-देय, दूसरे कर-मुक्त तथा तीसरे पुनः बाहर जाने वाले माल के लिए। ये तीनों फार्म अलग-अलग रंगीन कागज में छपे होते हैं तथा सम्बन्धित फार्म की तीन प्रतियां भरी जाती हैं। प्रवेश बिल में दी गई सूचना/विवरण के आधार पर आयात शुल्क लिया जाता है। अतः प्रवेश बिल आयात शुल्क चुकाने की रसीद होती है। जिसका नमूना निम्न प्रकार है—

Bill of Entry

Original Ref. No.....

Clearing Agent No.....Signature.....

Vessel	General Manifest No.	Master or Agent	Colours	Country where consigned	Port of shipment	Importer's Name..... On a/c of..... Adress .....

Details of goods to be given separately for each class or Description.

Packages Number and Description		Quantity		Description	Real Value as defined in the Sea Customs Act		Value on which Duty is assessed			Duty	
		Rate	Amount				Rate		Amount		
					Unit	Amount	Tariff	Ad. VL		Rate	Amount
						Rs.			Rs.		Rs.

Indent No. Court fee Stamps	For use in Cash Depart-ment	Order	Total Value..... Total No. of Packages on words..... Total Duty Rupees..... *1. This Bills of Entry is presented subject to Entry Rules. *2. For the purpose of the Sea Customs Act, it expressly agreed that it shall be deemed to be delivered on the date when the order for inward entry is passed and the Bill of entry shall, in fact, be so deemed to be delivered. *3. I/we hereby declare the particulars given below to be true.

Contd.

			4. I/we hereby declare that I am/we are unable from want of full information to state the real value and contents of the packages above-marked and pray that they may be opened and examined in the presence of an officer of customs. (This declaration to be struck out, if not necessary) Mumbai ..... Date..... Signature of the Inspector of his Authorised Agent

निर्यात व्यापार सम्बन्धी प्रलेख
(Documents used in Export Trade)

1. **जहाजी बिल्टी** (Bill of Lading or B/L)
2. **व्यापारिक बीजक** (Commercial Invoice)
3. **बीमा पॉलिसी या पत्र** (Insurance Policy or Marine Insurance
4. **जहाजी बिल** (Shipping Bill)
5. **कप्तान की रसीद** (Mate's Receipts)
6. **मूल स्थान का प्रमाण पत्र** (Certificate of Origin)
7. **जहाजी आज्ञा** (Shipping Order)
8. **डॉक रसीद** (Dock Receipt)
9. **बन्धक पत्र** (Letter of Hypothecation)
10. **विनिमय-बिल** (Bill of Exchange)
11. **साख-पत्र** (Letter of Credit)
12. **किस्म-नियंत्रण का प्रमाण पत्र** (Certificate of Quality Control)
13. **जी. आर आई. फार्म** (G.R.I. Form)
14. **पैकिंग सूची** (Packing List)
15. EP / PP / VP/ COD Form

आयात व्यापार सम्बन्धी प्रलेख
(Documents used in Import Trade)

1. **आयात लाइसेंस** (Import Licence)
2. **इन्डैन्ट या आदेश** (Indent or Order)
3. **साख-पत्र** (Letter of Credit)
4. **विनिमय बिल** (Bill of Exchange)
5. **प्रवेश बिल** (Bill of Entry)
6. **सुपुर्दगी आदेश** (Delivery Order Issued by the Shipping Company)
7. **गोदी वारन्ट** (Dock Warrant)
8. **डॉक चालान** (Dock Challan)

विभिन्न अधिकारियों द्वारा मांगे जाने वाले प्रलेख
(Documents Required by Various Authorities)

1. **सीमा शुल्क अधिकारियों द्वारा** (By the Customs)
   - i. **व्यापारिक बीजक** (Commercial Invoice)
   - ii. **जहाजी बिल** (Shipping Bill)
   - iii. **जी.आर.आई. फार्म** (G.R.I. Form)
   - iv. **पोतवाणिक का घोषणा फार्म** (Shipper's Declaration form)
   - v. **निर्यात आदेश, साख-पत्र तथा निर्यात प्रंसविदे की प्रति** (Copy of the Export Contract/LC/Export Order)
   - vi. **निरीक्षण प्रमाण पत्र** (Inspection Certificate)
   - vii. AR-4 or AR-5 **फार्म**
   - viii. **रेलवे रिबेट क्लेम फार्म**
   - ix. **निर्यात लाइसेंस** (Export Licence)
   - x. **भार संबंधी प्रमाण पत्र** (Weighment Certificate)
2. **बन्दरगाह के अधिकारियों द्वारा** (By the Port)
   - i. **निर्यात प्रार्थना-पत्र** (Export Application)
   - ii. **डॉक चालान** (Dock Challan)
   - iii. **कार्ट चिट** (Cart Ticket/Chits)
   - iv. **जहाजी आज्ञा** (Shipping Order)
   - v. **पोर्ट ट्रस्ट की लदान बिल की प्राप्ति** (Port Trust Copy of the Shipping Bill)
3. **बैंक द्वारा** (By the Bank)
   - i. **जहाजी बिल्टी** (Bill of Lading or B/L)
   - ii. **व्यापारिक बीजक** (Commercial Invoice)
   - iii. **बीमा पॉलिसी** (Insurance Policy)
   - iv. **विनिमय बिल** (Bill of Exchange)
   - v. G.R.I. **फार्म (दो या तीन प्रतियां)**
   - vi. **मूल स्थान का प्रमाण पत्र** (Certificate of Origin)
4. **लाइसेंस अधिकारियों के लिए** (For the Licencing Authority)
   - i. **आयात पुनः पूर्ति के लिए प्रार्थना-पत्र फार्म** (Application form for Replenishment Licence)
   - ii. **बैंक प्रमाण-पत्र** (Bank Certificate)
   - iii. **जहाजी बिल** (Shipping Bill)
   - iv. **व्यापारिक बीजक** (Commercial Invoice)
   - v. **निर्यातों का विवरण** (Statement of Exports)
   - vi. **पंजीयन प्रमाण पत्र** (Registration Certificate)

vii. **स्टाम्प रसीद** (Stamp Receipt)

viii. **कोषागार रसीद** (Treasury Receipt)

ix. **नकद सहायता के लिए निर्यातों का विवरण** (Statement of Exports for Cash Assistance)

5. **निर्यात संवर्द्धन परिषद के लिए** (For the Export Promotion Council)

i. **पंजीयन प्रार्थना-पत्र** (Application for Registration)

ii. **वित्तीय स्थिति से संबंधित बैंक का प्रमाण-पत्र** (Bank Certificate Regarding Financial Soundness)

iii. **पंजीयन प्रमाण-पत्र फार्म** (Registration Certification Form)

iv. **सदस्यता फार्म** (Membership form)

6. **निर्यात निरीक्षण परिषद के लिए** (For the Export Inspection Council)

i. **निर्धारित फार्म पर प्रार्थना पत्र** (Application in the Prescribed form)

ii. **साख पत्र की प्राप्ति** (Copy of L/C)

iii. **निर्यात प्रंसविदे की प्रति** (Copy of the Export Contract)

iv. **व्यापारिक बीजक** (Commercial Invoice)

अध्याय-14
भारत की विदेश व्यापार नीति
(India's Foreign Trade Policy)

किसी भी देश की विदेश व्यापार नीति को तकनीकी रूप से उसे देश की वाणिज्यिक नीति कहा जाता है। इस अध्याय में विदेश व्यापार नीति तथा वाणिज्यिक नीति को एक ही अर्थ में लिया गया है।

वाणिज्यिक नीति का अर्थ
(Meaning of Commercial Policy)

सामान्यतः किसी देश की आयात निर्यात नीति को ही उस देश की वाणिज्यिक नीति कहा जाता है। **प्रो. हेबरलर** ने वाणिज्यिक नीति को इस प्रकार परिभाषित किया है—''व्यावसायिक या वाणिज्यिक नीति से आशय उन सब उपायों से है, जो कि किसी देश के बाह्य आर्थिक संबंधों का नियमन करते हैं। ये उपाय एक ऐसी क्षेत्रीय सरकार या प्रादेशिक सरकार, जिसमें वस्तुओं और सेवाओं के निर्यात व आयात में बाधा डालने या सहायता पहुंचाने की शक्ति होती हैं, द्वारा किये जाते हैं'' इन उपायों में आयात-निर्यात पर प्रतिबन्ध अथवा सहयोग सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त किराया-भाड़ा दरों में अन्तर, माल की पैकिंग विधि में फेरबदल आदि भी इसमें सम्मिलित किए जाते हैं।

सैद्धान्तिक द ष्टि से व्यापारिक नीति एवं वाणिज्यिक नीति में भेद किया जा सकता है। लेकिन व्यावहारिक द ष्टि से इन दोनों को एक ही मान लिया जाता है। वास्तव में व्यापारिक नीति का क्षेत्र वाणिज्यिक नीति की तुलना में अधिक व्यापक है। वाणिज्यिक नीति में केवल आयात-निर्यात के मामले ही सम्मिलित होते हैं जबकि व्यापारिक नीति में आयात-निर्यात के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से संबंधित अन्य समस्याएं भी सम्मिलित होती हैं। व्यापारिक नीति देश की आर्थिक नीति का ही एक भाग है, अतः यह आर्थिक नीति के मूल के उद्देश्यों के अनुकूल ही होती है।

वाणिज्यिक नीति का महत्व
(Importance of Commercial Policy)

किसी भी देश के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एक अनिवार्यता है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, सहायता, समझौते, पूंजी का आवागमन आदि देश के आर्थिक विकास को प्रभावित करते हैं। विकासशील देशों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विशेष महत्व है। इसको नियमित करने एवं सही दिशा देने के लिए व्यापारिक नीति की आवश्यकता पड़ती है। अधिकांश विकासशील देशों का व्यापार शेष घाटे में रहता है। अतः ये आयात कम करने व निर्यात बढ़ाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हैं आयात पर प्रतिबन्ध लगाकर ये स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहित करना चाहते हैं आज विश्व के उन्नत माने जाने वाले देशों जर्मनी, जापान, अमेरिका आदि ने भी विकास के प्रारम्भिक समय के आयातों को कम करने के लिए तट कर लगाये थे। विकासशील देशों को अपने उद्योगों का विकास करने के लिए संरक्षित बाजार उपलब्ध कराना होता है क्योंकि प्रारम्भिक अवस्था में यहां के उद्योग विकसित देशों की प्रतिस्पर्द्धा में टिक नहीं पाते है। यहां न तो उत्पादन की किस्म अच्छी होती है और न ही लागत कम। अतः व्यापारिक नीति स्वदेशी उद्योगों को संरक्षण देने का महत्वपूर्ण माध्यम है। लेकिन आजकल संरक्षण की नीति बहुत सफल नहीं हो पाती हैं, क्योंकि शक्तिशाली विकसित देश अनेक तरीकों से इसे तोड़ने में सफल होते हैं विदेशी उत्पादक लागत से भी कम मूल्य पर माल बेचकर तटकर की बाधा पार कर जाते हैं अतः आयात कोटा अथवा कुछ वस्तुओं के आयात का पूर्ण प्रतिबन्ध लगाकर आयात रोका जाता है और घरेलू आयात प्रतिस्थापक उद्योगों को प्रोत्साहित किया जाता है।

निर्यात व द्धि की द ष्टि से भी व्यापारिक नीति का विशेष महत्व है। सरकार निर्यातकों को वित्त प्रदान कर, विदेशी व्यापारिक सूचनाएं देकर विदेशों में माल का प्रचार कर, मेले लगाकर निर्यातों को बढ़ावा देती है। विकासशील देशों के पास विदेशी मुद्रा के सीमित भंडार है। अतः इन्हें आयात एवं निर्यातों को इन कोषों के अनुरूप सामयोजित करना पड़ता है। व्यापारिक नीति इसमें सहायता करती है। इसके साथ ही आयात-निर्यात को योजनाबद्ध विकास के अनुरूप बनाना पड़ता है, क्योंकि विकास के लिए आयात भी आवश्यक है। यद्यपि व्यापारिक नीति अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों तक ही सीमित होती है। किन्तु इसका देश के समग्र आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ता है। वास्तव में यह समग्र विकास का ही एक भाग है। इस अर्थ में यह विकास योजनाओं को प्रदर्शित करने वाली और उनका साधन दोनों हैं।

वाणिज्यिक नीति के प्रकार
(Types of Commercial Policy)

वाणिज्यिक नीति दो प्रकार की होती है—1. स्वतंत्र व्यापार नीति, 2. संरक्षणवादी व्यापारी नीति

1. **स्वतंत्र व्यापार नीति** (Free Trade Policy)—जब सरकार आयात-निर्यात पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं लगाती है तो इसे स्वतंत्र या मुक्त व्यापार नीति कहते हैं इस नीति के अनुसार यदि सरकार तटकर लगाती है तो उसका उद्देश्य आयात-निर्यात को प्रतिबन्धित करना न होकर सरकारी आय बढ़ाना होता है।

2. **संरक्षणवादी व्यापार नीति** (Protectionist Trade Policy)—संरक्षण की नीति का तात्पर्य सरकार की उस नीति से है जिसमें देश के नये एवं शिशु उद्योगों को विदेशी प्रतिस्पर्द्धा से बचाने के लिए आयात पर प्रतिबन्ध लगाया जाता है। इस नीति में दो देशों के मध्य वस्तुओं का स्वतंत्र आदान-प्रदान नहीं होता है। विकासशील देशों के लिए यह नीति सर्वाधिक उपयुक्त है क्योंकि इसके बिना वे स्वदेशी उद्योगों का विकास नहीं कर पाते हैं। इससे विकासशील देशों में पूंजी निर्माण व विनियोग का अनुकूल वातावरण बनता है और भुगतान संतुलन की असाम्यता को कम करने में मदद मिलती है।

भारत की वाणिज्यिक नीति
(Commercial Policy of India)

भारत की वाणिज्यिक नीति को अग्र प्रकार दो भागों में बांटा जा सकता है—

1. **स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व की नीति** (Pre-independence Commercial Policy)—भारत की व्यापार नीति के संबंध में 1923 का वर्ष एक विभाजन रेखा है। सन् 1923 से पूर्व भारत में मुक्त अर्थात स्वतंत्र व्यापार नीति अपनायी गयी थी। उस समय ब्रिटिश शासकों से ऐसी व्यापार नीति की आशा भी नहीं थी। जो भारत के औद्योगिक विकास के सहयोग दे सके। सन् 1923 में स्वतंत्र व्यापार नीति का त्याग कर विभेदात्मक संरक्षण की नीति अपनायी गई। यह नीति भारतीय हितों की तुलना में ब्रिटिश हितों की अधिक संरक्षक था। सन् 1929 की विश्वव्यापी मन्दी का भारतीय विदेशी व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। सन् 1932 में ब्रिटिश सरकार ने साम्राज्य अधिमान की नीति अपनाई, जिसमें ब्रिटिश हितों का ध्यान रखा गया। इसलिए भारतीयों ने इसका विरोध किया है। लेकिन वायसराय ने अपने विशेषाधिकारों के माध्यम से इसे 1939 तक जारी रखा। द्वितीय विश्वयुद्ध में भारतीय व्यापार नीति में आयात-निर्यात पर कड़े प्रतिबन्ध लगाये गये तथा विनिमय नियंत्रण कानून लागू किया गया।

2. **स्वतंत्र भारत की व्यापार नीति** (Commercial Policy Since Independence)—स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार की स्थापना हुई। इसके साथ ही देश की व्यापार नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। अब व्यापार नीति का उद्देश्य योजनाबद्ध विकास, तीव्र औद्योगीकरण एवं आर्थिक विकास की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना हो गया। इसके साथ ही व्यापार के भारतीयकरण की प्रक्रिया शुरू हुई। सरकार ने स्वदेशी उद्योगों को संरक्षण प्रदान करने के लक्ष्य से प्रेरित होकर आयात नीति बनायी। इस नीति में आयात पर नियंत्रण, सीमा शुल्क, सरकार द्वारा खरीद में स्वदेशी माल को प्राथमिकता देने जैसे अनेक कदम उठाये गये। सरकार विदेशों से अनेक द्विपक्षीय एवं बहुपक्षी समझौते किये गये। इस संबंध में सन् 1947 का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक समझौते (GATT) विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सन् 1948 से 1952 तक सरकार ने अमेरिका व अन्य नरम मुद्रा क्षेत्रों से आयात में उदारता की नीति अपनायी। सन् 1956 के बाद विदेशी मुद्रा नियंत्रण लागू किये गये। तीसरी योजना काल से पूंजीगत माल तथा महत्वपूर्ण कच्चे माल में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के उद्देश्य से आयात प्रतिस्थापना पर बल दिया गया। द्वितीय योजना के बाद ऋण दायित्व बढ़ने से

सरकार ने निर्यात-प्रोत्साहन पर भी ध्यान देना प्रारम्भ किया। हमारे देश में प्रतिवर्ष आयात-निर्यात नीति घोषित की जाती वही है। इसमें आयात-निर्यात संबंधी महत्वपूर्ण घोषणाएं की जाती हैं किन्तु सन् 1985 से सरकार ने तीन वर्षीय आयात-निर्यात नीति घोषित की। यहां 1992-97, 1997-02 एवं 2002-07 की व्यापारिक नीति का उल्लेख किया गया हैं क्योंकि इससे पूर्व की नीतियों का अध्ययन की द ष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं है।

आयात-निर्यात नीति, 1992-97
(Export-Import Policy, 1992-97)

31 मार्च 1992 को सरकार ने एक नयी निर्यात-आयात नीति घोषित की। यह नीति अप्रैल, 1992 से मार्च, 1997 तक के पांच वर्षों के लिए घोषित की गई। इससे पूर्व निर्यात-आयात नीति तीन वर्ष के लिए बनायी जाती थी। यह नीति प्रतिबन्धों को न्यूनतम करने वाली, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अधिक स्वतंत्रता प्रदान करने वाली तथा प्रशासनिक नियंत्रणों को न्यूनतम करने की दिशा में एक प्रयास था। इस नीति का मुख्य उद्देश्य निर्यातों में भारी व द्धि करना था। ताकि भारतीय अर्थव्यवस्था स्वतः विकास कर सके। मार्च 1993 एवं 1995 में इस नीति में व्यापक संशोधन कर इसे और अधिक उदार बना दिया गया है।

निर्यात-आयात नीति के मुख्य उद्देश्य
(Main Objectives of Export-Import Policy)

निर्यात-आयात नीति 1992-97 के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित थे–

1. भारतीय विदेशी व्यापार को विश्वस्तर का करने के लिए ढांचा तैयार करना।
2. भारतीय उद्योगों में उत्पादकता, आधुनिकीकरण तथा प्रतिस्पर्द्धा क्षमता में व द्धि करना ताकि उनकी निर्यात क्षमताओं में व द्धि हो सके।
3. भारतीय उद्योगों द्वारा उत्पादित माल की गुणवता को अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों के अनुरूप बनाना ताकि विदेशों में भारतीय माल की साख (Image) बढ़े।
4. भारत के निर्यातों में व द्धि करने के उद्देश्य से निर्यातकों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बाजार से कच्चा माल, उपकरण, उपभोग योग्य वस्तुएं, पूंजीगत वस्तुएं तथा मध्यवर्ती माल (Intermediate Goods) आदि के आयात की व्यवस्था करना।
5. कुशल एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य आयात प्रतिस्थापना (Import Substitution) वस्तुओं के उत्पादन को प्रोत्साहित करना तथा विनियन्त्रित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार ढांचे के अन्तर्गत स्वावलम्बन का प्रयास करना।
6. भारतीय विदेशी व्यापार ढांचे में लाइसेन्स तथा अन्य भेदभाव नियंत्रणों को न्यूनतम करना अपना उन्हें पूर्ण रूप से हटाना।
7. भारत की अनुसंधान एवं विकास तथा तकनीकी क्षमताओं में तेजी से व द्धि करना।
8. निर्यात-आयात की संचालन प्रक्रिया का सरलीकरण करना।

आयात-निर्यात नीति, 1997-2002
(Export-Import Policy, 1997-2002)

भारतीय जनता पार्टी की सरकार के वाणिज्य मंत्री श्री रामकृष्ण हेंगड़े ने 12 अप्रैल, 1998 को आयात-निर्यात को और अधिक उदार बनाते हुए अनेक संशोधनों की घोषणा की है:

मुख्य उद्देश्य
(Main Objectives)

इस नीति के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित बताये गये।

1. लाइसेंस प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण करना।
2. आयात-निर्यात योजनाओं में लोचता (Flexibility) प्रदान करना।
3. 'विश्वास पर आधारित' (trust based) व्यवस्था की ओर बढ़ना।

4. कुछ विशेष क्षेत्रों में 'निर्यात प्रतिस्पर्द्धात्मक शक्ति' में आयी गिरावट को रोकना।
5. उत्पादकता एवं विनियोग को बढ़ावा देना।
6. आधारभूत लागतों में कमी लाना।

नयी आयात की मुख्य विशेषताएं अग्रलिखित थीं–

1. **आयात प्रतिबन्ध से मुक्त** (Free from Import Restrictions)–इस नीति में 340 वस्तुओं को प्रतिबन्धित आयात सूची से हटाकर 'खुले सामान्य लाइसेंस (OGL) सूची में हस्तान्तरित कर दिया गया। अब ये वस्तुएं खुले सामान्य लाइसेंस के अन्तर्गत आयात की जा सकती है। इन वस्तुओं में वीडियों कैमरा, कैम कॉर्डर, कुटीर व लघु उद्योगों का सामान व घरेलू सामान जैसे सिंदूर, शैंविग क्रीम आदि शामिल हैं।
2. **शुल्क अधिकार पास बुक योजना जारी** (DEPB Scheme to Continue)–इसके अन्तर्गत निर्यातकों द्वारा आयात के लिए आवश्यक वस्तुओं के आयात को शुल्क मुक्त रखा गया। DEPB योजना के अन्तर्गत 5% विशेषी सीमा शुल्क (Special Customs Duty) को समाप्त कर दिया गया।
3. **निर्यात प्रोत्साहन पूंजीगत माल** (Export Promotion Capital Goods (EPCG)–लघु-उद्योगों के लिए निर्यात प्रोत्साहन पूंजीगत माल योजना की निर्धारित सीमा 20 व 25 करोड़ से घटाकर 1 करोड़ कर दी गई। इसमें तैयार वस्त्र, खेल का सामान, चमड़े के खिलौने, कृषि उत्पाद, खाद्य प्रसंस्करण तथा रत्न एवं जवाहरात शामिल थे। सॉफ्टवेयर उद्योग के लिए यह सीमा 10 लाख रुपये कर दी गई।
4. **पुनर्स्थापना लाइसेंस योजना** (Replacement Licence Scheme)–इस योजना में चांदी व प्लेटिनियम को शामिल किया गया।
5. **निजी भंडार ग हों की स्थापना** (Set up of Private Bonded Warehouses)–निजी बॉण्ड वाले भंडार ग हों की स्थापना की अनुमति दी जायेगी। इससे लघु इकाइयों को राहत मिलेगी। कम मात्रा में कच्चा माल आयात करने में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए इन भंडार ग हों का आयात करने व भण्डार करने में उपयोग किया जा सकेगा। इनके माध्यम से अग्रिम लाइसेंस धारक नकारात्मक सूची की वस्तुओं को बेच सकेंगे। यह आशा की गई है कि इससे निर्यातकों को प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर कच्चा माल समय पर उपलब्ध हो जायेगा। विदेशों में बड़े विभागीय भण्डारों को भी ऐसे भण्डार ग हों की स्थापना की अनुमति दी गई। इससे निर्यात बढ़ेंगे।
6. **अग्रिम लाइसेंस धारकों के लिए समय सीमा में व द्धि** (Time limit raised for DEPB)–अग्रिम लाइसेन्स धारकों को निर्यात प्रतिबद्धता पूरी करने के लिए निर्धारित समय सीमा को एक बार बढ़ाने की अनुमति दी जायेगी।
7. **लाइसेंस प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण** (Decentralisation of Licensing Process)–लाइसेंस प्रक्रिया को सरल तथा विकेन्द्रित किया जायेगा। नियंत्रणों को न्यूनतम किया जायेगा एवं अग्रिम लाइसेन्स विश्वास व पूर्व साख के आधार पर जारी किये जायेंगे।
8. **मूल्य संवर्द्धन मानकों में संशोधन** (Revision of Value Addition Norms)–रत्न व आभूषणों के मूल्य संवर्द्धन मानकों में संशोधन किया गया है। स्वर्णाभूषण निर्यातक अधिकृत एजेंसी से खरीदे गये सोने पर ड्यूटी ड्रा बैंक सुविधा के हकदार होंगे।
9. **अग्रिम लाइसेंस का प्रावधान** (Provision of Advance Licensing)–सभी एक्सपोर्ट हाउस ट्रेडिंग हाउस, स्टार ट्रेडिग हाउस तथा सुपर ट्रेडिंग हाउस को स्वतः अग्रिम लाइसेंस देने का प्रावधान किया गया।
10. **लाइसेंस शर्तों में उदारता** (Liberal Licensing Condition)–उत्पादन योजनाओं पर आधारित लाइसेंस शर्तों को उदार बनाया गया। इसके अनुसार निर्यात-योग्य वस्तुओं के विवरण में यदि परिवर्तन किया जाता है तो तदनुसार लाइसेंस की शर्तों में भी परिवर्तन किया जा सकेगा। यदि ऐसे निर्यातक निर्यात प्रतिबद्धता पूरी कर देंगें तो उन्हें उसी वर्ष में बिना-विलम्ब के अतिरिक्त लाइसेंस मिल जायेगा।
11. **पूंजीगत वस्तुओं के संबंध में छूट** (Rebate Regarding Capital)–निर्यात सवंर्द्धन के लिए पूंजीगत वस्तुओं के मूल्य के 10% तक परिवर्तन होने पर भी संबंधित लाइसेंस वैध माना जायेगा।

12. **कृषि एवं कृषि उत्पाद का निर्यात** (Export of Agricultur and Agriculture Products)—कृषि व कृषि उत्पाद से जुड़ी निर्यातन्मुख इकाइयों अर्थात् निर्यात प्रसंस्करण इकाइयों के लिए न्यूनतम मूल्य संवर्द्धन मानकों में विनिमय दर के आधार पर संशोधन किया जा सकेगा।
13. **विशेष गुणवत्ता इकाईयां**—विशेष गुणवत्ता इकाइयों को विशेष आयात लाइसेंस जारी किए जायेंगे।
14. **तेल व तेल बीजो का निर्यात** (Export of Oil and Oilseeds)—तेल व तेल बीजों के निर्यात की छूट दी जायेगी।
15. प्रदर्शन के लिए ब्रांडेड आभूषणों के निर्यात करने की छूट होगी।
16. दवा कम्पनियों को निःशुल्क सैम्पल निर्यात करने की छूट होगी।
17. अग्रिम लाइसेंस योजना के अन्तर्गत कतरने एवं सजावटी वस्तुओं के लिए आयात की सीमा 2% से बढ़ाकर 5% कर दी गयी।
18. ई.पी.जी.सी. लाइसेंस धारकों को निर्यात प्रतिबद्धता के विस्तार और मूल्य सवंर्द्धन उत्पादों के निर्यात की अनुमति दी जायेगी। अभी इन्हें आयातित पूंजीगत कच्चेमाल से बनाए उत्पाद से ही निर्यात प्रतिबद्धताएं पूरी करनी होती थीं।
19. 500 कम्पनियों को निर्यात बढ़ाने के लिए तैयार किया जायेगा।

इस प्रकार यह नीति विश्व व्यापार संगठन (WTO) की आकांक्षाओं के अनुसार उदार बनायी गयी।

आयात-निर्यात नीति 1997-2002 में संशोधन

वर्ष 1998-99 में निर्यातों में आई गिरावट के कारण भारत सरकार में अगस्त एवं सितम्बर 1998 में कुछ उपायों की घोषणा की, जो इस प्रकार थे—

1. **विशष्ट अतिरिक्त शुल्क** (SAD) **से मुक्ति**—वर्ष 1998-99 के बजट में निर्यातों पर 4% विशिष्ट अतिरिक्त शुल्क (SAD) लागू किया गया था। निर्यात प्रतियोगितात्मकता बनाये रखने के लिए, सभी निर्यात संवर्द्धन योजनाओं के अन्तर्गत किये जाने वाले निर्यातों पर उक्त 4% विशिष्ट अतिरिक्त ड्यूटी (SAD) की छूट होगी। इस प्रकार ड्यूटी ड्रॉबैंक दरें (Duty Drawback Rate) निर्धारित करने के लिए SAD को ध्यान में रखा जायेगा।
2. **ई.पी.सी.जी. स्कीम का विस्तार**—निर्यात संवर्द्धन पूंजीगत वस्तुओं (EPCG) की स्कीम के शून्य शुल्क संबंधी प्रावधान के क्षेत्र को विस्तारित करके कुछ विशिष्ट बायों-तकनीकी एवं लघु-स्तरीय इंजीनियरिंग उद्योगों को इसके अन्तर्गत लाया गया।
3. **ब्याज की दर में कमी**—सरकार द्वारा लदानपूर्व और लदानोतर ऋण पर ब्याज की दर 11 प्रतिशत से घटाकर 9 प्रतिशत कर दी गयी।
4. **शुल्क प्रतिपूर्ति टर्मिनल उत्पाद शुल्क की वापसी**—टर्मिनल उत्पाद शुल्क की वापसी (शुल्क प्रति अदायगी) के रूप में सरकारी देय में यदि महीने से अधिक का विलम्ब होता है तो सरकार निर्यातकों को ब्याज का भुगतान करेगी।
5. **आयात के लिए प्रतिभूति**—एक वर्ष से अधिक उत्कृष्ट तथा निस्कलंक निर्यात कीर्तिमान रखने वाले विनिर्माता निर्यातकों को शुल्क मुक्त कच्ची सामग्री आदि के आयात के लिए प्रतिभूति के रूप में सीमा शुल्क विभाग को बैंक गारण्टी के बजाय निर्धारित शर्तों के अनुसार कानूनी बचत पत्र की सुविधा की अनुमति दी जायेगी इससे निर्यातक को न केवल लागत को कम करने में मदद मिलेगी वरन् कार्यशील पूंजी बढ़ाने में भी मदद मिलेगी।
6. **मदर बॉण्ड**—जिन निर्यातकों को उत्पाद शुल्क और सीमा शुल्क बॉण्ड अधिकारियों को बॉण्ड देने की अनुमति दी जाती है। उन्हें इसके बाद विभिन्न दायित्वों को पूरा करने के लिए अलग से बॉण्ड देने की जरूरत नहीं होगी। बल्कि उन्हें वार्षिक आधार पर एकल 'मदर बॉण्ड' देना होगा, जिसमें विभिन्न प्रयोजनों के लिए दिये जाने वाले अपेक्षित सभी बॉण्ड सम्मिलित होंगे। इससे निर्यातकों का समय और खर्च भी बचेगा।
7. **संबर्धनात्मक उपायों और प्रक्रियात्मक परिवर्तनों के बारे में सहमति**—निर्यातकों से ऐसे प्रतिवेदन मिल रहे हैं कि कुछ क्षेत्रों में निर्यात व द्धि में जो गिरावट आई है। उसके मुख्य कारण प्रक्रियात्मक कठिनाइयां और प्रतिस्पर्धा का ह्रास है निर्यातकों द्वारा सुझाये गये अनेक संबर्धनात्मक उपायों और प्रक्रियात्मक परिवर्तनों के बारे में सहमति हुई।

8. **माल की निकासी की अनुमति**—एक निश्चित कारोबार वाले विनिर्माता निर्यातकों को इसके बाद स्वतः प्रमाणन के आधार पर माल की निकासी की अनुमति दी जायेगी।

संशोधित आयात-निर्यात (31 मार्च 1999)

सरकार ने 31 मार्च 1999 को आयात-निर्यात नीति में संशोधन कर उपभोक्ता सामग्री के आयात में ढील दी। इन नीति को प्रमुख बातें निम्नांकित थीं—

1. 894 वस्तुओं को खुले सामान्य लाइसेंस (ओ.जी.एल.) के अन्तर्गत तथा 414 वस्तुओं को विशेष लाइसेंस के अन्तर्गत लाया गया।
2. सभी निर्यात प्रसस्करण क्षेत्रों (E.P.Z.) को 1 जुलाई, 1999 से मुक्त व्यापार क्षेत्र (P.T.Z.) में बदला जायेगा।
3. निर्यात में विलम्ब को दूर करने व लागतों में कमी करने के लिए लोकपाल (ओंबुडसमैन) की नियुक्ति की जायेगी।
4. पर्यटन विधि एवं उपचार जैसी सेवाओं को निर्यात घराने (एक्सपोर्ट हाउस) का दर्जा दिया जाएगा।
5. वस्त्र, रसायन व प्लास्टिक क्षेत्र के लिए निर्यात संवर्द्धन पूंजीगत सामग्री (EPCG) के अन्तर्गत प्रारम्भिक सीमा को 20 करोड़ रुपये से घटाकर 1 करोड़ रुपये कर दिया गया।
6. केवल 667 वस्तुएं ही आयात प्रतिबन्ध सूची में रखी गयीं।
7. ई.पी.सी.जी. योजना के अन्तर्गत निर्यात दायित्व दो वर्ष तक पूरा करने तथा अग्रिम लाइसेंस धारकों को 18 माह की अवधि और दी जायेगी।
8. प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए इलैक्ट्रॉनिक आवेदन की सुविधा दी जायेगी।
9. निर्यात संवर्द्धन के लिए पूंजीगत वस्तुओं की आयात योजना के अन्तर्गत शून्य शुल्क आयात की सुविधा में कई और वस्तुओं की सीमा तथा रत्न तथा आभूषणों के निर्यात के लिए अतिरिक्त सुविधाएं उपलब्ध कराई जायेंगी।
10. निर्यात अधोसंरचना को मजबूत बनाने के लिए राज्यों के लिए 500 करोड़ रुपये का आबंटन।
11. नये उत्पादों के विकास और नए बाजारों का पता लगाने के उद्देश्य से नमूनों के आयात और निर्यात की स्वीकार्य सीमा में ढील।
12. समुद्री उत्पाद और इलैक्ट्रॉनिक क्षेत्रों में शुल्क ई.पी.सी.जी. स्कीम के तहत पूंजीगत माल के आयात पर कोई अतिरिक्त सीमा शुल्क नहीं लिया जाएगा।
13. रूस को रुपये में किये जाने वाले निर्यात के लिए मूल्य संवर्द्धन मानदण्ड 100 प्रतिशत से घटकर 33 प्रतिशत किया गया।
14. जिन मामलों में उत्पादन मानदण्ड मौजूद नहीं है, वहां स्वघोषणा आधार पर लाइसेंस जारी करने का प्रावधान।
15. जिन निर्यातकों ने निर्यात सदन, व्यापार सदन, स्टार व्यापार सदन, सुपर व्यापार सदन का दर्जा लगाकर तीन वर्षों तक प्राप्त कर लिया है, उन्हें स्वर्णिमस्तर प्रमाण-पत्र दिया जाएगा, जिससे वे ऐसा स्तर प्राप्त करने पर मिलने वाले लाभ निरन्तर प्राप्त करने के हकदार होंगे चाहे बाद के वर्षों में उनका निर्यात निष्पादन कम ही क्यों न हो।

नई आयात-निर्यात नीति की घोषणा (31 मार्च 2000)

निर्यात बढ़ने के उद्देश्य से सरकार ने 31 मार्च, 2000 को नई आयात-निर्यात नीति घोषित की इस नीति के अन्तर्गत सरकार ने उदार निवेश वाले विशेष आर्थिक क्षेत्रों में परिवर्तन की घोषणा की। इस नीति में दूध, कागज, सादा नमक, सिगरेट और इलैक्ट्रॉनिक सामानों के आयात से मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटा दिया गया। इस नीति में रत्न, आभूषण, परिधान तथा ग्रेनाइट के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए विशेष उपाय घोषित किए गए। विशेष आर्थिक क्षेत्रों में लगने वाली इकाइयों में 100% तक विदेशी भागीदारी की छूट दी गई। इन इकाइयों पर आयात-निर्यात की कोई बन्दिश नहीं होगी।

आयात निर्यात के प्रमुख बिन्दु

1. विश्व व्यापार संगठन (W.T.O.) को दिये गये वचन के अनुसार 714 वस्तुओं को मात्रात्मक प्रतिबन्ध की सूची से हटा लिया गया।

2. घरेलू उद्योग को शुल्क संरक्षण व एंटी डंपिग, सब्सिडी विरोधी प्रणाली के तहत सुरक्षा जारी रहेगी।
3. विशेष आयात लाइसेंस को 1 अप्रैल, 2001 तक समाप्त कर दिया जायेगा।
4. फर्मिस्युटिकल्स और जैव प्रौद्योगिकी क्षेत्र की कम्पनियों को उनके निर्यात के फ्री ऑन बोर्ड की कीमत के एक प्रतिशत तक शुल्क मुक्त अनुसंधान और विकास उपकरण और वस्तुओं के आयात की अनुमति दी गई।
5. शुल्क मुक्त प्रतिपूर्ति प्रमाणपत्र योजना अब 5000 से अधिक उत्पादों पर लागू होगी।
6. सभी बन्दरगाहों पर 30 जून, 2000 तक से सारा कामकाज इलैक्ट्रॉनिक आधार पर किया जायेगा।
7. 10 वर्षों से कम काम में ली गयी पूंजीगत वस्तुओं के बिना लाइसेंस के आयात की अनुमति होगी।
8. सिल्क के आयात को विशेष आयात लाइसेंस के अन्तर्गत स्वीकृति प्राप्त होगी।
9. राज्य सरकारों की आरे से किए जाने वाले निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए 250 करोड़ के कोष की स्थापना की जायेगी।
10. गुजरात के पोसितरा और तमिलनाडु के तूतीकोरण के पास नानगुनेरी में विशेष आर्थिक जोन स्थापित किये जायेंगे। मुम्बई, कॉडला, विशाखापट्टनम और कोच्चि में स्थित वर्तमान निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्रों को विशेष आर्थिक क्षेत्रों में बदला जायेगा इस क्षेत्र में स्थापित कम्पनियों को देश के बाहर से उपभोक्ताओं का दर्जा दिया जायेगा।

नई निर्यात-आयात नीति 2002-2007
(New Export-Import Policy 2002-2007)

बेशक पहले वाली व्यापार नीतियों में काफी परिवर्तन किए गए हैं, परन्तु वर्तमान व्यापार नीति अर्थात् नई निर्यात-आयात नीति ने भारत के विदेशी व्यापार का काफी अधिक रूपान्तरण किया है। इस व्यापार नीति का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है।

1. **भूमिका** (Introduction)—भारत सरकार के वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री ने नई निर्यात आयात नीति की घोषणा 31 मार्च, 2002 को की गई है। यह नीति 5 वर्षों की अवधि अर्थात् 2002-2007 के लिए लागू की गई है। इस प्रकार नई नीति दसवी योजना की पूरी अवधि में लागू होगी। नई नीति की मुख्य विशेषता यह हे कि इसने देश की निर्यात-आयात नीति के आयात उदारीकण पक्ष के स्थान पर निर्यात-प्रोत्साहन को सर्वाधिक महत्व दिया है। इन नीति ने प्रायः सभी वस्तुओं के निर्यात पर मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त कर दिए हैं। भारत सरकार ने नई नीति में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगी बाजार में भारतीय निर्यातकर्त्ताओं को अधिक प्रतियोगी बनाने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण सुविधाएं एवं रियायतें दी हैं। यह नीति उस परिप्रेक्ष्य में जारी की गई है। जिसमें निर्यात की व द्धि दर बहुत ही अधिक निराशाजनक अर्थात केवल 1.6% रही है। अतएव निर्यात दर में व द्धि करना भारतीय अर्थव्यवस्था की अनिवार्यता है।
2. **उद्देश्य** (Objectives)—नई निर्यात आयात नीति के मुख्य उद्देश्य दो हैं:—
   1. विश्व व्यापार में भारत के भाग को 0.67% से बढ़कार 2007 तक 1% करना है। इसका अभिप्राय यह है कि दसवी योजना की पांच वर्ष की अवधि में 4,600 करोड़ डॉलर के वर्तमान निर्यातों को बढ़ाकर लगभग दुगना और 8000 करोड़ डॉलर से अधिक करना है।
   2. निर्यातों की व द्धि दर को बढ़ाकर 11.9% प्रतिवर्ष करना है।
3. **नई निर्यात-आयात नीति** (2002-2007) **की मुख्य विशेषताएं** [Sailent Features of New Export-Import (Exim) Policy (2002-2007)]—नई निर्यात-आयात नीति की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

   निर्यात एवं रोजगार प्रेरक (Export and Employment Oriented)—नई निर्यात आयात नीति निर्यात एवं रोजगार प्रेरक है। इस लक्ष्य की पारित के लिए निम्नलिखित उपाय किए गए हैं:—
   i. कुछ संवेदनशील वस्तुओं को छोड़कर निर्यात पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध पूरी तरह हटा लिए गए हैं।
   ii. कृषि एवं कृषि आधारित निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए 32 कृषि निर्यात क्षेत्र (Agro-Export Zones) स्थापित किए गए हैं।

iii. कृषि निर्यातों का विविधीकरण करने के लिए फलों, सब्जियों, फूलों एवं डेयरी उत्पादों के निर्यात के लिए परिवहन सहायता (Transport Subsidy) दी जाएगी।

iv. खादी, ग्रामीण उद्योग (KUIL) के अन्तर्गत आने वाले कुटीर उद्योगों के निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए बाजार प्रवेश प्रेरणा (Market Access Initiative) के अन्तर्गत 5 करोड़ रुपये के कोष की व्यवस्था की गई है।

v. नई नीति ने कुटीर उद्योग तथा हस्तशिल्प के निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष सुविधाएं दी है। हस्तशिल्प क्षेत्र के उद्योग अपने उत्पादनों की वेबसाइट बनाने के लिए MAI कोष से सहायता प्राप्त कर सकेंगे।

vi. इन नीति के अनुसार सरकार ने कुटीर और हस्तशिल्प की निर्यात ईकाइयों को 5 करोड़ रुपये का निर्यात करोबार करने पर ही निर्यात घराने (Export House) की सुविधाएं देने का फैसला किया है। जबकि अन्य इकाइयों को यह सुविधा 15 करोड़ रुपये के निर्यात पर उपलब्ध होती हैं।

vii. नई नीति में निर्यात में कुछ खास शहरों की विशेष भूमिका देखते हुए वहां के निर्यातकों के लिए कई लाभों की घोषणा की गई है। हौजरी के लिए तिरुपुरा ऊनी कपड़ों के लिए, लुधियाना तथा पानीपत को उत्कृष्ट निर्यात वाला शहर घोषित किया गया है। इन्हें निर्यात संवर्धन के लिए विशेष सुविधाएं दी जाएंगी।

viii. नई नीति में कुटीर हस्तशिल्प तथा लघु उद्योग क्षेत्र को विशेष महत्व दिया गया है। इससे ग्रामीण इलाकों में रहने वाले 80% से अधिक कामगरों को लाभ मिलेगा।

4. **विशेष आर्थिक क्षेत्रों को अधिक सुविधाएं** (More Facilities to Special Economic Zones)—नई दीर्घकालीन निर्यात-आयात नीति की मुख्य विशेषता भारत के विशेष आर्थिक क्षेत्रों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतियोगी बनाना हैं इन क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों को आयकर, उत्पादन कर तथा सीमा शुल्क की छूट दी जाएगी। इन क्षेत्रों में पहली बार बैंकों की विदेशी कारोबार शाखाएं (Overseas Banking Units—OBU) खोलने की इजाजत दी जाएगी। ये वास्तव में भारत में स्थित विदेशी बैंकों की शाखाएं होगी। भारतीय बैंक भी ये शाखाएं खोल सकेंगे। इन शाखाओं पर साख नियंत्रण के प्रावधान लागू नहीं होंगे। विशेष आर्थिक क्षेत्रों में तीन साल से कम अवधि के लिए विदेशी वाणिज्यिक ऋणों (External Commercial Borrowings) की अनुमति दी जाएगी। इसके फलस्वरूप इन क्षेत्रों की इकाइयों को कार्यशील पूंजी के लिए अन्तर्राष्ट्रीय ब्याज पर पर ऋण मिल सकेंगे।

5. **तकनीकी प्रेरक** (Technology Oriented)—नई निर्यात-आयात नीति में निर्यात प्रेरक उद्योगों के तकनीकी विकास के लिए कई प्रावधान किए गए हैं।

i. **इलैक्ट्रॉनिक हार्डवेयर उद्योग** (Electronic Hardware Industries)—इलैक्ट्रॉनिक हार्डवेयर टैक्नोलॉजी पार्क योजना (EHTP) में यह संशोधन किया गया है कि वहां शून्य शुल्क योजना लागू की जा रही है। इसका अभिप्राय यह है कि इन पार्कों में स्थापित हार्डवेयर उद्योगों पर कोई सीमा शुल्क नहीं लगाया जाएगा तथा निर्यात की कोई बाध्यता नहीं होगी।

ii. **रसायन तथा दवाई उद्योग** (Chemical and Pharmaceutical Industries)—इन उद्योगों के निर्यात को कई सुविधाएं दी जाएगी जैसे—ये किसी भी मात्रा में सैम्पलों का निर्यात कर सकेंगे। दवाइयों के पंजीकरण के लिए दी जाने वाली फीस में से 50% वापिस कर दी जाएगी।

6. **विकास प्रेरक** (Growth Oriented)—नई नीति विकास प्रेरक नीति है। इस नीति के अन्तर्गत निर्यातों में व द्धि करने के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जाएगेः—

i. विदेशों में स्थित भारतीय मिशनों में भारतीय निर्यातकर्त्ताओं के लिए व्यावसायिक केन्द्रों की स्थापना की जाएगी।

ii. अफ्रीका तथा राष्ट्रकुल के देशों में भारतीय उत्पादनों का बाजार बढ़ाने के लिए नए कार्यक्रम लागू किये जाएंगे।

iii. नई नीति में सात अफ्रीकी देशों अर्थात् नाईजीरिया, दक्षिणी अफ्रीका, मॉरीशस, केन्या, इथोपिया, तंजनिया, और घाना से विदेशी व्यापार के विशेष संबंध बढ़ाए जाएंगे।

iv. अफ्रीकी देशों को निर्यात करने वाले निर्यातकर्त्ताओं को 5 करोड़ रुपये का निर्यात करने पर ही निर्यात घराने का दर्जा दिया जाएगा।

v. **कार्यविधियों का सरलीकरण** (Procedural Simplification)—नई निर्यात-आयात नीति में कार्यविधि को काफी सरल बनाया गया है। विदेशी व्यापार के डायरेक्टर जनरल (Director General of Foreign Trade) तथा कस्टम की सुविधा के लिए आयातों का 8 डिजिट में वर्गीकरण (Eight Digits classification) कर दिया गया है। कारोबार लागत कम करने के लिए निर्यात प्रक्रिया को सरल बनाया गया है। निर्यात दस्तावेजों के लिए प्रत्यक्ष समझौता वार्ता की स्वीकृति दी जाएगी। इसके फलस्वरूप निर्यातकर्ताओं के लिए बैंक कमीशन की बचत हो सकेगी। निर्यातों से प्राप्त होने वाली विदेशी मुद्रा की अवधि को 180 दिन से बढ़ाकर 360 दिन कर दिया गया है।

7. **विश्वास आधारित** (Trust Based)—नई नीति में निर्यातकर्त्ताओं को प्रोत्साहित करने तथा उनके विश्वास को जीतने के लिए निम्नलिखित उपाय किए गए हैं:—

i. सैम्पलों के आयात (Import) और निर्यात (Export) का उदारीकरण कर दिया गया है।

ii. प्रमाणिक चूककर्ता (Bonafide Defaulter) के खिलाफ दंडनीय ब्याज दर 24% से घटाकर 15% कर दी गई है।

iii. निर्यात आय प्राप्त न होने की दिशा में कोई जुर्माना नहीं लगाया जाएगा।

iv. निर्यातकर्ताओं की निर्यात तिथि में कोई परिवर्तन न करने के लिए उनके स्टॉक को जब्त नहीं किया जाएगा।

8. **शुल्कों को निष्प्रभावी बनाने की व्यवस्था** (Duty Neutralization Methods)—नई नीति में शुल्क को निर्यात की द ष्टि से निष्प्रभावी बनाने के लिए डी.ई.पी.बी. (Duty Entitlement Pass Book) अग्रिम लाइसेंस, ई.पी.सी.जी. और अन्य योजनाओं को बेहतर बनाकर जारी रखने की घोषणा की गई है। पूंजीगत पदार्थों के निर्यात प्रोत्साहन (EPCG) लाइसेंस के 100 करोड़ रुपये के मूल्य को 12 वर्ष की अवधि में प्राप्त करना है।

नई निर्यात-आयात नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Evaluation of New Export-Import Policy)

नई निर्यात आयात नीति वास्तव में केवल निर्यात नीति है। आयातों को पहले से ही मात्रात्मक प्रतिबन्धों तथा लाइसैंसिग बाधाओं से मुक्त किया जा चुका है। नई नीति ने निर्यातों को स्वतंत्र, सरल तथा संभवतः अधिक लाभदायक बना दिया है। परन्तु इस नीति की सफलता वास्तव में इसके कार्यकरण एवं स्थिरता पर निर्भर करती है। **श्री मुरासोली मारन** के शब्दों में, ''हमने निर्यात प्रक्रिया को इतना सरल बना दिया है कि छोटे कामगर भी निर्यात करने के लिए प्रेरित होंगे'' (We have simlified the process of exporting to such an extent that even the small artisans feel motivate-Murasoli Maran.)

इस नीति के निम्नलिखित गुण हैः—

1. **व्यापक** (Comprehensive)—नई निर्यात आयात नीति का क्षेत्र बहुत व्यापक है। यह सभी क्षेत्रों जैसे कृषि कुटीर उद्योग, हस्तशिल्प तथा लघु उद्योगों क्षेत्रों आदि पर लागू होती है। इस प्रकार इस नीति के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली 80% जनसंख्या लाभान्वित होगी। श्री मुरासोली मारन के शब्दों में, ''हमने केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, निर्यातकों तथा आम जनता के बीच एक दीर्घकालीन साझेदारी स्थापित करने का प्रयत्न किया है'' (I have tried to forge a lasting partnership among the union Government, State Government, Exporters and people at large-Murasoli Maran.)

2. **विकास** (Growth Oriented)—नई नीति विकास प्रेरक, प्रगतिशील एवं निर्यातवादी नीति है इसके फलस्वरूप भारत के व्यापार घाटे को पूरा होने से सहायता मिलेगी। भारत का व्यापार घाटा अप्रैल-अक्टूबर 2001 की अवधि में आयतों के बढ़ने तथा निर्यातों के कम होने के कारण 550 करोड़ डालर हो गया है।

3. **कृषि निर्यात में व द्धि** (Boost in Agriculture Export)—नई नीति में कृषि उत्पादनों के लिए लाभदायक कीमत प्राप्त करने लिए कृषि पदार्थों के निर्यातों को विशेष स्थान दिया गया है। भारत में लगभग 10 वर्ष पूर्व आरम्भ किए गए आर्थिक उदारवाद की नीतियों में कृषि क्षेत्र को दिए जाने वाले महत्व का नितांत अभाव था। नई निर्यात-आयात नीति का उद्देश्य निर्यातों को प्रोत्साहित करना हैं नीति में विशेष रूप से कृषि निर्यातों के प्रोत्साहन को महत्व दिया गया है।

4. **कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना** (Setting up of Agro-Export Zones)—नई नीति में कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना को प्रेरित करने के लिए और अधिक सुविधाओं की घोषणा की गई है। यद्यपि इन क्षेत्रों को स्थापित करने की आवश्यकता

काफी समय से महसूस की जा रही थी, परन्तु इनका विशेष विकास नहीं हो पा रहा था। नई नीति में दी जाने वाली सुविधाओं के फलस्वरूप इन क्षेत्रों की स्थापना को अधिक प्रोत्साहन मिलेगा।

5. **नए बाजारों में व द्धि** (Export to New Markets to go up)—नई नीति के पूर्ण रूप से लागू होने पर यह आशा की जाती है कि अफ्रीका और लेटिन अमेरिका के नए बाजारों में किए जाने वाले निर्यातों में 15 से 20% व द्धि होने की संभावना है। इसका कारण यह है कि यूरोप और अमेरिका को किए जाने वाले निर्यातों की दिशा परिवर्तित होकर नए बाजारों की ओर हो सकेगी। जहां भारतीय उत्पादनों की अधिक मांग की संभावना है।

6. **विदेशी बैंकिंग इकाइयों के कारण लेन-देन में सुविधा** (Off Shored Branches will lead to Easy Transaction)—नई आर्थिक नीति में विशेष आर्थिक क्षेत्रों में विदेशी बैंकिंग इकाई (OBU) स्थापित करने की अनुमति दे दी गई हैं। इसके फलस्वरूप निर्यातकों को ब्याज की सस्ती दर पर ऋण प्राप्त हो सकेंगे। इन शाखाओं द्वारा निर्यात संबंधी बैंकिंग लेन देन सरलता अैर कम खर्च पर हो सकेंगे। देशी बैंक भी विशेष आर्थिक क्षेत्रों में शाखाएं खोल सकेंगे। इन्हें भी वे सभी सुविधाएं मिल सकेंगी जो विदेशी बैंकों की शाखाओं को मिलेगी।

7. **हार्डवेयर उद्योग को प्रोत्साहन** (A Booster Shot for Hardware)—नई नीति ने घरेलू इलैक्ट्रॉनिक हार्डवेयर उद्योग की सभी मांगों को स्वीकार करते हुए उस उद्योग को विश्व स्तर पर प्रतियोगी बनाने के लिए आवश्यक माने जाने वाले सभी संभव उपायों की घोषणा की है। इस नीति में खासतौर से लघु स्तर पर स्थापित उन हजारों हार्डवेयर इकाइयों को काफी राहत दी है। जो प्रतियोगिता का सामना करने में असमर्थ थी।

8. **रत्नाभूषण उद्योग को विशेष राहत** (Dose of Glitter for Jewellery)—नई निर्यात-आयात नीति ने रत्नाभूषण उद्योग को विशेष रियायते दी हैं। तराशे हीरों पर आयात शुल्क माफ कर दिया गया। है। सामान्य आभूषणों संबंधी मूल्य व द्धि को 10% से कम करके 7% कर दिया गया है। इसके फलस्वरूप आभूषण विदेशों में सस्ते बिक सकेंगे। हैदराबाद एवं जयपुर हवाई अड्डों से व्यक्तिगत रूप से आभूषणों को विदेशों में ले जाने की इजाजत दे दी गई है।

संक्षेप में, नई निर्यात-आयात नीति से यह उम्मीद की जाती है कि इसमें किए गए उपायों से निर्यात में अच्छी व द्धि होगी परन्तु इन नीति की सफलता इसके प्रभावपूर्ण कार्यकरण पर निर्भर करती है।

31 मार्च, 2002 को घोषित आयात-निर्यात की सफलता के संबंध में मिश्रित प्रतिक्रिया हुई है। देश के प्रमुख वाणिज्य एवं उद्योग-मंडलों ने इस नीति का स्वागत करते हुए उम्मीद जताई है कि इसमें किए गए उपायों से आने वाले वर्षों में निर्यात में अच्छी बढ़ोत्तरी होगी।

उद्योग मंडलों का कहना है कि नई निर्यात-आयात नीति में अनेक साहसिक कदमों की घोषणा की गई है। उनका मानना है कि इन कदमों के बलबूते पर देश का निर्यात निश्चित ही बढ़ेगा।

एसोसिएटेड चैम्बर्स ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज ऑफ इण्डिया (एसौचैम) के अध्यक्ष **के.के. नोहरिया** ने कहा कि घोषणाएं निश्चित ही बहुत सकारात्मक है। इनसे आगामी पांच वर्षों में 12% की वार्षिक नियति की व द्धि की उम्मीद के सहारे विश्व बाजार के एक प्रतिशत हिस्से पर काबिज होने की संभावना बढ़ी हैं। नोहरिया ने कृषि निर्यात, हस्तशिल्प एवं अन्य परम्परागत और गैर परम्परागत उत्पादों पर विशेष ध्यान देने तथा विशेष आर्थिक क्षेत्रों को मजबूती प्रदान करने के उपायोग की सहारना की है।

भारतीय वाणिज्य एवं उद्योग मंडल महासंघ (फिक्की) से सेक्रेटरी जनरल अमित मित्रा का मत है कि निर्यात पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटाए बिना निर्यात में भारी बढ़ोत्तरी नहीं की जा सकती।

भारतीय उद्योग महासंघ (C.I.I.) ने कहा है कि नई नीति में घोषणाओं को क्रियान्वित करके ही विश्व व्यापार में एक प्रतिशत के हिस्से को पाया जा सकेगा। सी.आई.आई. के मतानुसार निर्यात संवर्द्धन गतिविधियों में राज्यों को शामिल कर एक अच्छा कदम उठाया गया है। सी.आई.आई. ने चमड़ा टेक्सटाइल्स, इलेक्ट्रॉनिक्स और, हीरे व जवाहरात के क्षेत्र पर ध्यान दिये जाने के उपायोग की भी प्रशंसा की है।

भारतीय निर्यात संगठनों के महासंघ (फियो) ने नीति को विकासोन्मुखी और निर्यात के अनुकूल बताते हुए कहा है कि इससे देश के व्यापार घाटे को कम करने में मदद मिलेगी, जो अप्रैल अक्टूबर 2001 के दौरान के बढ़ने और निर्यात में गिरावट के चलते 5.5 अरब डॉलर पर पहुंच गया।

लक्ष्यों के अनुरूप लाभ मिलने में संशय
(Doubt Regarding Achievement of Targets)

यद्यपि नई निर्यात-आयात नीति (2002-2007) की विभिन्न पक्षों ने सहारना की है, लेकिन कुछ लोगों को आशंका है कि इस नीति के लक्ष्य शायद ही प्राप्त किये जा सकें। जयसिंह कोठारी के अनुसार, जिस आयात-निर्यात नीति की घोषणा की है वह आज की मांग व WTO की शर्तों की पूर्ति भले ही करती हो पर विश्व व्यापार की स्थिति देखते हुए लक्ष्यों के अनुरूप लाभ मिल पाएगा, इसमें संशय नजर आता है। लगातार घटते निर्यातों के कारण 11.9% निर्यात बढ़ाने का लक्ष्य भले ही एक वर्ष तक हासिल कर लिया जाए पर उसके बाद ऐसा होना मुश्किल नजर आता है। चीन सहित अनेक देशों ने उत्पादकता बढ़ाकर निर्यात क्षेत्र में जो जगह बनाई है उस प्रतिस्पर्द्धा से लड़ना अब उतना आसान नहीं है जितना सरकार व व्यापारी वर्ग सोचता है। दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों को मुद्रा अवमूल्यन का भारी लाभ निर्यात बढ़ाने में मिला और चीन भी WTO का सदस्य बनने के बाद अपनी मुद्रा के अवमूल्यन की बात सोच रहा है।

ऐसा होते ही हमारे उत्पादकों को कड़ी प्रतिस्पर्द्धा करनी होगी। तीन वर्ष पूर्व वाणिज्य मंत्री ने 700 उत्पादों का आयात खोला था तब निर्यात में बीस प्रतिशत व द्धि की बात कही थी परन्तु उन लक्ष्यों को सरकार क्यों नहीं पूरा कर पाई, किसी को पता नहीं।

केन्द्र सरकार नीतियों का निर्माण पर अनेक बातों का क्रियान्वन राज्य सरकारों पर डाल देती हैं दोनों ही सरकारों के प्रशासन तंत्र की हालत इतनी खस्ता है कि कोई काम करना ही नहीं चाहती। नीतियां केवल कागजों तक सीमित रह जाती है। पूरे सरकारी 'सिस्टम' में कही भी चले जाइए अवरोध ही अवरोध की स्थिति नजर आती है जबकि स्वतंत्र अर्थव्यवस्था कमी अवरोध से नहीं लड़ी जाती। कोई भी सरकार विभाग निर्यातकों को यह सूचना उपलब्ध कराने में सक्षम नहीं है कि अमुक देश में इस वस्तु की मांग है और किस वस्तु की गुणवता का क्या भाव मिल सकता है तो फिर नये बाजार तलाशने के सरकारी प्रयास में संदिग्धता साफ नजर आती है।

वाणिज्य मंत्री ने कृषि, कुटीर, उद्योग, हस्तशिल्प व लघु उद्योग के विकास पर विशेष पर जोर देने की बात कही है पर ऐसे उद्योगों की वास्तविक स्थिति जैसी सरकार समझती है उसमें अधिक गंभीर है। हीरा उद्योग को बढ़ावा देने के लिए घोषणाएं की गई हैं लेकिन जब तक अमरिका सहित विकसित देशों की अर्थव्यवस्था में अपेक्षित सुधार नहीं आ जाता, लक्ष्य के अनुरूप लाभ मिलना मुश्किल है।

नीति की घोषणा सही मायने में किसी राजनीतिक दबाव में ग्रसित नजर आती है, उद्योगों या व्यापारों को बढ़ाने की नीयत से नहीं और वैसे ही परिणाम इसके भविष्य में शायद हम देखेंगे।

निष्कर्ष—सरकार ने निर्यात बढ़ाने की दिशा में अपनी ओर से सरल और उदार नीति बनाकर पहल कर दी है। अब आगे का काम निर्यातकों का है। सरकार की नीति अब निर्यातकों पर 'शंका करने की बजाय विश्वास' करने में बदल रही है। अब पूरा दारोमदार निर्यातकों पर है कि वे किस हद तक विश्व बाजार में अपनी पैठ बढ़ाते हैं।

राजस्थान के पूर्व मुख्य सचिव मिट्ठालाल मेहता के अनुसार एकिजम नीति सही दिशा में किया गया प्रयास है। इससे देश का निर्यात तीव्र गति से बढ़ेगा। विशेष आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना, खाद्यान्न निर्यात की लागत कम करने के लिए परिवहन सहायता उपलब्ध कराना व लघु व हस्तशिल्प उद्योग को प्रोत्साहन देना देश के हित में उठाया गया कदम है।

विशेष आर्थिक क्षेत्रों के उद्यमियों को विशेष सुविधाएं देने से निवेश प्रोत्साहित होगा तथा उद्योगों की संख्या व निर्यात में व द्धि होगी। राज्यों के साथ मिलकर निर्यात प्रोत्साहन के लिए कदम उठाने से निर्यात तेजी से बढ़ेगा।

मेहता के अनुसार—कृषि उत्पादों का निर्यात खोल देने से कोई विशेष अन्तर नहीं आएगा क्योंकि देश के कुछ ही कृषि उत्पादों का निर्यात होता है। अन्य उत्पादों के मूल्य अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य से काफी अधिक है। इसलिए वे प्रतिस्पर्द्धा नहीं कर सकते। सरकार को इन उत्पादों की लागत कम करने के लिए कदम उठाने चाहिए। **मेहता** के अनुसार, एकिजम नीति काफी उदार व निर्यातोन्मुखी है। परन्तु इसका क्रियान्वन ठीक तरीके से होना चाहिए। यदि इनका समयबद्ध क्रियान्वन नहीं किया गया तो नीति में की गई घोषनाएं अपेक्षा पर खरी नहीं उतरेंगी। सरकार को राजस्थान में स्थित निर्यात संवर्द्धन औद्योगिक पार्कों को विशेष आर्थिक क्षेत्रों का दर्जा देकर इनमें लगे उद्योगों को समान सुविधाएं प्रदान करनी चाहिए। इसके साथ ही राज्य में विशेष आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना पर भी जोर दिया जाना चाहिए।

निर्यात-आयात (EXIM) नीति 2003-2004

तत्कालीन वाणिज्य एवं उद्योग तथा कानून एवं न्याय मंत्री अरुण जेटली ने 31 मार्च, 2003 को वित वर्ष 2003-2004 के लिए नई निर्यात-आयात (एकिजम) नीति जारी की। इस नीति में सरकार में निर्यात-आयात को और सरल बताते हुए मसालों और सब्जियां सहित 69 वस्तुओं से आयात प्रतिबन्ध समाप्त करने और देश से सेवाओं और कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए विशेष प्रोत्साहन पैकेज की घोषणा की।

श्री जेटली ने सेवा क्षेत्र में पहली बार, स्वास्थ्य, मनोरंजन, पर्यटन और पेशेवर सेवाओं के निर्यात प्रोत्साहन के लिए कुछ शर्तों के साथ जरूरी सामान के शुल्क मुक्त आयात की अनुमति देने की घोषणा की। इस नीति में सेवा और कृषि क्षेत्र के निर्यात को विकास की महत्वपूर्ण क्षेत्र बताते हुए कृषि निर्यात क्षेत्रों को प्रयोजित करने के लिए कम्पनियों को प्रोत्साहन देने का प्रस्ताव हैं। इसके अलावा चुनिन्दा कृषि उत्पादों के लिए शुल्क पात्रता पास बुक (DEPB) दरें तय करने में उर्वरक, कीटनाशक और बीज आदि पर खर्च हुए को ध्यान में रखा जाएगा।

कृषि निर्यात को बढ़ावा देने के लिए कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना में तेजी लाई जाएगी ताकि वैश्वीकरण का लाभ देश के किसानों तक पहुंचाया जा सके।

लघु औद्योगिक क्षेत्र को बुनियादी और पक्का करने के लिए पूंजीगत समान निर्यात प्रोत्साहन योजना को और अधिक आकर्षक बनाया गया है तथा SEZs में निवेश बढ़ाने के नये उपाय किये गये हैं।

देश की अर्थव्यवस्था में सेवा क्षेत्र के महत्वपूर्ण योगदान को मान्यता देते हुए जेटली ने निर्यात क्षेत्र में भी सेवा व्यापार को प्रोत्साहन की घोषणा की। पिछले तीन वर्षों में सेवाओं के निर्यात से जितनी विदेशी मुद्रा आय हुई, उसके औसतन 10% मूल्य तक इसमें काम आने वाले सामानों, कलपुर्जों और उपकरणों के आयात की अनुमति होगी। सेवाओं के कई क्षेत्र ऐसे भी हैं, जिन्होंने निर्यात की अभी शुरुआत भी नहीं की है। इस प्रोत्साहन से उनका रुझान भी निर्यात की ओर बढ़ेगा।

निर्यात की एवज में सेवा क्षेत्र के लिए 10% तक निःशुल्क आयात की यह सुविधा न्यूनतम 10 लाख रुपये की विदेशी मुद्रा कमाने पर मिलेगी। इससे देश में विभिन्न सेवाओं के साथ-साथ स्वास्थ्य सेवाओं को भी बढ़ावा मिलेगा।

वाणिज्य मंत्री जेटली ने अग्रिम लाइसेंस योजना का लाभ पर्यटन क्षेत्र को भी देने की घोषणा करते हुए कहा है कि मान्यता प्राप्त तीन सितारा और उससे ऊंची श्रेणी के होटलों तथा इस क्षेत्र के अन्य पंजीकृत सेवादाताओं को पिछले तीन वर्षों में अर्जित विदेशी मुद्रा का 5% तक जरूरत के विभिन्न सामानों के शुल्क मुक्त आयात की अनुमति होगी।

आयात-निर्यात नीति, 2003-04 की प्रमुख विशेषताएं
(Main Declaration of Export-Import Policy, 2003-04)

31 मार्च, 2003 को घोषित आयात-निर्यात नीति में निर्यात प्रोत्साहन के लिए निम्नलिखित घोषनाएं की गई हैं:

1. सेवा क्षेत्र के निर्यात को बढ़ाने के लिए सेवा क्षेत्र में न्यूनतम 10 लाख रुपये तक की निर्यात आय पर शुल्क मुक्त आयात की मंजूरी दी गई है।
2. रत्न व आभूषण व परिधान और वाहनों का निर्यात बढ़ाने के लिए रियायती पैकेजों की घोषणा की गई।
3. खरीफ व कृषि उत्पादों एवं कच्चे कपास के निर्यात पर लगी रोक हटाई गई।
4. निर्यात एवं आयात संबंधी कड़े नियमों एवं प्रावधानों को शिथिल किया गया है।
5. निर्यात संवर्द्धन साख गारन्टी (EPCG) योजना को अधिक नरम एवं आर्कषण बनाया गया हैं।
6. कृषि निर्यात बढ़ाने के उपायों पर विशेष बल दिया गया है।
7. 25 करोड़ रुपये के निर्यात कारोबार और 25% निर्यात व द्धि पर विशेष दर्जा एवं शुल्क मुक्त आयात की सुविधा, दी जायेगी।
8. वार्षिक अग्रिम लाइसेंस की सुविधा जारी रहेगी।
9. हीरा व आभूषण निर्यातकों के लिए डालर खाता रखने की सुविधा।

10. ढांचागत क्षेत्र के उन्नयन को निर्यात का दर्जा दिया गया है।
11. विदेशी पर्यटकों को विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ) में उत्पादित वस्तुओं को खरीदने की छूट।
12. विशेष आर्थिक क्षेत्र की इकाईयों को शुल्क मुक्त आयात की सुविधा।
13. निर्यातोन्मुखी इकाईयों को पार्सल और कूरियर के जरिए भी निर्यात को मंजूरी।
14. निर्यातोन्मुखी इकाईयों द्वारा आयातित वस्तुओं के उपयोग की समय सीमा तीन वर्ष तक बढ़ाई।
15. उत्पादन बाद पूंजीगत माला के आपात को भी EPCG की सुविधा।
16. निर्यात संभावनाओं वाले क्षेत्र में दस नये क्षेत्रों जैसे स्वास्थ्य, रक्षा, मनोरंजन, पेशेवर सेवाएं और पर्यटन को शामिल किया गया है।

नई निर्यात-आयात नीति 2002-2007 मुख्य आकर्षण
(New Export-Import Policy 2002-2007 Highlights)

1. विश्व व्यापार में एक प्रतिशत का लक्ष्य निर्धारित।
2. नई निर्यात-आयात नीति में निर्यात पर मुख्य जोर।
3. निर्यात पर से सभी मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने की घोषणा।
4. हार्डवेयर क्षेत्र के रियायती पैकेज की घोषणा।
5. निर्यातोन्मुखी औद्योगिकी क्षेत्रों के लिए रियायतें।
6. डी.ई.पी.बी., अग्रिम लाइसेंस, ई.पी.सी.जी. और अन्य योजनाओं को बेहतर बनाकर जारी रखने की घोषणा।
7. विशेष आर्थिक क्षेत्रों के लिए बड़ी रियायतों की घोषणा।
8. शुल्क अर्हता पासबुक, अग्रिम लाइसेंस तथा अन्य योजनाएं और बेहतरी के साथ जारी।
9. कृषि उत्पादों के निर्यात पर परिवहन सहायता।
10. कुटीर उद्योग और हस्तशिल्प पर विशेष ध्यान।
11. विशेष आर्थिक क्षेत्र के लिए नए प्रोत्साहन, आयकर छूट और बैंकों की विदेशी कारोबार शाखाएं खोलने की अनुमति।
12. कारोबार लागत कम करने के लिए प्रक्रिया को सरल बनाया जाना।
13. आयात एवं निर्यात के लिए जीन्सों का नया वर्गीकरण।
14. अफ्रीका और राष्ट्रकुल देशों में भारतीय जीन्सों का बाजार बढ़ाने के लिए नए कार्यक्रम।
15. राज्यों को निर्यात विकास और बाजार पहुंच बढ़ाने के लिए दी जाने वाली सहायता में उल्लेखनीय व द्धि।
16. कुटीर उद्योग क्षेत्र के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए बाजार पहुंच प्रोत्साहन के तहत पांच करोड़ रुपये निर्धारित।
17. हस्तशिल्प क्षेत्र के निर्यात पर शुल्क समाप्त।
18. गैर तराशे हीरे के आयात पर सीमा शुल्क समाप्त।
19. दवाओं के पंजीकरण पर पंजीकरण शुल्क की 50 प्रतिशत रकम वापसी की सुविधा।
20. विदेशों में स्थित भारतीय मिशनों में व्यावसायिक केन्द्रों की स्थापना।
21. नए कारोबारियों को बिना जांच के बैंक गारंटी के आधार पर लाइसेंस प्रदान किए जाएंगे।

अध्याय-15
विदेशी व्यापार : मात्रा, संरचना, दिशा
(Foreign Trade : Volume, Composition, Direction)

1. विदेशी व्यापार का महत्व
(The Importance of Foreign Policy)

प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार के परिणाम, रचना तथा दिशा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। रोबर्टसन के अनुसार, ''विदेशी व्यापार आर्थिक विकास का ईंधन है'' (Foreign Trade is an engine of economic growth—Rebertson) विदेशी व्यापार के कारण एक देश अपने प्राकृतिक साधनों का उचित उपयोग कर सकता है तथा अपने अतिरिक्त उत्पादन का निर्यात कर सकता है। विदेशों से तकनीकी प्राप्त कर सकता है। प्राकृतिक संकट के समय अनाज तथा अन्य वस्तुएं प्राप्त कर सकता है। विदेशी व्यापार के द्वारा औद्योगिकीकरण के लिए आवश्यक पूंजी, मशीने तथा कच्चा माल प्राप्त किया जा सकता है। विदेशी व्यापार के उचित नियंत्रण एवं संचालन द्वारा रोजगार, उत्पादन, कीमत, औद्योगीकरण तथा देश के आर्थिक विकास पर उचित प्रभाव डाला जा सकता है। विदेशी व्यापार द्वारा ही दूसरे देशों से आर्थिक विकास के लिए आवश्यक सहायता तथा अन्य उपकरण प्राप्त किये जा सकते हैं। यही कारण है कि भारत के योजना आयोग ने पंचवर्षीय योजनाओं में विदेशी व्यापार के विकास को बहुत अधिक महत्व दिया है।

2. भारत का विदेशी व्यापार
(Foreign Trade of India)

भारत सदियों से अनेक देशों में अनेक वस्तुओं का विदेशी व्यापार करता रहा है। भारत अनेक देशों से बहुत ही वस्तुएं तथा सेवाएं मंगवाता अर्थात् आयात (Imports) करता है तथा बहुत सी वस्तुएं तथा सेवाएं विभिन्न देशों को भेजता है अर्थात् निर्यात (Export) करता है।

समय के साथ-साथ भारत के विदेशी व्यापार का परिणाम बढ़ता जा रहा है। उसकी रचना विविधतापूर्ण हो गई है तथा दिशा में परिवर्तन हो रहा है। इस अध्याय में हम भारत के विदेशी व्यापार का अध्ययन निम्नलिखित भागों में सन् 1980 से करेंगे।

1. विदेशी व्यापार का परिणाम (Volume of Trade)
2. विदेशी व्यापार की रचना (Composition of Foreign Trade)
3. विदेशी व्यापार की दिशा (Directions of Foreign Trade)
4. तत्कालीन व्यापार नीति (Recent Trade Policy)

1. **विदेशी व्यापार का परिणाम** (Volume of Trade)—विदेशी व्यापार के परिणाम से अभिप्राय आयात तथा निर्यात के मूल्य का मूल जोड़ है। सन् 1980 से अब तक अवधि में इसमें काफी व द्धि हुई है। सन् 1980 में भारत के विदेशी व्यापार का परिणाम केवल 19,260 करोड़ रुपये था। यह 1991 में बढ़कर 75,751 करोड़ रुपये हो गया तथा 2002 में 4,54,217 करोड़ रुपये हो गया। अर्थात् 20 वर्षों की अवधि (1980-2002) में विदेशी व्यापार के परिणाम (volume) में 23.5 गुणा व द्धि हुई है। इस अवधि में आयात 12,549 करोड़ रुपये से बढ़कर 2,45,199 करोड़ रुपये तथा निर्यात 6,711 करोड़ रुपये से बढ़कर 2,09,018 करोड़ रुपये के हो गये। तुलनात्मक सुविधा के लिए हम भारत के विदेशी व्यापार के परिणाम का अध्ययन तीन भागों में करेंगे।

1. **नये आर्थिक सुधारों से पूर्व अर्थात** 1980 **से** 1990 **तक की अवधि में विदेशी व्यापार का परिणाम** (Volume of Trade before Economic Reforms *i.e.* during 1980-90.)
2. **आर्थिक सुधारों के आरम्भ अर्थात् सन्** 1991 **में विदेशी व्यापार का परिणाम** (Volume of Foreign Trade on the Eve of Economic Reforms *i.e.* during 1991.)
3. **आर्थिक सुधारों के बाद विदेशी व्यापार का परिणाम** (Volume of Foreign Trade After Economic Reforms.)

सन् 1980 **के पश्चात्** 1991 **में जब आर्थिक सुधार किये गये तथा इसके पश्चात्** 2002 **तक की अवधि अर्थात् छठी से नौंवी योजना की अवधि में विदेशी व्यापार के परिणाम** (volume) **में जो परिवर्तन हुए हैं वे निम्नलिखित तालिका से ज्ञात हो जाते हैं।**

तालिका 1. **विदेशी व्यापार का परिणाम** (Volume of Foreign Trade) (Rs. Crore)

	अवधि (Period) (1)	*आयात (Imports) (2)*	*निर्यात (Exports) (3)*	*व्यापार की मात्रा (Volume of Trade) (4) (2) + (3)*
i.	1980	12,549	6,711	19,260
ii.	**आर्थिक सुधारों से पूर्व**—1980-90 (Before Economic Reforms—1980-90)	1,98976	1,31,746	3,30,722
iii.	**आर्थिक सुधारों के समय**—1991 (At the Time of Economic Reforms—1991)	43,198	32,553	75,751
iv.	**आर्थिक सुधारों के बाद**—1992-2002 (After Economic Reforms—1992-2002)	15,58,162	13,16,054	28,74,216
v.	2002	2,45,199	2,09,018	4,54,217

(*Source :* Economics Survey, 2003)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि *1.* **भारत का विदेशी व्यापार जो आर्थिक सुधारों की अवधि से पूर्व** 1980 **में** 19,260 **करोड़ रुपये तथा तथा सन्** 1991 **में जब आर्थिक सुधार शुरू किये गये** 75,751 **करोड़ रुपये हो गया तथा वह वर्ष** 2002 **में अर्थात् सुधारों के दस वर्ष बाद** 4,54,217 **करोड़ रुपये हो गया। इस प्रकार आर्थिक सुधारों के बाद अर्थात् सन्** 1980 **की तुलना में सन्** 2002 **में विदेशी व्यापार में** 23.5 **गुना की व द्धि हुई।** *2.* **सन्** 1980 **में निर्यात** 6,711 **करोड़ रुपये के गये तथा आयात** 12,549 **करोड़ रुपये के किये गये थे। आर्थिक सुधारों के समय** 1991 **में निर्यात तथा आयात का कुल क्रमशः** 32,553 **करोड़ रुपये तथा** 43,198 **करोड़ रुपये था। परन्तु आर्थिक सुधारों के पश्चात् सन्** 2002 **में निर्यात बढ़कर** 2,09,018 **करोड़ रुपये तथा आयात बढ़कर** 2,45,199 **करोड़ रुपये हो गये। इस प्रकार वर्ष** 1980 **से अब तक की अवधि में निर्यात में** 31 **गुना की व द्धि हुई तथा आयात में** 19.5 **गुणा व द्धि हुई। यह सरकार की उदारीकरण नीति तथा निर्यात प्रोत्साहन का परिणाम है।** *3.* **वर्ष** 1980 **से** 1990 **के आर्थिक सुधारों से पूर्व दस वर्ष की अवधि (जो छठी तथा सातवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि थी) में कुल विदेशी व्यापार का परिणाम** 3,30,722 **करोड़ रुपये था। वह आर्थिक सुधारों के पश्चात् दस वर्षों की अवधि** 1992-2002 **तक** 28,74,216 **करोड़ हो गया इस प्रकार विदेशी व्यापार के परिणाम में लगभग** 8.7 **गुणा व द्धि हुई।** *4.* 1980 **से** 1985 **की अवधि अर्थात् छठी योजना में आयात की व द्धि दर** 13.9% **तथा निर्यात की** 13% **प्रतिवर्ष थी।** 1985-90 **अर्थात् सातवीं योजना की अवधि में आयात की व द्धि दर** 19.3 **प्रतिशत तथा निर्यात की व द्धि दर** 16 **प्रतिशत थी। आर्थिक सुधारों के आरम्भ में अर्थात् वर्ष** 1991 **में निर्यात की व द्धि दर** 26.5 **प्रतिशत तथा आयात की व द्धि दर** 16.6 **प्रतिशत प्रतिवर्ष थी। परन्तु आर्थिक सुधारों के पश्चात्** 2000-01 **में आयात की व द्धि दर** 17.3 **प्रतिशत तथा निर्यात की व द्धि दर** 27.4 **प्रतिशत हो गई।** 1980 **में विदेशी व्यापार का कुल परिणाम (आयात + निर्यात) शुद्ध राष्ट्रीय आय का** 16 **प्रतिशत था वह** 2002 **में बढ़कर** 26 **प्रतिशत हो गया।** *5.* **उपरोक्त विवरण से सिद्ध होता है कि आर्थिक सुधारों के पश्चात् सन्** 1980 **की तुलना में विदेशी व्यापार के परिणाम अर्थात्**

आयात तथा निर्यात दोनों के मूल्य में काफी व द्धि हुई हैं। इसका मुख्य कारण सरकार की उदारवादी आयात नीति। निर्यात प्रोत्साहन नीति तथा विश्व व्यापार संगठन (WTO) की सदस्यता थी।

2. **भारत के विदेशी व्यापार की संरचना** (Composition of India's Foreign Trade)—विदेशी व्यापार की रचना का अर्थ है निर्यात तथा आयात की जाने वाली वस्तुओं तथा सेवाओं के प्रकार। 1981 के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार की रचना में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं भारत के निर्यात तथा आयात अधिक विविधतापूर्ण (Diversified) हो गये हैं सन् 1980 के पश्चात् भारत के निर्यात व्यापार में परम्परागत वस्तुओं जैसे चाय, जूट, काफी, खनिज पदार्थों का प्रतिशत भाग कम हो गया है। इसके विपरीत रसायन, चमड़े, जवाहरात, इंजीनियरिंग वस्तुओं तथा कम्प्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर का प्रतिशत भाग काफी बढ़ गया है। इसी प्रकार आयात व्यापार में अनाज के स्थान पर पैट्रोल, मशीनरी, औद्योगिक कच्चे माल के मूल्य में व द्धि हुई है। सन् 1980 से अब तक भारत के विदेशी व्यापार की रचना अर्थात् प्रमुख आयातों और निर्यातों का अध्ययन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है।

भारत के प्रमुख आयात
(Chief Imports of India)

भारत के आयातों का वर्गीकरण मुख्य रूप से तीन भागों में किया जाता है। इनका मूल्य तथा कुल आयात में प्रतिशत निम्नलिखित तालिका से ज्ञात किया जा सकता है:

तालिका 2. **मुख्य आयात तथा उनका प्रतिशत** (Principal Imports and their Percentage Share)

(करोड़ रुपये)

वस्तुएं (Commodity)		1980-81		2001-2002	
		आयात (Imports) (Rs. Crore)	*कुल आयातों का प्रतिशत (Percentage of Total Imports)*	*आयात (Imports) (Rs. Crore)*	*कुल आयातों का प्रतिशत (Percentage of Total Imports)*
1.	Food Products and Allied Products	380	3.02	11,034	4.5
2.	Raw Materials (Fuel) and Intermediate manufacturers and others	9,760	77.77	2,06,106	84.1
3.	Capital Goods (At the Time of Economic Reforms—1991)	1,910	15.22	28,059	11.4
	Total Imports (including others)	12,549	100	2,45,199	100

(*Source :* Economics Survey, 2003)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि भारत के कुल आयात 84.1 प्रतिशत भाग कच्चे माल तथा मध्यवर्ती तैयार माल अर्थात पैट्रोल, काजू, कपास, ऊन, खाद, जवाहरात के पत्थरों आदि का है। भारत मुख्य रूप से निम्नलिखित वस्तुएं दूसरे देशों से मंगवाता है।

1. **मशीनरी** (Machinery)—भारत के औद्योगीकरण की आवश्यकताओं के कारण सबसे अधिक आयात मशीनों का किया जाता है। इन मशीनों का अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान, रूस तथा पूर्वी यूरोप से आयात किया जाता है। सन् 1980-81 में 1,349 करोड़ रुपये की मशीनों का आयात किया गया परन्तु 2001-2002 में 17,923 करोड़ रुपये की मशीनों का आयात किया गया।

2. **लोहा तथा इस्पात** (Iron and Steel)—भारत अभी तक लोहे एवं इस्पात के उत्पादन में आत्मनिर्भर नहीं हुआ है। अतः प्रतिवर्ष काफी इस्पात विदेशों से मंगवाना पड़ता है। यह अधिकतर जर्मनी, अमेरिका, इंग्लैण्ड, इटली तथा फ्रांस से मंगवाया जाता है। सन् 1980-81 में 852 करोड़ रुपये के लोहा तथा इस्पात का आयात किया गया परन्तु 2001-2002 में 3,975 करोड़ रुपये का लोहा तथा इस्पात बाहर से मंगवाया गया।

3. **लौह-हीन धातुएं तथा धातुओं का सामान** (Non-Ferrous Metals and Metal Products)—लौह-हीन धातुएं जैसे जस्ता, तांबा, टीन तथा इन धातुओं द्वारा निर्मित पदार्थ हमें दूसरे देशों से मंगवाने पड़ते हैं। ये धातुएं मलाया, ब्राजील, अमेरिका आदि देशों से मंगाई जाती है। सन् 1980-81 में 477 करोड़ रुपये का लौह-हीन वस्तुओं का आयात किया गया परन्तु 2001-2002 में 3,086 करोड़ रुपये की लौह-हीन वस्तुएं मंगाई गई। भारत में अब इनका उत्पादन बढ़ गया है।

4. **पैट्रोल तथा पैट्रोल उत्पादन** (Petroleum and Petroleum Products)—भारत अपनी मांग का 35 प्रतिशत पैट्रोल विदेशों से मंगवाता है। यह पैट्रोल ईरान, ईराक तथा साउदी अरब से आता है। सन् 1980-81 में केवल 5,264 करोड़ रुपये के पैट्रोलियम का आयात किया गया। परन्तु 2001-2002 में 66,769 करोड़ रुपये का पैट्रोल तथा अन्य पैट्रोल उत्पादन मंगवाया गया। बम्बई के समुद्र से पैट्रोल निकालने के कारण अब हमें बाहर से पैट्रोल का कम आयात करना पड़ता है इस समय भी कुल निर्यात का 19 प्रतिशत पैट्रोल के आयात पर खर्च किया जाता है।

5. **यातायात के साधन** (Transport Equipment)—देश के आर्थिक विकास के लिए यातायात के साधनों की बहुत आवश्यकता है। इसके लिए मोटरें, समुद्री जहाज, हवाई जहाज, आदि दूसरे सामान विदेशों से मंगवाने पड़ते हैं। यातायात का सामान अधिकतर जर्मनी, इटली, जापान, अमेरिका तथा ब्रिटेन से आयात किया जाता है। सन् 1980-81 में 472 करोड़ रुपये के मूल्य का यातायात का सामन आयात किया गया परन्तु 2001-2002 में 5,482 करोड़ रुपये का यातायात के सामान विदेशों से आयात किया गया।

6. **रासायनिक खाद** (Chemical Fertilizers)—भारत में कृषि उत्पादन को विकसित करने के लिए खाद की बहुत आवश्यकता है अतः रासायनिक खाद काफी मात्रा में आयात की जा रही है। यह खाद अमेरिका, रूस, E.E.C के देशों से विशेष रूप से आयात की जाती है। सन् 1980-81 में 818 करोड़ रुपये के मूल्य की रासायनिक खाद का आयात किया गया परन्तु 2001-2002 में 2,964 करोड़ रुपये की खाद का आयात किया गया।

7. **खाद्यान्न** (Foodgrains)—विभाजन के बाद 1980 से पहले खाद्यान्नों की देश में बहुत कमी हो गई थी। इस कमी को आयात द्वारा पूरा किया जाता था। खाद्यान्न अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, बर्मा तथा अर्जेन्टाइना से मंगवाए जाते हैं। सन् 1980-81 में 100 करोड़ रुपये के खाद्यान्न आयात किये गये। परन्तु हरित क्रांति के कारण खाद्यान्न के आयात बहुत कम हो गये। 2001-2002 में केवल 87 करोड़ रुपये के खाद्यान्न विदेशों से आयात किये गये।

8. **काजू** (Cashewnuts)—भारत में विदेशों से कच्चा काजू आयात किया गया है। इसे तैयार करके पुनः निर्यात कर दिया जाता है। वर्ष 1980-81 में केवल 9 करोड़ रुपये के काजू आयात किये गये। 2001-2002 में काजू के आयात बढ़कर 431 करोड़ रुपये के हो गये।

9. **कागज** (Paper)—भारत स्वीडन, चैकोस्लोवाकिया आदि कई देशों से कागज का भी आयात करता है। 2001-2002 में विदेशों से 2,131 करोड़ रुपये का कागज तथा कागज का तैयार माल आयात किया गया जबकि 1980-81 में केवल 187 करोड़ रुपये का कागज विदेशों से आयात किया गया था।

10. **रसायन** (Chemicals)—भारत में विदेशों से कई प्रकार के रसायन, दवाइयां, रंगने का सामान आदि मंगवाए जाते हैं। सन् 1980-81 में 358 करोड़ रुपये के रसायनों तथा 85 करोड़ रुपये की दवाइयों का आयात किया गया। परन्तु 2001-2002 में 15,471 करोड़ रुपये के रसायनों तथा 2,027 करोड़ रुपये की दवाइयों का आयात किया गया।

11. **खाद्य तेल** (Edible Oils)—भारत में पिछले कुछ वर्षों में खाने के तेलों तथा तिलहन के आयात काफी बढ़ गये हैं। सन् 1980-81 में केवल 677 करोड़ रुपये के तेलों का आयात किया गया था। परन्तु 2001-2002 में इनके आयात कम होकर 479 करोड़ रुपये के हो गये। तेलों का आयात अधिकतर यू.एस.ए., कनाडा आदि से किया जाता है।

12. **हीरे जवाहरात** (Precious Stones)—भारत में हीरे जवाहरात के आयात पहले से काफी बढ़ गये हैं। इन्हें तराश कर दो बार निर्यात कर दिया जाता है। ये अधिकतर बैल्जियम, दक्षिणी अफ्रीका, अमेरिका आदि देशों से आते है। सन् 1980-81 में केवल 417 करोड़ रुपये के मूल्य के अनकट हीरे जवाहरात आयात किये गये परन्तु 2001-2002 में 22,046 करोड़ रुपये के हीरे जवाहरात आयात किये गये।

13. **प्लास्टिक** (Plastic)—भारत में प्लास्टिक के आयात भी काफी बढ़ गये हैं। प्लास्टिक अधिकतर यू.एस.ए., यू.के., जापान आदि देशों से मंगवाया जाता हैं 1980-81 में केवल 121 करोड़ रुपये के प्लास्टिक का सामान आयात किया गया था। परन्तु 2001-2002 में 3,215 करोड़ रुपये के प्लास्टिक का आयात किया गया।

मुख्य निर्यात
(Main Exports)

स्वतंत्रता के पश्चात देश के निर्यात बढ़ाने के लिए विशेष प्रयत्न किये गये हैं। सन् 1980-81 में केवल 6,711 करोड़ रुपये के मूल्य के निर्यात किये गये। परन्तु 2002 में यह बढ़कर 209018 करोड़ रुपये के हो गये। भारत के निर्यातों का चार भागों में वर्गीकरण किया जाता है। इनका कुल मूल्य तथा कुल निर्यात में प्रतिशत भाग तालिका 3 से स्पष्ट हो जाता है:—

तालिका 3. **भारत के मुख्य निर्यात तथा उनका प्रतिशत भाग** (India's Principal Exports and their Percentage Share)

	Commodity	1980-81		2001-2002	
		(Rs. Crore)	*Percentage in Total Exports*	*(Rs. Crore)*	*Percentage in Total Exports*
1.	Agricultural and Allied Products	2,057	30.6	29,312	14.02
2.	Minerals & Qres	414	6.2	4,736	2.4
3.	Manufactured Goods and other (Unclassified)	3,747	55.8	1,64,559	78.7
4.	Mineral Fuels and other	494	7.4	10,411	4.9
	Total Imports (including others)	6,711	100	2,09,018	100

(*Source :* Economics Survey, 2003)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 1980-81 में भारत का कृषि पदार्थों के निर्यात में 30.6 प्रतिशत भाग था। परन्तु अब यह कम होकर 2001-2002 में 14 प्रतिशत रह गया। वर्ष 1980-81 में खनिज पदार्थों का कुल निर्यात में भाग 6.2 प्रतिशत था। परन्तु अब यह कम होकर 2.4 प्रतिशत रह गया। वर्ष 1980-81 में कुल निर्यात में तैयार माल का भाग 55.8 प्रतिशत था। अब यह बढ़कर 78.7 प्रतिशत हो गया। खनिज तेलों एवं अन्य का कुल निर्यात में भाग 7.4 प्रतिशत से कम होकर 4.9 प्रतिशत हो गया। भारत के कुछ प्रमुख निर्यात इस प्रकार है:—

1. **पटसन का सामान** (Jute Products)—भारत के निर्यातों में पटसन के सामान का स्थान सबसे पहला था। परन्तु 1980-81 में 330 करोड़ रुपये के जूट के सामान का निर्यात किया गया यह भारत के लिये डालर कमाने का प्रमुख साधन था। पटसन की बनी वस्तुएं अधिकतर अमेरिका, अर्जेन्टीना आस्ट्रेलिया, रूस, ब्रिटेन तथा कनाडा को जाती है। 2001-2002 में 612 करोड़ रुपये का पटसन का सामान निर्यात किया गया। पटसन के निर्यात कम होने का मुख्य कारण एक तो बंगला देश, थाईलैण्ड आदि देशों से प्रतियोगिता तथा दूसरा पटसन का सामान के स्थान पर अन्य वस्तुओं का प्रयोग किया जाना है।

2. **चाय** (Tea)—संसार में चाय का सबसे अधिक निर्यात भारत में किया जाता है। सन् 1980-81 में 426 करोड़ रुपये की चाय का निर्यात किया गया। 2001-2002 में 1,719 करोड़ रुपये की चाय विदेशों को भेजी गई है। चाय के प्रमुख ग्राहक ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, मिश्र, ईराक तथा आस्ट्रेलिया है। आजकल रूस को भी काफी चाय भेजी जाती है। भारत से सर्वाधिक चाय ब्रिटेन को भेजी जाती है।

3. **सिले सिलाए कपड़े** (Readymade Garments)—भारत से सिले सिलाए कपड़ों (Cotton Apparel) का निर्यात बढ़ता जा रहा है। सन् 1980-81 में केवल 550 करोड़ रुपये के सिले सिलाये कपड़ों को निर्यात किये गये थे। जबकि 2001-2002 में 23,877 करोड़ रुपये के सिले सिलाये कपड़े निर्यात किये गये। 2000-2001 कपड़े के प्रमुख ग्राहक आस्ट्रेलिया, पूर्वी अफ्रीका, श्री लंका, मलाया, बर्मा, सूडान, इण्डोनेशिया तथा यूरोपियन समुदाय के देश हैं।

4. **कच्ची धातुएं** (Metallic Ores)—भारत में कच्ची धातुएं जैसे मैंगनीज, अभ्रक तथा लोहा विदेशों को भेजा जाता है। ये धातुएं अमेरिका तथा जापान आदि देशों को भेजी जाती हैं। सन् 1980-81 में केवल 18 करोड़ ३पये के मूल्य के अभ्रक तथा 303 करोड़ रुपये के लोहे का निर्यात किया गया परन्तु 2001-2002 में कुल मिलाकर 2,034 करोड़ रुपये मूल्य का लोहा, 56 करोड़ का अभ्रक तथा 19 करोड़ रुपये का मैंगनीज विदेशों को भेजा गया।

5. **मसाले** (Spices)—भारत से कई प्रकार के मसाले जैसे काली मिर्च आदि का निर्यात किया जाता है। यह निर्यात इग्लैण्ड, जर्मनी, इटली, फ्रांस, ईरान, सऊदी अरब, अमेरिका आदि देशों को किया जाता है। सन् 1980-81 में केवल 11 करोड़ रुपये के मसाले निर्यात किये गये परन्तु 2001-2002 में 1,497 करोड़ रुपये के मसाले विदेशों को भेजे गये।

6. **चमड़ा तथा चमड़े का सामान** (Leather and Leather Products)—भारत से चमड़ा, जूते तथा चमड़े का दूसरा सामान विदेशों को भेजा जाता है। इसके मुख्य ग्राहक इंग्लैण्ड संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी व रूस आदि देश हैं। 2001-2002 में 9,110 करोड़ रुपए के मूल्य का चमड़े का सामान विदेशों को भेजा गया। जबकि 1980-81 में केवल 390 करोड़ रुपये का चमड़े का सामान विदेशों को भेजा गया।

7. **खल** (Oil Cakes)—भारत से खल भी काफी मात्रा में निर्यात की जाती है। इसके मुख्य ग्राहक जापान, नीदरलैंड तथा ब्रिटेन आदि देश हैं। 2001-2002 में 2,263 करोड़ रुपये की खल का निर्यात किया गया। जबकि 1980-81 में 125 करोड़ रुपये की खल का निर्यात किया गया था। खल के निर्यात में होने वाली व द्धि वास्तव में मूल्य के बढ़ जाने के कारण हैं।

8. **तम्बाकू** (Tobacco)—भारत से तम्बाकू का काफी निर्यात होता है। भारत से तम्बाकू मुख्य रूप से इंग्लैण्ड, जापान, रूस तथा नेपाल को निर्यात किया जाता है। 1980-81 में भारत से 913 लाख किलोग्राम तम्बाकू जिसकी कीमत 141 करोड़ रुपये थी, निर्यात किया गया 2001-2002 में तम्बाकू के निर्यात का मूल्य 808 करोड़ रुपये हो गया।

9. **कॉफी** (Coffee)—भारत से कॉफी का निर्यात बढ़ता जा रहा है। भारत ये कॉफी यू.एस.ए. इटली तथा हंगरी आदि देशों को भेजी जाती है। 2001-2002 में 1,095 करोड़ रुपये की कॉफी का निर्यात किया गया। जबकि 1980-81 में केवल 214 करोड़ रुपये की कॉफी का निर्यात किया गया था।

10. **जवाहरात** (Gems and Jewellery)—भारत से किये जाने वाले निर्यातों में सबसे अधिक व द्धि जवाहरात के निर्यात में हुई है। भारत इनका कच्चा माल विदेशों से मंगवाता है तथा इन्हें तैयार करके विदेशों को ही निर्यात कर देता है। इसका कारण यह है कि भारत में श्रम बहुत सस्ता है वर्ष 1980-81 में केवल 618 करोड़ रुपये के जवाहरात निर्यात किये गये। भारत से हांगकांग, यू.एस. एवं बैल्जियम आदि देशों को कई प्रकार के जवाहरात निर्यात किये जाते हैं। वर्ष 2001-2002 में 34,845 करोड़ रुपये के जवाहरात निर्यात किये गये।

11. **काजू** (Cashew, Kerneels)—काजू के निर्यात से भारत को काफी लाभ प्राप्त होता है भारत से काजू, रूस, अमेरिका तथा जापान आदि देशों के भेजे जाते हैं सन् 1980-81 में 140 करोड़ रुपये के काजू निर्यात किये गये। 2001-2002 में 1,652 करोड़ रुपये के काजू निर्यात किये गये।

12. **इंजीनियरिंग का सामान** (Engineering Goods)—भारत से इंजीनियरिंग का सामान श्री लंका, साऊदी अरब, मिश्र, बर्मा, मलेशिया को भेजा जाता है वर्ष 1980-81 में केवल 827 करोड़ रुपये का इंजीनियरिंग का सामान विदेशों को निर्यात किया गया। परन्तु 2001-2002 में 33,093 करोड़ रुपये का सामान निर्यात किया गया।

13. **हस्तकला** (Handicrafts)—भारत के कुटीर उद्योगों द्वारा निर्मित हस्तकला का सामान जैसे—हाथी दांत की वस्तुएं विदेशों को निर्यात की जाती हैं। ये वस्तुएं अमेरिका, जर्मनी, साऊदी अरब तथा मध्यपूर्व के देशों में भी जाती हैं। सन् 1980-81 में 952 करोड़ रुपये मूल्य का हस्तकला का सामान निर्यात किया गया। 2001-2002 में 4,406 करोड़ रुपये के मूल्य का हस्तकला का सामान निर्यात किया गया।

14. **कम्प्यूटर तथा सॉफ्टवेयर** (Computer and Software)—भारत से 1991 के बाद से कम्प्यूटर हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर के निर्यात काफी किये जाने लगे। ये निर्यात अमेरिका, जर्मनी जैसे विकसित देशों तथा कई अल्पविकसित देशों को किये गये। 2002 में 40,900 करोड़ रुपये के निर्यात किये गये। भारत के निर्यात व्यापार में इन निर्यातों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है।

भारत के विदेशी व्यापार की रचना में 1981 के बाद परिवर्तन
(Change in the Composition of Foreign Trade of India After)

सन् 1981 के पश्चात् भारत के निर्यात तथा आयातों की रचना में निम्नलिखित परिवर्तन हुए हैं।

निर्यात व्यापार में परिवर्तन
(Change in Exports)

सन् 1981 से भारत के निर्यात व्यापार की रचना में लेने वाले महत्वपूर्ण परिवर्तन निम्नलिखित तालिका 4 से ज्ञात हो जाते हैं।

तालिका 4. **भारत के निर्यातों की रचना में परिवर्तन** (Change in Composition of India's Exports)

(करोड़ रुपये)

	वस्तु (Commodity)	*1981*	*1991*	*2002*
1.	**कृषि पदार्थ** (Agricultural Products)			
	i. **चाय** (Tea)	426	1,070	1,719
	ii. **तैयार खाद्य (पाश्च्यूरीकृत खाद्य) पदार्थ** (Processed Food)	36	213	1,236
	iii. **कॉफी** (Coffee)	214	252	1,095
	iv. **चावल** (Rice)	224	462	3,174
	v. **मछली** (Fish)	217	960	5,897
	vi **फल, सब्जी तथा दालें** (Fruits, Vegetables and Pulses)	80	216	1,560
2.	**तैयार माल** (Manufactured Goods)			
	i. **चीनी** (Sugar)	40	38	1,782
	ii. **कपड़ा तथा सूत** (Cotton Cloth and Yarn)	408	2,100	14,655
	iii. **सिले-सिलाये कपड़े** (Readymade Garments)	550	4,012	23,877
	iv. **जूट का सामान** (Jute)	330	298	612
	v. **हस्तकला** (Handicrafts)	334	920	4,406
	vi **जवाहरात** (Gems and Jewellery)	618	5,247	34,845
	vii. **इंजीनियरिंग की वस्तुएं** (Engineering Goods)	827	3,872	33,093
	viii. **जूट का सामान** (Cashew Kernels)	140	447	1,652
	ix. **चमड़ा तथा चमड़े का सामान** (Leather and Leather Products)	390	2,600	9,110
	x **रसायन** (Chemicals)	225	2,111	22,339
3.	**नई अर्थव्यवस्था** (New Economy) कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर (Computer Software)	NIL	256	40,900

(*Source :* Economic Survey, 2003)

उपरोक्त तालिका से भारत के निर्यातों की रचना में होने वाले निम्नलिखित परिवर्तन स्पष्ट हो जाते हैं:—

1. **कृषि पदार्थों के निर्यातों के प्रतिशत में कमी** (Decline in Percentage of Exports)—स्वतंत्रता के पश्चात् कृषि पदार्थों के निर्यातों का कुल निर्यातों में प्रतिशत भाग कम होता जा रहा है। उदाहरण के लिए 1980-81 में कृषि तथा संबंधित

पदार्थों के निर्यातों का कुल निर्यातों में 21 प्रतिशत भाग था परन्तु 2001-2002 में यह कम होकर 13.4 प्रतिशत रह गया। इसका मुख्य कारण यह है कि देश की जनसंख्या में बहुत अधिक व द्धि हो जाने के कारण कृषि पदार्थों की घरेलू मांग काफी बढ़ गई है। इसके फलस्वरूप कृषि पदार्थ निर्यात के लिए उपलब्ध नहीं हो पाते।

2. **परम्परागत वस्तुओं निर्यातों के प्रतिशत में कमी** (Decline in Percentage of Exports Conventional Items)—भारत अधिकतर परम्परागत वस्तुओं जैसे—चाय, जूट, खाद्यान्न आदि कृषि पदार्थों तथा खनिज पदार्थों के निर्यात करता था 1980-81 में इन परम्परागत वस्तुओं का कुल निर्यात में 31 प्रतिशत भाग था। परन्तु 2001-2002 में इनका भाग कम होकर केवल 14.6 प्रतिशत रह गया। इसका मुख्य कारण इन पदार्थों की घरेलू मांग में व द्धि हो जाने के कारण निर्यात के लिए कम मात्रा का उपलब्ध होना है। देश के औद्योगीकरण में व द्धि हो जाने के कारण कच्चे माल की देश में ही खपत बढ़ गई है।

3. **तैयार माल के निर्यातों में प्रतिशत व द्धि** (Increase in Percentage of Manufacturing Goods)—स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के निर्यातों में तैयार माल के प्रतिशत में काफी अधिक व द्धि है उदाहरण के लिए 1980-81 में भारत के कुल निर्यातों में तैयार माल का भाग 66 प्रतिशत था परन्तु 2001-2002 में यह बढ़कर 78.9 प्रतिशत हो गया।

4. **जवाहरात तथा सिले सिलाये कपड़ों के निर्यात का बढ़ता हुआ महत्व** (Increasing Importance of Exports of Gems and Redymade Garments)—भारत के कुल निर्यात में जहां पहले जूट तथा चाय का सबसे महत्वपूर्ण स्थान था वहां अब उनका स्थान जवाहरात तथा सिले सिलाये कपड़ो के निर्यात ने ले लिया है। भारत के कुल निर्यात में जवाहरात का स्थान दूसरा तथा सिले सिलाये कपड़ों का तीसरा स्थान है।

5. **कृषि निर्यात की संरचना में परिवर्तन** (Change in Composition of Agricultural Exports)—कृषि निर्यातों की संरचना में काफी परिवर्तन आया है। 1980-81 में कॉफी, तम्बाकू तथा मछलियों के निर्यात क्रमशः 214 करोड़ रुपये, 141 करोड़ रुपये तथा 217 करोड़ रुपये थे। परन्तु 2001-2002 में इनके निर्यात बढ़कर क्रमशः 1,095 करोड़ रुपये, 808 करोड़ रुपये तथा 5,897 करोड़ रुपये हो गये। इस प्रकार मछलियों तथा उनसे बने पदार्थों के निर्यात में बहुत अधिक व द्धि हुई। 1980-81 में चावल का निर्यात 224 करोड़ रुपये था। परन्तु 2001-2002 में 3,174 करोड़ रुपये मूल्य के चावल का निर्यात किया गया। यह वास्तव में नीलि क्रांति तथा हरित क्रांति का परिणाम है जूट के निर्यातों में कोई विशेष व द्धि नहीं हुई। 1980-81 में केवल 36 करोड़ रुपये के पाश्च्यूरिकृत खाद्य पदार्थों (Processed Food) के निर्यात किये गये। ये 2001-2002 में बढ़कर 1,236 करोड़ रुपये के हो गये। इस प्रकार भारत 1980-81 में केवल 80 करोड़ रुपये के फल तथा सब्जियों का निर्यात करता था। परन्तु आर्थिक सुधारों के पश्चात् 2002 में इनके निर्यात बढ़कर 1,560 करोड़ रुपये के हो गये।

6. **इंजीनियरिंग के सामान, हस्तकला तथा चमड़े के सामान के निर्यातों में व द्धि** (Increase in Engineering Goods, Handicraft and Leather Product)—भारत के निर्यातों में इंजीनियरिंग के सामान, हस्तकला तथा चमड़े के सामान का महत्व काफी बढ़ गया है। 1980-81 में इजीनियरिंग के समान हस्तकला तथा चमड़े के समान के निर्यातों का मूल्य क्रमशः 827 करोड़ रुपये, 334 करोड़ रुपये तथा 390 करोड़ रुपये था। 2001-2002 में इनके निर्यात बढ़कर क्रमशः 33,093 करोड़ रुपये 4,406 करोड़ रुपये तथा 9,110 करोड़ रुपये हो गये।

7. **कम्प्यूटर हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर के निर्यात** (Exports of Computer Hardware and Software)—आर्थिक सुधारों के पश्चात् संसार में भारत का कम्प्यूटर हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर के निर्यात में महत्वपूर्ण स्थान हो गया है। 1980 में कम्प्यूटर हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर का भारत से निर्यात नहीं किया जाता था। परन्तु 2002 में लगभग 40,900 करोड़ रुपये के निर्यात किये गये। इस प्रकार भारत के कुल निर्यात में इसका प्रथम स्थान है।

8. **सेवा क्षेत्र का बढ़ता हुआ महत्व** (Increasing Importance of Service Sector)—सन् 1980 तक भारत के निर्यातों में केवल प्राथमिक या माध्यमिक क्षेत्र (Primary and Secondary Sectors) का ही महत्व था। सेवा क्षेत्र का महत्व बहुत ही कम था। परन्तु 1991 के पश्चात् इस क्षेत्र के निर्यात में काफी व द्धि हुई है। इसके भविश्य में और अधिक बढ़ाने की आशा है। उदाहरण के लिए सूचना प्रौद्योगिकी (Infformation technology) के निर्यात 2001-2002 में 7,780 करोड़ रुपये के किये गये।

आयात व्यापार की रचना में परिवर्तन
(Change in the Composition of Imports)

सन् 1980 से भारत के आयात व्यापार में काफी परिवर्तन हुआ है। सन् 1980 के पश्चात् भारत में अनाज, जूट, कपास आदि के आयात काफी कम हो गये। इसके विपरीत पैट्रोलियम, बिना तराशे जवाहरात, मशीनरी, रसायनिक खाद, खाने के तेल, कागज तथा बोर्ड, ट्रांसपोर्ट के यंत्रों के आयात काफी बढ़ गये हैं। नई आयात नीति में लगभग सभी वस्तुओं के आयात से सभी प्रकार की मात्रात्मक बाधायें (Quantitative Restriction) हटा दी गई हैं। इसलिए उपभोक्ता वस्तुओं (Consumer Goods) के आयात काफी बढ़ गये हैं। सन् 1980 के पश्चात् की अवधि में भारत के आयातों की रचना में काफी परिवर्तन हुये हैं।

तालिका 5. **भारत के आयातों की रचना में परिवर्तन** (Change in Composition of India's Imports)

(करोड़ रुपये)

	वस्तु (Commodity)	*1981*	*1991*	*2002*
1.	अनाज (Cereals)	100	182	87
2.	जूट (Raw Jute)	1	20	96
3.	कपास (Cotton)	5	1	2,053
4.	खाने के तेल (Eastable Oils)	677	326	479
5.	रासायनिक खाद (Fertilizer)	818	1,766	2,964
6.	लोहा तथा इस्पात (Iron & Steel)	852	2,113	3,975
7.	कागज तथा कागज बोर्ड (Paper and Paper Board)	187	456	2,131
8.	बिना तराशे जवाहरात (Unworked Precious Stones)	417	3,738	22,046
9.	मशीनरी (Machinery)	1,349	3,312	17,923
10.	ट्रांसपोर्ट इक्यूपमेन्ट (Transport Equipment)	472	931	5,482
11.	पैट्रोल	5,264	10,816	66,769

(*Source :* Economic Survey, 2003)

सन् 1981 के पश्चात भारत के आयात अधिक विविधता पूर्ण हो गये। भारत में अनाज के आयात कम हो गये। परन्तु पैट्रोलियम, बिना तराशे हुये जवाहरात, रसायन, मशीनरी, प्लास्टिक कागज आदि के आयात काफी बढ़ गये। उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि सन् 1981 के पश्चात् भारत के आयात व्यापार में निम्नलिखित परिवर्तन हुये हैं।

1. **अनाज के आयात में कमी** (Decline in the Imports of Cercals)—सन् 1981 में अनात के आयात का मूल्य केवल 100 करोड़ रुपये था जबकि 1971 में 213 करोड़ रुपये के मूल्य के अनाज के आयात किये गये। सन् 1981 के पश्चात् अनाज के आयात 2002 में कम होकर केवल 87 करोड़ रुपये के किये गये। इस प्रकार अनाज का आयातों का मूल्य कुल आयातों में नहीं के बराबर था। इसका मुख्य कारण यह है कि हरित क्रांति के फलस्वरूप देश अनाज के उत्पादन में आत्म निर्भर ही नहीं बल्कि निर्यातक भी बन गया हैं।

2. **कृषि जनित कच्चे माल के आयातों में व द्धि** (Increase in the Imports Agricultural Raw Materials)—सन् 1981 के पश्चात् कृषि जनित कच्चे माल जैसे जूट, कपास आदि के आयातों में व द्धि हुई है। उदाहरण के लिए कच्चे जूट के आयात जो 1981 में केवल 1 करोड़ रुपये मूल्य के किये गये। वे 2002 में बढ़कर 96 करोड़ रुपये के हो गये। इसका मुख्य कारण यह था कि जूट पैदा करने वाला भाग बंग्लादेश में चला गया जबकि जूट के अधिकतर कारखाने भारत में रह गये। कपास के आयात 1981 में केवल 5 करोड़ रुपये थे वे 2002 में बढ़कर 2,053 करोड़ रुपये के हो गये। इसका मुख्य कारण भारत में बढ़िया किस्म की कपास का मांग की तुलना में कम उत्पादन होना था। भारत में कच्चे काजू के आयात भी काफी बढ़ गये है। सन् 1981 में केवल 9 करोड़ रुपये के कच्चे काजू आयात किये गये परन्तु सन् 2002 में 431 करोड़ रुपये के कच्चे काजू आयात किये गये। इनको पाश्च्यूरीकृत (Processed) करके इसका निर्यात कर दिया जाता है। 1981 से इसके निर्यात भी बढ़कर 140 करोड़ रुपये से 1,652 करोड़ रुपये हो गये। सन् 1981 के पश्चात्

रबड़ के आयातों में काफी व द्धि हुई है। 1981 में केवल 32 करोड़ रुपये के रबड़ का आयात किया था। सन् 2002 में रबड़ के आयात बढ़कर 831 करोड़ रुपये हो गये।

3. **खाने के तेल के आयातों में व द्धि** (Increase in Import of Edible Oil)—खाने के तेलों जैसे गोले का तेल के आयातों में 1960 के पश्चात् बहुत अधिक व द्धि हुई है। सन् 1981 में 677 करोड़ रुपये के खाने के तेल आयात किये गये तथा 1998-99 में इनके आयात बढ़कर 7,589 करोड़ रुपये के हो गये। इसके दो प्रमुख कारण हैं। एक तो भारत में अधिक जनसंख्या होने के कारण खाने के तेलों की मांग पूर्ति से अधिक है तथा दूसरे (WTO) के प्रावधान के अनुसार सरकार को इनके आयात पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध (Quantitative Restriction) खत्म करने पड़े हैं।

4. **पैट्रोलियम का आयात में प्रथम स्थान** (Petroleum Enjoys First Place in Imports)—भारत के आयातों में पैट्रोलियम का प्रथम स्थान है। सन् 1980-81 में 5,264 करोड़ रुपये के पैट्रोलियम का आयात किया गया था। 1990-91 में इनके आयात बढ़कर 10,816 करोड़ रुपये हो गये। 2001-2002 में पैट्रोलियम के आयातों के मूल्य में बहुत अधिक व द्धि हुई। इनके आयात बढ़कर 66,769 करोड़ रुपये हो गये। इसके दो मुख्य कारण हैं। एक तो पैट्रोलियम की कीमत में व द्धि तथा दूसरा भारत के बढ़ते उद्योग तथा यातायात के लिए पैट्रोलियम की मांग में व द्धि।

5. **बिना तराशे जवाहरात का आयात में दूसरा स्थान** (Precious Stones Enjoys Second Place in India's Imports)—भारत के आयात व्यापार में बिना कटे हुये जवाहरात का स्थान अब दूसरा हो गया है। सन् 1980 में केवल 417 करोड़ रुपये के बिना कटे हुये जवाहरात अर्थात् जवाहरात उद्योग का कच्चा माल आयात किया था परन्तु 1991 में इनके आयात का मूल्य बढ़कर 3,778 करोड़ रुपये हो गया। सन् 2002 में इसके आयातों में बहुत अधिक व द्धि हुई। इनका मूल्य बढ़कर 22046 करोड़ रुपये हो गया। इसके कई कारण हैं—एक तो भारत में सस्ता तथा ट्रेड क्रम उपलब्ध है, दूसरा सरकार की उदारवादी नीति के कारण इनके आयातों को प्रोत्साहन मिल गया। तीसरा इनके द्वारा तैयार किये गये माल के निर्यात बहुत अधिक बढ़ गये हैं।

6. **पूंजीगत पदार्थों के आयात में व द्धि** (Increase in Import of Capital Goods)—भारत के औद्योगिक विकास के फलस्वरूप पूंजीगत पदार्थों जैसे मशीनरी, बिजली के यंत्र, विनिर्मित धातुयें (Manufactures of Metals) यातायात का सामान आदि के आयात में काफी व द्धि हुई है। 1980 में मशीनरी तथा बिजली के सामान के आयात 1,349 करोड़ रुपये तथा ट्रांसपोर्ट यंत्रों के आयात 472 करोड़ रुपये थे। 1991 में अर्थात् आर्थिक सुधारों के पूर्व की अवधि में इनके आयात बढ़ कर क्रमशः 3,312 करोड़ रुपये तथा 931 करोड़ रुपये हो गये। सन् 2002 में इनके आयातों में बहुत अधिक व द्धि हुई। मशीनरी तथा बिजली के सामान के आयात बढ़कर 17,923 करोड़ रुपये के हो गये। इस वर्ष 5,482 करोड़ रुपये के यातायात के यंत्रों के आयात किये गये। इसके कई कारण हैं। एक तो देश का उद्योगीकरण, दूसरे सरकार की उदारवादी नीति, तीसरे बहुर्राष्ट्रीय संस्थाओं के महत्व में व द्धि तथा चौथे अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं से इनके आयात के लिए अधिक धन की प्राप्ति।

7. **रासायनिक खाद के आयात में व द्धि** (Increase in Import of Fertilizers)—भारत में हरित क्रांति के कारण रासायनिक खाद की मांग में काफी व द्धि हो गई है। इनके घरेलू उत्पाद के आधारित होने के कारण तथा इन पर दी गई सब्सिडी (Subsidy) के कारण इनका रास्ता होने के फलस्वरूप इनके आयात में काफी व द्धि हुई है। 1981 में 818 करोड़ रुपये की रासायनिक खाद का आयात किया गया परन्तु 1991 में इनके आयात बढ़कर दुगने अर्थात 1,766 करोड़ रुपये के हो गये। 2002 में इनके आयातों में चार गुनी व द्धि हुई अर्थात् इनके आयात बढ़कर 2,964 करोड़ रुपये के हो गये।

8. **गैर परम्परागत वस्तुओं के आयात में व द्धि** (Increase in the Import of Non-traditional Commodities)—भारत में 1981 से कई नई वस्तुओं जैसे प्लास्टिक, कागज, गन्ने तथा रसायनों के आयात में काफी व द्धि हुई है। सन् 1980 में प्लास्टिक कागज तथा रसायन के आयात क्रमशः 121 करोड़ रुपये.... 187 करोड़ रुपये तथा 358 करोड़ रुपये के किये गये सन् 2002 में इनके आयात बढ़ कर क्रमशः 3,215 करोड़ रुपये, 2,131 करोड़ रुपये तथा 1,571 करोड़ रुपये के हो गये।

भारत में विदेशी व्यापार की दिशा
(Direction of India's Foreign Trade)

भारत के निर्यात व्यापार की दिशा से उन देशों का ज्ञान होता है जिन्हें भारत से निर्यात किये जाते हैं तथा जिनसे विभिन्न वस्तुओं तथा सेवाओं का आयात करता है। तालिका 6 द्वारा भारत के विदेशी व्यापार की दिशा का ज्ञान हो जाता है।

Table 6. Direction of Trade

(Percentage of Total Volume)

	Country	*Export*	*Imports*	*Export*	*Imports*
		1980-81		*2001-2002*	
I.	Organisation of Economic Cooperation and Development Countries (O.E.C.D.)	46.6	45.7	49.3	40.1
II.	OPEC	11.1	27.8	1.2	5.8
III.	Eastern Europe	22.1	10.3	2.3	1.4
IV.	Developing Countries of which	19.2	15.7	28.0	19.1
	i. Asia	13.4	11.4	22.4	15.3
	ii. Africa	5.2	1.6	3.7	1.9
	iii. Latin America	0.5	2.5	1.9	2.0
V.	Others	1.0	0.5	8.4	33.6

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि:

1. **आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन**—OECD देशों अर्थात् *(i)* E.U. (Europen Union):—यू.के., जर्मनी, इटली, फ्रांस, लक्जमबर्ग, नीदरलैण्ड, आयरलैण्ड, बेलजियम, डेनमार्क *(ii)* उत्तरी अमेरिका (यू.एस.ए. तथा कनाडा), *(iii)* Oceania अर्थात् आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड जापान आदि विकसित देशों से भारत का व्यापार बढ़ता जा रहा है। सन् 1988 में इन देशों को किया जाने वाला निर्यात कुल निर्यात का 46.6 प्रतिशत से बढ़कर 49.3 प्रतिशत हो गया। तथा आयात 45.7 प्रतिशत से घटकर 40.1 प्रतिशत हो गया। इन देशों में से निर्यात व्यापार में EU देशों का भाग 21.6 प्रतिशत से बढ़कर 21.8 प्रतिशत हो गया तथा आयात व्यापार में 21 प्रतिशत से कम होकर 19.1 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार उत्तरी अमेरिका का निर्यात व्यापार में भाग 12 प्रतिशत से बढ़कर 20.8 प्रतिशत हो गया। परन्तु आयात में भाग 2001-2002 में 14.7 प्रतिशत से कम होकर 7.2 प्रतिशत रह गया।
2. **तेल निर्यात संगठन** (O.P.E.C.—Organisation of Petroleum Exporting Countries)—सऊदी अरब, ईरान, ईराक, कुवैत का भारत के निर्यात व्यापार में 1980-81 में 11.1 प्रतिशत भाग था। यह 2001-2002 में बढ़कर 12.0 प्रतिशत रह गया। इसी प्रकार इस अवधि में आयात व्यापार में इन देशों का भाग 27.8 प्रतिशत से कम होकर 5.8 प्रतिशत रह गया।
3. **पूर्वी यूरोप** (Eastern Europe)—पूर्वी यूरोप के देशों जैसे रूस, पोलैंड, हंगरी रूमानिया, चैकोस्लोवाकिया, आदि के साथ होने वाले विदेशी व्यापार का कुल व्यापार में प्रतिशत काफी कम हो गया है। 1980-81 में इन देशों का निर्यात व्यापार में भाग 22.1 प्रतिशत था। यह 2001-2002 में कम होकर केवल 2.3 प्रतिशत रह गया इसी प्रकार आयात का व्यापार का भाग 10.3 से कम होकर केवल 1.4 रह गया। इस प्रकार रूस के विघटन के बाद इन देशों से होने वाले विदेशी व्यापार में काफी कमी आई है।
4. **विकासशील देशों** (Developing Countries)—विकासशील देशों से भारत का विदेशी व्यापार बढ़ रहा है। सन् 1980-81 में इन देशों का भारत के कुल निर्यातों में भाग 19.2 प्रतिशत था यह बढ़कर 2001-2002 में 28.0 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार आयात व्यापार में भाग 15.7 प्रतिशत से बढ़कर 19.1 प्रतिशत हो गया। अफ्रीका के साथ किये जाने वाले निर्यातों के प्रतिशत में कमी आई है। परन्तु लेटिन अमरीका के साथ बढ़ गये।

भारत के निर्यात व्यापार में यूरोपियन यूनियन (E.U.) का प्रथम स्थान है तथा यू.एस.ए. का दूसरा स्थान है।

महत्वपूर्ण देशों से भारत के विदेशी व्यापार की दिशा के मूल्य तथा प्रतिशत चित्र निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट हो जाते है?

तालिका 7. **मुख्य देशों से भारत के विदेशी व्यापार की दिशा** (Direction of India's Foreign Trade to Important Countries)

(करोड़ रुपये)

	1980-81				*2001-2002*			
	Exports		*Imports*		*Exports*		*Imports*	
Country	*Value* (Rs. Crore)	*Percentage* Share	*Value* (Rs. Crore)	*Percentage* Share	*Value* (Rs. Crore)	*Percentage* Share	*Value* (Rs. Crore)	*Percentage* Share Crore)
U.S.A.	743	11.1	1,619	12.9	40,602	19.4	15,021	6.1
U.K.	395	5.9	731	5.8	10,306	4.9	12,224	5.0
Germany	385	5.7	694	5.5	8,529	4.1	9,672	3.9
Japan	598	8.9	749	6.0	7,204	3.4	10,237	4.2
Iran	123	1.8	1,339	10.7	1,207	0.6	1,354	0.6
Iraq	52	0.8	753	6.0	986	0.5	0.2	Neg.
U.S.S.R.	1,226	18.3	1,014	8.1	3,807	1.8	2,554	1.0

(*Source :* Economic Survey, 2003)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि 1980-81 भारत के कुल निर्यात में U.S.A. का भाग 11.1 प्रतिशत तथा आयातों में 12.9 प्रतिशत था जबकि सन् 2001-02 में भारत के निर्यात व्यापार में यू.एस.ए. का भाग बढ़कर 19.4 प्रतिशत हो गया। परन्तु आयात मे कम होकर केवल 6.1 प्रतिशत हो गया। सन् 1980-81 में भारत के निर्यात व्यापार में यू.के. का भाग 5.9 तथा आयातों में 5.8 प्रतिशत था। परन्तु 2001-2002 में भारत के निर्यातों में यू.के. का भाग 4.9 प्रतिशत हो गया तथा आयात व्यापार में यह 5.0 प्रतिशत हो गया। इस अवधि में भारत द्वारा यू.के. को किये जाने वाले निर्यातों का मूल्य बढ़कर 395 करोड़ रुपये से 2001-02 में 10,306 करोड़ रुपये हो गया। इसी प्रकार आयातों का मूल्य बढ़कर 731 करोड़ रुपये से 12,224 करोड़ रुपये हो गया। जर्मनी को निर्यातों तथा आयातों में काफी व द्धि हुई है। 1980-81 में जर्मनी से किये गये आयात 694 करोड़ रुपये के थे। 2001-2002 में बढ़कर 9,672 करोड़ रुपये हो गये। इस प्रकार निर्यातों में जितना परिवर्तन हुआ है। उतना तुलनात्मक आयातों में नहीं हुआ। जापान को 1980-81 में यू.के. जर्मनी से अधिक निर्यात अर्थात् 598 करोड़ रुपये के किये गये परन्तु सन् 2001-2002 में जापान को किये जाने वाले निर्यात बढ़कर 7,204 करोड़ रुपये के हो गये। इस अवधि (1980-2003) में जापान से किये जाने वाले आयात 749 करोड़ रुपये से बढ़कर 10,237 करोड़ रुपये के हो गये। इस प्रकार वर्तमान समय में जापान को किये गये निर्यात और उससे किये जाने वाले आयात का मूल्य लगभग बराबर है। ईरान तथा ईराक से अधिकतर केवल पैट्रोल आयात किया जाता है तथा इन देशों को कई वस्तुओं के निर्यात किये जाते हैं। सन् 1980 में ईरान को किया गया निर्यात कुल निर्यात का 1.8 प्रतिशत था। ये 2002 में कम होकर कुल निर्यात का केवल 0.6 प्रतिशत हो गया। इसी प्रकार ईराक से किये गये आयात 1980 में कुल आयात का 6 प्रतिशत थे जो 2002 में कम होकर कुल आयात के केवल नहीं के बराबर रह गये। सन् 1980 में अविभाजित रूस को 1,226 करोड़ रुपये के अर्थात् सभी महत्वपूर्ण देशों से अधिक निर्यात किये गये थे जो कुल निर्यात कुल निर्यात के 18.3 प्रतिशत थे। परन्तु 2002 में वर्तमान रूस को किये गये निर्यात के केवल 1.8 प्रतिशत हो गये। इसी प्रकार 1980 में अविभाजित रूस से किये गये आयात भारत के कुल आयात के 8.1 प्रतिशत थे। जो कम होकर सन् 2002 में केवल 1.0 प्रतिशत रह गये।

सन् 1980 के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार के परिणाम, रचना तथा दिशा की विशेषतायें (Features of Volume, Composition and Direction of India's Foreign Trade After 1980)

सन् 1990 के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार के परिणाम, रचना तथा दिशा की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं।

1. **कुल राष्ट्रीय आय का बढ़ता हुआ प्रतिशत** (Increaseing Share of Gross National Income)—भारत के विदेशी व्यापार का कुल राष्ट्रीय आय काफी महत्व है। 1980-81 में भारत का विदेशी व्यापार (आयात + निर्यात) शुद्ध राष्ट्रीय आय का 16 प्रतिशत था, 2001-2002 में यह बढ़कर शुद्ध राष्ट्रीय आय का 24 प्रतिशत हो गया है।

2. **संसार के विदेशी व्यापार में घटता हुआ भाग** (Less Percentage of World Trade)—संसार के विदेशी व्यापार में भारत के विदेशी व्यापार का भाग घटता जा रहा है। 1950-51 में संसार के कुल आयात व्यापार में भारत का भाग 1.8 प्रतिशत था तथा निर्यात व्यापार में 2 प्रतिशत था सन् 2001-2002 में आयात व्यापार में भारत का भाग कम होकर 0.79 प्रतिशत तथा निर्यात व्यापार में 0.8 प्रतिशत हो गया है।

3. **समुद्री व्यापार** (Oceanic Trade)—भारत का अधिकांश व्यापार समुद्री मार्ग से होता है। भारत के पड़ोसी देशों जैसे नेपाल, अफगानिस्तान, बर्मा, श्री लंका आदि से व्यापारिक संबंध काफी कम है। इसलिए भारत का 68 प्रतिशत विदेशी व्यापार समुद्री व्यापार है। इन देशों का निर्यात व्यापार में भाग 21.8 प्रतिशत तथा आयात व्यापार में 19.1 प्रतिशत था।

4. **थोड़े बन्दरगाहों पर निर्भर** (Dependence on a Few Ports)—भारत का विदेशी व्यापार विशेष रूप से मुम्बई, कोलकाता और चेन्नई के बन्दरगाहों द्वारा होता है। इसके फलस्वरूप इन बन्दरगाहों पर काफी दबाव रहता है। अब भारत सरकार ने कांडला, कोचीन, विशाखापट्नम आदि बन्दरगाहों का विकास किया है।

5. **व्यापार के परिणाम तथा मूल्य में व द्धि** (Increase in Volume and Vaue of Trade)—1980-81 के बाद भारत के विदेशी व्यापार का परिणाम तथा मूल्य बढ़ गये हैं। भारत अब पहले से कई गुणा अधिक मात्रा तथा मूल्य की वस्तुओं का आयात तथा निर्यात करता है। 1980-81 में कुल विदेशी व्यापार 19,260 करोड़ रुपये का था। 2001-02 में यह बढ़कर 4,54,217 करोड़ रुपये का हो गया। इस वर्ष 2,09,018 करोड़ रुपये के मूल्य का निर्यात 2,45,199 करोड़ रुपये का आयात किया गया।

6. **निर्यात व्यापार के स्वरूप में परिवर्तन** (Change in the Composition of Exports)—स्वतंत्रता के बाद भारत के निर्यात व्यापार के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। स्वतंत्रता के पूर्व भारत कृषि वस्तुओं तथा कच्चा माल जैसे पटसन, कपास, चाय, तिलहन, चमड़ा, अनाज, काजू तथा खनिज पदार्थों का निर्यात करता था। बहुत सा तैयार माल भी निर्यात किया जाता था अब भारत तैयार माल जैसे मशीनें, सिले-सिलाये कपड़े, हीरे-जवाहरात, चाय, जूट का तैयार सामान, काजू, इलैक्ट्रानिक्स के समान आदि का भी निर्यात काफी मात्रा में करने लगा है। अब सबसे अधिक निर्यात कम्प्यूटर हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर के किये गये।

7. **आयात-व्यापार के स्वरूप में परिवर्तन** (Change in the Composition of Import)—स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के आयात व्यापार के स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ है। स्वतंत्रता से पहले भारत अधिकतर उपभोग वस्तुओं जैसे दवाइयां, कपड़ा, मोटर गाड़ियां, बिजली का सामान, लोहा, इस्पात आदि का आयात करता था। परन्तु अब पैट्रोल, मशीनें, रसायन, खाद, तिलहन, कच्चे माल, इस्पात, तेल आदि का आयात अधिक मात्रा में किया जाता है।

8. **विदेशी व्यापार की दिशा** (Direction of Foreign Trade)—किसी देश के विदेशी व्यापार की दिशा से हमारा अभिप्राय उन देशों से होता है। जिनके साथ व्यापार किया जाता है। विदेशी व्यापार की दिशा में निम्नलिखित मुख्य परिवर्तन हुए हैं:—

   सन् 1980 में भारत के निर्यात व्यापार में सबसे अधिक भाग पूर्वी यूरोप अर्थात् रूमानिया, पूर्वी जर्मनी तथा रूस आदि देशों का था। सन् 1980 में भारत के आयात व्यापार में सबसे अधिक भाग अर्थात् 27.8 प्रतिशत भाग तेल उत्पादक देशों (OPEC) जैसे इरान, इराक, सऊदी अरब, कुवैत आदि का था। परन्तु सन् 2002 में भारत के विदेशी व्यापार में सबसे अधिक भाग यूरोपियन यूनियन (E.U.) देशों जैसे जर्मनी, बेल्जियम, फ्रांस यू.के. आदि का था।

व्यापार की नीति में नवीनतम परिवर्तन
(Recent Trade Policy Changes)

भारत की व्यापार नीति जो आर्थिक सुधारों से पहले मुख्य रूप से आयात प्रतिस्थापन (Impost Substitution) की रूढ़िवादी और जटिल नीति थी वह 1991 के आर्थिक सुधारों के पश्चात् एक उदारवादी सरल और प्रगतिशील नीति हो गई है। जिसका मुख्य लक्ष्य निर्यात प्रोत्साहन (Export Encourgement) है। पिछले दशक से किये जाने वाले व्यापार नीतिगत सुधारों (Trade

Policy Reforms) का उद्देश्य निर्यात तीव्र व द्धि के लिये उपयुक्त वातावरण तैयार करना, संसार के निर्यातों में भारत के भाग को बढ़ाना तथा निर्यातों को आर्थिक विकास की ऊंची दर का ईंजन बनाना है। इन सुधारों का ध्यान (Focus) उदारीकरण (Liberalisation), खुलापन (opnness), पारदर्शी (Transparency) तथा वैश्वीकरण (Globlisation) पर है। नवीनतम व्यापार नीति का मुख्य जोर निर्यात प्रोत्साहन कार्यक्रम, मात्रात्मक प्रतिबन्धों से दूरी तथा विश्व बाजार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये भारतीय उद्योगों की प्रतियोगिता शक्ति का बढ़ाने पर है। वर्तमान व्यापार नीति में आवश्यक परिवर्तनों के फलस्वरूप निर्यात उत्पादन आधार को मजबूती प्रदान की गई है, प्रोसीजिरियल कमियों (Procedural Irritants) का दूर किया गया है, आगतों (Input) आदी को सुविधाजनक बनाया गया है, तकनीक को आधुनिक बनाया गया है तथा प्रतियोगिता में सुधार किया गया है। भारत की व्यापार नीति में निम्नलिखित नवीनतम परिवर्तन (Recent Changes) हुए है।

1. **उदारवादी** (Liberal)—भारत काफी समय से अन्तरमुखी आयात प्रतिस्थापन (Inward looking import substitution policy) का अनुसरण करता रहा था। आयात प्रतिस्थापन का अर्थ है, कि विदेशों से आयात की जाने वाली किसी भी वस्तु का कुल या आंशिक रूप से देश के कच्चे माल तथा तकनीक द्वारा उत्पादित उसी प्रकार के कार्य करने वाली द्वारा प्रतिस्थाना किया जाये। (Import substitution means total or partial replacement of an imported Product of the same functional requirement mainly from indequenous material and Know-how.) इस नीति के अन्तर्गत आयातों पर बहुत अधिक प्रतिबन्ध लगा दिये गये थे। तथा कई वस्तुओं के आयात देश में नहीं किये जा सकते थे। परन्तु नई व्यापार नीति अधिक उदारवादी (Liberal) है। इसके अनुसार आयातों पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध (Quantitative restriction) पूरी तरह हटा लिये गये हैं। नई नीति के अनुसार कुछ संवेदनशील वस्तुओं को छोड़कर देश में लगभग सभी वस्तुओं के आयात स्वतंत्रतापूर्वक किये जा सकते हैं। उनके लिए अब पहले की तरह कोई आयात लाइसेंस लेने की आवश्यकता नहीं है। अतएव वर्तमान नीति मुख्य रूप से आयात उदारवादी नीति है।

2. **दीर्घकालीन** (Long Term)—भारत की व्यापार नीति अल्पकालीन थी। 1992 से पहले एक या तीन वर्ष के लिये व्यापार नीति का निर्माण किया जाता था। अतएव व्यापार नीति अल्पकालीन (Short period) थी परन्तु अब व्यापार नीति दीर्घकालीन (Long period) है। यह पांच वर्ष की अवधि के लिए बनाई जाती है। 1992 में सबसे पहले आठवीं योजना की अवधि के लिए एक पंचवर्षीय योजना 1992-97 के लिए बनाई गई थी। नौवीं योजना की अवधि 1997-2002 के लिए दूसरी तथा दसवीं योजना की अवधि 2002-2007 के लिए तीसरी पंचवर्षीय दीर्घकालीन व्यापार नीति बनाई गई। इसके फलस्वरूप आयात निर्यात नीति में एक समन्वय बना रहता है। वर्तमान नीति 2002 से 2007 की अवधि में लागू होगी। अतएव इस नीति की अवधि दसवी पंचवर्षीय योजना (Tenth Five Year Plan) है।

3. **लोचशील** (Flexible)—भारत की वर्तमान व्यापार नीति लोचशील (Flexible) है। पंचवर्षीय नीति होने का यह अर्थ नहीं है कि नीति की पंचवर्षीय अवधि में कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता वास्तव में इस नीति की प्रतिवर्ष समीक्षा की जाती है। उसमें समय-समय पर आवश्यक परिवर्तन किये जाते रहते हैं। वर्तमान नीति के दीर्घकालीन होने का यह अर्थ नहीं है कि वह कठोर नीति है तथा उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता। वास्तव में वर्तमान व्यापार नीति एक लोचशील नीति है। इसमें विदेशी व्यापार में अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय परिद श्य के अनुसार समय-समय पर आवश्यक परिवर्तन किये जाते रहे हैं। इसलिए प्रतिवर्ष व्यापार मंत्री द्वारा आवश्यक परिवर्तन घोषित किये जाते हैं। उदाहरण के लिए 2001 की नीति में 742 वस्तुओं को आयात प्रतिबन्धों से मुक्त किया गया। जबकि 2002 की नीति में कुछ संवेदनशील वस्तुओं को छोड़कर सभी वस्तुओं के आयात पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटा लिये गये हैं। दीर्घकालीन नीति का अभिप्राय तो केवल यह है कि व्यापार के मुख्य दिशा निर्देश तथा उद्देश्य निर्धारित कर दिये जाये जैसे व्यापार नीति उदारवादी होगी या अनुदारवादी यह मुख्य रूप से आयात प्रतिस्थापन की नीति होगी या निर्यात प्रोत्साहन की नीति होगी।

4. **निर्यात प्रोत्साहन** (Export Promotion)—भारत की वर्तमान नीति में आयात प्रतिस्थापन के स्थान पर निर्यात प्रोत्साहन को मुख्य रूप से महत्व दिया गया है। निर्यात प्रोत्साहन (Export Promotion) से अभिप्राय यह है कि देश के निर्यातों को प्रोत्साहन देने के लिए निर्यातकर्ताओं को आवश्यक सुविधायें देकर प्रोत्साहित किया जा सकता है। नई नीति का उद्देश्य दसवीं योजना की अवधि में संसार के निर्यात में भारत के भाग को 0.60 से बढ़ा 1 प्रतिशत करना है। नवीनतम व्यापार नीति में निर्यात प्रोत्साहन के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं।

कुछ संवेदनशील वस्तुओं को छोड़कर निर्यात कर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध (Quantitative Restriction) पूरी तरह हटा लिए गए हैं। कृषि एवं कृषि आधारित निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए 32 कृषि निर्यात क्षेत्र (Agro-Export Zones) स्थापित किये गए हैं। कृषि निर्यातों का विविधीकरण करने के लिए फलों, सब्जियों, फूलों एवं डेयरी उत्पादों के निर्यात के लिए परिवहन सहायता (Transport Subsidy) दी जाएगी। खादी, ग्रामीण उद्योग (KVIC) के अन्तर्गत आने वाले कुटीर उद्योगों के निर्यातें को प्रोत्साहित करने के लिए बाजार प्रवेश प्रेरणा (Market Access Initiative) के अन्तर्गत 5 करोड़ रुपये के कोष की व्यवस्था की गई है। नई नीति ने कुटीर उद्योगों के निर्यातों को प्रोत्साहित करने के लिए विशेष सुविधाएं दी है। हस्तशिल्प क्षेत्र के उद्योग अपने उत्पादनों की वेबसाइट बनाने के लिए MAI कोष से सहायता प्राप्त कर सकेंगे नई नीति में कुटीर हस्तशिल्प तथा लघु उद्योग क्षेत्र की विशेष महत्व दिया गया है। इससे ग्रामीण इलाकों में रहने वाले अधिक कामगरों को लाभ मिलेगा।

उपरोक्त उपायों के अतिरिक्त नवीनतम व्यापार नीति का उद्देश्य देश के निर्यातकों को विशेष सुविधायें देना है।

5. **सीमा शुल्कों में कमी** (Reduction in Custom Duties)—विदेशी व्यापार की नवीनतम नीति का एक महत्वपूर्ण परिवर्तन सीमा शुल्क (Custom Duties) में की जाने वाली कमी है। निर्यात-आयात नीति के उदारीकरण के अनुसार सीमा शुल्क (Custom Duties) को क्रमबद्ध तरीके से कम कर दिया गया। अनुमान है कि भारत के आयात शुल्कों (Import Tarriffs) 1991 में लगे लगभग 90 प्रतिशत से घटाकर वर्ष 2001-2002 में 31 प्रतिशत रह गये। आयात शुल्कों में भारी कमी के बावजूद शुल्कों का आम स्तर अब भी ऊंचा है। विकासशील देशों में भारत एक मात्र ऐसा देश था। जिसमें सबसे अधिक सीमा शुल्क लागू थे। परन्तु नवीनतम व्यापार नीति में अधिकतम औसत दोनों काफी कम कर दिये गये हैं अब औसत वसूली दर (Average Collection Rate) 20 प्रतिशत रह गई है।

6. **विशेष आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना** (Establishment of Special Economic Zones)—नवीनतम व्यापार नीति में एक मुख्य परिवर्तन यह किया गया है कि निर्यातों को अधिक प्रतियोगी बनाने के लिये चीन की तरह विशेष आर्थिक जोन (Special Economic Zones) स्थापित किये गये हैं। इन जोनों से स्थापित कारखानों को हर प्रकार के दायित्व से मुक्त रखा जाता है।

यहां की इकाइयों को संचालन में पूरी छूट दी जाती है। उन्हें न केवल निःशुल्क भारी मशीनरी के आयात की छूट होगी, बल्कि वे कच्चा माल भी निःशुल्क आयात कर सकेंगी यहां स्थापित इकाइयां टर्मिनल उत्पाद शुल्क का भुगतान किये बिना घरेलू टैरिफ एरिया में काम करती रहें। यहां की इकाईयों को आपसी व्यापार या बिक्री के लिए भी पूर्व अनुमति की आवश्यकता नहीं होती। इन जोनों को देश के निर्यात-आयात क्षेत्र से बाहर समझा जाता है। (They shall be treated as being outside the customs territory of the country.) निर्यात के लिये उत्पादन को बन्दरगाह ले जाने पर भी कोई पाबन्दी नहीं होती। इन जोनों में शुद्ध सम्पत्ति या विदेशी स्वामित्व वाली कम्पनियां भी स्थापित की जा सकती हैं।

इन क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों आयकर उत्पादन कर तथा सीमा शुल्क में छूट दी जाती है। जिससे वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतियोगी बन सकें।

इन क्षेत्रों में पहली बार बैंकों को विदेशी कारोबार शाखाएं (Overseas Banking Units—OBU) खोलने की इजाजत दी गई ये वास्तव में भारत में स्थित विदेशी बैंकों की शाखाएं हैं। भारतीय बैंक भी ये शाखाएं खोल सकेंगे इन शाखाओं पर साख नियंत्रण के प्रावधान लागू नहीं होते। विशेष आर्थिक क्षेत्रों में तीन साल से कम अवधि के लिए विदेशी वाणिज्यिक ऋणों (External Commercial Borrowings) की अनुमति दी जाती है इसके फलस्वरूप इन क्षेत्रों की इकाइयों को कार्यशील पूंजी के लिए अन्तर्राष्ट्रीय ब्याज दर पर ऋण मिल जाते हैं।

7. **निर्यात प्रक्रिया सरलीकरण** (Procedural Simplification)—भारत की व्यापार नीति पहले काफी जटिल थी। परन्तु नवीनतम व्यापार नीति ने विदेशी व्यापार की प्रक्रिया को काफी सरल बना दिया है। निर्यात आयात प्रक्रिया के सरलीकरण तथा पारदर्शिता के लिए इलैक्ट्रानिक आबंटन प्रणाली (Electronic Filing of Licence Application) अब सभी बन्दरगाहों पर लागू की गई हैं। इस प्रणाली के अन्तर्गत निर्यातकों (Exporters) को अब सरकारी दफ्तरों के चक्कर नहीं लगाने पड़ते। निर्यात संबंधी लाइसेंस लेने के लिए वे कम्प्यूटरों के द्वारा E-Commerce प्रणाली का प्रयोग कर सकते हैं। वे लाइसेंस के लिए आवेदन कम्प्यूटरों द्वारा भेजते हैं तथा इससे संबंधित सभी औपचारिकताओं को

कम्प्यूटरों द्वारा ही पूरा करते हैं। इसके फलस्वरूप उन्हें आवेदन के 24 घंटे के अन्दर ही लाइसेंस प्राप्त हो जाते हैं। इससे धन तथा समय दोनों की ही बचत होती है। ट्रेडिग हाऊस सर्टिफिकेट देने का कार्य क्षेत्रीय लाइसेंसिग को सौंप दिया गया है। उन सभी निर्यातकों को ग्रीन चैनल सुविधा दी जाती है जिनके पास ग्रीन कार्ड होते हैं। अब स्वैच्छिक घोषणा (Voluntar Declaration) के आधार पर शुल्क लिया जाता है विदेश व्यापार महानिदेशालय (Directorate General of Foreign Trade) को अधिक कार्य कुशल तथा पारदर्शी बनाया जायेगा। इसके लिये सभी विभागों का कम्प्यूटरीकरण किया जा रहा है।

नई निर्यात-आयात नीति (2002-2003) में कार्यविधि को काफी सरल बनाया दिया है। विदेशी व्यापार के डायरेक्टर जनरल (Director General of Foreign Trade) तथा कस्टम की सुविधा के लिए आयातों का 8 डिजिट में वर्गीकरण (Eight Digits Classification) कर दिया गया है। कारोबार लागत कम करने के लिए निर्यात प्रक्रिया को सरल बनाया गया है। निर्यात दस्तावेजों के लिए प्रत्यक्ष समझौता वार्ता की स्वीकृति दी जाएगी। इसके फलस्वरूप निर्यातकर्ताओं के लिए बैंक कमीशन की बचत हो सकेगी निर्यातों से प्राप्त होने वाली विदेशी मुद्रा की अवधि को 180 दिन से बढ़ाकर 360 दिन कर दिया गया है।

8. **राज्य सरकारों का सहयोग** (Cooperation of State Government)—नवीनतम व्यापार नीति में देश के निर्यातों को बढ़ाने के लिए राज्य सरकारों का सहयोग प्राप्त किया गया है अभी तक राज्य सरकारें निर्यातों को प्रोत्साहित करने की प्रक्रिया में शामिल नहीं होती थीं बल्कि कई बार उनकी राजकोषीय नीतियां निर्यातों को प्रगति में बाधा बन जाता थी परन्तु अब निर्यात प्रोत्साहन प्रक्रिया में राज्यों की भागीदारी का अध्याय शुरू हो गया है।

9. **प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता का प्रभाव** (Effects of Direct Financial Support)—नवीनतम विदेशी व्चयापार नीति में निर्यात-आयात नीतियों के लिये प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता की कोई व्यवस्था नहीं है। जबकि पहले यह सहायता दी जाती थी। नवीनतम नीति में विदेशी बाजारों में भारतीय निर्यात के लिए वातावरण अनुकूल बनाया गया है। विश्व स्तर की अधोसंरचना (World class in Prastructure) उपलब्ध कराई गई है। लेन-देन की लागत (Transaction costs) कम की गई है।

10. **निर्यात बाजार का विविधीकरण** (Diversification of Export Market)—भारत की वर्तमान विदेशी व्यापार नीति में निर्यात के लिये गये बाजार में प्रवेश के लिये निरन्तर प्रयास किये जा रहे हैं। पिछले वर्षों में लेटिन अमेरिका के देशों में अधिक प्रवेश की नीति अपनाई गई। नवीनतम नीति में अफ्रीका पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। आरम्भ में अधिकतम मांग की संभावनाओं वाले सात देशों पर जोर दिया जा रहा है। ये है नाईजीरिया, दक्षिण अफ्रीका, मॉरीशस, केन्या, ईथोपिया, तंजानिया और घाना।

संक्षेप में, वर्तमान विदेशी व्यापार नीति एक उदारवादी प्रगतिशील, कम सीमाशुल्क तथा निर्यात प्रोत्साहन वाली नीति है।